Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा॰ वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

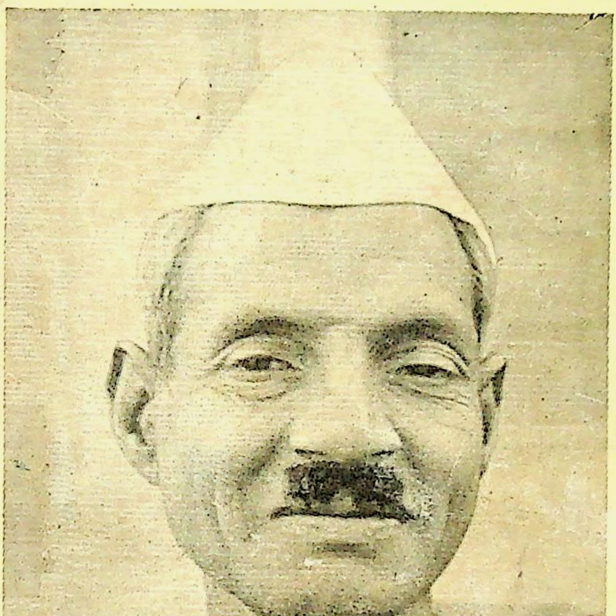

— वृन्दावन दास

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

संपादक :
बाबू वृन्दावनदास

साहित्य प्रकाशन
नई सड़क, मालीवाड़ा, दिल्ली-६

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

185583

डा० वासुदेव शरण अग्रवाल

डा० अग्रवाल की विद्वत्ता, उनके पाण्डित्य तथा उनके द्वारा की हुई साहित्य एवं समाज सेवा का मूल्यांकन अनेक प्रकार से किया गया है। जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी। इस चौपाई को किसी सामर्थ्यवान् अथवा विभूति सम्पन्न महापुरुष के लिए ही लागू किया जा सकता है।

हमारी दृष्टि में डा० अग्रवाल का उनके जीवन में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य था जनपदीय आन्दोलन का सूत्रपात करना। उन्होंने जनपदीय साहित्य के महत्व को साहित्यिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया। उसके लिए जनता में रुचि उत्पन्न की, जनपदीय साहित्य के उन्नयन से हिन्दी के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने अपने अगणित लेखों, पत्रों और निबन्धों में अनेक प्रकार से सिद्ध कर दिया है कि जनपदीय साहित्य का अध्ययन और उसके प्रति रुचि से ही हिन्दी की उन्नति हो सकती है, उसके भण्डार की श्री-वृद्धि हो सकती है।

प्रस्तुत पुस्तक में डा० वासुदेव शरण अग्रवाल के प्रधानतया उन पत्रों का ही संग्रह है जो जनपदीय अध्ययन अथवा आन्दोलन से सम्बन्धित हैं। सभी पत्र साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

— प्रकाशक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

097
185583

संपादक :
बाबू वृन्दावनदास

Central Library
185583
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

साहित्य प्रकाशन
नई सड़क, मालीवाड़ा, दिल्ली-६

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

—वृन्दावनदास

RPS
097
ARY-V

प्रथम संस्करण :	१ मार्च १९७४
★	★
मूल्य :	७५-००
★	★
प्रकाशक :	साहित्य प्रकाशन नई सड़क, मालीवाड़ा, दिल्ली-६
मुद्रक :	अजन्ता फाइन आर्ट प्रिन्टर्स, मथुरा.

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० राम स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट–
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

अनुक्रमणिका

पृष्ठ सं०

प्राक्कथन : —वृन्दावनदास १–१४

भूमिका : —वृन्दावनदास १५–३२

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र श्री कृष्णानन्द गुप्त के नाम ३३–५६

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र श्री अगरचन्द नाहटा के नाम ५७–६८

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम ६९–१६२

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र डा० सत्येन्द्र के नाम १६३–२०८

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र श्री प्रभुदयाल मीतल के नाम २०९–२२२

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र श्री गणेश चौबे के नाम २२३–२२८

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' के नाम २३९–२५०

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र अन्य साहित्यिक बन्धुओं के नाम २५१–२९२

(१) श्री हरिगोविन्द गुप्त
(२) श्री रामनारायण उपाध्याय
(३) श्री गौरीशङ्कर जी द्विवेदी
(४) श्री अयोध्या सिंह
(५) ज्यो० श्री राधेश्याम द्विवेदी
(६) डा० रामस्वरूप आर्य
(७) श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव
(८) श्री गौरीशङ्कर गुप्त
(९) आचार्य पं० गणेशदत्त पाण्डेय
(१०) श्री कृष्णसहाय गर्ग
(११) श्री उदयशङ्कर शास्त्री
(१२) श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
(१३) डा० सिद्धेश्वर वर्मा
(१४) श्री जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी
(१५) श्री रमेशचन्द्र शर्मा
(१६) डा० बनारसीदास चतुर्वेदी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र -साहित्य पर कुछ महत्वपूर्ण निवन्ध २९३-३३२

(१) स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र
— श्री रामशङ्कर द्विवेदी एम. ए. २९५–३०७

(२) निवन्धकार स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल की भाषा शैली — डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' ३०८–३१६

(३) वे विनम्रता की मूर्ति थे — श्री वेदप्रकाश गर्ग एम. ए. ३१७–३१८

(४) ऋषिकल्प डा० वासुदेवशरण अग्रवाल और उनके शिक्षक —डा० श्याम शर्मा ३१९–३२३

(५) डा० वासुदेवशरण अग्रवाल का एक विलक्षण पत्र —डा० रामस्वरूप आर्य ३२४

(६) जनपदीय आन्दोलन के जनक डा० वासुदेवशरण अग्रवाल —बा० वृन्दावनदास ३२५–३३२

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू वृन्दावनदास संपादक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राक्कथन

डा० वासुदेवशरण जी के पत्रों का संग्रह छपाने का विचार मूलत: श्रद्धेय बनारसीदास जी चतुर्वेदी की प्रेरणा से उत्पन्न हुआ। उन्होंने मुझे अनेक पत्रों में लिखकर आदेश किया कि मैं ही डा० अग्रवाल के महत्त्वपूर्ण पत्रों का संग्रह करके उनके प्रकाशन की व्यवस्था कराऊँ। उन्होंने अपने उन अनेक मित्रों को भी डाक्टर साहब के पत्रों की प्रतिलिपि करा कर मुझे भेजने को लिखा जिनके पास उनकी जानकारी में डाक्टर साहब के पत्र सम्भवत: विद्यमान थे। उनकी प्रेरणा और मेरे प्रयास का फल निकला और अनेक विद्वान् अपनी निधि स्वरूप डा० साहब के पत्रों की प्रतिलिपि कराकर मुझे भेजने लगे। लेकिन पत्र-प्राप्ति की इस प्रक्रिया में काफी समय लग गया। इस अन्तराल में मेरे मन में भाव उदय हुआ कि श्रद्धेय बनारसीदासजी चतुर्वेदी के पत्र भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और प्रेरणादायक हैं क्यों न जब तक डा० अग्रवाल के पत्र संगृहीत हों चतुर्वेदी जी के पत्रों को पुस्तकाकार छपा दिया जाय? उन पत्रों को संग्रह करने का भी प्रश्न न था कारण वे तो सैकड़ों की संख्या में मेरे तथा अन्य बन्धुओं के नाम लिखे हुए मेरे पास ही मौजूद थे। फलत: डा० बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्र शीर्षक ग्रन्थ छपाकर प्रकाशित कर दिया गया। मैं इसे डा० अग्रवाल के पुण्यश्लोक नाम का ही प्रसाद समझता हूँ। मूलत: योजना तो डा० अग्रवाल के पत्रों के प्रकाशन की ही थी, चतुर्वेदी जी के पत्र तो डा० अग्रवाल का नाम स्मरण करते-करते ही प्रकाशित हो गये। दोनों महानुभाव जीवन में अभिन्न मित्र के रूप में रहे, समानधर्मा, समान-कर्मा और हिन्दी-सेवा के दोनों ही दृढ़व्रती। वे जीवन में एक दूसरे से मिलते और निरन्तर पत्र-व्यवहार जारी रखते रहे। दोनों ही के अमूल्य पत्रों का संग्रह उस एक ही व्यक्ति के द्वारा सम्पादित और प्रकाशित हो जो दोनों ही के प्रति श्रद्धावनत है और जिसे समान रूप से दोनों का ही पुष्कल स्नेह प्राप्त हुआ तो आश्चर्य किमिदम्।

जिस प्रकार आचार्य पं० पद्मसिंह शर्मा के सर्वश्रेष्ठ पत्र श्री बनारसी-दास जी चतुर्वेदी को लिखे गये थे उसी प्रकार डा० अग्रवाल के सर्वश्रेष्ठ पत्रों को प्राप्त करने का श्रेय भी डा० बनारसीदास चतुर्वेदी को ही प्राप्त है। जनपदीय साहित्य की महत्ता की स्थापना तथा जनपदीय अध्ययन के आन्दोलन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अलख डा० अग्रवाल का सर्वोच्च गरिमामय कार्य था और चूँकि डा० बनारसीदास चतुर्वेदी ने ही उनको इस आन्दोलन में पूर्ण सहयोग प्रदान किया इसलिए डा० अग्रवाल के सर्वोत्कृष्ट पत्रों को प्राप्त करने का श्रेय भी उन्हें ही प्राप्त हुआ। जहाँ साहित्यिक महत्त्व की दृष्टि से पत्र-लेखक वन्दनीय है वहाँ वह व्यक्ति भी जिसको पत्र लिखे गये प्रशंसा का पात्र है, कारण उस व्यक्ति की ओर पत्र लेखक की रुचि उसके उदात्त व्यक्तित्व के आकर्षण से ही उत्पन्न होती है। यदि उस व्यक्ति में जिसको पत्र लिखे गये कोई विशेषता न होती अथवा उसमें कोई आकर्षण न होता तो शायद महत्त्वपूर्ण पत्र लिखे ही न जाते और उनका अस्तित्व ही संदिग्ध हो जाता।

डा० अग्रवाल की पत्र-लेखन कला की अनेक विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की है। निश्चय ही डा० अग्रवाल के पत्र हिन्दी-साहित्य की अनमोल निधि हैं। यों तो सामान्यतया कहने के लिए डा० अग्रवाल के पत्र महत्वपूर्ण हैं ही परन्तु वास्तविक दृष्टि से उनके साहित्यिक एवं सांस्कृतिक मूल्यांकन के लिए डा० अग्रवाल के गौरवशाली व्यक्तित्व पर भी चर्चा अपेक्षित है क्योंकि पत्र तो अनिवार्यतः व्यक्तित्व के दर्पण होते हैं।

गौरवशाली व्यक्तित्व—

मनीषियों ने डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के बहुमुखी एवं प्रतिभाशाली व्यक्तित्व की इस देश के महिमामय अतीत के अनेक महापुरुषों से तुलना की है। कृष्णानन्द गुप्त के इस कथन की कि स्व० डा० अग्रवाल कपिल और कणाद की कोटि के थे अनेक विद्वानों ने पुष्टि की है। वस्तुतः यह उक्ति तो इतनी बहुचर्चित हो चुकी है कि स्व० डा० अग्रवाल का व्याख्याकार के रूप में नाम आते ही कपिल और कणाद का स्मरण कर लिया जाता है। इस उक्ति का व्यापक व्यवहार इसकी प्रामाणिकता का द्योतक है। श्री कृष्णानन्द गुप्त अपनी इस अभिव्यक्ति के लिए बधाई के पात्र हैं।

डा० बनारसीदास चतुर्वेदी अग्रवाल जी को राहुल, द्विवेदी और अग्रवाल की त्रिमूर्ति में स्थान देकर उनको श्रद्धा के सुमन अर्पित करते हैं। उन्होंने बड़े ही मार्मिक शब्दों में लिखा है कि उन्हें अपने साहित्यिक जीवन में चकवस्त की परिभाषा, "दीन क्या है किसी कामिल की इबादत करना" बड़ी उपयुक्त जँचती है। उन्होंने स्वयं त्रिमूर्ति के पुजारी के रूप में जिन त्रिमूर्तियों की वन्दना की है वे हैं— बापू, गुरुदेव और दीनबन्धु (गाँधी, रवीन्द्र और एन्ड्रयूज) रामानन्द, चिन्तामणि और गणेशशङ्कर, गोर्की, रोमाँरोलाँ और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्विग तथा महावीरप्रसाद द्विवेदी, पद्मसिंह शर्मा और सत्यनारायण। चतुर्वेदी जी की को निगाह में हिन्दी जगत की तीन विभूतियाँ हैं — राहुल सांकृत्यायन, पं० हजारीप्रसाद द्विवेदी और डा० वासुदेवशरण अग्रवाल।

लोकसाहित्य से लेकर वेद विद्या तक सभी विषय अग्रवाल जी की रुचि के विषय थे। मनीषियों ने लोक-भाषा सम्बन्धी चर्चा को वैदिकी भाषा आदि की तुलना में हीन स्तर की समझा तब ही तो उन्होंने From peon to President वाली उक्ति के अनुसार लोकभाषा को सबसे नीचे और वेद-विद्या को सबसे ऊपर रक्खा। परन्तु डा० अग्रवाल के मस्तिष्क में यह बात कदापि न थी। उन्होंने लोकभाषाओं की पुरातन पावनता को पुनर्प्रतिष्ठापित किया था।

औपनिवेशिक पद्धति के चिन्तन ने प्रशासक को सर्वोपरि व्यक्ति बना दिया। उसके आगे प्राध्यापक, व्यवसायी, चिन्तक, प्रबुद्ध वर्ग सभी श्रीहीन हो गये। आंग्ल प्रशासन में नागरी सभ्यता का विकास हुआ, ग्रामीण सभ्यता अपनी परिधि के भीतर ही ग्राम्यांचलों में फलती-फूलती रही। नगरों में रहने वाले लोग ग्रामीण सभ्यता को हीन समझते थे और अपने अभिमान और अदा में यदि वे लोक-भाषाओं को गँवारू भाषाओं के नाम से सम्बोधित करें तो इसमें आश्चर्य ही क्या है। डा० अग्रवाल ने शतमुख से लोक-भाषाओं के महत्व को उद्घोषित किया और उसे न केवल हिन्दी जगत अपितु विश्व के साहित्यिकों के सम्मुख रक्खा।

भारतीय टीकाकारों में उनका स्थान बहुत उच्च समझा गया है। अनेक विद्वान् उन्हें मल्लिनाथ अथवा उनसे भी ऊँची श्रेणी में रखते हैं। मल्लिनाथ तो भारतीय टीकाकारों में बड़ा ऊँचा स्थान रखते थे। मल्लिनाथ से भी अग्रवाल जी को ऊँचा ठहराया जाना उनकी अद्भुत क्षमता का द्योतक है।

राय कृष्णदास का मत है कि डा० अग्रवाल की यदि किसी से तुलना की जा सकती है तो कलिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य से। राय कृष्णदास कहते हैं, "वह (डा० वासुदेवशरण अग्रवाल) सब कुछ थे — भाष्यकार, टीकाकार, अन्वेषक, मुद्राशास्त्रज्ञ, दार्शनिक, वेदविद्, शब्दशास्त्री, जनपदीय संस्कृति के विवेचक, मूर्तिशास्त्रज्ञ, कलालोचक, पुरातत्ववेत्ता आदि। बहुत कम लोग जानते हैं कि वे कवि और गल्पकार भी थे।"

उनके गुणों का वर्णन करते हुए एक जगह डा० बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है, "वह अपनी समस्त मानसिक शक्ति को एक जगह केन्द्रित करके

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित विषय पर लगा देते थे और उसी में उनकी सफलता का रहस्य था। किसी की निन्दा या आलोचना में उनकी रुचि न थी, वे शिष्टाचारवश उसे सुन भले ही लें पर चुप रह जाते थे, मौन ही उनका उत्तर था।"

डा० अग्रवाल अत्यन्त मेधावी पुरुष थे। उनकी स्मरण शक्ति बड़ी विलक्षण थी। उनका हृदय कोमल और मन पवित्र था। उनके चरित्र में दृढ़ता थी। उनकी सचाई के प्रति अपार निष्ठा थी। अनुचित बात उनको सहन न होती थी। उनमें आलस्य नाम को भी न था। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनके विषय में लिखा है कि डा० अग्रवाल जिस प्रकार ज्ञानवान् थे उसी प्रकार श्रोता भी बहुत बड़े थे। वे धैर्य से सुनते थे। किसी नये विषय की बात को बड़े गौर से सुनते और मानसकोष में भर लेते थे। वे शतावधानी थे और कई ग्रंथों को एक साथ लिखाते थे।

"कला ही नहीं वासुदेवशरण जी हिन्दी साहित्य, संस्कृत वाङ्मय, वैदिक दर्शन, निरुक्तिशास्त्र, इतिहास, भूगोल, संस्कृति आदि सभी के सूर्य थे। जिन-जिन क्षेत्रों में उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी, जिन-जिन संस्थानों और केन्द्रों को उन्होंने जन्म दिया, संगठित किया, प्रेरणा दी—उनकी कल्पना भी सामान्य मस्तिष्क में नहीं समाती।" (धूर्जटि, हिन्दुस्तान)

अपने ४० वर्ष के साहित्यिक जीवन में उन्होंने साढ़े तीन हजार से भी अधिक लेख तथा निबन्ध लिखे। उन्होंने ६२ वर्ष के जीवन-काल में अनवरत श्रम करते हुए अनेक ग्रंथों की रचना की उनमें से ८४ अब तक छप चुके हैं। ५० के लगभग उनकी रचनाएँ अधूरी या पूर्णता की विभिन्न अवस्थाओं में हैं। डा० अग्रवाल ने साहित्य की साधना, सिद्धि और सेवा में अपने आप को झोंक दिया वे निरन्तर कार्यरत रहते। कार्यभार से स्नायुओं पर तनाव का उन्होंने कभी विचार न किया। मधुमेह से पीड़ित होते हुए भी मस्तिष्कीय कार्य अधिकाधिक करते रहे।

उन्होंने १९४१ में पी-एच० डी० की डिग्री के लिए India as Known to Panini के पूर्व भाग और डी० लिट्० के लिए १९४६ में उसी का उत्तर भाग लखनऊ विश्वविद्यालय को प्रस्तुत किया। सन् १९५२ में डाक्टर साहब ने लखनऊ विश्वविद्यालय में डा० राधाकुमुद मुकुर्जी व्याख्यान-माला के अन्तर्गत अपने पाणिनीय अध्ययन पर व्याख्यान दिये जिससे उनकी देश-विदेशों में बड़ी कीर्ति फैली। संस्कृत विद्या के अध्ययन के साथ डाक्टर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहब की अमरता जुड़ गई है। आर्ष ग्रन्थों के भाष्यकार के रूप में डा० अग्रवाल की कीर्ति यावच्चन्द्र दिवाकरौ अक्षुण्ण रहेगी।

वेदों और पुराणों की धार्मिक और सांस्कृतिक व्याख्या डा० साहब का मुख्य उद्देश्य था। उनका ध्येय तो चारों वेद और अठारहों पुराणों की धार्मिक एवं सांस्कृतिक व्याख्या करने का था परन्तु दुर्दैव ने उन्हें हमसे छीन लिया और वे उस महान् कार्य का एक अंश ही पूरा कर सके। उन्होंने ऋग्वेद के एक मण्डल की पूरी व्याख्या तथा अनेक अन्य सूक्तों की व्याख्याएं लेखों और निबन्धों के रूप में प्रस्तुत कीं। वेदों पर उन्होंने अंग्रेजी में ऋग्वेदिक माइथोलोजी, एन इन्ट्रोडक्शन टू दी ऋग्वेद, एन इण्डियन विन्डो आन दी कासमस आदि ग्रन्थ लिखे। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है डाक्टर अग्रवाल अठारहों पुराणों की सांस्कृतिक व्याख्या करना चाहते थे। उनकी यह इच्छा अधूरी रह गई, वे केवल चार पुराणों मार्कण्डेय पुराण, वामन पुराण, मत्स्य पुराण और लिंग पुराण की व्याख्या ही कर पाये।

डा० अग्रवाल के वेद सम्बन्धो लेखों के कई महत्वपूर्ण संग्रह उरु ज्योति, वेद विद्या, वेद रश्मि, स्पार्क्स फ्रौम दी वेदिक फायर आदि प्रकाशित हुए हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने सहस्त्राक्षरा वाक् लिखना आरम्भ किया जिसके अन्तर्गत अस्यवाभीय व्यारूया या विजन इन लौंग डार्कनैस का प्रकाशन हुआ।

वेदमूर्ति मधुसूदन ओझा ने एक बार डा० अग्रवाल से कहा, "मुझे लगता है आपका जीवन तो वेद विद्या के लिए ही हुआ है।"

डा० अग्रवाल के स्पर्श से पहले जायसी और विद्यापति दुर्व्याख्याओं से पीड़ित थे। व्याख्याकारों ने उनके साथ न्याय न किया था और उनकी अनमोल कृतियों की ओर भ्राँति उत्पन्न कर दी। डा० अग्रवाल की टीका ने उनकी कृतियों को संजीवनी बूटी प्रदान की जिससे उन महान् ग्रंथों का असली स्वरूप सामने आया। डा० अग्रवाल ने उन ग्रन्थों के मूलपाठों की खोज की तथा अनेक शब्दों के सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अर्थ प्रस्तुत किये। पद्मावत और कीर्तिलता को उनका वास्तविक स्वरूप डा० अग्रवाल ही अपनी संजीवनी टीका के माध्यम से प्रदान कर सके। डा० अग्रवाल की पूर्ववर्ती टीकाएँ दोषपूर्ण थीं और अनेक स्थलों पर अर्थ का अनर्थ प्रस्तुत कर रही थीं।

पाणिनीय अष्टाध्यायी—

डा० अग्रवाल ने अपने शोध-प्रबन्ध के लिए पाणिनि की अष्टाध्यायी को चुना। विश्व के समग्र शब्द विज्ञान से परिपूर्ण, संस्कृत भाषा के विश्व-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोश, सूत्रशैली के चमत्कार, साहित्योषकर्ष में विश्व के अष्टम आश्चर्य सदृश इस ग्रन्थ को अपने शोधाध्ययन के लिए डा० अग्रवाल जैसा कपिल और कणाद की कोटि का पण्डित ही चुन सकता था। डा० अग्रवाल यदि अपने शोध-ग्रन्थ का हिन्दी संस्करण पाणिनिकालीन भारत न लिखते तो शायद हिन्दी जगत को पाणिनि द्वारा किये गये महान कार्य का बोध ही न होता। डा० अग्रवाल अपने इस कृतित्व से हिन्दी को समृद्ध बनाने की एक प्रक्रिया ही छोड़ गये हैं। उनका ग्रन्थ उस कामधेनु के सदृश है जिसके दोहन से हिन्दी पुष्ट एवं स्वस्थ होती ही रहेगी।

अष्टाध्यायी के शब्द भण्डार तथा शब्दों के अर्थ और रचना के सम्बन्ध में डा० अग्रवाल लिखते हैं, "पाणिनि ने अपने समय की बोलचाल की शिष्ट भाषा की जाँच-पड़ताल करके अपनी सामग्री का संकलन किया। एक प्रकार से अधिकांश सामग्री स्वयं उन्होंने अपने लिए प्राप्त की। पाणिनि के सामने संस्कृत वाङ्मय और लोक-जीवन का वृहत् भण्डार फैला हुआ था, वह नित्य-प्रति प्रयोग में आने वाले शब्दों से भरा हुआ था। तत्कालीन जीवन का कोई भी अंग ऐसा नहीं बचा जिसके शब्द अष्टाध्यायी में न आये हों। भूगोल, शिक्षा, साहित्य, सामाजिक जीवन, कृषि, वाणिज्य, व्यवसाय, सिक्के, नाप-तोल, सेना, शासन, राजा, मंत्रि-परिषद्, यज्ञ-भाग, पूजा, देवी-देवता, साधु-संन्यासी, रंगरेज, बढ़ई, लुहार, जुलाहा, महाजन, किसान, जुआरी, बहेलिया आदि से सम्बन्धित जहाँ तक जीवन का विस्तार है वहाँ तक शब्दों को समेटने के लिए पाणिनि का जाल पूरा था। विशेषतः भौगोलिक जनपदों और स्थानों, वैदिक शाखाओं और चरणों तथा गोत्रों और वंशों के नामों से सम्बन्धित बहुत अधिक सामग्री अष्टाध्यायी में संगृहीत हो गई है। इन नामों से बनने वाले जो शब्द भाषा में दिन-रात काम में आते थे उनकी रूपसिद्धि और अर्थों का निश्चय पाणिनि का लक्ष्य था।"

वास्तव में पाणिनि-शास्त्र की महत्ता से ही डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के कृतित्व के महत्व का मूल्यांकन किया जा सकता है। पाणिनीय शास्त्र में निहित शब्द ज्ञान असीम हैं। उसका स्पर्श देश, समाज और जीवन की प्रत्येक विधा से विद्यमान है। पाणिनि के शास्त्र में भारत की तत्कालीन भौगोलिक स्थिति का बड़ा सुन्दर वर्णन है। भौगोलिक सामग्री का वर्गीकरण, भौगोलिक सीमा विस्तार, उदीच्य और प्राच्य, पर्वत, वन, नदी, जनपद, नगर, ग्राम, सामाजिक जीवन, वर्ण और जातियाँ, विवाह, स्त्री, सामाजिक संस्थाएँ, अन्न-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पान, स्वास्थ्य और रोग, वस्त्र और अलंकार, शालाएँ, नगरमापन, शयनासन, वाहन, भारवाही पशु, नौ-सन्तरण, संगीत, काल विभाग और विभिन्न जातियों के मनुष्य आदि सभी विषयों पर शब्दों की व्याख्या करते हुए भगवान् पाणिनि ने प्रकाश डाला है। आर्थिक दशा, कृषि, औषधि, वनस्पति, पशु-पक्षी, कर्मकर और भृति, वाणिज्य, व्यापार, निमान, प्रमाण, उन्मान, मुद्राएँ, व्यवहार और ऋणदान आदि का भी बड़ा विशद वर्णन पाणिनीय शास्त्र में उपलब्ध है। शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र में विद्या की प्रवृत्तियों, साहित्य के विविध प्रकारों तथा व्याकरण विषयक सामग्री की विशिष्ट चर्चा है। धर्म-दर्शन की दिशा में देवता, भक्ति, देव-मूर्तियाँ, यज्ञ और सम्बन्धित जो भी आवश्यक जानकारी सम्भव हो सके शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत की गई है। भिक्षु, उनका जीवन, उनके संघ, धार्मिक विश्वास और आचार, संघों के नाम, गणों में आयुधजीवी संघ आदि का प्रचुर वर्णन पाणिनि-शास्त्र में उपलब्ध है। जनपद, जनपदों का महत्व, जनपद सूची, राज्यतंत्र और शासन, एकराज प्रणाली, राजा, मंत्रि-परिषद् सभी का वृत्तांत सविस्तार मिलता है। अष्टाध्यायी के सूत्रों में भूगोल, इतिहास, सामाजिक स्थिति एवं संस्कृति सम्बन्धी जो सामग्री पाई जाती है उसकी प्रामाणिकता उतनी ही बढ़ी-चढ़ी है जितनी प्राचीन लेखों की या सिक्कों की मानी जाती है।

पाणिनि के सूत्रों को लेकर तत्कालीन भारतीय जीवन का जो सुंदर चित्र डा० अग्रवाल ने बनाया है उसकी झाँकी बड़ी भव्य है। जीवन का कोई अंग, भूगोल की कोई भी स्थिति, धर्म-दर्शन, शिक्षा, साहित्य की कोई भी विधा ऐसी नहीं है जिस पर डा० अग्रवाल ने प्रकाश न डाला हो। इस सर्वाङ्गीण सामग्री के प्रस्तुतीकरण से डा० अग्रवाल के उद्भट पाण्डित्य का पता चलता है। निश्चय ही उन्होंने समग्र संस्कृत वाङ्मय का आलोड़न करके पाणिनि की अष्टाध्यायी पर अपनी शोध की कलम उठाई थी। पाणिनि पर किये गये कात्यायन और पतंजलि के संस्कृत महाभाष्य अद्‌भुत ज्ञान गरिमा के भाण्डागार हैं परन्तु डा० अग्रवाल की हिन्दी व्याख्या अपने गुण में इन महाभाष्यों से किसी प्रकार भी हीनस्तर की नहीं है अपितु निश्चय रूप से समकक्ष है। डा० अग्रवाल ने समस्त सामग्री को वैज्ञानिक दृष्टि से निरखा-परखा है और अपने विपुल ज्ञान से उसे सम्यक्‌रूपेण प्रकाशित कर दिया है। उन्होंने उसके भीतर गहरी पैठ की है और आकण्ठ निमग्न होकर उसमें से जो बोधरूपी मणि निकाली है उसके प्रकाश से समस्त विश्व व्याप्त हो गया

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। डा० अग्रवाल की शोध ने पाणिनीय कृति पर छाये हुए दुरूहता के आवरण को हटा दिया है। उन्होंने पाणिनि-शास्त्र की बोधगम्यता असंदिग्ध रूप से स्थापित कर दी है। निस्संदेह डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने पाणिनि को समस्त विश्व की वस्तु बना दिया है।

डा० अग्रवाल का उद्देश्य अष्टाध्यायी के व्याकरण की उत्कृष्टता दिखाने का नहीं अपितु उसकी सांस्कृतिक सामग्री के सौन्दर्य पर प्रकाश डालना है। डा० अग्रवाल ने अष्टाध्यायी के सूत्रों से सांस्कृतिक सामग्री का प्रस्तुतीकरण किया है। उन्होंने अष्टाध्यायी के अध्ययन से प्राचीन लोक-जीवन का जीता-जागता चित्र ही उपस्थित कर दिया है। डा० अग्रवाल के अध्ययन ने पाणिनीय सूत्रों को नया जीवन प्रदान किया है और वे अब व्याकरण के शुष्क सूत्र न रहकर जनरुचि और जन-आकर्षण के केन्द्र बन गये हैं। यह डा० अग्रवाल की अद्भुत विद्वत्ता का ही सुफल है कि ये सूत्र केवल व्याकरणीय शुष्क सूत्र न रहकर एक प्रोज्ज्वल संस्कृति और विस्तृत लोक-जीवन को उद्घाटित कर रहे हैं।

अष्टाध्यायी पाणिनि का व्याकरण ग्रन्थ है। उसमें लगभग ४००० सूत्र हैं। व्याकरण के इन नीरस गूढ़ सूत्रों से वासुदेवशरण जी ने भारतीय संस्कृति की एक अनुपम झाँकी प्रस्तुत कर दी है। पुरातन ग्रन्थों से सांस्कृतिक अध्ययन का दिशाबोध प्रदान करना यह डा० वासुदेवशरण जैसे उद्भट मनीषी का ही काम हो सकता था। इस अध्ययन से उन्होंने जो निष्कर्ष निकाले वे न केवल मानव-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को स्पर्श करते हैं अपितु देश की सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक स्थिति का भी दिग्दर्शन कराते हैं। पाणिनि-कालीन भारत को पढ़कर बड़ी रोचक शैली में लिखे हुए कम से कम ६०० वर्षों (ई० पू० ५०० से पहली शती तक) के इतिहास का पता चलता है। इस ग्रन्थ में सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक क्षेत्रों को लेकर ऐसी सम्पूर्ण झाँकी प्रस्तुत की गई है कि देखते ही बनता है।

वैदिक-विज्ञान—

डा० अग्रवाल ने वेदों में प्रतिपादित तथ्यों को वैज्ञानिक आधार दिया है। वैदिक तथ्यों की व्याख्या डा० अग्रवाल ने मानवीय सत्यों के आधार पर की है। उन्होंने जो तर्क प्रस्तुत किये हैं वे अकाट्य हैं। वैदिक मन्त्रों की निगूढ़ ग्रंथियों को डा० अग्रवाल ने अपनी व्याख्याओं से बड़ी सुगमता पूर्वक सुलझा दिया है। एक के बाद दूसरा रहस्य उद्घाटित होता चला जाता है

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वस्तुस्थिति बड़ी सरल और सामान्य बन जाती है। यही तो व्याख्याकार का कौशल अथवा पाण्डित्य है।

ऋषि वैज्ञानिक थे और वैज्ञानिक ऋषि हैं। वैज्ञानिक को सच्चा ऋषि मानना चाहिये। विज्ञान की भाषा नये युग के ज्ञान-साधन की भाषा है। सत्य की जिज्ञासा ऋषि का प्रथम और अन्तिम लक्षण है। जिस प्रकार प्राचीन ऋषियों ने सत्यान्वेषण के प्रयास किये थे उसी प्रकार आज के वैज्ञानिक प्रयोगों के आधार पर उसी प्रकार के अन्वेषण कर रहे हैं। अतः प्राचीन दर्शन की श्लाघा करते हुए अर्वाचीन विज्ञान को हेय मानने की प्रणाली का अनुमोदन नहीं किया जा सकता।

डा० अग्रवाल का मत है कि विज्ञान और दर्शन दोनों ही विश्व की पहेली से निपट रहे हैं। दोनों का जूझना पक्का है, दोनों ही सत्यान्वेषी हैं। विज्ञान और दर्शन दोनों का ही सदुपयोग मानवीय कल्याण के लिए विहित है और यही नीतिशास्त्र की मर्यादा है।

जिन सत्यों को ऋषियों ने दैवीव्रत के नाम से सम्बोधित किया है वे इस प्रकार हैं—

(१) दिन और रात के चक्र में सृष्टि के आरम्भ से आज तक तिल भर का भी अन्तर नहीं पड़ा।

(२) जल के प्रवाह और मेघों के आकाश में सम्प्लवन के नियम भी अपनी-अपनी धुरी को पकड़े हुए हैं।

(३) ऋतुओं के चक्र की गति भी अटल है।

वैज्ञानिकों की प्रयोग शालाएँ दैवीव्रतों की अपरिवर्तनशील नित्यता को आधार मानकर ही जीवित हैं।

डा० अग्रवाल ने मृत्यु और अमृतत्व का वैदिक परिभाषाओं के अनुसार विश्लेषण किया है। मृत्यु का भय ही मृत्यु है और आत्मज्ञान की प्राप्ति मृत्यु पर विजय अर्थात् अमृतत्व का द्योतक है। मृत्यु का भय दुःख का सूचक है। आत्मज्ञान आनन्द की प्राप्ति है। डा० अग्रवाल ने भगवान् बुद्ध का उदाहरण दिया है कि उन्होंने जरामरणजन्य दुःखों के निवारणार्थ आत्मज्ञान लाभ किया था। गीता में भगवान् कृष्ण ने भी कहा है कि शरीर पार्थिव है परन्तु उसके भीतर जो आत्मा है वह अविनाशी है अथवा नित्य है, अजर, अमर है। वह परमात्मा का अंश है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० अग्रवाल ने कल्पना से अथवा ज्ञान से परे अतीत को अव्यक्त की संज्ञा दी है। इसी प्रकार भविष्य का क्या आकार है अथवा वह कब तक चलेगा इसको भी अव्यक्त एवं अचिन्त्य कहा है। केवल मध्यकाल ही व्यक्त है जिसे हम वर्तमान अथवा जीवन कह सकते हैं। अतीत और भविष्य के प्रति मन और बुद्धि अगम्य हैं।

वेदों के भाष्य अथवा व्याख्या के रूप में डा० अग्रवाल ने अनेक ग्रंथ तो लिखे ही हैं उन्होंने अनेक निबन्धों और पत्रों में भी वेद ज्ञान के प्रकाश को सम्यक् रूप से फैलाया है।

सृष्टि का कालक्रम—

यह सृष्टि कहाँ से उत्पन्न हुई कौन जानता है? कौन कह सकता है कि इसका जो नियन्ता है वह भी इस तथ्य को जानता है या नहीं हम नहीं जानते। प्रत्येक परमाणु का जीवन रहस्यमय है। एक-एक जीवन कोश में जीवन का स्रोत नितान्त रहस्यमय है। जड़ और चेतन की सन्धि का भी रहस्य है। शक्ति और द्रव्य का अन्तिम स्वरूप भी अज्ञात रहस्य है। किन्तु इस विश्व की रचना का ही विधान ऐसा है। एक ओर तत्व ऐसा अज्ञेय है दूसरी ओर उसका रूप कितना सुलभ, व्यापक और कितना प्रिय है? जो व्यक्त रूप है उसी का नाम जीवन है।

विज्ञान ने हमारी काल सम्बन्धी कल्पना को विस्तृत बना दिया है। वैज्ञानिकों की दृष्टि में पृथिवी की आयु लगभग दो अरब वर्ष है। आर्यों के संकल्प में दिया हुआ सृष्टि सम्वत्सर भी करीब इतना ही है। काल का आदि या अन्त तथा उसकी गणना मन और बुद्धि से परे की बात है। विज्ञान भी इस प्रकार की गणना करने में विफल रहा है। ऋषियों ने इस सम्बन्ध में क्या कहा है उसे डा० अग्रवाल के शब्दों में ही सुनिये—

"एक सृष्टि ब्रह्मा का दिन और एक प्रलय ब्रह्मा की रात है। ऐसे रात दिनों को जोड़कर जब सौ वर्ष पूरे होते हैं तब ब्रह्मा की आयु पूरी हो जाती है। लोमश ब्रह्मा के पुत्र हैं। ब्रह्मा की आयु लोमश की आयु का एक दिन समझा जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि लोमश को प्रतिदिन अपने पिता का श्राद्ध करना पड़ता है। इसके लिए लोमश सारे सिर का क्षौर न कराकर अपना एक रोम उखाड़ कर फेंक देते हैं; अर्थात् लोमश के एक रोम में एक-एक ब्रह्मा की आयु के बराबर काल की सत्ता समाई हुई है। लोमश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का नाम ही यह प्रगट करता है कि उसके रोम-रोम में काल का यह अनन्त परिमाण भरा हुआ है। लोमश की देह के रोएँ कौन गिन सकता है ?

लोमश की आयु में कितने सर्ग और प्रलय पार उतर जाते हैं ? इसकी कल्पना भी गणित के अंकों द्वारा हमारे मन को नहीं हो सकती। अनन्त काल की नाप करने में भी कौन समर्थ हो सका है ? दोनों की कल्पना से बुद्धि चकराने लगती है। मेटरलिंक के शब्दों में काल और देश, जीवन और चैतन्य, अनन्तता और नित्यता—ये अगम्य और अचिन्त्य रहस्य हैं।"

जिसे विज्ञान ने अनेक प्रयोगों और अनुसंधान के बाद Unknown or Unknowable कहा है उसे ऋषियों ने हजारों वर्ष पहले अव्यक्त, अचिन्त्य और अगम्य ठहरा दिया है। ऋषियों के अनुसार काल की प्रगति एक चक्र के समान है। मनु ने इसे यों कहा है कि काल ही काल पर प्रभाव डालकर प्रलय के बाद सृष्टि करता है। इसी का उदाहरण सोना और पुनः जागना है। प्रलय में शक्ति का संचय यही तप है। किसी अचिन्त्य शक्ति के तप में ही भारतीय ऋषि सृष्टि का विकास स्वीकार करते हैं।

अभिनन्दन ग्रन्थों का सम्पादन तथा सभाओं की अध्यक्षता—

हिन्दी जगत के शीर्षस्थ विद्वानों के अभिनन्दन ग्रन्थों के सम्पादन का भार उनके जीवन-काल में डा० वासुदेवशरण अग्रवाल पर ही आया। जिन अभिनन्दन एवं स्मृति-ग्रन्थों का सम्पादन डा० अग्रवाल को करना पड़ा उनके नाम इस प्रकार हैं—(१) सेठ कन्हैयायाल पोद्दार अभिनन्दन-ग्रन्थ, (२) श्री मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन-ग्रन्थ, (३) विक्रमांक (नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित), (४) नाथूराम प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ, (५) डा० राधाकुमुद मुकर्जी अभिनंदन-ग्रन्थ (भारत कौमुदी) निस्संदेह उपरोक्त पाँचों विभूतियाँ महान् थीं परन्तु उनके ग्रंथों के सम्पादन का कार्य भी एक महान् विभूति द्वारा सम्पन्न हुआ। डा० अग्रवाल के कुशल सम्पादन से ये पाँचों ग्रन्थ ही गौरवान्वित हुए हैं। अपनी-अपनी दिशा में पाँचों ही ग्रन्थ अद्वितीय हैं तथा इनमें से कुछ की मान्यता तो सन्दर्भ ग्रंथों के रूप में है।

डा० अग्रवाल ने अपने साहित्यिक जीवन में अनेक पत्र-पत्रिकाओं को प्राणशक्ति प्रदान की। ये पत्रिकाएँ साधारण साहित्यिक पत्रिकाएँ न थीं। ये सभी पत्रिकाएँ उच्चस्तरीय साहित्यिक एवं ऐतिहासिक शोध से सम्बन्धित थीं तथा इनमें से कुछ के लिए पुरातत्त्व संबंधी अगाध ज्ञान भी अपेक्षित था। इन पत्रिकाओं के नाम इस प्रकार हैं—(१) यू० पी० हिस्टौरीकल सुसाइटी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जरनल, (२) नागरी प्रचारिणी पत्रिका, (३) न्यूमिस्मैटिक सुसाइटी जरनल, (४) जनपद, (५) म्यूजिअम्स एसोसियेशन जरनल

डा० अग्रवाल अपने समय के धुरंधर विद्वान् थे। उनके प्रकाण्ड पाण्डित्य की धाक साहित्य, संस्कृति, इतिहास, प्राच्य विद्या, पुरातत्त्व आदि के अनेक क्षेत्रों में जमी हुई थी। टीकाकारों और भाष्यकारों में उनका स्थान देश में उच्चातिउच्च था। वेद, पुराण एवं अनेक आर्ष ग्रंथों के अध्येता के रूप में उन्होंने लोकोत्तर ख्याति प्राप्त कर रक्खी थी। उनके पाण्डित्य की इस महती ख्याति की पृष्ठभूमि में यदि उनको समय-समय पर अनेक सम्मेलनों की अध्यक्षता के लिए आमंत्रित किया जाय तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ? जिन महान संस्थाओं के वार्षिक अधिवेशनों में डा० अग्रवाल ने सभापति पद सुशोभित किया उनके नाम इस प्रकार हैं—

अखिल भारतीय व्रज-साहित्य मण्डल (सहारनपुर अधिवेशन सन् १९४९)
भारतीय संग्रहालय परिषद्, १९४६ पटना।
,, ,, ,, १९५४ अहमदाबाद।
भारतीय मुद्रा परिषद्, १९५० नागपुर।
भारतीय इतिहास परिषद्, १९५९ कटक।
अखिल भारतीय प्राच्य विद्या सम्मेलन, बम्बई।
अखिल भारतीय प्राच्य विद्या परिषद्, १९६४ गौहाटी।
वैशाली संघ महोत्सव १९५६।
वेद सम्मेलन १९५९।
बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना।
बम्बई हिन्दी विद्यापीठ दीक्षान्त भाषण १९४७।
ललित कला अकादमी।

डा० अग्रवाल भारतीय संस्कृति के अन्यतम व्याख्याता थे। वेद, पुराण, उपनिषद्, रामायण-महाभारत, व्याकरण, साहित्य, इतिहास आदि सभी पर उन्होंने अपने मूल्यवान् विचार एवं निष्कर्ष प्रस्तुत किये। देश की अनेक साहित्य, शोध, पुरातत्व, इतिहास और कला संबंधी संस्थाएँ उनकी खोज में रहती थीं और उनके संचालक डा० अग्रवाल से निरंतर सत्परामर्श और मार्ग-दर्शन प्राप्त करते थे। इस प्रकार उनकी कर्मठ कर्तव्यशीलता के क्षेत्र अनेक थे जिनमें से कुछ का उल्लेख इस प्रकार है—(१) विभिन्न पुरातत्त्व संग्रहालयों की स्थापना और उनका पुनर्गठन, (२) राष्ट्रीय संग्रहालय की स्थापना, (३)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरातत्व प्रदर्शिनी जो राष्ट्रपति भवन में उनकी देखरेख में आयोजित की गई, (४) अखिल भारतीय ब्रज-साहित्य मण्डल, (५) प्राकृत टैक्स्ट सुसाइटी, (६) म्यूजिअम्स आफ इण्डिया, (७) हिंदी जनपदीय परिषद्, (८) राजस्थान वैदिकतत्व-शोध संस्थान, (९) हिंदू विश्वविद्यालय पब्लिकेशंस बोर्ड, (१०) वेद अकादमी आदि।

शब्दों के आचार्य—

डा० वासुदेवशरण के शब्द-ज्ञान एवं शब्दाचार्यत्व का उल्लेख करते हुए डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी उनके संबंध में लिखते हैं, "शब्दों के इतिहास के वे धनी थे। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से उन्होंने सहस्त्रों अर्थ प्रसू शब्दों का संग्रह किया था। शब्दों से उनका अपूर्व अनुराग था। लोकभाषा के शब्दों को पाकर उन्हें जैसे निधि मिल जाती थी।"

यदि एक वाक्य में कहा जाय तो वे शब्दों के आचार्य थे। उनके लिए यह उलझन की बात न थी कि अमुक विषय किस क्षेत्र का है अथवा वह स्वयं किस क्षेत्र के विशेषज्ञ तथा अधिकारी विद्वान् हैं। भारतीय विद्या के प्रत्येक क्षेत्र में उनकी पैठ उनके इसी गुण के कारण है। शब्द जो दूसरों के लिए शब्द मात्र था वह शब्दों के आचार्य के लिए अर्थों का उत्स बन जाता था। शब्द की परम्परा को वह विशिष्ट विषय की कुंजी समझते थे। अष्टाध्यायी, पद्मावत, मेघदूत, हर्षचरित, कादम्बरी, विविध पुराण, वैदिक साहित्य कथा, महाभारत, हिन्दी-पाली-प्राकृत-संस्कृत साहित्य सभी पर उनका अध्ययन शब्दों के इतिहास की कहानी है। वहां शब्द और अर्थ का पद पार्वती-परमेश्वर जैसा ही पूजित और उच्चतम पद है।

डा० अग्रवाल ने अनेक जनपदीय शब्दों को अपने प्रकाण्ड संस्कृत ज्ञान से संस्कृत मूलक ठहराया है। उनके निष्कर्ष अकाट्य हैं। उनके निष्कर्षों से जनपदीय शब्दों की प्राचीन परम्परा स्थापित हो जाती है और यह परम्परा ठेठ वैदिक काल तक पहुँचती है। अनेक जनपदीय शब्दों ने अपना वर्तमान स्वरूप वेद काल में प्रचलित किया है। ये शब्द कृषि, कृषक के जीवन, भूमि, भूगोल, मनुष्यों के नाम, नगरों और ग्रामों के नाम तथा पुरातात्विक सामग्री से अधिकांशतः सम्बन्धित हैं। शब्दों के अनुसन्धान की इस शैली में पशु, पक्षी, लता, विटप, मनुष्यों के आचार-विचार, उनका रहन-सहन, वेशभूषा आदि सभी कुछ आ जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने अपने पत्रों में अगणित बार पारिभाषिक शब्दों के संकलन की आवश्यकता पर बल दिया है। यह संकलन चाहे संस्कृत और हिन्दी साहित्य का मंथन करके हो अथवा जनपदीय लोक साहित्य का। चतुर्वेदी जी को लिखे पत्रों में उन्होंने लिखा, "यह बात बराबर मेरे मन में रही है कि समस्त संस्कृत और हिन्दी साहित्य का मंथन करके और लोक में मेघ और वृष्टि से सम्बन्धित प्रचलित शब्दों का संकलन करके यदि कोई विद्वान् भारतीय मेघशास्त्र की रचना करता तो वह अपूर्व आकर्षण की वस्तु होती और उसके द्वारा अनेक पारिभाषिक शब्दों का हमारे साहित्य में फिर उद्धार हो जाता।"

साहित्य और जनपदीय समन्वय से शब्द रचना अथवा शब्द संकलन को वे बड़ा महत्व देते थे। चतुर्वेदी जी को ही आगे चलकर उन्होंने लिखा है, "बादलों की हलकी आँखमिचौनी के लिए बदलचल शब्द मैंने मेरठ के अपने गाँव में ही सुना था। उसी के समीप बिजली के चमकने के लिए 'बिजौना' और गरजने के लिए 'घोरना' धातु भी मुझे प्रचलित मिली। 'बिजोना' स्पष्ट ही संस्कृत के 'विद्योतते' से सम्बन्धित है। इसी प्रकार साहित्य और लोक के समन्वय से बहुत कुछ मूल्यवान् सामग्री एकत्र की जा सकती है।"

डा० अग्रवाल शब्दों को पुरातत्त्व की सामग्री की भाँति महत्वपूर्ण मानते हैं। वे लिखते हैं, "भारतीय इतिहास का कोई युग ऐसा नहीं है जिसके पुरातत्व की सामग्री शब्दों के रूप में लोक के जीवन में कहीं न कहीं छिपी न पड़ी हो। किसी परत में वैदिक युग के शब्द घर किये बैठे हैं, कहीं श्रौत सूत्रों की शब्दावली आयुष्मती बनकर सुरक्षित हैं, कहीं गुप्त युग की परम्पराएँ पहचान में आती हैं और कहीं मध्यकाल की धारा का स्पष्ट दर्शन मिलता है। ऐसे गूढ़ महामहिम लोक-जीवन के पुष्कल अध्ययन की चारों ओर आवश्यकता है।" डा० वासुदेवशरण अग्रवाल ने अपनी आश्चर्यमयी प्रतिभा से लोक-जीवन में प्रचलित अनेक शब्दों का तादात्म्य सीधे वैदिक काल से जोड़ा है। आर्ष ग्रन्थों का गहन अध्ययन और डा० अग्रवाल का प्रकाण्ड पांडित्य ही शब्दों की व्युत्पत्ति का ऐसा जगमगाता चित्र हिन्दी-संसार के सम्मुख प्रस्तुत कर देने में समर्थ हुआ इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

—**वृन्दावनदास**

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

श्रद्धेय पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने एक बार हिन्दी जगत् में विकेन्द्रीकरण का अभियान चलाया था। उसी अभियान के फलस्वरूप प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलनों, ब्रज साहित्य मण्डल, बुन्देलखण्ड साहित्य मण्डल, अवध साहित्य मण्डल आदि प्रान्तीय एवं माण्डलिक स्तर की हिन्दी-संस्थाओं का जन्म हुआ। इस प्रकार ब्रज-साहित्य मण्डल को हम चतुर्वेदी जी का मानसपुत्र मानते हैं। विगत कुछ वर्षों से हमारी कुछ सेवा मण्डल के हित में बन पड़ी है, चतुर्वेदी जी इस कारण हमसे प्रसन्न हैं और हमारे ऊपर बड़ी कृपा रखते हैं। उन्होंने हमको एक बार लिखा, "मेरा एक सुझाव है—बल्कि प्रार्थना है—कि आप स्व० आचार्य वासुदेवशरण जी के पत्रों की पाण्डुलिपि तैयार कर दें, क्योंकि अभी वे इकट्ठे न किये गये तो उनके नष्ट हो जाने की आशंका है।" उसी पत्र में उन्होंने आगे लिखा, "अग्रवाल जी पत्र-लेखकों में शिरोमणि थे। ...... पत्रों से रस ग्रहण करने में उन्हें आनन्द आता था। यह बात स्वयं उन्होंने मुझे ही लिखी थी और कभी-कभी तो वे पत्रोत्तर देने के लिए दो से तीन दिन का उपवास भी कर लेते थे।......... यदि ऐसे अद्वितीय विद्वान् का पत्र-संग्रह समय रहते न किया गया तो वे विस्मृति के गढ़े में विलीन हो जाँयगे और यह एक साहित्यिक दुर्घटना ही होगी। आपके पास समय है, शक्ति है, साधन है और सर्वोपरि लगन भी। इसलिये यह श्राद्ध कार्य आपके सुपुर्द करने में मुझे संकोच नहीं होता। लगे लग्गा में जो भी पुण्य-कार्य बन पड़े सो कर देना चाहिये।"

कहना न होगा इस पत्र से हमें बड़ी प्रेरणा प्राप्त हुई और हमने निश्चय किया कि चाहे कितना ही श्रम क्यों न करना पड़े इस कार्य को अवश्य पूरा करेंगे। चतुर्वेदी जी ने हमें अनेक उन विद्वानों के नाम भी लिखे जिनके पास डा० अग्रवाल के पत्रों के होने की सम्भावना थी। हमने उन सभी विद्वानों को पत्र लिखे तथा ब्रज-भारती में भी सम्पादकीय टिप्पणियों के माध्यम से हिन्दी जगत का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। डा० अग्रवाल के नाम की महिमा का क्या पूछना? अनेक विद्वानों ने स्वीकृति सूचक पत्र भेज कर हमें वांछित पत्रों की प्रतिलिपियाँ भेजने का आश्वासन दिया।

कहावत है पीछे लगा बड़ा बुरा होता है। हम भी साहित्यिक बन्धुओं के पीछे पड़ गये और फलस्वरूप उन्होंने हमें डा० अग्रवाल के मूल पत्र अथवा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिलिपियाँ भेजनी प्रारम्भ कर दीं। इस प्रक्रिया में समय तो लगा परन्तु अपेक्षित सामग्री एकत्र हो गई।

पत्र-संग्रहों की भूमिका में ही पत्र-साहित्य की विधा पर चर्चा की गई है, अन्यथा इस विधा को तो साहित्य के इतिहास में स्थान ही नहीं मिला प्रतीत होता है। वर्तमान हिन्दी-जगत् में पत्र-साहित्य की विधा को प्रकाश में लाने का श्रेय पं० बनारसीदास चतुर्वेदी और स्व० डा० हरिशंकर जी शर्मा को है। चतुर्वेदी जी ने तो पत्र-लेखन की आदत को एक व्यसन के रूप में ग्रहण किया। श्री शिवपूजनसहाय ने उनसे प्रेरणा ली। चतुर्वेदी जी और शिव जी ने अनेक साहित्यकारों को उनके उत्तर के रूप में पत्र प्राप्त करने की इच्छा से पत्र लिखे और प्राप्त पत्रों का संग्रह किया तथा उन्हें आवश्यकतानुसार हिन्दी-जगत् के समक्ष प्रस्तुत किया। इस दिशा में श्री बैजनाथसिंह विनोद ने द्विवेदी पत्रावली और द्विवेदी युगीन अन्य साहित्यकारों के पत्रों का संग्रह कर एक उल्लेखनीय कार्य किया है।

अमेरिकी संत एमर्सन के पत्रों का संकलन लगभग ३२ हजार पृष्ठों में है जिनके पाँच खण्ड उपलब्ध हैं। हिन्दी की अपेक्षा उर्दू, बँगला, मराठी आदि में पत्र साहित्य पर अधिक काम हुआ है। आश्चर्य है कि उर्दू भाषा में लगभग ४० पत्र संग्रह हैं और एक शोधार्थी उन पर शोध करके उपाधि भी प्राप्त कर चुका है, पर हिन्दी में केवल ८, १० पत्र-संग्रह ही दृष्टिगोचर होते हैं। हिन्दी में पत्र-साहित्य पर अधिकाधिक काम होने की आवश्यकता पर बल देते हुए पं० हरिशंकर जी शर्मा ने लिखा था, "जहाँ तक हमारी जानकारी है, हिन्दी में आचार्य पद्मसिंह शर्मा पत्रलेखन-कला में पारंगत थे। आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी के पत्र वास्तविक स्थिति के पोषक एवं परिचायक हैं। श्री भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, श्री प्रतापनारायण मिश्र और श्री बालमुकुन्द गुप्त की चिट्ठियों में भी अच्छी चुलबुलाहट पाई जाती है। श्री प्रेमचन्द जी के पत्र भी बड़े मार्के के हैं। काश इन तथा अन्य साहित्य महारथियों के पत्र-संग्रह प्रकाशित हो सकें तो हिन्दी की बड़ी सेवा हो।"

श्री कृष्णानन्द गुप्त का अचानक एक दिन एक पत्र हमें मिला जिसे हम यहाँ अविकल उद्धृत करना चाहते हैं—

"प्रिय श्री वृन्दावनदास जी, सप्रेम वन्दे।

अभी-अभी एक बहुत बढ़िया वाक्य पढ़ने को मिला, लार्ड बायरन का। सेवा में भेज रहा हूँ—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Letter writing is the only device for combining Solitude and good company.

—Lord Byron

मेरे लिए पत्र लेखन सचमुच ही इस स्थान की निपट एकान्तता को दूर करने और आप जैसे सहृदय मित्रों के सान्निध्य का सुख-लाभ करने का एकमात्र उपाय है।

आपका

कृष्णानन्द गुप्त

इस अयाचित पत्र को अविकल उद्धृत करने में हमारा एक आशय है और वह यह कि एक विद्वान् के हृदय में पत्र-लेखन के लिए किस प्रकार का महत्वपूर्ण स्थान विद्यमान है। वह किस प्रकार एक आंग्ल विद्वान् का मत प्रकट कर उससे सहमत होता हुआ पत्र-लेखन के महत्व को उद्घाटित करता है। सचमुच पत्र-लेखन एकान्तता को विनष्ट करके दो मित्रों का मिलन करा देता है।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल मानवता के सच्चे पुजारी थे। उन्होंने जानपद जन में जनता जनार्दन के दर्शन किये। वे बार-बार कहते हैं कि इस संसार में मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है और इस मन्त्र का उच्चारण शतमुख से करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं।

गुह्यं ब्रह्म तदिदम् ब्रवीमि नाहि मानुषत्श्रेष्ठतरं हि किंचित्। श्रीकृष्णानन्द गुप्त को लिखे पत्रों में उन्होंने लोकशास्त्र की सच्ची व्याख्या की है।

लोकवार्ता की चर्चा करते हुए वे लिखते है, "लोकवार्ता एक जीवित शास्त्र है। सहानुभूति के साथ उसका अध्ययन अपनी संस्कृति के भूले हुए पथों का उद्घाटन कर सकता है। लोक का जितना जीवन है लोकवार्ता का उतना ही विस्तार है। लोक में बसने वाला जन, जन की भूमि और भौतिक जीवन तथा तीसरे स्थान में उस जन की संस्कृति—इन तीन क्षेत्रों में लोक के पूरे ज्ञान का अन्तर्भाव होता है और लोकवार्ता का सम्बन्ध भी इन्हीं के साथ है।"

लोकवार्ता की सामग्री का संचय करने के लिए डा० अग्रवाल के मत से प्रत्येक गाँव एक खुली हुई पुस्तक के समान है। भूमि के साथ सम्बन्धित ग्राम या जनपद का प्रत्येक निवासी उस महान् पुस्तक का एक-एक पृष्ठ है।

डा० अग्रवाल हिन्दू-संस्कृति के अन्यतम उपासक हैं। उनका मत है कि हिन्दू संस्कृति समन्वय और सहिष्णुता के आधार स्तम्भों पर खड़ी है, आर्य और आर्येतर संस्कृतियों के सम्मेलन का नाम ही हिन्दू-संस्कृति है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे लिखते हैं, "आर्य संस्कृति और वन्य संस्कृति दोनों की परम्परा पारस्परिक हित साधन से आज तक जीवित है। दोनों के मानस तल एक दूसरे के लिए प्रीति भाव से युक्त हैं। उनमें एक दूसरे को उखाड़ फँकने की होड़ नहीं है और न एक दूसरे का गला घोट कर अपने आप को पुष्ट करने की भावना है। गुह निषाद और आर्य राम बाहरी भेदों को रखकर भी एक दूसरे के निकट पहुँच गये। गुह को अपना पूर्वज मानने वाले लाखों वंशज आज उसी हिन्दू संस्कृति के अंग हैं जिसे राम के वंशजों ने अपनी साधना से पोषित किया है। धर्म और सस्कृति की दृष्टि से भारत में रहने वाली सब जातियाँ एक समान उन्नत नहीं हैं फिर भी धर्म और जीवन का एक सार्वजनिक पक्ष ऐसा है जिसमें सबको भाग मिला है। धार्मिक देवता, पर्व और उत्सव मेले, नृत्य और संगीत, कृषि प्रधान जीवन पद्धति आदि अनेक साधनों से जीवन की विषमता घटती गई और समानता एवं सहानुभूति का उदय होता रहा।"

हिन्दू-संस्कृति के क्रमिक विकास का डा० अग्रवाल ने अपने पत्रों में बड़ा सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया है। उन्होंने श्री कृष्णानन्द गुप्त को लिखे पत्र में हिन्दू-संस्कृति की महानता और व्यापक लोकप्रियता का जो निरूपण किया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। वे लिखते हैं, "हिन्दूकरण की एक सर्वाभिभावी परन्तु अलक्षित पद्धति इस देश में सदा से चलती रही है और आज भी जारी है। समाज-शास्त्र की दृष्टि से हिन्दूकरण की इस प्रक्रिया ने राष्ट्र की बड़ी सेवा की है। इसी के द्वारा राष्ट्र के अनेक ऊबड़-खाबड़ अनमिल अंग पारस्परिक समझौते के भाव से एक साथ टिकने के योग्य बनते रहे हैं। हिन्दूकरण की यह पद्धति सहस्त्राब्दियों के बीच होती हुई समन्वय और समवाय के ऊँचे गौरी शंकर शिखर की ओर जनता को बढ़ाती रही है।" डाक्टर अग्रवाल का मत है कि हिन्दूकरण की पद्धति मात्स्य-न्याय पर नहीं सहिष्णुता पर आधारित है।

डाक्टर अग्रवाल ने धर्म ग्रंथों के मर्म को भी लोक साहित्य में ढूँढा है। धर्म ग्रंथों पर लोक का मानस किस प्रकार आस्थामय बना, लोक ने उनको किस प्रकार मानवीय धरातल पर अंगीकार किया इसकी बड़ी सुन्दर व्याख्या डा० अग्रवाल ने यत्र-तत्र-सर्वत्र ही अपने पत्रों में की है।

डाक्टर अग्रवाल जिस प्रकार शब्दों का संचय करते उसी प्रकार लोक-गीतों और लोक कथाओं का भी। गइयों के तकवैया कुँवर कन्हैया, चिरैया के व्याहलो आदि गीतों से भी वे उसी प्रकार प्रफुल्लित हुए जिस प्रकार श्री कृष्णानन्द गुप्त द्वारा भेजे हुए गायों और बैलों के लिए प्रयुक्त हुए विभिन्न

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक शब्दों से। श्री कृष्ण के गहने बेचने वाला रसिया उन्हें बहुत अच्छा लगा। वर्तनों की शब्द सूची, गाय-बैलों के नामों की शब्द सूची, पक्षि सूची, खेती के पारिभाषिक शब्दों का संकलन, चित्रों का संग्रह आदि डा० अग्रवाल की सतत रुचि के विषय थे। उन्होंने एक बार हिन्दी के सौ शब्दों की निरुक्ति शीर्षक लेख लोकवार्ता में प्रकाशनार्थ भेजा। वे इस प्रकार के निबन्ध खुद लिखते और अपने मित्रों से भी लिखाते थे। उन्होंने पं० बनारसीदास चतुर्वेदी के सम्पर्क से मधुकर और श्री कृष्णानन्द गुप्त के सम्पर्क से लोकवार्ता के प्रकाशन में अपना महान् योगदान दिया। वे जनपदीय ज्ञान के आचार्य थे और उनका सामयिक प्रोत्साहन और सतत प्रश्रय पाकर उक्त दोनों पत्रिकाएँ गौरवान्वित हुई। डा० अग्रवाल ने लोक-ज्ञान और लोक-संस्कृति के प्रति अपनी अभिन्न रुचि प्रदर्शित करके एक प्रकार से उनके व्यापक प्रचार का मार्ग प्रशस्त कर दिया।

डा० अग्रवाल दूसरों की लिखी हुई कहानियों को पढ़कर प्रफुल्लित होते थे और अपने अनुकूल और स्नेहमय भावों को व्यक्त कर लेखकों को प्रोत्साहित करते थे। कभी खलील जिब्रान की कहानी को जड़ाऊ नगीना बताते तो कभी ईसुरी की फागें नामक पुस्तक को देखकर श्री कृष्णानंद गुप्त को उसकी प्रशंसा में दो शब्द लिखते। उन्होंने ईसुरी को प्रतिभाशाली कवि कह कर सम्बोधित किया। इसी प्रकार वे श्री कृष्णानन्द गुप्त कृत बुन्देली कहावत कोश की पुस्तक को प्राप्त कर गद्गद हो गये थे। तीन सहस्त्र अपूर्व लोकोक्तियों का वह संग्रह उन्हें सार्वजनिक स्वागत योग्य जँचा था। उन्होंने उसे मातृभाषा हिन्दी को श्री कृष्णानन्द गुप्त की महार्घ भेंट के रूप में कहा। इस पुस्तक के प्रकाशन पर उन्होंने श्री कृष्णानन्द गुप्त को लिखा था, "यदि हिमालय से दक्षिण कोराल तक और जैसलमेर से मुंघेर तक इसी प्रकार के क्षेत्रीय लोकोक्ति संग्रह हम तैयार कर सके तो भाषा और प्रज्ञा के क्षेत्रों में आत्म संस्कृति का पुष्कल रूप हम देख सकेंगे।"

श्री कृष्णानंद गुप्त को लिखे पत्रों में लोकवार्ता के प्रकाशन पर डा० अग्रवाल ने अपने विचार व्यक्त किये हैं, उन्होंने जानपद जन के सम्पर्क से लोकशास्त्र को समझने के प्रयास पर बल दिया है। उनका मत है कि हमारी विशाल संस्कृति लोकवार्ताओं में सुरक्षित है तथा लोकवार्ताओं से हमें अपने महान् आदर्शों और परम्पराओं का बोध होता है। उन्होंने लिखा है, "हमारा देश सब दृष्टियों से विशाल है। भौतिक विस्तार और जन विस्तार का इसमें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई अंत नहीं । आर्यों की उदात्त संस्कृति से लेकर कोल, भील, संथाल आदिक वन्य जातियों का यहाँ अपरिमित क्षेत्र है । यदि हमारे हृदय में सहानुभूति है और नेत्रों में प्रेम का दीपक है तो हम मानव की अग्रिम और आदिम इन दोनों अवस्थाओं से बहुत कुछ कल्याणकर ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं । यही लोकवार्ता शास्त्र की उपयोगिता है ।"

जैसे-जैसे लोकवार्ता के अंक उन्हें प्राप्त होते वे लोकवार्ता के सम्पादन प्रकाशन पर श्री गुप्त को प्रत्येक पत्र में साधुवाद देते और अगणित ऐसी संस्तुतियाँ भी करते जिनसे वह नित नई सजधज के साथ निकल सके । उनका कहना है कि जो साहित्यिक लोक पर अपने श्रद्धा के फूल नहीं चढ़ाता अथवा यों कहिये कि उसको लेकर साहित्य सृजन नहीं करता तो वह व्यर्थ ही अपनी शक्तियों का ह्रास करता है । जब श्री कृष्णानंद गुप्त ने उनसे लोकवार्ता के लिए लेख भेजते रहने को लिखा था तब उन्होंने उत्तर दिया कि वे तो उसके लिए बिना किसी याचना के ही लिखना चाहते हैं ।

डा० वासुदेवशरण जी ने श्री कृष्णानंद गुप्त को जो पत्र लिखे है वे साहित्य की अमूल्य निधि हैं । प्रस्तुत पुस्तक में २५ पत्रों का अद्भुत संग्रह है । इनमें लोकवार्ता, जनपदीय बोलियों के शब्दों, बुन्देली कहावतों, लोकगीतों, लोक कहानियों आदि पर बड़ी उपयोगी चर्चा है । ये पत्र जनपदीय ज्ञान की पवित्र मंदाकिनी हैं जिसमें अवगाहन कर साहित्यिक को परमानंद प्राप्त होता रहेगा ।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल को जैन साहित्य में बड़ी रुचि थी । उन्होंने जैन-साहित्य के ऐतिहासिक पक्ष के प्रति अपनी रुचि के विषय में श्री अगरचंद नाहटा को लिखा था । जैन-साहित्य के ऐतिहासिक एवं साहित्यिक पक्षों में अधिक रुचि होने के कारण श्री नाहटा जी से उनकी मित्रता प्रगाढ़ हुई और परिणामस्वरूप उन्होंने अनेक पत्र नाहटा जी को लिखे । नाहटा जी को लिखे पत्रों से विदित होता है कि अग्रवाल जी जैन साहित्य के भी धुरंधर ज्ञाता थे और इसकी विभिन्न विधाओं के अध्ययन में भी वे रत थे । श्री अगरचन्द नाहटा जैन साहित्य के अन्यतम साधक हैं, उन्होंने जैन साहित्य पर अगणित लेख लिखकर हिन्दी साहित्य को भेंट किये हैं । उनके लेख हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि हैं । डा० अग्रवाल का श्री नाहटा से जैन साहित्य के विविध विषयों पर पत्र-व्यवहार चलता रहता था । डा० अग्रवाल नाहटा जी के शोधपूर्ण लेखों को उन अनेक पत्रों में प्रकाशित करा देने को उत्सुक रहते थे जिनसे उनका सम्बन्ध था ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R·PS
097
ARY-V
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Central Library
185583
Gurukula Kangri (Deemed to be University)

अग्रवाल जी ने जैन साहित्य पर अनेक लेख नाहटा जी से लिखवाकर यू० पी० हिस्टौरीकल सुसाइटी के जर्नल, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, लोक-वार्ता, मधुकर आदि में प्रकाशित करा दिये। उनका नाहटा जी से पत्र-व्यवहार इन्हीं लेखों के सम्बन्ध में चलता रहता था। डा० अग्रवाल प्रत्येक प्रकार से हिन्दी को समृद्ध करने में ही तल्लीन रहते थे। नाहटा जी से जो लेख डा० अग्रवाल ने लिखवाये उनमें से दो-चार के शीर्षकों को यहाँ उद्धृत करना उनके महत्व की दृष्टि से उपयुक्त है। वे शीर्षक इस प्रकार हैं—

वीरगाथा कालीन जैन साहित्य
जैन साहित्य का महत्त्व
जैन साहित्य में प्राचीन रासों की परम्परा
जैन पुस्तक भण्डार और उनके अमूल्य रत्न

श्री अगरचन्द नाहटा के लिखे अनेक लेखों को पढ़ कर एक बार डा० अग्रवाल ने उनको लिखा था, "मैं इस साहित्य से परिचित होकर इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि हर्षवर्द्धन के काल से लगभग एक सहस्त्र वर्षों तक के साहित्य और इतिहास के लिए जब तक जैन ग्रंथों की पूरी परीक्षा और गवेषणा न होगी तब तक हमारा काम अधूरा रहेगा। भारतीय जनता की सच्ची अनुभूति इस काल के जैन साहित्य के विमर्श से ही जानी जा सकती है।" डा० वासुदेवशरण ने विक्रमांक के लिए जैन स्रोतों से पुष्कल सामग्री संगृहीत की थी।

नाहटा जी को लिखे पत्रों से विदित होता है कि उनके सहयोग से बहुत अधिक शोध कार्य किया गया और वह मुद्रित एवं प्रकाशित भी हुआ। नाहटा जी के कला-भवन की सूची और रजिस्टर बनवाये गये। सदयवच्छ, द्रव्य परीक्षा, रत्न परीक्षा आदि अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की खोज की गई। डा० अग्रवाल का मत था कि द्रव्य परीक्षा कौटिलीय अर्थशास्त्र के बाद उस ढंग का एक मात्र ग्रन्थ देखने में आया। यह ग्रंथ सूत्र-शैली में लिखा गया था। पोद्दार अभिनंदन ग्रन्थ के लिए अग्रवालजी ने नाहटाजी से बहुत से लेख लिये। जैनागमों में श्रीकृष्ण उनमें से एक था। अग्रवाल जी ने द्रव्य परीक्षा का स्वयं सम्पादन कर उसे इण्डियन न्यूमिस्मैटिक सुसाइटी से प्रकाशित कराया।

नाहटा जी को लिखे पत्र साक्षी हैं कि दोनों विद्वानों ने पारस्परिक सहयोग से शोध कार्य को अग्रसारित ही नहीं किया अपितु महत्त्वपूर्ण लेखों और पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन भी कराया। डा० अग्रवाल का कई

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कोई अंत नहीं । आर्यों की उदात्त संस्कृति से लेकर कोल, भील, संथाल आदिक वन्य जातियों का यहाँ अपरिमित क्षेत्र है। यदि हमारे हृदय में सहानुभूति है और नेत्रों में प्रेम का दीपक है तो हम मानव की अग्रिम और आदिम इन दोनों अवस्थाओं से बहुत कुछ कल्याणकर ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यही लोकवार्ता शास्त्र की उपयोगिता है।''

जैसे-जैसे लोकवार्ता के अंक उन्हें प्राप्त होते वे लोकवार्ता के सम्पादन प्रकाशन पर श्री गुप्त को प्रत्येक पत्र में साधुवाद देते और अगणित ऐसी संस्तुतियाँ भी करते जिनसे वह नित नई सजधज के साथ निकल सके। उनका कहना है कि जो साहित्यिक लोक पर अपने श्रद्धा के फूल नहीं चढ़ाता अथवा यों कहिये कि उसको लेकर साहित्य सृजन नहीं करता तो वह व्यर्थ ही अपनी शक्तियों का ह्रास करता है। जब श्री कृष्णानंद गुप्त ने उनसे लोकवार्ता के लिए लेख भेजते रहने को लिखा था तब उन्होंने उत्तर दिया कि वे तो उसके लिए बिना किसी याचना के ही लिखना चाहते हैं।

डा० वासुदेवशरण जी ने श्री कृष्णानंद गुप्त को जो पत्र लिखे है वे साहित्य की अमूल्य निधि हैं। प्रस्तुत पुस्तक में २५ पत्रों का अद्‌भुत संग्रह है। इनमें लोकवार्ता, जनपदीय बोलियों के शब्दों, बुन्देली कहावतों, लोकगीतों, लोक कहानियों आदि पर बड़ी उपयोगी चर्चा है। ये पत्र जनपदीय ज्ञान की पवित्र मंदाकिनी हैं जिसमें अवगाहन कर साहित्यिक को परमानंद प्राप्त होता रहेगा।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल को जैन साहित्य में बड़ी रुचि थी। उन्होंने जैन-साहित्य के ऐतिहासिक पक्ष के प्रति अपनी रुचि के विषय में श्री अगरचंद नाहटा को लिखा था। जैन-साहित्य के ऐतिहासिक एवं साहित्यिक पक्षों में अधिक रुचि होने के कारण श्री नाहटा जी से उनकी मित्रता प्रगाढ़ हुई और परिणामस्वरूप उन्होंने अनेक पत्र नाहटा जी को लिखे। नाहटा जी को लिखे पत्रों से विदित होता है कि अग्रवाल जी जैन साहित्य के भी धुरंधर ज्ञाता थे और इसकी विभिन्न विधाओं के अध्ययन में भी वे रत थे। श्री अगरचन्द नाहटा जैन साहित्य के अन्यतम साधक हैं, उन्होंने जैन साहित्य पर अगणित लेख लिखकर हिन्दी साहित्य को भेंट किये हैं। उनके लेख हिन्दी साहित्य की अनुपम निधि हैं। डा० अग्रवाल का श्री नाहटा से जैन साहित्य के विविध विषयों पर पत्र-व्यवहार चलता रहता था। डा० अग्रवाल नाहटा जी के शोधपूर्ण लेखों को उन अनेक पत्रों में प्रकाशित करा देने को उत्सुक रहते थे जिनसे उनका सम्बन्ध था।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

R.PS
097
ARY-V
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Central Library Gurukula Kangri (Deemed to be University) 185583

अग्रवाल जी ने जैन साहित्य पर अनेक लेख नाहटा जी से लिखवाकर यू० पी० हिस्टौरीकल सुसाइटी के जर्नल, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, लोक-वार्ता, मधुकर आदि में प्रकाशित करा दिये। उनका नाहटा जी से पत्र-व्यवहार इन्हीं लेखों के सम्बन्ध में चलता रहता था। डा० अग्रवाल प्रत्येक प्रकार से हिन्दी को समृद्ध करने में ही तल्लीन रहते थे। नाहटा जी से जो लेख डा० अग्रवाल ने लिखवाये उनमें से दो-चार के शीर्षकों को यहाँ उद्धृत करना उनके महत्व की दृष्टि से उपयुक्त है। वे शीर्षक इस प्रकार हैं—

वीरगाथा कालीन जैन साहित्य
जैन साहित्य का महत्त्व
जैन साहित्य में प्राचीन रासों की परम्परा
जैन पुस्तक भण्डार और उनके अमूल्य रत्न

श्री अगरचन्द नाहटा के लिखे अनेक लेखों को पढ़ कर एक बार डा० अग्रवाल ने उनको लिखा था, "मैं इस साहित्य से परिचित होकर इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि हर्षवर्द्धन के काल से लगभग एक सहस्त्र वर्षों तक के साहित्य और इतिहास के लिए जब तक जैन ग्रंथों की पूरी परीक्षा और गवेषणा न होगी तब तक हमारा काम अधूरा रहेगा। भारतीय जनता की सच्ची अनुभूति इस काल के जैन साहित्य के विमर्श से ही जानी जा सकती है।" डा० वासुदेवशरण ने विक्रमांक के लिए जैन स्रोतों से पुष्कल सामग्री संगृहीत की थी।

नाहटा जी को लिखे पत्रों से विदित होता है कि उनके सहयोग से बहुत अधिक शोध कार्य किया गया और वह मुद्रित एवं प्रकाशित भी हुआ। नाहटा जी के कला-भवन की सूची और रजिस्टर बनवाये गये। सदयवच्छ, द्रव्य परीक्षा, रत्न परीक्षा आदि अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की खोज की गई। डा० अग्रवाल का मत था कि द्रव्य परीक्षा कौटिलीय अर्थशास्त्र के बाद उस ढंग का एक मात्र ग्रन्थ देखने में आया। यह ग्रंथ सूत्र-शैली में लिखा गया था। पोद्दार अभिनंदन ग्रन्थ के लिए अग्रवालजी ने नाहटाजी से बहुत से लेख लिये। जैनागमों में श्रीकृष्ण उनमें से एक था। अग्रवाल जी ने द्रव्य परीक्षा का स्वयं सम्पादन कर उसे इण्डियन न्यूमिस्मैटिक सुसाइटी से प्रकाशित कराया।

नाहटा जी को लिखे पत्र साक्षी हैं कि दोनों विद्वानों ने पारस्परिक सहयोग से शोध कार्य को अग्रसारित ही नहीं किया अपितु महत्त्वपूर्ण लेखों और पुस्तकों का मुद्रण और प्रकाशन भी कराया। डा० अग्रवाल का कई

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महत्त्वपूर्ण संस्थाओं से प्रभावकारी सम्पर्क था, वे शोधपूर्ण मूल्यवान् सामग्री को किसी न किसी संस्था के माध्यम से प्रकाशित करा ही देते से। नाहटा जी को लिखे पत्रों में अनेक महत्वपूर्ण लेखों, पुस्तकों, पत्रिकाओं आदि के उल्लेख वर्तमान हैं जो शोधार्थी को बड़ी मूल्यवान् सामग्री की ओर संकेत कर रहे हैं।

डा० अग्रवाल ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को जो पत्र लिखे वे अनेक दृष्टियों से सर्वाधिक महत्व के हैं। डा० अग्रवाल जनपदीय आन्दोलन के प्रवर्तक, आचार्य, होता सब ही कुछ थे और इस स्थिति में उनको चतुर्वेदी जी से विपुल सहयोग मिला। यदि चतुर्वेदी जी का उनको इस दिशा में पूरा सहयोग न मिला होता तो जनपदीय आन्दोलन का भविष्य कभी मुखरित न होता। वस्तुतः चतुर्वेदी जी ने ही उस आन्दोलन को प्रवाहमयी धारा प्रदान की।

चतुर्वेदी जी को लिखे गये पत्र वस्तुतः जनपदीय आन्दोलन के विश्व-कोष हैं। कोई भी विद्वान् उन पत्रों से जनपदीय आन्दोलन का रूप, उसका महत्व, उसकी उपयोगिता का अनुमान लगा सकता है वरन् हम तो यहाँ तक कहेंगे कि उनके माध्यम से अथवा उनके सम्यक् अध्ययन के आधार पर वह जनपदीय अध्ययन पर एक ग्रंथ की रचना भी कर सकता है।

जनपदीय आन्दोलन को डा० अग्रवाल राष्ट्रीय महत्व का मानते थे। डा० बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे एक पत्र में वे लिखते हैं, "जनपदीय जीवन के साथ हमारे परिचय का विस्तार एक राष्ट्रीय महत्व की समस्या है। जनपदीय साहित्य का कार्य भी उसी का अंग है। मेरी समझ में हमारे भावी जीवन के पचास वर्षों का दिक् मंत्र जनपदीय कार्य में समवेत है।

डा० अग्रवाल कहावतों, लोकोक्तियों और मुहाविरों को भाषा की जान मानते थे। उनकी राय में भाषा के लिये वे प्राणवायु सदृश हैं। भाषा को सजीव बनाने के लिए उनके संरक्षण की अनिवार्यता है। उन्होंने चतुर्वेदी जी को लिखा, "हिन्दी साहित्य में लोकोक्तियों के संग्रह का जितना भी कार्य शुरू से आज तक हुआ है उसका परिचय देने वाला एक लेख 'मधुकर' में प्रकाशित होना चाहिये। इसके अतिरिक्त बँगला, गुजराती, मराठी, पंजाबी, सिंधी, काश्मीरी, पश्तो, नैपाली भाषाओं की कहावतों के विषय में बहुत कार्य हुआ है और उसका परिचय भी हमें हो तो अच्छा है। जिस दिन हिन्दी लिखने की शैली में कहावतों का उचित आदर होगा उसका रूप खिल उठेगा। यही हाल मुहाविरों का है जो वाक्यों में जान डाल देते हैं।……… अनेक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनपदों में बिखरी हुई पर लोक के कण्ठ में सुरक्षित भाषा सम्पत्ति का संग्रह कुबेर के कोष की तरह आकर हिन्दी के टटपूँजिया भण्डार को भर देगा।"

जनपदीय सामग्री को वह जनपद कल्याणीय और बाहर से प्राप्त सामग्री को सेतुबंध की उपमा देते थे। डा० अग्रवाल ने स्वयं अपनी भाषा में लोक साहित्य के अनेक शब्दों को समाविष्ट किया है जिससे लोक साहित्य के परिनिष्ठित साहित्य से मिश्रण का अपूर्व रूप दृष्टिगोचर होता है। वास्तव में डा० अग्रवाल ने लोक साहित्य का अपने लेखन में समावेश करके उसे और परिनिष्ठित हिन्दी को गौरवान्वित किया है। एक बार उन्होंने चतुर्वेदी जी को दीपावली की भेंट स्वरूप एक श्लोक भेंट किया था। वह श्लोक इस प्रकार है—

एकैव वन्दनीया सा हिन्दी हिन्दी महती देवता।
जनपद कल्याणीय योजनास्ति यस्यं शिवा॥

वे जनपदीय शब्दों का ग्रहण करना एक हिंदी-सेवी और साहित्यिक कार्यकर्ता का मुख्य कर्तव्य समझते थे। उनका कहना था हिन्दी की मुख्य सेवा यही है और हिन्दी का भला इसी में है। वे हिन्दी के 'टटपूँजियापन' और अथवा दलिद्दर' को जनपदीय शब्दों के भरपूर प्रयोग से दूर करने में ही हिन्दी का हित समझते थे और इसी का अनवरत प्रचार करते थे। उन्होंने एक बार चतुर्वेदी जी को लिखा, "प्रत्येक व्यक्ति को दो-दो हजार नये नाम और शब्द जनपद साहित्य से सीखने के लिए तैयार हो जाना चाहिये। पाठ्य-पुस्तकों की क्रमबद्ध श्रेणी के द्वारा लगभग सहस्त्रों जनपदीय शब्द हमें अपने बालकों के कण्ठ में प्रतिष्ठित करने होंगे। यदि हमें धान और गेहूँ के लहलहाते खेत में छोड़ दिया जाय, यदि किसी उपवन में वसन्त की लक्ष्मी का परिचय कराने का भार हमें सौंप दिया जाय तो क्या उस समय के लिये दो-चार सौ पारिभाषिक शब्दों की पूँजी का आसरा हमारे पास है? क्या उस समय हमें हमें अपनी भाषा के टुटपूँजियापन पर खीझना तो न पड़ेगा? गुड़ के कोल्हू में जाकर जो साहित्यिक सौ-दो सौ वहीं के शब्द और मुहाविरों में उस समस्त प्रक्रिया का वर्णन साहित्य को भेंट चढ़ाएगा वह सचमुच बड़ी भारी सेवा करेगा। घर और बाहर, खेत और क्यार, बन और रन सभी जगह साहित्य की पुस्तक खुली हुई है। परमा बढ़ई, चिम्मन कुम्हार, केशव किसान, ठकुरी मुराव और उसके एक सौ एक बन्धु उस खुली हुई पुस्तक के पृष्ठ हैं जिन्हें हम जब चाहें सुविधापूर्वक बाँच सकते हैं।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० अग्रवाल ने एक बार चतुर्वेदी जी को 'मधुकर' का एक ऐसा अङ्क निकालने की सलाह दी जिसमें निरे जनपदीय अध्ययन सम्बन्धी लेख हों और जिसमें कम से कम २००० जनपदीय शब्द लेखों की भाषा में गुँथकर पाठकों की भेंट किये जाँय। ग्रामों में प्रचलित अनेक कुटीर उद्योगों और कृषि कर्म में प्रयुक्त हजारों ऐसे जनपदीय शब्द हैं जिनसे उनके नितान्त पारिभाषिक होने के कारण आज हिन्दी जनता अपरिचित है।

अनेक प्रसंग ऐसे आये हैं जिनमें डा० अग्रवाल ने अपने प्रकृति प्रेम और प्रकृतिस्थ पदार्थों के विशाल ज्ञान और अनुभव का परिचय दिया है। कभी वेत्रवती की सैर तो कभी यमुना के पुलिन पर बैठकर यमुना के सौन्दर्य का वर्णन, कभी फगुनहटे का चित्रण तो कभी किसी गिरिशृङ्ग की शोभा का वृत्तान्त यही क्रम चलता रहता। प्रकृति का वर्णन करने में उनकी प्रवृत्ति काव्यमयी हो जाती थी जैसा कि उनके अनेक पत्रों से प्रकट होता है। वनदेवी का सान्निध्य, पर्वतोत्सङ्ग के उदार प्राङ्गण, भारतीय शिल्प के दर्शन आदि पर लिखते तो उनकी लेखनी दिव्य बन जाती। वे बड़ी सुन्दर भाषा में अपनी श्रद्धा और प्रशंसा के सुमन चढ़ाते, उनकी सरस्वती की सारस्वत प्रतिमा खिल उठती और ऐसे मधुरिमापूर्ण उद्गार प्रकट करते और ऐसा मनोरम चित्र प्रस्तुत करते कि पाठक को प्रतीत होता कि वह स्वयं दृश्यों के बीच विद्यमान है और नयनाभिराम सुख से आप्लावित हो रहा है।

डा० अग्रवाल के डा० सत्येन्द्र के नाम लिखे हुए पत्र कई दृष्टियों से बड़े महत्वपूर्ण हैं। ये पत्र अधिकांशतः ब्रज-साहित्य मण्डल के कार्यकलापों तथा दो गौरवशाली अभिनन्दन ग्रन्थों से सम्बन्धित हैं। लोक साहित्य पर तो अनिवार्यतः इनमें भी चर्चा आई ही है। सेठ कन्हैयालाल पोद्दार अभिनन्दन ग्रंथ और श्री मैथिलीशरण गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ इन दोनों महारथियों के पुष्कल सहयोग से ही अस्तित्व में आये यह इन पत्रों का अलक्षित रहस्य है। दिल्ली में निवास करते हुए डा० अग्रवाल मथुरास्थ ब्रज-साहित्य मण्डल की पूरी देख-रेख रखते थे और उसके कार्यकलापों का संचालन डा० सत्येन्द्र जैसे मित्रों के माध्यम से करते थे। अपने पत्रों में उन्होंने सूर के तैल चित्र, मण्डल के भवन, ब्रज-भारती के अङ्क और विशेषाङ्कों की व्यवस्था सम्बन्धी परामर्श दिया तथा अपेक्षित मार्गदर्शन किया।

डा० सत्येन्द्र लिखित 'ब्रज लोक साहित्य का अध्ययन' शीर्षक पुस्तक पर अपना मत प्रकट करते हुए डा० अग्रवाल ने उनको लिखा, "ब्रज लोक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य का अध्ययन' जनपदीय समुद्र मंथन से उत्पन्न चमकता हुआ रत्न है। लोक साहित्य का दोहन करने में क्या कुछ मिल सकता है यह आपने कर दिखाया। इस ग्रन्थ के रूप में मेरे अपने मन का एक स्वप्न पूरा हुआ है। ब्रज-लोकगीत और लोक कहानियों के सम्बन्ध में चार सौ पृष्ठों की अत्यन्त सुपाठ्य सामग्री आपने प्रस्तुत कर दी है। उसके अध्ययन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अनेकों के लिए मार्गदर्शक होगा। मदारी का रचा हुआ ढोला पढ़कर चित्त प्रसन्न हो गया। उसने करहे का जो वर्णन किया है वह मुझे सारे साहित्य में कहीं नहीं मिला। ब्रज के दूसरे ढुलैयों की रक्षा भी समय रहते होनी चाहिये। आपने जनपदीय साहित्य के संकलन के क्षेत्र में एक साका किया है जिसका मूल्यांकन आगे चलकर होगा। ब्रज-साहित्य मण्डल का यही मीठा फल हृदय को तृप्त कर देने वाला है। अकेला ब्रज ही क्या ऐसा कौनसा जनपद है जहाँ लोक साहित्य के सरोवर इसी तरह लबालब न भरे हों? आपके सदृश छीर वृत्ति के सुलझे हुए कार्यकर्ता चाहिये। मेरी शुभ कामना है कि आप जीवन पर्यन्त इस कार्य का विस्तार करते रहें। अभी ब्रज में अपरिमित सामग्री मिलने की आशा है।"

डा० सत्येन्द्र को लिखे हुए एक पत्र में डा० अग्रवाल ने उनकी साहित्यिक अन्तःपैठ की बड़ी प्रशंसा की है। श्री मैथिलीशरण गुप्त अभिनंदन ग्रंथ के लिए डा० सत्येन्द्र ने जो लेख भेजा था उसमें उन्होंने गुप्त जी की कवित्व शक्ति पर अपने विचार व्यक्त किये थे। उस लेख से डा० अग्रवाल को बड़ी प्रसन्नता हुई। उन्होंने डा० सत्येन्द्र को लिखा, "आपका लेख पढ़ गया। आपने कितनी अन्तःपैठ से अध्ययन के एक नये दृष्टिकोण का आविर्भाव किया है? 'गुप्त जी में मानव आत्मा ने ही कवित्व प्राप्त किया है' आपकी यह स्वर्णाक्षरी अन्तिम स्थापना मानो हमारे सारे अभिनन्दन ग्रंथ की सूत्रात्मा बन गई है। इस अध्ययन के पीछे बहुत मनन किया गया है। बधाई"

वास्तव में डा० अग्रवाल के डा० सत्येन्द्र को लिखे हुए इन पत्रों से डा० सत्येन्द्र की उस अद्भुत सेवा का पता चलता है जो उन्होंने ब्रज-साहित्य मण्डल की उसके प्रधानमंत्री पद पर रहकर की। डा० सत्येन्द्र के लोक साहित्य पर लिखें तीन ग्रन्थ ब्रज लोक संस्कृति, ब्रज की लोक कहानियाँ और ब्रज-लोक साहित्य का अध्ययन उनकी अमर कृतियाँ हैं, इनमें से प्रथम दो तो मण्डल द्वारा ही प्रकाशित किये गये और तीसरा श्री महेन्द्र जी द्वारा आगरा से प्रकाशित हुआ। डा० अग्रवाल के इन मूल्यवान् पत्रों में डा० सत्येन्द्र के साहित्यिक व्यक्तित्व की एक सुन्दर झाँकी अनायास ही प्रस्तुत हो गई है। कुछ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्ष पीछे डा० सत्येन्द्र ने ब्रज-साहित्य का इतिहास शीर्षक एक विशाल ग्रन्थ भी लिखा जो अपने विषयवस्तु की दृष्टि से अनुपमेय है। ब्रज-साहित्य मण्डल और उसके विनम्र कार्यकर्ता डा० सत्येन्द्र की महान् उपलब्धियों से गौरवान्वित हैं तथा वे मण्डल के लिए की हुई उनकी सेवाओं के प्रति सदैव ऋणी रहेंगे।

डा० अग्रवाल के साहित्य वाचस्पति श्री प्रभुदयाल मीतल के नाम लिखे हुए २२ पत्र इस संग्रह में प्रस्तुत हैं। इन पत्रों मेंडा० अग्रवाल का ब्रज-साहित्य और ब्रज-संस्कृति का अन्यतम प्रेमी होना सिद्ध होता है। श्री मीतल जी ने ब्रज-साहित्य से सम्बन्धित अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं। इन ग्रन्थों में से कई की भूमिकाएँ डा० अग्रवाल द्वारा लिखी गई हैं। जैसे-जैसे मीतल जी के लिखे हुए ग्रन्थ एक-एक करके डा० अग्रवाल के पास पहुँचते उनके आनन्द का पारावार न रहता। मीतल जी के प्रत्येक ग्रंथ को देखकर वे अतिशय प्रसन्नता व्यक्त करते। उन्होंने कई पत्रों में मीतल जी की गवेषणापूर्ण शैली और उनके पाण्डित्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। मीतल जी की लिखी तानसेन एवं बैजू और गोपाल शीर्षक पुस्तकों को प्राप्त कर डा० अग्रवाल ने उनको लिखा, "आपने तानसेन की जीवनी के सम्बन्ध में किम्वदन्ती और इतिहास से उपलब्ध सामग्री का बहुत ही विवेकपूर्ण उपयोग किया है और दोनों के बीच की संकरी रेखा पर इतनी सावधानी से पैर रक्खा है कि मुझे लगा कि कोई सुलझा हुआ इतिहासज्ञ लिख रहा है। आपके परिणाम सजगता पूर्ण हैं।"

साहित्य लहरी पर अपना मत प्रकट करते हुए उन्होंने लिखा था, "साहित्य लहरी पर ऐसा पाण्डित्यपूर्ण विवेचन पहले कभी नहीं हुआ। ८० पृष्ठों की लम्बी भूमिका में इनके सम्बन्ध में ठोस विचार किया गया है। इनके कर्तृत्व की प्रामाणिकता पर जो कहना शक्य है आपने कहा है और समस्या को नया बल दिया है। टीका के अंश में आपकी विद्वत्ता की छाप सर्वत्र है।"

इस युग में ब्रज-साहित्य पर जितना श्री मीतल जी ने लिखा है उतना अन्य किसी एक व्यक्ति ने लिखा हो ऐसा हमें ज्ञात नहीं है। ब्रज के साहित्य पर जितना काम उन्होंने किया है शायद एक पूरी संस्था भी न कर पाती। हमारी धारणा है कि ब्रज-साहित्य के पुष्कल पुनरुद्धार का श्रेय आदरणीय श्री मीतल जी को है।

मीतल जी के महान् ग्रन्थ ब्रज के सांस्कृतिक इतिहास की भूमिका तो डा० अग्रवाल ने एक प्रकार से मृत्यु-शय्या से ही लिखाई थी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० अग्रवाल ने मण्डल एवं ब्रज-भारती की व्यवस्था के सम्बन्ध में मीतल जी को अनेक पत्र लिखे थे। वस्तुत: डा० सत्येन्द्र और श्री मीतल जी को लिखे पत्रों से ब्रज-साहित्य मण्डल के विगत इतिहास पर पुष्कल प्रकाश पड़ता है।

प्रस्तुत संग्रह में श्री गणेश चौबे को लिखे हुए डा० अग्रवाल के बीस पत्र विद्यमान हैं। ये पत्र भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। श्री गणेश चौबे लोक साहित्य के विख्यात् विद्वान् और अनुसन्धान कर्ता हैं। उन्होंने अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया है तथा कई महत्वपूर्ण शोध पत्रों और पत्रिकाओं का वे संपादन भी करते रहे हैं। उनके गवेषणापूर्ण लेख अनेक ख्यातनामा शोध-पत्रिकाओं में निकल चुके हैं। भोजपुरी में उन्होंने बहुत काम किया है और उस लोकभाषा के मूर्धन्य विद्वानों में उनकी गणना है। श्री गणेश चौबे अपने असीम जनपदीय ज्ञान के कारण डा० अग्रवाल के सम्पर्क में आये और उनके तथा डा० अग्रवाल के बीच बड़ा उपयोगी पत्र व्यवहार चला।

श्री गणेश जी जानपदिक लोकगीत और कहानियों के संग्रह का कार्य कर रहे थे। डा० अग्रवाल ने उन्हें अनेक विस्तृत पत्र लिखकर संग्रहकार्य की प्रणाली पर प्रकाश डाला, चौबेजी की जिज्ञासाओं की पूर्ति तथा मार्गदर्शन किया। उन्होंने स्वयं एक जिज्ञासु की भाँति गणेश जी से अनेक पारिभाषिक शब्दों की जानकारी प्राप्त की। चावल की बिहार में प्रचलित सभी किस्मों को उन्होंने किस साधना के साथ इकट्ठा किया है यह गणेश जी को लिखे पत्रों से द्रष्टव्य हैं। गणेश जी ने लोक साहित्य के अध्ययन, मनन और संकलन का कितना व्यापक क्षेत्र अपने लिए चुना था और वे कितना गुरुतर कार्य अपने ऊपर ओढ़े हुए थे यह भी इन पत्रों से प्रकट होता है।

डा० अम्बाप्रसाद सुमन को लिखे हुए १६ पत्रों का संग्रह भी मनन करने योग्य है। डा० अग्रवाल ने सुमन जी की कृषक शब्दावली की भूमिका लिखी तथा उस पर अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किये। हम इस पर प्राक्कथन में यथेष्ट चर्चा कर चुके हैं अत: फिर कुछ लिखना पुनरावृत्ति होगी। डा० अम्बाप्रसाद सुमन विख्यात् समालोचक एवं भाषा-विज्ञान शास्त्री हैं। उनकी १५ पुस्तकें और लगभग ३०० लेख प्रकाशित हैं। लोक साहित्य पर किये हुए उनके महत्वपूर्ण कार्य के कारण उनका डा० अग्रवाल के घनिष्ठ सम्पर्क में आना स्वाभाविक था।

अन्य विद्वानों को लिखे हुए डा० अग्रवाल के पत्रों में १५ पत्र चिरगाँव निवासी श्री हरगोविन्द गुप्त के नाम हैं। ये पत्र भी लोक साहित्य से सम्बन्धित

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं इन पत्रों में भी अनुसन्धान की महत्त्वपूर्ण सामग्री विद्यमान है। प्रसिद्ध लोक साहित्य मर्मज्ञ श्री रामनारायण उपाध्याय को लिखे १० सुन्दर पत्र इस पुस्तक में संगृहीत हैं। ये पत्र भी निमाड़ी लोकगीत, निमाड़ी लोक कहावतों, कहानियों तथा लोक साहित्य से सम्बन्धित अन्य चर्चाओं से युक्त हैं। इन पत्रों से श्री रामनारायण उपाध्याय की उत्कट साधना, लोक साहित्य पर किये हुए उनके श्रम और उनकी विद्वत्ता का पता चलता है।

बुन्देलखण्ड के वयोवृद्ध एवं प्रसिद्ध साहित्यकार साहित्य वारिधि श्री गौरीशंकर जी द्विवेदी के नाम भी सात पत्रों ने इस संग्रह में स्थान प्राप्त किया है। पत्र भी बुन्देली लोक साहित्य की विभिन्न विधाओं की चर्चा से सम्बन्धित हैं। श्री अयोध्यासिंह (संचालक श्री जगन्नाथ ज्ञान कुटीर) बख्तियारपुर (पटना) के निवासी हैं। उनके भी डा० अग्रवाल के समय-समय पर लिखे हुए तीन पत्र इस पुस्तक में दिये गये हैं। ये पत्र भी जनपदीय शब्दों की छानबीन और जानकारी से सम्बन्धित हैं।

भारती अनुसंधान भवन के संस्थापक मथुरा निवासी श्री राधेश्याम जी द्विवेदी को लिखे गये डा० अग्रवाल के तीन पत्रों में एक पत्र जो ज्योतिषमार्तण्ड श्री शिवप्रकाश जी महाराज के निधन पर प्रेषित किया गया है बड़ा मार्मिक एवं पाण्डित्यपूर्ण है। उस पत्र में ज्यो० शिवप्रकाश जी महाराज के प्रकाण्ड ज्योतिष-ज्ञान पर प्रकाश पड़ता है तथा उस दिवंगत महापुरुष के प्रति डा० अग्रवाल के अत्यन्त श्रद्धास्पद संस्मरणों का बड़ा मार्मिक और हृदयग्राही चित्र उपलब्ध होता है। अन्य दो पत्र ज्यो० राधेश्याम जी को औदीच्य ब्राह्मणों के इतिहास के सम्बन्ध में लिखे गये हैं।

डा० रामस्वरूप आर्य को लिखे गये दो पत्रों में जायसी पर शोधपूर्ण चर्चा है और बिल्कुल नई जानकारी देने के कारण वे महत्वपूर्ण हैं। श्री हरि-मोहनलाल जी श्रीवास्तव को उनकी कृतियों के सम्बन्ध में लिखे गये पाँच पत्र बड़े रोचक हैं। डा० अग्रवाल ने श्रीवास्तव जी को साहित्य और संस्कृति की सेवा करते रहने पर बधाई दी है।

आचार्य पं० गणेशदत्त जी पाण्डेय को लिखे गये पाँच पत्र व्यक्तिगत हैं। श्री कृष्णसहाय गर्ग उनके समधी हैं। श्री गर्ग को लिखा पत्र डा० अग्रवाल की गहन आत्मीयता, सहृदयता और स्नेहशीलता का द्योतक है। श्रीकृष्णसहाय गर्ग की पुत्री डा० वासुदेवशरण जी के पुत्र को ब्याही थी। विवाहोपरान्त डा० अग्रवाल ने यह पत्र अपने समधी श्री कृष्णसहाय गर्ग को लिखा था। श्री गर्ग

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एस. आर. के. कालेज फीरोजाबाद के तत्कालीन प्रधानाचार्य थे। उन्होंने इस पत्र को कालेज की पत्रिका में छपाया था और इस पर अपने मार्मिक उद्‌गार व्यक्त किये थे।

डा० अग्रवाल की विद्वत्ता, उनके पाण्डित्य तथा उनके द्वारा की हुई साहित्य एवं समाज सेवा का मूल्यांकन अनेक प्रकार से किया गया है। "जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।" इस चौपाई को किसी सामर्थ्यवान् अथवा विभूति सम्पन्न महापुरुष के लिए ही लागू किया जा सकता है कारण ऐसे ही ऐश्वर्यवान् व्यक्तित्व में इस प्रकार के मूल्यांकन के लिए अपरिमित क्षेत्र मिल सकता है। हमारी दृष्टि में डा० अग्रवाल का उनके जीवन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य था जनपदीय आन्दोलन का सूत्रपात करना। उन्होंने जनपदीय साहित्य के महत्व को साहित्यिकों के सम्मुख प्रस्तुत किया, उसके लिए जनता में रुचि उत्पन्न की, जनपदीय साहित्य के माध्यम से हिन्दी के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त किया। उन्होंने अपने अगणित लेखों, निबन्धों और पत्रों में अनेक प्रकार से सिद्ध कर दिया है कि जनपदीय साहित्य का अध्ययन और उसके प्रति रुचि से ही हिन्दी को उन्नति हो सकती है, उसके भण्डार की श्रीवृद्धि हो सकती है।

जनपदीय अध्ययन के उद्देश्य पर प्रकाश डालते हुए डा० अग्रवाल लिखते हैं, "हमारी जनता के जीवन का जितना भी विस्तार हैं उस सबको जानने, पहिचानने और फिर से जीवित करने का सशक्त व्यापार जनपदीय अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है। लोगो के पिछड़े हुए ध्यान को हम बार-बार इस आन्दोलन द्वारा जनता के जीवन पर केन्द्रित करना चाहते हैं। जनता ही हमारे उदीयमान राष्ट्र की महती देवता है। हमारे सब आयोजनों के मूल में और सब विचारों के केन्द्र में जनता ही प्रतिष्ठित है। यह सत्य जनपदीय अध्ययन का मेरुदण्ड है। जनता के जीवन के साथ हमारी सहानुभूति और आत्मा जितनी दृढ़ होगी उतना ही अधिक हम जनपदीय अध्ययन की आवश्यकता को समझ पावेंगे।"

जनपदीय अध्ययन के एक विद्यार्थी को किस प्रकार तीर्थयात्री की भाँति ग्रामीण अंचल में पहुँचकर जनपदीय सामग्री का संकलन करना चाहिये यह स्वयं डा० अग्रवाल के शब्दों में सुनिये, "जनपदीय अध्ययन के विद्यार्थी को देहात में चारों ओर शब्द और अर्थ के भण्डार खुले हुए मिलते हैं। नये-नये शब्दों को वह अपनी झोली में भर कर लौट सकता है। जनपदीय जीवन

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का एक पक्का नियम यह है कि वहाँ हर वस्तु के लिए एक शब्द है। उस क्षेत्र में जो भी वस्तु है उसका नाम अवश्य है। कार्यकर्ता को इस बात का दृढ़ विश्वास होना चाहिये। ठीक नाम को प्राप्त कर लेना उसकी अपनी योग्यता की कसौटी है। यदि हम सरल और स्वाभाविक ढङ्ग से किसी देहाती व्यक्ति को बातों में लगा सकेंगे तो उसकी शब्दावली का भण्डार हमारे सामने आने लगेगा। उस समय हमें धैर्य के साथ अपने मन की चलनी में उन शब्दों को छान लेना चाहिये और बातचीत में हलके प्रश्नों के व्याज से चर्चा को आगे बढ़ाना चाहिये। जनपदीय व्यक्ति उस गौ के समान है जिसके थनों में मीठा दूध भरा रहता है किन्तु उस दूध को पाने के लिए युक्तिपूर्वक दुहने की आवश्यकता है।"

डा० अग्रवाल का मत है कि जनपदीय अध्ययन के विषय अनेक हैं। उन्होंने उन विषयों के नाम गिनाये हैं तथा उन पर विस्तार सहित व्याख्या भी की है। समस्त कृषि जीवन (जिसमें कृषक और उसका समग्र कृषिकर्म सम्मिलित हो), भूमि जिसमें उसकी सभी प्रकार की मिट्टियाँ समाहित हों, भौगोलिक स्थिति, पशु पक्षी, वृक्ष, वनस्पति, मनुष्य (उनके विभिन्न नामों और जातियों के उत्पत्ति सहित वर्णन) पुष्प, जड़ी-बूटी, मिट्टी, पानी और हवाओं का अध्ययन, तृण, लता आदि सभी के अध्ययन के लिए उन्होंने सलाह दी है। उन्होंने लिखा है, 'जनपदीय अध्ययन का अत्यन्त रोचक विषय मनुष्य स्वयं है। मनुष्य के विषय में यहाँ हम जितनी जानकारी प्राप्त कर सकें करनी चाहिये। ज्ञान-साधन का प्रत्येक नया दृष्टिकोण जिसे हम विकसित कर सकें मनुष्य विषयक हमारी रुचि को अधिक गम्भीर और रसमय बनाता है। इस देश में सैकड़ों प्रकार के मनुष्य बसते हैं, उनकी रहन-सहन, उनकी रीति-रिवाज, उनके आचार-विचार, उनकी शारीरिक विशेषताएँ, उनकी उत्पत्ति और वृद्धि, उनके संस्कार और धर्म, उनसे नृत्य और गीत उनके पर्व और उत्सव एवं भाँति-भाँति के आमोद-प्रमोद, उनके बीच के विशेष गुण एवं स्वभाव, उनके वेश और आभूषण, उनके निजी नाम एवं स्थान-नामों के विषय में जानने और खोज करने की रुचि और शक्ति हमें उत्पन्न करनी चाहिये। यही जनपदीय अध्ययन की सच्ची आँख है। इस आँख में जितना तेज आता जायगा उतने ही अधिक अर्थ को हम देख सकेंगे। भगवान् वेदव्यास की परिभाषा के अनुसार यहाँ मनुष्य से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है, गुह्यं ब्रह्म तदिदम् ब्रवीमि, नाहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाशास्त्री के लिए जनपदीय बोलियाँ साक्षात् कामधेनु के समान हैं। दो हजार डेढ़ हजार वर्षों के बिछड़े हुए शब्द तो इन बोलियों में चलते जाते हाथ लगते हैं। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा के अनेक धात्वादेशों की धात्री जनपदों की बोलियाँ हैं। हिन्दी भाषा की शब्द-निरुक्ति के लिए हमें जनपदीय बोलियों के कोषों का सर्व प्रथम निर्माण करना होगा। बोलियों के शब्दों के उच्चारण और रूप जाने बिना शब्द की व्युत्पत्ति का पूरा पेटा नहीं भरा जा सकता। बोलियों की छानबीन होने के उपरान्त कई लाभ होने की सम्भावना है। प्रथम तो इन कोषों में हमारे प्रादेशिक जीवन का पूरा ब्यौरा आ जायगा। दूसरे शब्द नामक ज्योति जीवन के अन्धेरे कोठों को प्रकाश से भर देगी। तीसरे जनपदों के बहुमुखी जीवन के शब्दों को पाकर हमारी वर्णना-शक्ति विस्तार को प्राप्त होगी।"

डा० अग्रवाल साहित्य-सेवियों को लिखे हुए अपने पत्रों में उन्हें अथर्ववेद का यह मन्त्र बहुधा लिखा करते थे 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' यह भूमि माता है, मैं पृथिवी का पुत्र हूँ। उनका मत था कि यदि लेखकों को यह ज्ञान न होगा तो उनके सादित्य की जड़ें मजबूत न होंगी, आकाशबेल की तरह वे हवा में तैरती रहेंगी। हिन्दी साहित्यकारों को सम्बोधन कर वे कहा करते थे कि उन्हें अपनी खुराक भारत की सांस्कृतिक और प्राकृतिक भूमि से प्राप्त करनी चाहिये। लेखक जिस प्रकार के जीवन रस को चूसकर बढ़ता है उसी प्रकार की हरियाली उसके साहित्य में भी देखने को मिलेगी। वे लोक और लेखक की बीच की गहरी खाई को पाटना चाहते थे और इसके लिए उनका सदैव यही सन्देश रहता है कि यह काम पृथक्-पृथक् या सामूहिक रूप से विचार करके ही सम्भव है।

हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, हमारी महान् संस्कृति की संवाहिका है—सन्देशवाहिनी है। उसके सामर्थ्य का क्या कहना? विश्व की सर्वाधिक प्रचलित भाषाओं में हिन्दी का स्थान तीसरा है। सर्वप्रथम स्थान चीनी, द्वितीय अंग्रेजी और तीसरा स्थान हिन्दी का है। हिन्दी सामर्थ्यशालिनी भी है। जितने शोध-प्रबन्ध हिन्दी में लिखे गये उतने समस्त भारतीय भाषाओं में मिलाकर भी नहीं लिखे गये हैं। एक साहित्यिक गोष्ठी में भाग लेते हुए किसी सदस्य ने कुछ ऐसे विषय प्रस्तुत किये जिन पर उसकी राय में हिन्दी में कोई साहित्य उपलब्ध न था। उसकी आपत्ति का खण्डन करते हुए एक विद्वान् बोले, "आप कदाचित दिल्ली में आयोजित पुस्तक प्रदर्शिनी में नहीं पधारे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि आप वहाँ जाकर विभिन्न विषयों पर प्रकाशित हिन्दी पुस्तकों को देख लेते तो शायद ऐसी बात न कहते।" तात्पर्य यह है कि हिन्दी का साहित्य अब भरापूरा है, उसमें अभाव की बात अब समाप्त होती जा रही है। तथापि हिन्दी की इस समृद्धिशाली पृष्ठभूमि में भी हिन्दी साहित्य में पत्रों की विधा तो निर्बल ही है और अन्य भाषाओं के मुकाबिले हिन्दी में पत्र-संग्रह की सख्या बहुत ही कम है। हिन्दी में पत्रों के संग्रह तो उर्दू से भी कम हैं और भारतीय भाषाओं की तो क्या कहें? एक उर्दू विद्वान् मिस्टर फारुकी ने अपने शोध-निबन्ध में कम से ४० उर्दू के पत्र संग्रहों की नामावली दी है। उर्दू में प्रायः सभी महान् शायरों और अदीबों के पत्र-संग्रह उपलब्ध हैं। बंगला भाषा में कवीन्द्र रवीन्द्र और शरत बाबू के पत्रों के विशाल संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। जब हम हिन्दी पत्र-साहित्य के अभाव को देखते हैं तो हृदय को बड़ा आघात पहुँचता है। हिन्दी में तो पत्र-संग्रहों की संख्या नाम मात्र की ही है। हिन्दी में पत्र-साहित्य की विधा पुष्ट होनी चाहिये। सभी महाकवियों, साहित्यकारों, राजनीतिज्ञों, समाजसेवी महापुरुषों के पत्र-संग्रह प्रकाशित किये जाने चाहिये। स्व० डा० हरिशंकर शर्मा ने पद्मसिंह शर्मा के पत्र शीर्षक पुस्तक के प्राक्कथन में ठीक ही कहा है, "साहित्यिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक सामाजिक इत्यादि सभी प्रकार के पत्र संगृहीत होने चाहिये। इस कार्य के लिए एक सुदृढ़ संस्था या विभाग का निर्माण हो। यह विभाग चिट्ठियों के संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन में सतत संलग्न रहे। जिस पत्र या पत्र की जिन पंक्तियों से देश या समाज का कुछ भी हित हो सकता हो वे प्रकाश में अवश्य आवें, सार्वजनिक हित की भावना ही सच्चे साहित्य में परिणत होती है। अभिप्राय यह है कि महापुरुषों और कवि-साहित्यकारों के पत्र भी साहित्य सीमा में प्रविष्ट किये जाँय वे साहित्य शरीर की सुदृढ़ रीढ़ का काम देंगे। उनसे पाठकों की जानकारी बढ़ेगी और वे अनुप्राणित भी होंगे। हिन्दी वालों के लिए यह कार्य अनिवार्य होना चाहिए:

प्रकाश-भवन,
मथुरा.
३१–१–७४

—वृन्दावनदास

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

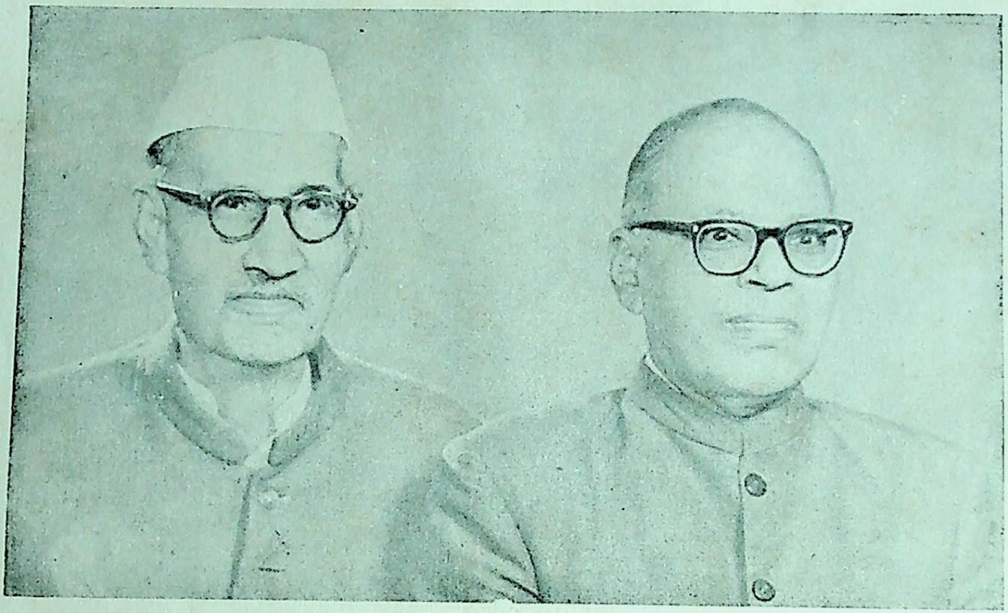

डा० बनारसीदास चतुर्वेदी तथा बाबू वृन्दावनदास

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

श्री कृष्णानन्द गुप्त के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लखनऊ
दि० २३-३-४४

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

२०-३-४४ का आपका पत्र मिला। विश्ववाणी मेरे पास नहीं आती, अतएव आपका लेख मेरी दृष्टि में नहीं आया। रिप्रिंट भेजियेगा।

लोकवार्त्ता परिषद् की ओर से लोकवार्त्ता त्रैमासिक के प्रकाशन का हाल पढ़कर बहुत हर्ष हुआ। इस प्रकार के आयोजन की बड़ी भारी आवश्यकता है। लोक के बहुमुखी जीवन के प्रति इस समय जो चारों ओर जागरूकता का भाव दिखाई पड़ता है उसको मूर्तिमंत रूप देने और उत्तेजित करने के लिए एक इस प्रकार के पत्र की हिन्दी संसार में काफी गुंजायश है। इस कार्य के पीछे यदि पर्याप्त अवकाश वाले कार्यकर्त्ता होंगे और आर्थिक साधन भी दृढ़ होगा तो मुझे आशा है कि वर्त्तमान काल के उपयुक्त अवसर को पाकर यह आन्दोलन विशेष उन्नति करेगा।

लोकवार्त्ता एक जीवित शास्त्र है। सहानुभूति के साथ उसका अध्ययन अपनी संस्कृति के भूले हुए पथों का उद्घाटन कर सकता है। लोक का जितना जीवन है उतना ही लोकवार्त्ता का विस्तार है। लोक में बसने वाला जन, जन की भूमि और भौतिक जीवन तथा तीसरे स्थान में उस जन की संस्कृति-इन तीन क्षेत्रों में लोक के पूरे ज्ञान का अन्तर्भाव होता है और लोकवार्त्ता का संबंध भी इन्हीं के साथ है।

लोकवार्त्ता की सामग्री का संचय करने के लिए प्रत्येक गाँव को एक खुली हुई पुस्तक समझना चाहिए। भूमि के साथ संबंधित ग्राम या जनपद का प्रत्येक निवासी उस महान् पुस्तक का एक-एक पृष्ठ है। हम जब चाहें, सुविधानुसार और युक्ति पूर्वक अमृत के समान उपयोगी सामग्री दुह सकते हैं। लोक की पुस्तक के अमिट अङ्कों को बाँधने और विधि पूर्वक अर्थाने की जिनके पास शक्ति है उन्हें इस ग्रन्थ से किसी काल और किसी अवस्था में भी निराशा न होगी। जिस प्रकार पैरों के नीचे की पृथिवी का उत्पादन अनन्त है उसी प्रकार हमारे चारों ओर विस्तृत लोक का भी ज्ञान अपरिमित है। जानपद जन के रूप में लोक के एक सदस्य का जब हम दर्शन करते हैं, तो हमें समझना

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये कि जीवन की अनेक बातें ऐसी हैं जिनमें हम उसे अपना गुरु बना सकते हैं। देहरादून के सुदूर अभ्यंतर में स्थित लाखामंडल गाँव के परमा बढ़ई से जो सामग्री हमें प्राप्त हुई वह किसी भी प्रकाशित पुस्तक में नहीं मिल सकती थी। जौंसार-बावर के उस छोटे गाँव के शिव मन्दिर के आंगन में खड़े होकर हमारे मित्र पं० माधवस्वरूप जी वत्स (सुपरिटेंडेंट ऑफ आर्कि-ओलाजी आगरा) जिस समय भोली-भाली जौंसारी स्त्रियों के मुख से दूवड़ी आठौं (भाद्रपद शुक्ल अष्टमी) के त्यौहार का और उस अवसर पर छामड़ा पेड़ की डालों से बनाये जाने वाले आदम कद दानव का जिसे वहाँ छामड़िया दानौं कहते हैं, हाल सुनने लगे तो उन्हें आश्चर्य चकित हो कहना पड़ा कि इस दूवड़ी की पूजा में क्या मातृत्व शक्ति की पूजा की वही परंपरा पाई जाती है जो उन्हें हरप्पा की मूर्तियों में मिली थी। इसी जौंसार प्रदेश की चियाबिया प्रथा (बिया = जेठे भाई के साथ स्त्री का विवाह; चिया = अन्य छोटे भाइयों का उसके साथ पत्नीवत् व्यवहार) के विषय में और अधिक जानने की और किसे इच्छा या उत्सुकता न होगी ? ये और इन जैसे अनेक विषय लोकवार्त्ता के अन्तर्गत आते हैं, जिनका वैज्ञानिक पद्धति से संकलन और अध्ययन अपेक्षित है। मानवी प्रथायें और मानवी संस्कार स्थान और काल भेद से अद्भुत और विचित्र होते हैं। उनके मूल में जो मानवी भावना अर्न्तनि-हित रहती है उसका सहानुभूति पूर्ण अध्ययन लोकवार्त्ता शास्त्र का सच्चा प्राण है, जो इस शास्त्र को महिमा और पवित्रता प्रदान करता है और उसे निष्प्राण होने से बचाता है। हमारा देश सब दृष्टियों से विशाल है। भौतिक विस्तार और जन विस्तार का इसमें कोई अन्त नहीं। आर्यों की उदात्त संस्कृति से लेकर कोल, भील, संथाल आदिक वन्य जातियों का यहाँ अपरिमित क्षेत्र है। यदि हमारे हृदय में सहानुभूति है और नेत्रों में प्रेम का दीपक है तो हम मानव की अग्रिम और आदिम इन दोनों अवस्थाओं से बहुत कुछ कल्याणकर ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यही लोकवार्त्ताँ शास्त्र की उपयोगिता है।

भवदीय—

वासुदेवशरण

[२]

लखनऊ

३०-७-४४

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

'लोकवार्त्ता' प्रथमांक की तीन प्रतियाँ यथा समय मिली थीं। इधर एक मास की छुट्टी पर बाहर घूमने के कारण उत्तर में विलम्ब हुआ। 'लोक-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्त्ता' पत्रिका का जन्म बड़ा शुभ लक्षण है। जन-संस्कृति के भिन्न-भिन्न पक्षों का उद्घाटन अर्वाचीन जीवन को विकसित करने के लिये अति आवश्यक है। राष्ट्र में सहानुभूति और बन्धुत्व के जो नये भाव फैल रहे हैं उनके द्वारा हमें वन्य जातियों के जीवन के प्रति भी वैसी ही रुचि होनी चाहिये जैसी अपने निकटतम धार्मिक विश्वास और विचारों के प्रति है। हिन्दू संस्कृति परस्पर आदान प्रदान के प्राणावायु से पोषित होकर विकसित हुई है। इसमें सबको खुलकर सांस लेने का भरपूर उदार अवकाश मिलता रहा है। भारतीय जीवन उस महा अरण्य के सदृश रहा है जिसमें अनगिनत वृक्ष वनस्पति सिर ऊंचा किये खड़े हैं और उन्हीं की छाया में लख चौरासी के समान वनस्पति जगत के नाना तृण गुल्म लतायें एवं बहुत सी जड़ी-बूटियाँ फूलती फलती रही हैं। सबका स्वतंत्र अस्तित्व है, पर साथ ही सब एक में गुथ कर मिल जाने के लिए भी स्वच्छन्द हैं। शताब्दी और सहस्राब्दियों से वे एक दूसरे की ओर हाथ बढ़ाकर मिलते रहे हैं। बेलों ने वृक्षों से सख्य भाव ढूँढ़ा है, क्षुपों ने घुल मिल कर झाड़-झंखाड़ों का रूप धारण कर वन की भूमि को छेदा है, और जिसके मन में जहाँ तक प्राण और जीवन का उल्लास आया वहीं तक उसने अपने आपको अरण्य जीवन के सतत संघर्ष में डालकर आकाश के नीचे अपने लिये स्थान प्राप्त किया है। हिन्दू संस्कृति भी इसी प्रकार के वातापिक स्वातन्त्र्य को अर्थात् धूप और खुली हवा में लहराने वाले जीवन वेग को पाकर आगे बढ़ी हैं। शतंदल कमल के एक-एक दल के समान यहाँ विभिन्न विचारों के दल हैं। केले के काण्ड भाग में जैसे ऊपर नीचे दलों के परत जमे रहते हैं उसी प्रकार हिन्दू धर्म में विचारों के कदली वृक्ष का निर्माण हुआ है। उच्चतम ब्रह्म दर्शन या अध्यात्मवाद से लेकर नीचे की तलहटियों में पनपने वाले भूत प्रेतों के विश्वास, नागों और वृक्षों की पूजा, जड़ श्रद्धा एवं अन्धपरम्पराओं तक को हिन्दू धर्म के अन्तर्गत स्थान मिला है। पुलिन्द, पुक्कस, खश, डोम्ब, नाग, कोल, भिल्ल, मुण्डा, शबर, आदि जातियाँ आर्य संस्कृति के सम्पर्क में आयीं। दोनों ने अपने अपने प्राणामय तन्तु वन की लताओं की तरह एक दूसरे के प्रति फैलाये। उन तन्तुओं के द्वारा जीवन रस का प्रवाह एक ओर से दूसरी ओर बहने लगा। जहाँ जीवन रस रहता है वहीं नई सृष्टि, नया निर्माण होता है। जहाँ जीवन रस है वहाँ मृत्यु की जड़ता नहीं पहुँचती। इसी कारण आर्य संस्कृति और वन्य संस्कृति दोनों की परम्परा पारस्परिक हित सम्बन्ध से आज तक जीवित है। दोनों के मानसतल एक दूसरे के लिये प्रीति भाव से युक्त हैं। उनमें एक दूसरे को उखाड़ने फेंकने की होड़ नहीं है और न एक दूसरे का गला

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

घोटकर अपने मांस को पुष्ट करने की भावना है। गुह, निषाद और आर्य राम बाहरी भेदों को रखकर भी एक दूसरे के हृदय के निकट पहुँच गये। गुह को अपना पूर्वज मानने वाले लाखों वंशज आज उसी हिन्दू धर्म के अङ्ग हैं जिसे राम के वंशजों ने अपनी साधना से पोषित किया है। धर्म और संस्कृति की दृष्टि से भारत में रहने वाली सब जातियाँ एक समान उन्नत नहीं है, फिर भी धर्म और जीवन का एक सार्वजनिक पक्ष ऐसा है जिसमें सबको भाग मिला है। धार्मिक देवता, पर्व और उत्सव, मेले-नृत्य और संगीत, कृषि-प्रधान जीवन पद्धति आदि अनेक साधनों से जीवन की विषमता घटती गई और समानता एवं सहानुभूति का उदय होता रहा। हिन्दूकरण की एक सर्वाभिभावी परन्तु अलक्षित पद्धति इस देश में सदा से चलती रही है और आज भी जारी है। समाज शास्त्र की दृष्टि से हिन्दूकरण की इस प्रक्रिया ने राष्ट्र की बड़ी सेवा की है। इसी के द्वारा राष्ट्र के ऊबड़ खाबड़ अनेक अनमिल अङ्ग पारस्परिक समझौते के भाव से एक साथ टिकने के योग्य बनते रहे हैं। हिन्दूकरण की यह पद्धति सहस्राब्दियों के बीच होती हुई समन्वय और समवाय के ऊँचे गौरी-शंकर शिखर की ओर जनता को बढ़ाती रही है। राष्ट्र की अभेद्य इकाई को घड़ने में उसने सबसे अधिक हमारा साथ दिया है। इस दृष्टिकोण में सदा सबके लिये अभय मुद्रा का वरदान खुला हुआ रहा है। भूमि पर बसने वाले **जन** के लिये मनसा वाचा कर्मणा अभय प्रदान संगठित राष्ट्र का सबसे बड़ा वरदान समझा जाता है। भारतीय संस्कृति में भी साधना की जिस मानसी प्रतिभा ने सबसे अधिक गौरव प्राप्त किया उसका दक्षिण हाथ अभय मुद्रा में उठा हुआ था। अपने विगत इतिहास से अभय की भावना हमें मूल्यवान उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई है । इसी का दूसरा नाम वह सहिष्णुता है जो सच्चे हिन्दू धर्म की एक मात्र कसौटी है। सहिष्णुता और निर्जीव उपेक्षा में भेद है। सहिष्णुता वह सक्रिय सहानुभूति है जिसके द्वारा हम दूसरे को अपने धरातल तक पहुँचाने के लिये सहायता का हाथ बढ़ाते हैं। इस प्रकार सच्ची सहायता और सहानुभूति लोकवार्त्ता शास्त्र की प्राण वायु है। कोरे वैज्ञानिक कुतूहल की परिधि में लोकवार्त्ता शास्त्र का गम्भीर जीवन नहीं समा सकता। लोक का जीवन प्राणों का सत्यतम व्यापार है। वह जिस प्रकार शुष्क मनोरंजन के लिए अपना विस्तार नहीं करता उसी प्रकार लोकवार्त्ता भी हृदय की वस्तु है, मस्तिष्क का उदासीन व्यापार नहीं। जिन विद्वानों ने मानवी हृदय को आकाश से आने वाले दिव्य रस के साथ संयुक्त करके लोक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्त्ता शास्त्र का अध्ययन किया, वे ही उसके द्वारा जनता को कल्याणी बना सके।

आपके इस अङ्क को मैंने रुचिपूर्वक आदि से अन्त तक पढ़ा है। इसी प्रकार और प्रयत्न करते हुए अगले अङ्कों का संपादन करते रहें। भारतीय जीवन के हजारों पहलू अध्ययन की बाट जोह रहे हैं। आचार-विचार संस्कार संस्थायें-सभी हमारे दृष्टिकोण के भीतर आ सकती हैं।

रांची से Man in India नामक एक त्रैमासिक इसी विषय का प्रकाशित होता है आपको पता होगा उसके संपादक श्री Archer I. C. S. (Collector Dumka बिहार) अभी यहाँ आए थे। उनसे मैंने आपकी पत्रिका का परिचय करा दिया है। उनको इसकी एक प्रति अवश्य भेज दें।

भवदीय—

वासुदेवशरण

५—८—४४

अभी पत्र मिला। ऊपर के पत्र को ही सम्मति और लेखक के रूप में प्रयुक्त कर सकते हैं। सत्यमेव अनेक अध्ययन के विषयों से मुझे समय परिमित ही बचता है। Man in India की एक प्रति भी मँगाकर देखें। Mr. Archer को लिखकर All India Anthropological Society का विधान भी मँगाकर देखें।

वासुदेवशरण

[३]

लखनऊ

१—३१—४५

प्रिय श्री कृष्णानंद जी,

१६।१२।४४ का आपका पत्र यथा समय मिल गया था। मैं इधर मदरास और नागपुर की ओर चला गया था। वहाँ से ६ को लौटा। आपका पत्र पढ़कर प्रसन्नता हुई। आपने मातृभूमि पुस्तक को रुचि से पढ़ा और उससे प्रभावित हुए यह हर्ष की बात है। भाषा के विषय में आपकी सम्ममि मूल्यवान् है। जब लिखता हूँ भावों के अनुसार भाषा गढ़ जाती है। कभी-कभी परवश सा हो जाना पड़ता है। फिर भी आगे से ध्यान रक्खूँगा। आपने पुस्तक की प्रति महाराज साहब को भी दी यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है। इच्छा रहते हुए भी पिछली यात्रा में मैं उनके जैसे सहृदय व्यक्ति के दर्शन न कर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सका । मुझे उनके साहित्यिक व्यक्तित्व के प्रति बड़ा आकर्षण है । पौत्र जन्म के उपलक्ष में उनको बहुत बधाई । ईश्वर कुमार को आयुष्मान् करे ।

लोकवार्ता का मुझे स्मरण है । मेरी मद्रास यात्रा में भी वह मेरे साथ थी । 'मधुकर' और 'लोकवार्ता' दोनों मेरे हृदय के अति सन्निकट हैं । उनके लिये बिना प्रेरणा के ही लिखना मेरा स्वाभाविक कर्त्तव्य है । आप निश्चिन्त रहें ।

आपके लिखे अनुसार मातृभूमि की १० प्रतियाँ डाक से भेजी हैं । इसकी अतिरिक्त प्रतियाँ भी मिल सकेंगी । श्रीकान्त को स्वस्ति ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[४]

लखनऊ
१—५३—४५

प्रिय श्री कृष्णानंद जी,

'लोकवार्ता' मिली । पत्रिका का उत्तरोत्तर उन्नति देखकर चित्त प्रसन्न हुआ । रुचि पूर्वक लेख देखे । रामायण की कथा के जो विविध रूप साहित्य में और लोक में प्रचलित है उन पर हिन्दी के किसी उच्च विद्यार्थी का एक अनुसंधानात्मक निबन्ध तैयार करना चाहिए । जैन साहित्य में रामायण की कथाओं पर बृहत् साहित्य है । अपभ्रन्श भाषा की स्वयम्भू रामायण के एक परिचय में राहुल जी ने एक बढ़िया लेख हंस के गत अङ्क में छापा है जो कथा की दृष्टि से भी उतना ही महत्वपूर्ण है जितनी भाषा और काव्य चमत्कार की दृष्टि से । आन्ध्र से लेकर सिन्ध और पंजाब तक दरदिस्तान से लेकर मलय पर्वत तक रामायण की कथा हमारे लोक साहित्य में रमी हुई है । गीतों और कहानियों के रूप में अमर वेल की तरह शत-सहस्र फुटाव लेकर वह पनपती रही है ।

श्री चन्द्रभानु जी ने रैपुरा में जिस बघेली गीत का संकलन किया उस पर श्री हजारीप्रसाद जी द्विवेदी की टिप्पणी पढ़ी । यह कितनी प्रसन्नता की बात है कि बघेली से भोजपुरी तक कहानी का वही रूप लोक में फैला है । गत वर्ष १९४४ जून में एक महीने की छुट्टी पर गाजियाबाद गया हुआ था । एक दिन प्रातःकाल मैं जंगल में था वहाँ सूखे पड़ती पड़े हुए खेत में कटीली झाड़ी काटते हुए एक अत्यन्त वृद्ध व्यक्ति की ओर मैं आकर्षित हुआ । नितान्त अनपढ़

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर से हारा हुआ वह पृथिवी पुत्र दौलतपुर गाँव की वापुरी मड़ैया में प्रतिपालित होकर भी लोकज्ञान से भरपूर था। मैंने उसे बात करने के लिये एकाध प्रश्न पूछकर गुद-गुदाया, बस उसकी बोली का प्रवाह फूट निकला। उसने वहीं मुझे कुरुजनपद में प्रचलित रामायणी कहानी का यह रूप सुनाया जिसे सुनकर मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। ग्रामवृद्ध खचेड्डू के लिए और लोक व्यापी जीवन के लिए एक साथ मन में श्रद्धा का संचार हुआ।

इस कहानी में पहली ही बार सीता-परित्याग की दुरात्मा के रूप में राम की बहिन शान्ता का नाम सुन पड़ा। सीता भौजाई के सुखी जीवन में शान्ता ननद कुरस का कारण बनीं। इससे जान पड़ता है कि लोक की दृष्टि राम के राजमहल और दौलतपुर गाँव की झोंपड़ी के मानवी हृदयों को एक से बट्टों से तोलने की अभ्यस्त है। लोक वाणी ही सच्ची विश्ववाणी है। भवभूति के उत्तर रामचरित में सीता परित्याग का दुरात्मा किसी अज्ञात धोबी के रूप में है। राम की अपनी बहिन शान्ता को सतवंती सीता के परित्याग की दुरात्मा बताकर लोक ने उसका बदला तो नहीं लिया है? साहित्य का जो विराज' क्षेत्र है उसमें राजा और प्रजा के बीच इस प्रकार की नोंक-झोंक समझ में आ सकती है। ऐसे काल की गोद में जहाँ भय का अंकुश नहीं है, जहाँ राजा की राज शक्ति समाप्त हो जाती है, जहाँ दण्ड की पहुँच नहीं है, प्रजा जंगल के वनस्पति और तृण लताओं की तरह अपनी भयहीन कल्पनाओं के साथ जीवित रहती है। लोक साहित्य की धात्री यही निर्भय और स्वच्छन्द पृष्ठभूमि है। इस भूमि पर खड़ी होकर राम की बहिन शान्ता साधारण मानवी के मनोभावों से तोली जा सकती है।

कुरु जनपद की कहानी में जो मुझे सुनने को मिली कुछ थोड़ा अन्तर भी था। राम लछमन वन में आखेट के लिए गए हैं। पीछे शान्ता ने सीता से निहोरा किया कि रावण का कुछ हाल सुनाओ। सीता उसे टालती है। पर उसके विशेष आग्रह पर और राम से भाई की सौगन्ध खाने पर सीता रावण को लिखने के लिये तैयार हो जाती है। लिपी पुती भीत पर सीता रावण को लिखने लगी। सब आकृति लिखकर पूरी हो गई। उसी समय राम के वन से लौटने की सूचना आई। सीता घबड़ा कर उठ भागीं। भागने में रावण की जंघा पर रंग का एक डोब गिर गया। यही सीता के लिये काल हो गया। राम आए। शान्ता ने कहा—भाई, रावण को सीता ने देखा है। राम ने सीता के लिखे हुए रावण को देखा। जाँघ देखकर उनका मन भी डोल गया।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यथा केवल चित्र से न्यायी राम का मन शंकित न होता। इसके बाद की कहानी वही है।

कहानी कहने वाले ने कई वार भीत पर रावण का चित्र बनाने के लिये 'लिखना' धातु का प्रयोग किया। मेरे लिये यह बड़े हर्ष की बात थी कि ठेठ बोली में चित्रण के लिए 'लिखना' जैसी प्राचीन और सुन्दर धातु आज भी ज्यों की त्यों जीवित है। केवल साहित्यिक हिन्दी में हमने उसे खो दिया है। संस्कृत में कालीदास से लेकर मध्यकाल तक के काव्यों में तूलिका से चित्र उरेहने के लिये 'लिख' धातु की परम्परा पाई जाती है। हर्ष की बात है कि जिस खड़ी बोली की प्राण पोषिका मेरठ जनपद की बोली है उस कौरवी बोली में आज भी 'लिखना' धातु 'चित्रण' के लिये प्रचलित है। साहित्यिक हिन्दी में मङ्गल माला के साथ हमें इसका स्वागत करना चाहिए। पंचाल जनपद के अहिच्छत्रा गाँव में चिम्मन कुम्हार के मुख से भी हमें यह शब्द सुनने को मिला था। काली रेखोपरेखाओं से बर्तनों पर भाँति-भाँति के चित्र बनाने का वर्णन करते हुए उसने बताया था कि हमारे यहाँ कुम्हारी बर्तन लिखती हैं। इसी प्रकार देहरादून के जौंसार प्रदेश के लाखामण्डल गाँव में लकड़ी पर नक्काशी करने के लिये 'उकेरना' धातु जीवित रूप में प्राप्त हुई। अंग्रेजी कार्विग (Carving) के लिये हमारे पास जो शब्द का टोटा था वह इस शब्द को पाकर मिट गया।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[५]

लखनऊ

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

आपका पत्र लेख भेजने के लिये आया था। लेख मैं स्वयं भी भेजना चाहता था, क्योंकि 'लोकवार्ता' पत्रिका मुझे बहुत पसन्द है। मेरे यहाँ जितनी पत्र-पत्रिकाएं आती हैं उनमें 'मधुकर' और 'लोकवार्ता' दो को मेरा मन विशेष रुचि के साथ ग्रहण करता है। हमारा लोक जीवन बहुत विशाल और गहरा है। भारतीय इतिहास का कोई युग ऐसा नहीं है जिसके पुरातत्त्व की सामग्री शब्दों के रूप में लोक के जीवन में कहीं न कहीं छिपी न पड़ी हो। किसी परत में वैदिक युग के शब्द घर किये बैठे हैं, कहीं श्रौत सूत्रों की शब्दावली आयुष्मती बनकर सुरक्षित है, कहीं गुप्त युग की परम्पराएँ पहचान में आती हैं और कहीं मध्यकाल की धारा का स्पष्ट दर्शन मिलता है। ऐसे गूढ़, महामहिम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोक-जीवन के पुष्कल अध्ययन की चारों ओर आवश्यकता है। किसी प्रत्नयुग के पथराए हुए अवशेष चट्टानों की परतदार तहों में युगों तक छिपे पड़े रहते हैं, पर कुशल वैज्ञानिक के हाथ में आते ही वे अपनी जीवन गाथा कह सुनाते हैं। प्रस्तरों की निजवार्ता जिस बारहखड़ी में लिखी हुई है उसका मर्म वैज्ञानिक को विदित है, अतएव उस लिपि के चमत्कार से वह सबको परिचित करा देते हैं। नृतत्त्व का शास्त्रीय विवेचन भी कुछ इसी ढंग का है। यों तो लोक वार्ता का अस्तित्त्व द्युलोक में फैले हुए सूर्य-प्रकाश की तरह सर्वत्र विद्यमान है परन्तु भाषाशास्त्र में प्रवीण वैज्ञानिक अपने हृदय की सहानुभूति से उस ज्ञान का उपयोग छिपे हुए रहस्यों के उद्घाटन के लिए कर सकता हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों में कहा है—जितनी बड़ी पृथिवी है उतनी ही बड़ी वेदि है। इस परिभाषा का अर्थ यह है कि जितना भी विश्व का विस्तार है, उसका कोई अंश ऐसा नहीं है जो मनुष्य के लिये काम का न हो अर्थात् जो मानवी यज्ञ की परिधि से बाहर हो। जो यज्ञ की वेदि में आ जाता है, वही यज्ञीय या मेध्य होता है, वही मनुष्य के केन्द्र के अन्तर्गत आ जाता है। जो मानवी वेदि से बाहर है, मनुष्य के लिए उसका कुछ उपयोग नहीं है। संसार में अनन्त सुख, अनन्त ज्ञान, अनन्त धन और अनन्त बल है; परन्तु एक व्यक्ति, एक कुटुम्ब, या एक राष्ट्र के काम का वही है, जो उसके यज्ञ की वेदि के अन्तर्गत आकर उसके लिये यज्ञीय या मेध्य बनाया जा सके। जो कुछ वेदि के खम्भे से नहीं बाँधा जा सका वह अमेध्य होता है। हम एक जीवन में जो यज्ञ का खम्भा खड़ा करते हैं जो कुछ उस खम्भे से नही बाँधा गया वह उस जीवन के लिए उपयोगी नहीं बन पाता। यज्ञ से जो बहिर्भूत है उसे यज्ञ के अन्तर्गत लाने का प्रयत्न जन्म जन्मान्तर में चलता रहता है। लोक-जीवन के अपरिमित विस्तार को हमारा बारम्बार प्रणाम है। इसके विश्वतोमुखी विस्तार का प्रत्येक अंग मानव के लिये रुचि से परिपूर्ण होना चाहिए। जितना लोक-जीवन है उतना ही विशाल तो मानव है मानव से बाहर लोक में कुछ शेष नहीं रहता। अथवा जैसा वेद व्यास ने महाभारत में बड़े उदात्त शब्दों में कहा है—

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि, न हि मानुषाच्छ्रेष्ठतरं हि किंचित्।

अर्थात् रहस्यज्ञान की यह एक कुंजी तुम्हें बताता हूँ कि इस लोक में मनुष्य से बढ़कर और कुछ भी नहीं है। इस सूत्र में लोक-जीवन और सभी तरह के ज्ञान का मूल्य आँक दिया गया है। मनुष्य से सब नीचे हैं, मनुष्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये उपयोगी नहीं वह दो कौड़ी का है। लोकवार्ता शास्त्र भी यदि वैज्ञानिक के शुष्क कुतूहल के लिये हो तो वह जीवन के लिये अनुपयोगी हो रहता है। मानव के प्रति सहानुभूति और मानव के कल्याण की भावना लोकवार्ता शास्त्र को सरसता प्रदान करती है। लोकवार्ता शास्त्र की प्रतिष्ठा अन्ततोगत्वा मानव-जीवन के प्रति नई प्रतिष्ठा के भाव की स्वीकृति है। भारत जैसे देश में जहाँ लोक-जीवन बहुत ही शान्तिपूर्ण सहयोग और निर्विरोध आदान-प्रदान के द्वारा फूला-फला है, लोकवार्ता शास्त्र का बड़ा विस्तृत क्षेत्र है। कौन सा विश्वास कहाँ से उत्पन्न हुआ, बीज रूप से जन्म लेकर मस्तिष्क और मन का कौन सा भाव वटवृक्ष की तरह चारों खूँटों की भूमि को दबा बैठा है, विकास परम्परा में कौन कहाँ से कहाँ पहुँच गया है, इन सबका विश्लेषण बहुत ही महत्त्वपूर्ण होगा; क्योंकि वह अनेक प्रकार से एक ही प्रधान तत्त्व की विजय को सूचित करता है, और वह महान् धार्मिक और दार्शनिक तत्त्व मनुष्य का मनुष्य के लिए सहिष्णुता का भाव है। वनों के निषाद और शवरों के प्रति भी हिन्दू धर्म ने सदा सहिष्णुता की आरती सजाई है। इसके फलस्वरूप हिन्दूकरण की अमर बेल देश-व्यापी संस्कृतीकरण की प्रक्रिया के रूप में फैलती रही। हिन्दूकरण की इस विलक्षण पद्धति को अंग्रेजी में ऐकल्चुरेशन (Acculturation) कहेंगे। यह पद्धति मात्स्य न्याय से ऊपर है। निर्बलों को चट करके बलवान की सत्ता हिन्दूकरण की सांस्कृतिक प्रक्रिया नहीं है। चतुर्दिक जीवन के साथ सहानुभूति और सहिष्णुता का भाव इसकी विशेषता रही है। आज हिन्दू धर्म भारतवर्ष के महाकान्तार दंडकारण्य की की तरह ही विशाल और गम्भीर है जिसमें अपरिमित जीवन के प्रतीक एक दूसरे के साथ गुथकर किलोल करते रहे हैं।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६]

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

लखनऊ
२७–७–४५

आपका ७–७–४७ का पत्र अभी बाहर से लौटने पर प्राप्त हुआ। लोक जीवन की पुनः प्रतिष्ठा के लिए जो कुछ भी कार्य मैं कर सकता हूँ उससे मुझे बड़ा आत्मिक सन्तोष मिलता है। यह तो लोक के साथ समनस्क होने का एक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वार है। अपने राष्ट्रीय जन के साथ संमनस्क होने का कार्य तो अपनी आत्मा को पहचानने जैसा विशुद्ध और उदार प्रकृति का है। आगामी महान् जन-राज्य की पुनः स्थापना में लोक-जीवन के साथ उत्तरोत्तर मैत्री और सहानुभूति आवश्यक तोरण द्वार के मध्य से जनता के हृदय तक पहुँचाना होगा और अपने साहित्य और अन्य-अन्य प्रान्तीय भाषाओं के साहित्य, सबको इसी एक जैत्रखंभ के लिये अपनी श्रद्धांजलि चढ़ानी होगी। व्यक्ति महान् है किन्तु जन की महत्ता उससे कहीं अधिक है। व्यक्ति मृत्यु के अधीन है किन्तु जन अमर है। व्यक्ति सौ वर्ष के जीवन के लिये सूर्य की किरणों से अमृत पीता है, किन्तु जन सूर्य के समान ही चिर जीवन के लिये अमृत का पुत्र बना है। शोक है उसके लिये जो साहित्यिक ऐसे महान् जन के लिये अपना अर्घ्य नहीं चढ़ाता और अपने से जन को दूर रखता है। अत्यन्त कृपण है वह जो जन-जीवन के उदार कोटद्वार से दूर रहता है, जो अपने ही मन के परकोटे में बन्द जन-जीवन से दूर है। मूर्च्छित है वह जो प्रफुल्लित जन-जीवन के प्राणवंत फगुनहटे की बाट नहीं देखता और न उसके लिये स्वागत के साज सजाता है। लोक-जीवन-और लोक-संस्कृति को पुष्पित, फलित और प्रतिमंडित करने के लिये सहस्रों प्रयत्नों की आवश्यकता है। जैसे आकाश में चाँद और तारे शोभित हैं वैसे ही पृथिवी पर लोक का जीवन सुशोभित होना चाहिए। यही सर्व-आराधना का मार्ग हम सबके सामने है। लोकवार्ता ईषित् संकुचित है, परन्तु सराहनीय प्रयत्न है।

भाषा की समस्या के सम्बन्ध में आपने जो कुछ लिखा है, मैं उससे सहमत हूँ। 'लोकवार्ता' में इसकी चर्चा करने के विचार का मैं अभिनन्दन करूँगा। कारण यह है कि भाषा का प्रश्न लोक-जीवन के अत्यन्त निकट है या यों कहें कि लोक का संस्कृति में व्याप्त जो अर्थ है वह भाषा के द्वारा ही प्रत्यक्ष रूप धारण करता है। असीम जनपदीय साहित्य की भांडार-कोठरी में प्रवेश करने के लिये जब हम आतुर हैं तब भाषा के प्रश्न को लोक के विषय से बाहर नहीं समझना चाहिए। नये-नये अनजाने शब्द हमारे परिचय की बाट देख रहे हैं, सुदूर देहात के किसानों की तरह, जो साहित्य के आँगन में सम्मानित स्थान पाने के अधिकारी हैं। इस देश की भूमि में जो शब्द फले-फूले हैं उन चुस्त और फबीले शब्दों के प्रति यदि हम अनुराग का भाव उत्पन्न कर सकें और इस समय की ठिठुराई हुई उपेक्षा को हटा सके तो आने वाले साहित्य का मार्ग प्रशस्त होगा और साहित्यिकों को अपने यहाँ की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पारिभाषिक शब्दावली को अपनाने के लिये नया साहस और बल मिलेगा। इस दृष्टि से भाषा का प्रश्न हमारे लिये बड़े महत्त्व का है। भाषा में शब्दकोश की नवीनता और विचारों की दुरूहता या उलझन को अलग-अलग समझाते हुए आपने जो दृष्टिकोण लिखा है वह मुझे बहुत पसन्द आया। अँगरेजी 'फेस्टून' (Festcon) के लिये हिन्दी में शब्द पाने के लिये मैं परेशान था तब ठक्कुर फेरु के वास्तुसार ग्रन्थ से, जो अलाउद्दीन खिलजी के समय में लिखा गया था, मुझे उसी अर्थ प्रयुक्त 'संतानक' शब्द मिला और मैंने हर्ष से उसका स्वागत किया। साहित्य में कई बार उसका प्रयोग करने से और अर्थ समझा देने से एक बिछुड़ा शब्द फिर हमारा बन सकता है। संतानक का अर्थ मंदार है जिसकी गिनती पाँच प्रकार के देववृक्षों में थी। वास्तुकला में झालर की लहरिया मंदार वृक्ष की कमानीदार टहनी से बहुत कुछ मिलती है। इसी कारण से झालर के लिये संतानक का प्रयोग कला में किया जाने लगा और वही शब्द एक विशेष अर्थ में चालू हो गया।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[७]

तक्षशिला

दि० १०-५-४६

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

कल प्रातःकाल यहाँ आया और आते ही आपका भेजा हुआ साहित्य—'लोकवार्ता' के दो अंक और ईसुरी की फागें पुस्तिका— पाकर हर्षित हुआ। अपनी प्रिय पत्रिका 'लोकवार्ता' को इस नये रूप में सजा हुआ देखकर चित्त प्रसन्न हुआ 'पहरी-ओढ़ी धन दिपै, लिपा-पुता घर खिलै' के अनुसार पत्रिका की नई छबि से उसकी मनोहरता कई गुना बढ़ गई है। आशा है सतत प्रयत्न से इसका अन्तःस्वरूप भी इसी प्रकार अधिकाधिक विकसित होता जायगा।

ईसुरी की फागों का संग्रह भी अच्छी चीज है। फागों की क्रमिक संख्या और अंत में प्रत्येक बुंदेलखंडी शब्द का अकारादि कोष देना उपयुक्त होगा।

१७ मई को भृगुभाई का का यज्ञोपवीत संस्कार है।

भवदीय :

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८]

नई दिल्ली
११–५–४८

प्रिय श्री कृष्णानंद जी,

५/५ का कृपापत्र मिला। आपके स्वास्थ्य का समाचार जानकर चिन्ता हुई। आशा है दुग्ध-कल्प एवं प्राकृतिक उपचार से आप पुनः स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं। देहात में तो आरोग्य की सब विध अनुकूलता मिलनी चाहिए। मन को प्रसन्न और उस भूमि के साथ संतुलित रखने का अभ्यास आवश्यक है। आप सरीखे व्यक्ति के लिये तो वहाँ अध्ययन और निरीक्षण की अटूट सामग्री भरी हुई है। 'लोकवार्ता' के लिये तो नियमित रूप से लिखना अब नहीं पड़ता, पर अन्य पत्रों के लिये तो आप उस साधना को जारी रख सकते हैं। इसी में आपको स्वास्थ्य और जीवन का सूत्र हाथ आएगा। मेरे लिये सर्वोत्तम स्वास्थ्य के वे ही दिन थे जब मैं आपकी 'लोकवार्ता' मधुकर तथा विक्रमांक के लिये धाराप्रवाह लिख रहा था।

मैं अच्छी तरह हूँ। अपनी एक पुस्तक Gupta Art आपके पास भिजवा रहा हूँ।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[९]

नई दिल्ली
२३–६–४८

प्रिय श्री कृष्णानंद जी,

पत्र मिला। मोतीचन्द्र जी ने मुझे भी लिखा है। मैं उनके सुझाव से सहमत हूँ कि 'लोकवार्ता' के नवोदय में उसका क्षेत्र विकसित करके आमध्य-देशवर्ती बना दिया जाय। मध्यदेश शब्द तो हिन्दी में बहुत उपयुक्त जँचता है। अँग्रेजी में 'A Quarterly Journal of Anthropology & Folk-lore of North India' उचित होगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१०]

नई दिल्ली
१०-८-४६

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

एक अच्छी पुस्तक आज देखी— Mirror for Man (The relation of Anthropology to modern life) by-Clyde Kluckhohn, Prof. of Anthropology, Harvard University Mc Graw-Hill Book Company. Inc. New York.

भवदीय :
वासुदेवशरण

[११]

३५/१६, फीरोज़शाह रोड
नई दिल्ली
२१-४-५०

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

१३।४।५० का कृपा पत्र मिला। मैंने आपके लिखे अनुसार बुन्देलखंड लोक-साहित्य परिषद् की परामर्शदात्री समिति की सदस्यता स्वीकार कर ली है।

'लोकवार्ता परिषद्' और जनपदीय कार्यों को उठाना तो अत्यन्त आवश्यक है। इस सम्बन्ध में कुछ उद्योग होना चाहिए।

आपने गायों के सम्बन्ध में जो लोकगीत भेजा उसे पढ़कर चित्त अत्यन्त प्रसन्न हुआ। उसकी एक टाइप की हुई प्रति भेज रहा हूँ। कृपया नामों पर अपनी अर्थ-टिप्पणी भेज दीजिए। मैं इस सुन्दर गीत को पोद्दार-ग्रन्थ में एक सुन्दर चित्र के साथ प्रकाशित करना चाहता हूँ। व्युत्पत्ति सम्बन्धी टिप्पणी आपके अर्थ प्राप्त होने पर लिखने का प्रयत्न करूँगा।

अभी हाल में मैंने गाय-बैलों की शब्दावली का संकलन करते हुए एक लेख कालपी से प्रकाशित होने वाले सम्पूर्णानन्द अभि० ग्रन्थ के लिए भेजा था। आपके भेजे हुए नामों से उसमें चार चाँद लग जाते।

लोकगीत की एक प्रति सत्यार्थी जी के पास भी भेज रहा हूँ।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२]

३५/१६ फीरोज़शाह रोड,
नई दिल्ली
२–५–५०

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

२५-४-५० का कृपा पत्र मिला। जहाँ आपने 'गइयों के तकवैया, कुँवर कन्हैया' लोकगीत अनायास भेजने की कृपा की, वहाँ चिरैया के व्याहले का गीत भी अविलम्ब कृपया भेजिए, मैं उसे पढ़ने को उत्सुक हूँ। आपकी मूल्यवान् टिप्पणियों के साथ 'कुँवर कन्हैया' गीत पोद्दार ग्रन्थ में आपके नाम से उद्धृत करूँगा। इस सुन्दर वस्तु के लिये मैं कृतज्ञ हूँ।

निम्नलिखित नामों और शब्दों के अर्थ की छानबीन अभी और होनी चाहिए, सम्भव है कुछ पुरानी उम्र के ठेठ 'अनपढ़' जानपद जन आपको ठीक अर्थ बता सकें —

सरमन। गेंदी। बगुरदी [बलीवर्द से बगुरदी नहीं बन सकता]। बेरई। बोंसू। बदासी। पड़ेई (=पड़्ले रंग की पड़्ला क्या ?)। झवरू (=बड़े और मुलायम कान वाली; कान या बाल ?)। डाँसी। बाँस (=जिसका बाँसा (नाक की हड्डी) लम्बा उठा हुआ और मजबूत हो; बाँसा कमर की हड्डी, रीढ़ के लिये आता है या नाक की हड्डी के लिये ?)। लासी। मुनागर।

आशा है ऊपर के शब्दों पर आपकी पूछ-ताँछ से और भी प्रकाश पड़ेगा। पाणिनि ने एक सूत्र में गायों की पहचान के लिये कानों पर डाले जाने वाले भिन्न निशानों का उल्लेख किया है। उसमें अष्टकर्णी, पंचकर्णी, दात्राकर्णी, स्वस्तिककर्णी, छिन्नकर्णी, भिन्नकर्णी का उल्लेख है। भिन्नकर्णी से मिलता-जुलता आपका कनफटी है। लोक से इस प्रथा की जानकारी पाकर प्रसन्नता हुई। क्या ही अच्छा हो कि आप थोड़ा सा परिश्रम स्वीकार करके गायों और बैलों पर अपने देहात में पाए जाने वाले शब्दों को लेते हुए एक लेख तैयार कर दें। गाय-बैलों की यह शब्दावली बड़ी उपादेय और मूल्यवान् होगी। मेरठ जनपद के शब्द मैंने इकट्ठे किये हैं। आप से बुन्देलखंड के शब्द पाकर तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकेगा। सम्भवतः कितनी ही प्राचीन परम्पराएँ उन नामों में मिलेंगी। मैंने अपने पाणिनि निबन्ध में एक शीर्षक रखा था 'The Life-Story of a Cow' अर्थात् पारिभाषिक शब्दों में गाय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के जीवन की कहानी। गाय में बैल के शब्द भी ले लिये थे। बड़ा रोचक अध्ययन बन गया। वैदिक काल से लेकर अब तक गायों के लिये कितने शब्दों का निर्माण लोक में हुआ है, इसका एक पुष्कल अध्ययन मन को भाता है।

कस्तूरमल जी का पत्र आया था, पुस्तक नहीं मिली। कल तक बाट देखकर उत्तर लिख दिया है। बहीखाते की शब्दावली में मुझे बहुत रुचि है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[१३]

नई दिल्ली
१८-५-५०

प्रिय श्री कृष्णानन्द जो,

६-५-५० का कृपा पत्र मिला। मैं इधर पाँच दिन के लिये चिरगाँव हो आया। गुप्त बन्धुओं से मिलकर बहुत आनन्द हुआ।

'हिन्दी के सौ शब्दों की निरुक्ति' शीर्षक लेख भेज रहा हूँ।

गायों के नामों के विषय में जो नई सूचनाएँ आपने भेजी हैं उनका उपयोग करूँगा।

चिरैया के व्याह का गीत खूब अच्छा लगा। उसे 'बालभारती' में भेजना चाहिए। महाराज ओरछा ने जो पक्षि-सूची तैयार कराई थी कृपया अवश्य ढूँढ़िएगा। यही उपयुक्त समय है। इधर Museum's Journal में कुँवर सुरेशसिंह की पक्षि-सूची छप रही है। उधर डॉ० रघुवीर जी ने लगभग २५०० पक्षियों के लैटिन अँग्रेजी नामों के साथ संस्कृत और यथाशक्य हिन्दी नाम भी पुस्तकाकार प्रकाशित कराए हैं। 'कृष्ण की बुन्देलखंडी रासमंडली' जो बढ़िया गीत आपने भेजा इसे भी मैं पोद्दार ग्रन्थ में प्रकाशित करूँगा। एक अच्छा रास का चित्र मिल सका तो सोने में सुगंध रहेगी।

भाँड़े-बासनों की सूची भेज सकें तो अनुगृहीत हूँगा। अँग्रेजी में Potter, के शब्द हैं, हिन्दी में भी उन्हें प्राप्त करना है। अपने घर में गहनों के बहुत से अच्छे शब्द मुझे मिले थे, जिन्हें कभी प्रकाशित किया जायगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४]

नई दिल्ली

२-६-५०

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

अभी आध घंटे में काशी जा रहा हूँ। सोचा २९-५-५० के पत्र का उत्तर लिख ही दूँ। आपने जो लेख भेजा उसकी प्रतिलिपि करके मूल लेख लौटा दिया जायगा। कृष्ण के गहने बेचने वाला रसिया बहुत अच्छा लगा। उसका भी कुछ उपयोग करूँगा। बहुत धन्यवाद।

बर्तनों की शब्द-सूची भी काम आवेगी। हाँ, इस पत्र में 'लोकवार्त्ता' शब्द की ओर जो आपने मेरा ध्यान खींचा यह बहुत अनुग्रह किया। मैंने तो बिना किसी पूर्व बात का इतिहास जाने सीधे स्वभाव 'लोकवार्त्ता' शब्द को टकसाली और पारिभाषिक बनाने के लिये आपकी पत्रिका का आश्रय लिया था। पर बात उलटी हो गई जान पड़ती है। आशा है आप मेरे इस कथन को स्वीकार करेंगे। शब्द का पूर्व इतिहास जानकर 'लोकवार्त्ता' शब्द के साथ आपका सम्बन्ध प्रकट करने के लिये अवसर की खोज में रहूँगा।

हरगोविन्दजी से शब्द सामग्री की चर्चा प्रासंगिक रूप से आ गई थी। आपका विशदीकरण जानकर संतोष हुआ। शब्दों पर पारिश्रमिक मिलने की बात भी उन्होंने बताई थी।

काशी में राय कृष्णदास जी के यहाँ ठहरूँगा

भवदीय :

वासुदेवशरण

[१५]

नई दिल्ली

२५-१-५१

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

१८-१ का पत्र मिला। कार्यालय को कह दिया है कि आपको 'वसन्त राग' नामक सुन्दर राजस्थानी चित्र की फोटो भेज दे। लेखों की प्रसादी बाँटते-बाँटते जब शरीर मन थकने लगे तो सबके लिये नया लिखने में लाचार हो गया। 'विवाह-संस्कार' लेख मेहता जी के पुत्र और विजयलक्ष्मी जी की पुत्री के विवाह के अवसर पर लिखकर मेहता जी को दिया था। उसी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय हिन्दुस्तान में निकला था। उससे मोह था, इसलिये 'लोकवार्त्ता' के लिए आपको भेजा था। चाहें तो उसका उपयोग कर सकते हैं।

आपका :

वासुदेवशरण

[१६]

नई दिल्ली

६–६–५१

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

३ जून का संगम देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। आपने उसका काया-कल्प ही कर दिया। हिन्दी के साप्ताहिकों का स्तर ऊँचा उठते देखकर हृदय प्रफुल्लित हो उठता है। सूझबूझ के सम्पादकों की कृपा और श्रम से हिन्दी की खेती को हम सबके नेत्र शीघ्र लहराती देखेंगे, ऐसा विश्वास दृढ़ होता है।

बिदेसिया के बारे में बहुत दिनों से सुना था और जानने की इच्छा थी। आज उसे पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। भगवतीचरण जी का महाकाल भी बहुत सजीव और ऊँचे धरातल की वस्तु है। जनपदीय जनों के छोटे-छोटे चित्र और छापना शुरू कीजिए और विशेष रूप से उन्हें लिखने का लेखकों को आमंत्रण दीजिए।

खलील जिब्रान की कहानी जड़ाऊ नगीना है, पर चित्र उपयुक्त नहीं बन पड़ा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[१७]

काशी विश्वविद्यालय

१७–१–५३

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

१४-१-५३ का पत्र मिला। 'लोकवार्त्ता परिषद्' के विषय में आपके आने पर ही बात होगी। पत्रिका ही मुख्य वस्तु है। उसका पुनः प्रकाशन हो सके तो क्या बात है। आपने तो उसके लिये तन-मन-धन दिया है, किन्तु फिर आरम्भ करने की सम्मति तभी मैं दे सकूँगा जब उसके लिये आर्थिक व्यवस्था दृढ़ हो सके। कम से कम तीन वर्ष तक पत्रिका को निकाला जा सके, इसका ब्यौरा बनाइये।

स्नेही :

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१८]

काशी विश्वविद्यालय
११-२-५३

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

९-२-५३ का पत्र मिला। साहित्यिक बहुत स्वाभिमानी और स्वतंत्र रहना चाहता है। किन्तु सार्वजनिक सेवा के लिये कुछ बन्धन ओढ़ना पड़ता है। जितनी स्वाधीनता हम चाहें उतनी न भी मिले, फिर भी जो इष्ट कार्य है उसे आगे बढ़ाने के लिये उस स्थान का उपयोग आपको करना चाहिए जिसे प्रकृति ने आपको प्रदान किया है। किस परिस्थिति में त्याग-पत्र दिया इसे न जानते हुए भी कहूँगा उसे आग्रहपूर्वक आगे न बढ़ावें, अथवा अपनी ओर से उदासीन रहें। लोकवार्त्ता के कार्य के लिये प्रकृति ने आपको रचा है।

स्नेही :
वासुदेवशरण

[१९]

काशी विश्वविद्यालय
२६-७-५५

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

२६-७-५५ का पत्र मिला। आपके ऊपर पड़ी भारी विपत्ति के लिये मैं संवेदना प्रकट करता हूँ। पत्नी-विरह मानव के लिये दुःख का अन्तःरूप है। सरसता से चलता हुआ जीवनक्रम जीवन सहचरी के अभाव में उलझ जाता है, नई समस्यायें खड़ी कर देता है। ऐसी परिस्थिति में अपने-आप को सँभाले रहने के लिये भारी धीरज की आवश्यकता होती है। ईश्वर करे आपको अपने अन्तःकरण में वह धीर भाव प्राप्त हो।

आपका :
वासुदेवशरण

[२०]

काशी विश्वविद्यालय
२२-४-५६

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

भारतीय गजेटियरों के संशोधित संस्करण हिन्दी में प्रकाशित होने चाहिए, मैं इस विचार का समर्थन करता हूँ। यह सामयिक महत्त्वपूर्ण कार्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय पंचवार्षिक योजना में पूरा किये जाने के योग्य है। आप नवीन जी और श्रद्धेय गुप्त जी के द्वारा दिल्ली में प्रयत्न करें।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[२१]

काशी विश्वविद्यालय
२२-२-५७

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

'ईसुरी की फागें' पुस्तक के दो नये भाग मुद्रित देखकर बहुत प्रसन्नता हुई। पहला भाग मेरे पास था। आपने इस प्रतिभाशाली कवि को सामने लाकर बहुत ही अच्छा कार्य किया। मुझे जैसे इन गीतों में रस मिला है, ऐसे ही अन्य सहृदय भी इनसे तृप्त होंगे ऐसी आशा है। नितान्त जनपदीय शब्दों का एक छोटा कोश भी अन्त में दे दें तो पाठकों को अर्थ तक पहुँचने में सहायता मिले।

आपका :

वासुदेवशरण

[२२]

काशी विश्वविद्यालय
२८-७-५७

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

२४-७-५७ का पत्र मिला। कुशल जानकर प्रसन्नता हुई। अष्टकपाली का अर्थ यज्ञ कराने वाला ब्राह्मण ज्ञात होता है। यज्ञीय पुरोडाश अष्टकपालों में सिद्ध किया जाता है। कहावत का तात्पर्य यह है कि यज्ञीय कर्मकाण्ड का जानने वाला कैसा भी विद्वान् हो घर पर बैठा रहे तो दरिद्री ही रहेगा, पर जब घर से बाहर निकलकर यजमानों में जायगा और कर्मकाण्ड करायगा तब उसके पास लक्ष्मी आयगी। आपको जब अनुकूल हो दर्शन दें। मुझे बहुत प्रसन्नता होगी।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[२३]

काशी विश्वविद्यालय
३-८-५७

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

अष्टकपाली का बंगला में प्रचलित अर्थ मुझे मालूम न था। वह ठीक है, और तब जैसा आपने समझा है उसी अर्थ में लोकोक्ति संगत बैठती है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अष्टकपाली सदा दरिद्री है ही, उसे यात्रा का मुहूर्त क्या देखना; जब चल दे तभी उसकी यात्रा सिद्ध समझनी चाहिए। लोकोक्ति बहुत रुची। अष्टकपाली का दरिद्र अर्थ मध्यकाल के साहित्य में मिलना चाहिए।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[२४]

काशी विश्वविद्यालय

३०–५–६०

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

२७–५–६० का पत्र और 'बुन्देली कहावत कोश' पुस्तक की प्रति पाकर अति प्रसन्नता हुई। तीन सहस्र जनपदीय लोकोक्तियों का यह अपूर्व संग्रह सार्वजनिक स्वागत के योग्य है। निस्संदेह आपके दीर्घकालीन सुनियोजित परिश्रम का यह मूर्तरूप है। मातृभाषा हिन्दी को यह आपकी महार्घ भेंट है। इसे कई घंटों तक देखता रहा हूँ। प्रत्येक पृष्ठ पर बुद्धि के चोखे सूत्र और नए-नए शब्दों को देखकर आनन्द प्राप्त किया है। हिन्दी के जनपदीय भंडार की समृद्धि इससे स्फुट व्यक्त होती है। यदि हिमाचल से दक्षिण कोराल तक और जैसलमेर के लेकर मुंघेर तक इसी प्रकार के क्षेत्रीय लोकोक्ति संग्रह हम तैय्यार कर सकें तो भाषा और प्रज्ञा के क्षेत्रों में आत्म-संस्कृति का पुष्कल रूप हम देख सकेंगे। इस प्रकार के आमाणक-संग्रह को देखने की साध बहुत दिनों से मन में थी, वह आपके इस कोश को प्राप्त कर पूरी हुई।

कितनी ही लोकोक्तियों को जैसे चूसकर उनका रस लेता रहा हूँ।

अक्कल बिन पूत लठेंगर से।
लरका बिन बऊ डेंगुर सी।

इस कहावत को गुप्तजी के यहाँ १७ वर्ष पूर्व कुछ भेद से सुना था, पर उसका यह रूप अच्छा लगा।

'अगनौआ बतर पाऊँ तौ गेहूँ गाय बताऊँ।'

'अड़की कौ दूद खपरिया में खोवा।'

'अथाई के लोग टिड़कना और नकटा नाऊ।'

'आँएँ तो गांव की सुवासिन, पै चिंदरती हैं।'

'जो हतियो पूँछ हिलावे, तौ पैसा पइली बिकावे।'

'बिगनन अँसुआ नईं आऊत।'

इन कहावतों का ठेठ बुन्देली सौरभ मन को हर लेता है। इस कोश में तो ऐसी लोकोक्तियों के ठट्ठ भरे हैं। बुन्देली भाषा के नए-नए शब्द

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखकर तो मुँह में पानी भर आया कि बुन्देलखंड के किसी व्रती साहित्यिक को इस बोली का एक बढ़िया शब्दकोश भी बनाना चाहिए। हतसार (हस्तिशाला, पृ० २४५), बिगनन (वृक, पृ० २४४), गहन (सं० ग्रहणक, पृ० ३४८) जैसे टकसाली शब्दों की धात्री जनपदीय बोलियाँ ही हैं। कहावतों और अनजाने शब्दों के अर्थ साथ ही देकर आपने बहुत अच्छा किया। उससे पुस्तक पढ़ने में रस आ गया।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[२५]

काशी विश्वविद्यालय
२५-५-६३

प्रिय श्री कृष्णानन्द जी,

'ज्ञान विज्ञान' का पहला अङ्क देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। हिन्दी क्षेत्र के लिए आपकी यह नई सूझ है। लेखों का स्तर भी रुचा। जनता के लिए चुन-चुन कर ज्ञानोपयोगी सामग्री दी गई है। इसका पर्याप्त प्रचार होना चाहिए। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि यह काम आगे चले।

गंगा दशहरा

ज्येष्ठ शुक्ल दशमी (१ जून) को गंगा दशहरा है। यह लोक की पुरानी मान्यता है। आज अन्जान में हम इसकी खिल्ली उड़ाते हैं। इसका भेद यों है। गंगा वह प्राणरूपी जल की धारा है जो अमृतलोक स्वर्ग से भूतल पर आती है। जहाँ इस प्राण-गंगा का एक भी कण है, वहाँ जीवन है। सगर के साठ सहस्र पुत्रों के शरीर मुट्ठी भर धूल थे। हममें से प्रत्येक व्यक्ति उन्हीं में से एक है। गंगा के प्राणमय जल का स्पर्श पाकर वे सगर पुत्र जीवित हो गए। उन सगर-पुत्रों का सागर यह भव समुद्र ही है। इसमें जो अनन्त प्राणी हैं वे सब गंगाजल की एक-एक बूँद से बने हैं।

ज्येष्ठ का दशहरा गर्मी का अन्त है। उससे पहले के दिनों को गाँव में दस-तपा कहते हैं। उसके बाद ही आकाश से जो मूसलाधार पानी बरसेगा वही स्वर्ग से पृथ्वी पर आने वाली गंगा का प्रत्यक्ष रूप है। राजा भगीरथ सूर्य ही हैं। उन्हीं का रथ जब इस बिन्दु पर आता है तो गंगा को अपने पीछे खींचता हुआ आकाश से पृथ्वी पर ले आता है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

श्री अगरचन्द नाहटा के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६]

प्रोविन्शियल म्यूजियम
लखनऊ
दि० २८-७-४३

विज्ञशिरोमणि श्री नाहटा जी,

नमः। आपका १४ ता० का कृपा पत्र मिला। आपके विद्वत्तापूर्ण लेखों को पढ़कर मुझे पहले भी आपके नाम का परिचय था परन्तु इस पत्र की प्राप्ति से आपकी विद्यानुरागिता और सज्जनता का एक नया परिचय मिला और चित्त में बहुत आनन्द प्राप्त हुआ। आप सचमुच अध्यवसायशील विद्वान् हैं और जैन-साहित्य तथा इतिहास की खोज का जो बहुमूल्य कार्य आप कर रहे हैं वह अद्‌भुत है। आपने जो अपने लेखों के रिप्रिंट भेजे उन्हें पढ़कर बहुत आनन्द हुआ। 'श्री जिनप्रभ सूरि' पर आपका लेख अनेक मूल्यवान सूचनाओं से अलंकृत है। इसी प्रकार सत्यासीया दुष्काल छत्तीसी लेख भी सामाजिक इतिहास के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यदि आप कृपा करके अपने अन्य उपलब्ध लेखों की प्रतियाँ भी भेज सकें तो मैं बहुत आभारी हूँगा। आपकी सूची के कुछ लेख जो मुझे पढ़ने की इच्छा है ये हैं—१-सती मृगावती २—युग प्रधान जिन चन्द्र सूरि, ३—जिन कृपा चन्द्र सूरि गहुली संग्रह, ४—बीकानेर के ज्ञान मन्दिर, ५—पूर्वकालीन ओसवाल ग्रन्थकार, ६—कविवर समय सुन्दर साहित्य, ७—पदावलियों में संशोधन की आवश्यकता, ८—अलभ्य ग्रन्थों की खोज, ९—जैन कवियों का हीयाली साहित्य, १०-सिंध प्रांत और खरतर गच्छ, ११—लुप्त प्राय जैन ग्रंथों की सूची, १२—दो ऐतिसिक रासों का सार, १३—जिन चन्द्र सूरि और अकबर १४—दो खरतर गच्छीय ऐतिहासिक रासों का सार, १५—तीर्थ गिरिराजों के रास्ते, १६—सिंधी भाषा में जैन साहित्य, १७—जटमल नाहर और उनके ग्रंथ, १८—प्राचीन तीर्थमाला संग्रह और भी जो लेख उपलब्ध हों भेजने की कृपा करें। 'दादा जिन कुशल सूरि' और 'मणिधारी जिन चन्द्र सूरि' तथा 'युग प्रधान जिन चन्द्र सूरि' पुस्तकें भी भेज सकें तो कृपा हो। मुझे जैन साहित्य के ऐतिहासिक पक्ष में अत्यधिक रुचि है और उसके साहित्यिक पक्ष का भी अवलोकन करना चाहता हूँ। कल ही डाक से मुझे 'अनेकान्त' का जनवरी १९४३ (वर्ष ५, किरण १२) अङ्क प्राप्त हुआ है। उसमें मेरा लेख छपा है। आपने अपने पत्र में संशोधन लिखे हैं उसके लिये आपका उपकार मानता हूँ। 'विज्ञप्ति त्रिवेणी' ग्रंथ अभी तक मुझे प्राप्त नहीं हो सका। मैंने उसका

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उल्लेख १९१७ की इण्डियन ऐंटीक्वेरी पत्रिका में प्रकाशित समालोचना के आधार पर किया था और मुझे खेद है कि उसमें भूल रह गयी। समालोचना में भी यह भूल है। अस्तु, उसका संशोधन 'अनेकान्त' में करा रहा हूँ। प्राचीन ऐतिहासिक काव्य, पदावली, प्रशस्ति संग्रह और प्रतिभा लेख संग्रह के सम्बन्ध में आपने जो बहुमूल्य सूचनाएँ भेजी हैं वे बड़ी उपयोगी हैं। मैं उन्हें भी 'अनेकान्त' में भेज दे रहा हूँ। आशा है सम्पादक छापकर अनुगृहीत करगे। 'बीकानेर जैन लेख संग्रह' जब छपे तब सूचित करियेगा।

जैन तीर्थ मालाओं का महत्व अभी तक विद्वानों के सामने नहीं आया। धीरे-धीरे उनका प्रकाशित होना बहुत जरूरी है। 'अनेकान्त' अब त्रैमासिक हो रहा है और उसमें अप्रकाशित ग्रन्थ भी छपेंगे। इसलिये तीर्थमालाओं को अवश्य उसमें प्रथम अङ्क से ही प्रकाशित करने की व्यवस्था सम्पादक जी को लिखकर करें। बौद्धों का भौगोलिक साहित्य बहुत ऊँचा है और वह बड़ा महत्त्वपूर्ण है। जैन साहित्य भी अवश्य छपने योग्य है। मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आपके संग्रह में इसकी विशेष सामग्री है। मैं यू० पी० हिस्टारिकल सोसाइटी जर्नल का सम्पादक हूँ। यदि आप अपना लेख हिन्दी में भेजेंगे तो हम उसे अंग्रेजी करके भी छाप सकते हैं क्योंकि भूगोल सम्बन्धी सामग्री का इस समय बड़ा मूल्य है।

मैं अपने कुछ लेखों के रिप्रिंट भेजता हूँ। आशा है आपके साथ साहित्यिक परिचय उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होकर विशेष उपयोगी सिद्ध होगा। मैंने इधर पाणिनि पर एक बड़ा निबन्ध तैयार किया है।

विनीत :

वासुदेवशरण

[२७]

लखनऊ

१८-८-४३

प्रिय श्री नाहटा जी,

उपलब्ध रिप्रिंट आपके पास भेजे जाते हैं। कृपया पहुँच दीजिएगा।

आपके भेजे हुए रिप्रिंट तथा पुस्तकें प्राप्त हुईं। आपकी प्राचीन शोध विषयक प्रवृत्ति से इस प्रकार परिचित होकर अपरिमित आनन्द हुआ। आपका कार्य विशेषतः हिन्दी भाषा का भण्डार भर रहा है इस बात से और भी अधिक परितोष है। मैं इस साहित्य से परिचित होकर इस परिणाम पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहुँचा हूँ कि हर्षवर्धन के काल से लगभग एक सहस्र वर्षों तक के साहित्य और इतिहास के लिये जब तक जैन ग्रन्थों की पूरी परीक्षा और गवेषणा न होगी तब तक हमारा कार्य अधूरा रहेगा। भारतीय जनता की सच्ची अनुभूति इस काल के जैन साहित्य के विमर्श से ही जानी जा सकती है।

'युग प्रधान श्री जिनचंद्र सूरि' पुस्तक बहुत ही छान-बीन के बाद सच्ची ऐतिहासिक पद्धति से लिखी गई है। भारतीय इतिहास के अनेक भूले स्रोतों से यह हमारा परिचय कराती है। इसमें सन्देह नहीं कि अकबर कालीन जिन महात्माओं ने भारतीय धर्म के सम्मानार्थ प्रयत्न किया था, उनमें जैन समाज में श्री हीर विजय, विजय सेन, सिद्धिचंद्र, भानुचंद्र के अतिरिक्त युग प्रधान श्री जिन चंद्र सूरि का भी प्रधान स्थान स्वीकृत करना पड़ेगा। अवश्य ही इनकी गणना उस युग के उदात्त मस्तिष्कों में की जानी चाहिए। जिस उच्च परिस्थिति में जातीय और सम्प्रदायगत पक्षपात पीछे छूट जाते हैं, विशुद्ध ऐतिहासिक की उस ऊँची आसंदी से जब अकबरीय युग का समग्र अध्ययन किया जायगा, तब जैनाचार्य सूरि महोदयों द्वारा की हुई संस्कृति की सेवा का पूरा महत्त्व प्रकाश में आएगा। मैं हृदय से चाहता हूँ कि आपके द्वारा इसी प्रकार ऐतिहासिक शोध का कार्य जारी रहे।

राजस्थानी पत्र के विषय में मैं कुछ अधिक विवरण जानना चाहता हूँ।

आपका हितैषी :

वासुदेवशरण

[२८]

लखनऊ

२३।६, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

सप्रेम नमः। आपने ना० प्र० पत्रिका के सबसे इधर के अङ्क में विक्रमांक की योजना देखी होगी। उसकी एक प्रति सेवा में भेजता हूँ। मैंने अक्तूबर १९४२ में इस अङ्क की योजना बनाई थी उसके अनुसार विक्रमांक में भारतीय संस्कृति का दो सहस्र वर्षों का पूरा विषय इसमें आना चाहिए। मातृभूमि के अनेक पुत्रों ने, अनेक धर्म और सम्प्रदायों ने जीवन के विविध क्षेत्रों में जिस महनीय कार्य कलाप को सम्पन्न किया है, जिन नये दृष्टिकोणों से जीवन में प्रवृत्त होते रहे हैं, उनका दिग्दर्शन भी इस अङ्क में रहे तो अच्छा है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैन साहित्य और इतिहास के अनेक उज्जवल प्रकरण इस अवधि में लिखे गये। उनमें से बहुतों का परिचय अभी हिन्दी जगत् को मिलना शेष है। हिन्दी भाषा और छन्दशास्त्र के आदि विकास की सामग्री तो जैन अपभ्रंश साहित्य में ही मिल सकती है। मैं इस विषय में एक २० से ३० पृष्ठ का लेख आपसे चाहता हूँ जो ८-९वीं शताब्दी से लेकर १६वी शताब्दी तक के अपभ्रंश साहित्य के विकास पर हो और ग्रंथ सामग्री से अच्छी तरह भरपूर हो जैसे प्रायः आपके लेख रहते हैं। अपभ्रंश भाषा के साथ हिन्दी के आद्यकाल और मध्यकाल का सम्बन्ध प्रदर्शित करना भी इस लेख का उद्देश्य रहेगा। लेख नवम्बर के अन्त तक मुझे प्राप्त हो जाना चाहिए। यदि इस सम्बन्ध में आपका बहुमूल्य सहयोग प्राप्त होगा तो मैं कृतज्ञ हूँगा। आशा है आप अपनी स्वीकृति भेजकर अनुगृहीत करेंगे।

भवदीय :

वासुदेवशरण

पुनश्च :—

'मातृभूमि' पुस्तक आपने पढ़ी, धन्यवाद। हेमचन्द्र के पुस्तकालय की बात का आधार अब मुझे याद नहीं है। कालिज में बी० ए० पास करने के बाद १९२७ में मैंने यह लेख लिखा था। सम्भव है पीटर्सन आदि की खोज रिपोर्टों में कहीं पढ़ा हो। पर यदि वह भ्रान्ति है तो मुझे यह सूचित करने के लिए आपका धन्यवाद है। मैंने उसे संशोधनार्थ नोट कर लिया हैं। क्या पाटन में आचार्य हेमचन्द्र विषयक अन्य कोई सामग्री या चिह्न विद्यमान है ? हो तो कृपया लिखें।

जैन साहित्य के मध्यकालीन ग्रन्थों को देखकर इस साहित्य के प्रति मेरी श्रद्धा बहुत बढ़ गई है। इस कार्य में श्री नाथूराम जी, प्रो० हीरालाल जैन, स्व० श्री नाहर जी सदृश मित्रों से भी सहायता मिली। आपका परिचय प्राप्त कर बहुत ही प्रसन्नता हुई है। जैन श्वेताम्बर कार्यालय से कौन से ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं ? उनमें से जो मेरे योग्य समझें उन्हें भिजवाने की कृपा करें। स्वर्गीय मुनि श्री रत्नचन्द्र से भी मुझे जैन साहित्य के सम्बन्ध में सहायता और परिचय मिला था। अभी मैंने श्री भगवानदास जी द्वारा जयपुर से प्रकाशित ठक्कुर फेरू विरचित वास्तुसार प्रकरण ग्रन्थ पढ़ा है और उसके आधार पर मध्यकालीन स्थापत्य कला से सम्बन्धित परिभाषात्मक शब्दों पर एक लेख हिस्टारिकल जर्नल के लिए तैयार किया है। ठक्कुर फेरू (?मंडन)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के 'प्रासाद मंडन' ग्रन्थ के प्रकाशित होने की सूचना भी श्री भगवानदास जी ने वास्तुसार के आरम्भ में दी है। क्या आप कृपया सूचित करेंगे कि यह ग्रन्थ प्रकाशित हुआ या नहीं। आपके संग्रह में यह ग्रन्थ है ? क्या ठक्कुर फेरु ने स्थापत्य-शास्त्र पर और भी कुछ लिखा था ?

अथवा स्थापत्य-कला और वास्तु तथा मूर्ति निर्माण पर जैन साहित्य में और कौन से ग्रन्थ उपलब्ध हैं ? इस विषय की जो सूचना आप भेजेंगे उससे अनुगृहीत हूँगा।

सुना है आपके संग्रह में जैन साहित्य की अतुल सामग्री है। क्या किसी ग्रन्थमाला के रूप में उसके क्रमशः प्रकाशन की आपने कोई योजना तैयार की हे ?

प्रेमी जी का 'जैन साहित्य और इतिहास' ग्रन्थ मैंने खूब रुचि से पढ़ा है और वह मेरे पास है। उन्होंने विचित्र सामग्री का उसमें समावेश कर दिया है। पुस्तक अत्यन्त सुपाठच और काम की है।

प्रेमी जी से भी मैं विक्रमांक में लिखने के लिये एक लेख की प्रार्थना कर रहा हूँ। क्या आप कृपा करके अन्य साहित्यिक मित्रों का नाम बता सकेंगे जो इस कार्य में सहयोग दे सकें। मुनि जिन विजय जी का क्या पता है ? मध्यकालीन जैन विक्रम के विभिन्न पक्षों पर कई लेख रहें तो अच्छा है। विक्रमादित्य के सम्बन्ध में जैन साहित्य की सामग्री पर अच्छा लेख कोई मित्र लिख सकें तो बहुत सुन्दर हो। कालकाचार्य कथानक की ऐसी ऐतिहासिक छानबीन होनी चाहिए। देसाई कृत जैन साहित्य नो संक्षिप्त इतिहास ग्रन्थ का नाम आपने लिखा है। कृपया सूचित करें कि सामग्री की दृष्टि से उस पुस्तक की श्रेष्ठता कैसी है ?

[२६]

लखनऊ

आश्विन शुक्ल ८, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

कृपा पत्र मिला। आपकी सूचनाओं के लिये अत्यन्त आभारी हूँ। मैं मुनि पुण्यविजय जी महाराज तथा अन्य जैन विद्वानों को लिखूँगा। श्री पुण्यविजय जी का अत्युत्तम निबन्ध 'जैन चित्र कल्पद्रुम' में मैंने पढ़ा है। वह बहुत ही मूल्यवान् है।

'विक्रमांक' में हिन्दी साहित्य के विकास के ऊपर कई लेख जैन सामग्री के आधार पर मैं चाहता हूँ। हिन्दी के वीरगाथाकाल का साहित्य आपके

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष अध्ययन का विषय है। गुजराती और हिन्दी के रासों की परम्परा को लेकर आप एक निबन्ध विक्रमांक के लिए भेजने की कृपा करें। अपभ्रंश साहित्य और वीरकाल के बाद के साहित्यिक विकास पर लेखों के लिये अन्य विद्वानों से निवेदन कर रहा हूँ। विक्रमांक की समस्त योजना स्थायी साहित्यिक दृष्टि से बनाई गयी है। उसमें आप जैसे गंभीर और अधीत लेखक का सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। आशा है जैन साहित्य के इस उज्जवल कार्य को आप इस अंक में प्रदर्शित कर सकेंगे। कृपा करके उत्तर दीजिएगा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[३०]

लखनऊ

५।११, कार्तिक शुक्ल ८, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

सादर नमः। आश्विन शुक्ल ८ को एक पत्र सेवा में भेजा था जिसमें जैन साहित्य में प्राचीन रासों की परम्परा पर निबन्ध लिखने की प्रार्थना की गई थी। आशा है आपने इसे स्वीकार कर लिया है। कुछ नवीन सामग्री आपके द्वारा विक्रमांक को मिलनी चाहिए। आपका अध्ययन विशाल है और आप जब लिखते हैं खूब सारगर्भित लिखते हैं। अतएव मेरा विशेष आग्रह आप से है क्योंकि विक्रमांक के द्वारा अधिक से अधिक हिन्दी जनता तक आपकी सामग्री और सूचना पहुँचाई जा सकेगी।

यदि आप जैन पुस्तक भण्डार और उनके अमूल्य रत्नों पर ही लिखें तो और भी उत्तम हो क्योंकि इस ओर अभी हाल में जनता का ध्यान जाने लगा है और प्राप्यमान सामग्री को देखते हुए इन भण्डारों से बहुत बड़ी आशा हमारे साहित्य और संस्कृति को है। उत्तर से कृपया अवश्य अनुगृहीत करें।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[३१]

लखनऊ

२१-११-४३, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपके ३ और १० नवम्बर के दोनों पत्र यथासमय पहुँच गये थे। परन्तु मैं १५ दिन से देहरादून की ओर प्राचीन मूर्तियों की खोज में दौरे पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया हुआ था, अतएव पहले उत्तर न लिख सका। कृपया क्षमा करें। आज ही प्रातःकाल लौटा हूँ।

मुझे यह जानकर दुःख हुआ कि आपका 'जैन साहित्य का महत्व' शीर्षक लेख सभा के कार्यालय की असावधानी से इस प्रकार गोलमाल में पड़ गया। मैंने मंत्री जी को भली प्रकार उसे ढुँढ़वाने के लिए अभी पत्र लिखा है जैसा विदित होगा, आपको सूचित करूँगा। यह लेख तो अत्यन्त महत्वपूर्ण है ही, और जब भी प्राप्त होगा, मैं उसे अवश्य ही पत्रिका में प्रकाशित करूँगा।

परन्तु इस अनिश्चित परिस्थिति में कहीं विक्रमांक के लिए आपका सहयोग विलम्बित न हो जाय, इस विचार से मेरी यह प्रार्थना है कि कृपया वीरगाथाकालीन जैन साहित्य पर अपना महत्वपूर्ण लेख उचित सामग्री के समावेश के साथ भेजने का अनुग्रह करें।

मुझे दुःख है कि यह उत्तर १५ दिन पिछड़ गया अतएव आप अपना लेख दिसम्बर के मध्य तक कृपया लिख सकते हैं।

संस्कृत में एक दिव्योक्ति है—'अथवा श्रेयसिकेन तृप्यते।' इस न्याय से मेरा मन यदि आपको अवकाश हो, तो आपसे दोनों लेख अर्थात् जैन भंडारों पर भी प्राप्त करने के लिए उत्सुक है। जैन-ग्रन्थ भण्डारों में जो अक्षय सामग्री सुरक्षित है, उसका परिचय हमारे साहित्यिक जगत को अवश्य ही क्रमशः मिलना चाहिए। जो सेवा इन ग्रंथागारों ने भारतीय संस्कृति की की है, उसका ध्यान करके हृदय गद्गद् हो जाता है। आप इस समय जिस भारी कार्य में संलग्न हैं, उसको ध्यान में रखते हुए मैं यही कहूँगा कि आप उपरोक्त प्रार्थना की पूर्ति में स्वयं ही प्रमाण हैं।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[३२]

लखनऊ

१०–१२, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका कृपा पत्र मिला; आनन्द हुआ। बीकानेर के जैन भण्डारों पर लेख भी मिल गया। धन्यवाद! मुझे अभी श्री दशरथ शर्मा जी का पत्र मिला है कि आप 'वीरगाथाकालीन जैन साहित्य' पर 'विक्रमांक' के लिए लिख रहे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मैं कह नहीं सकता कि मुझे इससे कितना सन्तोष व प्रसन्नता हुई। आपके जिस लेख के लिए मैं इतना उत्सुक था, वह मुझे अनायास मिल जायगा। यह आपकी परिश्रमशक्ति और भारी कृपा का फल है। मैं भी इस समय अत्यन्त परिश्रम से 'विक्रमांक' की तैयारी में लगा हूँ और आपकी सामग्री का अधिकांश भेजकर २४ ता० को अलीगढ़ इतिहास—परिषद् आदि के लिए रवाना होऊँगा। प्रार्थना है कि आप अपना लेख उससे पहले ही भेजें तो बहुत अच्छा है। देहरादून जिले के लाखा-मंडल की प्राचीन मूर्तियाँ गुप्तकाल और मध्यकाल की थीं। मथुरा के जैन लेखों के सम्बन्ध में मुझे नानाजी के कार्य का परिचय है। उस सम्बन्ध में समय आने पर आवश्यक कार्यवाही होगी।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[३३]

लखनऊ
२२–१–४४

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका 'वीरगाथाकालीन जैन साहित्य' शीर्षक लेख यथा समय प्राप्त हुआ। मैं काशी गया था, स्मरण नहीं आपको पहुँच भेजी या नहीं। वह लेख विक्रमांक में छप रहा है।

सिन्ध प्रान्त और खरतर गच्छ सम्बन्धी अपना भौगोलिक लेख तैयार होने पर भेजने की कृपा करें।

'जैन साहित्य का महत्व' शीर्षक लेख ढूँढ़ने के लिये मैंने सभा को लिखा था, पर अभी तक वह कहीं नहीं मिल सका है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[३४]

लखनऊ
२३-७-४४, सं० २००० वि०

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका १७।७ का कृपा पत्र मिला। आपके ३ लेखों का ब्यौरा इस प्रकार है—

(१) वीरगाथाकालीन जैन साहित्य शीर्षक लेख विक्रमांक के उत्तरार्ध

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में सम्मिलित होगा। पहले एक ही अंक प्रकाशित करने की योजना थी परन्तु कागज की कमी से दो भागों में बाँटना पड़ा।

(२) 'बीकानेर के ज्ञान भण्डार' लेख पत्रिका के आगामी अंकों में छपेगा।

(३) 'सिंध प्रान्त और खरतर गच्छ' शीर्षक लेख भी पत्रिका में ही स्थान की सुविधा होने पर दिया जायगा।

'विक्रमांक' पूर्वार्ध प्रकाशित हो चुका है आपको अब मिल गया होगा। न मिला हो तो सभा के मंत्री को लिखकर कृपया मँगवा लें।

जैन मूर्ति कला के सम्बन्ध में एक पूर्ण पुस्तक लिखा जाना ही विचाराधीन है। काशी के एक प्रकाशक से बात-चीत पक्की होने पर वैसा किया जायगा। शेष कुशल।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[३५]

लखनऊ
१५-१०-४४

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका २५-६-४४ का पत्र मंत्री सभा के नाम भेजा हुआ मिला।

आपने जो तीन लेख भेजे थे उनमें से वीरगाथाकालीन जैन साहित्य लेख विक्रमांक उत्तरार्ध में छप रहा है। अङ्क जब प्रकाशित होगा उसी के साथ लेख भी प्रकाशित हो जायगा। कागज की कठिनाई के कारण से अङ्क पिछड़ गया है परन्तु आजकल प्रकाशन जारी है।

दूसरा लेख बीकानेर के जैन भण्डार मैंने अभी पढ़कर देखा। उसमें प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सम्बन्ध में बड़ी मूल्यवान् सूचनाएँ हैं। मैं उसे पत्रिका के ही अगले किसी अङ्क में छापना चाहता हूँ। पत्रिका हिन्दी जगत् में सर्वत्र पहुँचती है। अतएव प्रचार की दृष्टि से यदि उस लेख को आप पत्रिका के लिए ही सुरक्षित रख सकें तो अच्छा होगा अन्यथा जैसा आप निश्चय करें वैसा किया जायगा।

तीसरा लेख—सिंध प्रांत और खरतर गच्छ—भी बहुत उपयोगी है। पहली बार ही सिन्ध के सम्बन्ध में इस प्रकार की साहित्यिक सामग्री एकत्र

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखने को मिली। पर पत्रिका में उसके प्रकाशित होने में अभी काफी देर होने की आशंका है। अतएव उसे रजिस्ट्री से आपके पास भेजा जा रहा है। यदि जैन सिद्धान्त भांस्कर में यह छप सके तो बहुत उत्तम होगा। आशा है आपकी साहित्यिक साधना ठीक चल रही है।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[३६]

लखनऊ

८-१-४५

प्रिय श्री नाहटा जी,

पत्रिका के सम्पादक के नाम भेजा हुआ आपका पत्र मद्रास यात्रा से लौटने पर मुझे प्राप्त हुआ। 'बीकानेर के जैन ज्ञान भण्डार' शीर्षक आपका लेख आज्ञानुसार वापिस किया जाता है, पत्रिका में इसके छपने में अभी कुछ समय लगेगा। दूसरा लेख 'वीरगाथाकालीन जैन भाषा साहित्य' शीर्षक विक्रमांक के उत्तरार्ध में जा रहा है।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[३७]

लखनऊ

२९-९-४५

प्रिय श्री नाहटा जी,

कृपा पत्र मिला। प्रसन्नता हुई। आप प्रेमी ग्रन्थ के लिये कृपा करके अपना लेख भेजिए, अवश्य प्रकाशित होगा। आपके पास तो बहुत प्रकार की मौलिक सामग्री विद्यमान है। आपके लिखे विषयों में 'तीर्थों के इतिहास की विशाल सामग्री' यह विषय बहुत उपयुक्त रहेगा। मैं भौगोलिक अन्वेषण परक सामग्री का स्वागत करूँगा। श्री यशपाल जी संगृहीत लेख सामग्री लेकर अक्तूबर के प्रथम सप्ताह में आने वाले हैं। परन्तु आपके लेख की अवधि अक्तूबर के अन्त तक है। आपके लेख की प्रतीक्षा उत्सुकता से देखूँगा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Central Library 185583 Gurukula Kangri (L...) Haridwar

[३८]

प्रोविंसियल म्यूजियम
लखनऊ
१-१२-४५

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका २६-११-४५ का कृपा पत्र मिला। आपका लेख यथा समय मिल गया था और मैंने उसे श्रीयशपाल जी मधुकर कार्यालय, टीकमगढ़ (C. I. के) पास प्रेमी ग्रन्थ में प्रकाशनार्थ भेज दिया था और उन्हें यह भी लिख दिया था कि आपको पहुँच भेज दें।

प्राचीन भारतीय मुद्राओं पर कोई संस्कृत ग्रन्थ अभी तक उपलब्ध नहीं हुआ है। परन्तु हिन्दी भाषा में श्रीरखालदास बन्द्योपाध्याय का लिखा हुआ प्राचीन भारतीय मुद्रा नामक ग्रन्थ है जो काशी नागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हुआ है। जिन दत्त सूरि चरित्र और राजस्थानी के छपने का समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। मैं उन्हें देखकर आनन्दित होऊँगा। आपके पास तो जैन साहित्य इतिहास और पुरातत्त्व की इतनी विशिष्ट सामग्री है कि आपको एक नियमित ग्रंथमाला के रूप में उसे प्रकाशित करके अपने यश को स्थायी कर लेना चाहिए। छिताई वार्ता' लेख मैंने पढ़ा था। मुझे यह जानकर बहुत ही हर्ष हुआ था कि आपको यह अवधी काव्य मिल गया है। क्या अन्य कोई प्रति मिली? क्या उसकी एक प्रतिलिपि काशी ना० प्र० सभा के लिए आप करवा दे सकते हैं?

भवदीय :
वासुदेवशरण

[३९]

नई दिल्ली
१६-१२-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका एक पत्र सिलहट से मिला था जिसमें आपने लिखा था कि छिताई वार्ता लेख की प्रति (रिप्रिंट) बीकानेर जरूर भेजेंगे। यदि रिप्रिंट कोई हो तो कृपया भेजिएगा।

नागरी प्रचारिणी सभा के पुस्तकालय में रखने के लिए छिताईवार्ता की प्रतिलिपि की आवश्यकता है लिखिये क्या व्यय होगा? आपका उत्तर आने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर मैं सभा की स्वीकृति प्राप्त कर आपको लिखूँगा। मैंने बीकानेर जाने के बारे में आपको पत्र लिखा है। व्याख्यानों के लिए दिसम्बर में न जाकर सम्भवतः जनवरी में किसी समय जा सकूँगा। श्रीस्वामी को भी सूचित कर रहा हूँ।

ठक्कुर फेरु के द्रव्य संग्रह की प्रतिलिपि फोटो कराने की बाबत जो मैंने लिखा है उसका भी उत्तर कृपया दीजिएगा।

आपका :

वासुदेवशरण

[४०]

नई दिल्ली

२२-२-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका कृपा पत्र मिला। वृत्तान्त ज्ञात हुआ। ठक्कुर फेरु के द्रव्य परीक्षा ग्रन्थ की जो प्रति आपके पास है कृपया उसी की एक प्रतिलिपि कराकर मेरे पास भेज दीजिए। प्रतिलिपि कराने का व्यय सभा की ओर से दिया जायगा। प्रतिलिपि मिलने पर ग्रन्थ के विशेष प्रकरणों पर विस्तृत विचार किया जायगा। कृपया श्रीमती सागर जी का पूरा पता लिखें। जनवरी का विशाल भारत भी देखूँगा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[४१]

अग्रवाल कम्पनी, हीवट रोड

लखनऊ

२३-४-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

द्रव्य परीक्षा ग्रन्थ की प्रतिलिपि होने की बात जानकर हर्ष हुआ। कृपया ग्रन्थ लखनऊ के ऊपरी पते पर मेरे नाम रजिस्ट्री से भेज दें। मैं यहाँ दो मास की छुट्टी लेकर आया हुआ हूँ। जून के अन्त तक ठहरूँगा। बीकानेर वाले व्याख्यान के लिये आप वहाँ पहुँचकर सुविधानुसार तारीख नियत करलें और मुझे लिखें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशाल भारत में छपा द्रव्य परीक्षा वाला लेख नहीं देखा था, अब उसे मँगाकर पढ़ूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४२]

अग्रवाल कोठी, होवट रोड
लखनऊ
२८-५-४७

प्रिय श्री नाहटा जी,

२८-५-४७ का कृपा पत्र मिला। द्रव्य परीक्षा की मुद्रा विषयक अंश की प्रतिलिपि भी मिली। अनेक धन्यवाद। यथा समय उसका उपयोग करूँगा। मैं श्री ज्ञानी जी बम्बई को लिख रहा हूँ कि प्रतिलिपि (१७ पृष्ठ) का पारिश्रमिक २-रु० प्रति पृष्ठ के हिसाब से ३४ रु० आपके पास भेज दें। आप श्री राधिकाशरण जी को दे देने की कृपा करें साथ में मेरा धन्यवाद भी उन तक पहुँचा दें। विशाल भारत के किस अङ्क में द्रव्य परीक्षा पर मलिक्रांति सागर जी का लेख निकला है ? मैंने वह अभी नहीं देखा।

डा० मोतीचन्द जी २४ अप्रैल से बम्बई चले गए। मैं उनसे पत्र लिखकर मृगावती के बारे में पूछूँगा। आप भी पत्र लिखें। विशाल भारत के पुरातत्त्वांक की बात जानकर प्रसन्नता हुई।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४३]

नई दिल्ली
१-११-४७

प्रिय श्री नाहटा जी,

नमस्ते।

कृपा पत्र मिला। 'सदयवच्छ' की दोनों प्रतियाँ (केशव कृत एवं हर्ष-वर्धन कृत) देखने के लिए भिजवा सकेंगे तो अनुगृहीत होऊँगा। डा० दशरथ शर्मा जी यहाँ नहीं आए और न उनकी कोई सूचना ही मिली है।

यदि आप स्वयं 'सदयवच्छ की कहानी' पर कोई लेख लिखने की कृपा करें तो बड़ा अच्छा होगा। पत्रिका में वह अवश्य छप जावेगा। इस समय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रिका के सम्पादक श्री प्रो० विश्वनाथप्रसाद जी हैं और पर्याप्त पृष्ठ संख्या की स्वीकृति न होने के कारण लेखों के छपने में विलम्ब हो जाता है। फिर भी लेख अवश्य छप सकेंगे ऐसी आशा है। 'राजस्थान-भारती' का दूसरा अंक नहीं आया भिजवाइयेगा। 'सदयवच्छ' वाला लेख लिखे जाने पर कृपया पहले मेरे पास भेजें। पं० भगवद्दत्त जी को कल सायंकाल डा० दशरथ शर्मा जी यहाँ मिले थे।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४४]

नई दिल्ली
६-७-४९

प्रिय श्री नाहटा जी,

रत्न परीक्षा, धातुत्पत्ति और द्रव्य परीक्षा ध्यान पूर्वक पढ़ीं। द्रव्य परीक्षा तो सामग्री की खान है। इसका ९-१०वाँ अंश तो स्पष्ट हो गया है। सिक्कों के मूल्य और तोल की पहचान का काम करना होगा। इसमें बहुत श्रम की अपेक्षा है। मेरा विचार अवश्य इस बहुमूल्य ग्रन्थ का एक अच्छा सचित्र संस्करण प्रस्तुत करने का है। आपने ग्रन्थ की मूल प्रतिलिपि मेरे लिये सुलभ कराकर जो उपकार किया उसका पूरा महत्व अब समझ में आया। यह ग्रन्थ सूत्र शैली में लिखा गया है और विस्तृत व्याख्या चाहता है। कौटिलीय अर्थ-शास्त्र के बाद मुझे यही ग्रन्थ अपने ढंग का जान पड़ता है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४५]

३५/१६, फीरोज़शाह रोड
नई दिल्ली
३-१०-४९

प्रिय श्री नाहटा जी,

पोद्दार अभिनन्दन-ग्रन्थ के लिये आपके पास जो लेख आए हैं कृपया उनकी सूची लौटती डाक से भेजिएगा। आपने पहले लेख भेजने के लिये लिखा था, कृपया उन्हें यथाशीघ्र मेरे पास भिजवा दीजिए जिससे यह काम आगे बढ़े। दिसम्बर तक सामग्री तैयार करने का प्रयत्न हो रहा है। आपने किस विषय पर लिखा है ?

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नई योजना के अनुसार ग्रन्थ को व्रज-संस्कृति, कला, धर्म, साहित्य के संग्रह कोष के रूप में तैयार करना है। राजस्थानी साहित्य एवं जैन साहित्य में कृष्ण सम्बन्धी जिस साहित्य का निर्माण हुआ है उसके परिचय का एक लेख आप कृपया तैयार करदें तो बहुत उपयुक्त हो। और जो विषय आपके ध्यान में हों उनकी भी सूचना दें।

द्रव्य संग्रह का फोटो हो गया है। शेष भागों का मिलान करके मूल प्रति आपके पास भिजवाऊँगा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[४६]

३५/१६, फीरोज़शाह रोड

नई दिल्ली

१२-१०-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

६-१०-४६ का कृपा पत्र मिला। आप कृपया इन लेखों को एकबार यहाँ भेज दीजिए। देखकर व्यास जी और मैं यह निश्चय कर लेंगे कि इनमें से कौनसा अब पोद्दार ग्रन्थ में शामिल किया जा सकता है। सत्येन्द्र जी को पहले भेजे गये लेख तो यहाँ हैं ही। कृपया यह भी लिखें कि राजस्थानी साहित्य सम्बन्धी जो अच्छे लेख मिले हैं उनका उपयोग अन्य किसी प्रकार से आप कर सकते हैं क्या ?

स्वामी जी को लेख के लिये मैंने यहाँ से भी पत्र लिखा है। आशा है वे लिखने की कृपा करेंगे। आपका 'समय सुन्दर' वाला लेख अवश्य पढ़ना चाहता हूँ। मंडल की पुरानी योजनानुसार आपने लेखों के संग्रह में जो परिश्रम किया उसके लिये अनुग्रहीत हूँगा। मुझे विदित है कि आप बिना दिखावे के ठोस साहित्य सेवा करने के व्रती हैं और आपने अपनी अन्तरात्मा की लगन से प्राचीन साहित्य शोध सम्बन्धी प्रचार सामग्री का संग्रह किया है। ईश्वर करे यह सब सामग्री सुरक्षित रूप में एक संस्था में रक्खी जा सके जो भविष्य में साहित्य शोध के कार्य को और आगे बढ़ावे। राजस्थान सम्बन्धी किसी मासिक या त्रैमासिक पत्र का प्रकाशन इस समय हो रहा है या नहीं ?

जैनागमों में कृष्ण विषय पर अपने पहले लेख को परवर्ती साहित्य से और बढ़ाकर अवश्य लिखें। इसी प्रकार की वस्तु मैंने सुझाई थी। 'तरुण प्रभ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरि' वाला लेख यू० पी० जर्नल के लिये सीधे नागर जी के पास लखनऊ म्यूजियम में भेजते हुए मेरा उल्लेख कर दीजिएगा ।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४७]

३५/१६, फीरोजशाह रोड
नई दिल्ली
२-११-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपके भेजे हुए राजस्थानी तथा अन्य विषयों से सम्बन्धित लेखों का पुलिन्दा मिला । उन्हें स्वयं देखकर व श्री गोपालप्रसाद व्यास को दिखलाकर पोद्दार ग्रंथ के लिये अपेक्षित लेख रखकर शेष आपके अथवा लेखकों के पास भिजवा दिये जाँयगे ।

आपका 'तरुण प्रभ सूरि' वाला लेख मिला । चित्रपट के फोटो के साथ इसे प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जायगा ।

सत्यश्रवा की बदली सारनाथ में हो गई है । बम्बई से वापिस आकर मैं स्वयं ही धातु मूर्तियों वाले लेखों के सम्बन्ध में पड़ताल करूँगा । ताजमल जी बोथरा को अलबम और लेख की प्रति भिजवाई जा रही है ।

पं० भगवद्दत्त का पता है—नं० ३०, क्वींस वे, नई दिल्ली, उन्हें पत्र लिखें ।

रत्न परीक्षा–द्रव्य परीक्षा की पुस्तकें मैं स्वयं अपने साथ लेता आऊँगा । मुझे दिसम्बर में कलकत्ते जाना है । तब तक उनका काम भी हो चुकेगा । द्रव्य परीक्षा का कार्य तो हो गया है । डाक से भेजने की अपेक्षा स्वयं ले जाना अच्छा रहेगा । रत्न परीक्षा की पुस्तक बम्बई से लौटने पर आपके पास भिजवा दूँगा ।

जैनागमों में श्री कृष्ण वाला लेख पोद्दार ग्रंथ के लिये यथासमय भेजिएगा ।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[४८]

३५/१६, फीरोजशाह रोड
नई दिल्ली
३-१२-४६

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका लेख कवि समय सुन्दर पर मैंने अभी विशेष रीति से पढ़ा। इसमें आपने बहुत परिश्रम और खोज से समय सुन्दर के विषय की जानकारी का संग्रह किया है। मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के सोलहवीं शती के इतिहास के लिये इस प्रकार की सूचनाएँ किसी दिन अनमोल समझीं जाँयगी। मुझे खेद है कि पोद्दार ग्रन्थ के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता किन्तु राजस्थान की किसी पत्रिका में अवश्य प्रकाशित होना चाहिए।

रामगोपाल विजयवर्गीय का मध्यकालीन चित्रकला वाला लेख भी रख लिया है। उसे टाइप करवाकर इधर के किसी पत्र में प्रकाशित कराने का यत्न करूँगा। लेख अच्छा है, मुझे रुचा। कृपया विजयवर्गीय जी को सूचित करदें।

चौपड़, बत्तीसी, छत्तीसी, बावनी, अष्टक, पर्याय, सजझाय आदि-आदि साहित्य रचना के जो अनेक प्रकार जैन कवियों ने अपनाए उन पर विस्तृत लेख कभी अवश्य होना चाहिए। आप कृपया इस सम्बन्ध की सामग्री का संकलन करते रहें और कभी पत्रिका के लिये लिखें।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[४६]

३५/१६, फीरोजशाह रोड
नई दिल्ली
१-४-५०

प्रिय श्री नाहटा जी,

जैन साहित्य में श्रीकृष्ण पर आपने जिस लेख के विषय में स्वीकृति दी थी कृपया उसे अब अविलम्ब भेज दीजिए। लेख १५-२० पृष्ठ का प्रमाण-मंडित हो जिसमें जैन सामग्री का भली प्रकार समावेश हो जावे। कृष्ण संबंधी जैन संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश और हिन्दी साहित्य का परिचय भी दीजिए तो इस ग्रन्थ में बहुत उपयुक्त रहेगा। इसे सब प्रकार परिपूर्ण करने का प्रयत्न हो रहा है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५०]

३५/१६, फीरोजशाह रोड
नई दिल्ली
१८-५-५०

प्रिय श्री नाहटा जी,

श्री रावत सारस्वत जी का राजस्थानी ख्यातों वाला लेख प्रतिलिपि रख मूल उन्हें लौटा रहा हूँ।

जैनागमों में श्रीकृष्ण वाला लेख परिवर्द्धित करने के लिए जो समय आपने माँगा है स्वीकार है। कृपया लौटने पर उसे यथानुरूप बढ़ाकर प्रामाणिक बनाकर भेज दें।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[५१]

नई दिल्ली
१२-१०-५०

प्रिय बन्धु श्री नाहटा जी,

कृपा पत्र मिला। क्षमापना पर्व के सुन्दर उदार भावों के लिये मेरा नम्र अभिवादन स्वीकार कीजिए। ईश्वर करे मानवी मनों में इस प्रकार के क्षमापूर्ण भावों की वृद्धि हो।

तरुण प्रभ सूरि वाला लेख आपके अपने अँग्रेजी नोट एवं फोटो के साथ १९४९ वाले अङ्क में छपने के लिए दिया जा रहा है। १९४८ का अङ्क ही अभी छप सका है। इधर यू० पी० जर्नल पिछड़ गया था। ठक्कुर फेरु की सामग्री कुछ डा० दशरथ जी के पास है आज मँगा भेजी है। मिलने पर लौटा दी जायगी।

जैन साहित्य में श्री कृष्ण वाले लेख की अब नितांत आवश्यकता है। इस मास के अन्त तक प्राप्त करके अनुगृहीत हूँगा। वसुदेव हिन्दी की सामग्री जोड़कर शेष सामग्री की परिचयात्मक सूची देने से लेख बहुत रोचक और मूल्यवान् बन जायगा।

स्वर्णाक्षरी कल्पसूत्र की अपने यहाँ दो प्रतियाँ हैं। आपको प्रशस्तियाँ चाहिएँ तो भिजवा दूँ।

आपके यहाँ गुवाड़ शब्द का क्या अर्थ है ?

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५२]

३५/१६, फीरोज़शाह रोड
नई दिल्ली
३-१२-५०

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका कृपा पत्र और लेख मिला। आपने निस्संदेह उसे बहुत परिश्रम से तैयार किया है। उसकी दो टाइप कापी करा रहा हूँ। अन्य सामग्री (ठक्कुर फेरु वाली) भी शीघ्र भिजवाऊँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[५३]

नई दिल्ली
३१-३-५१

प्रिय श्री नाहटा जी,

१७।३ का पत्र मिला। संकेत लिपि वाला लेख और गुटका भी मिला। लेख मैं देख गया हूँ। ठीक है। पावापाठ नामक ग्रन्थ प्राचीन मराठी गद्य में जो शक सं० १५३५ (=१६१३ ई०) का लिखा है और जिसकी भाषा तत्कालीन मराठी का नमूना प्रस्तुत करती है भाषा के इतिहास और महानुभाव पंथ दोनों की दृष्टि से महत्वपूर्ण ज्ञात होता है। लेख मैंने 'कल्पना' बेगम बाजार, हैदराबाद को भेज दिया है और गुटका आपको लौटा रहा हूँ। इसमें जिन सज्जनों की रुचि होगी वे आपसे विशेष पत्र व्यवहार करेंगे।

अपने कला-भवन की सूची में निम्नलिखित बातें लिखिये — १. क्रम-संख्या, २. तिथि, ३. प्राप्ति स्थान, ४. वस्तु-परिचय, ५. समय, ६. आकार, ७. विशेष।

जहाँ तक सम्भव हो उत्तम देशी कागज का रजिस्टर बनवाकरछपवालें या खाने खींच लें। सोने-चाँदी के सिक्कों या गहनों आदि की तोल भी लिखनी चाहिए। रजिस्टर हमेशा सुन्दर अक्षरों में लिखा जावे। फेरु ग्रन्थावली का अनुवाद मैं शीघ्र प्रकाशित करूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५४]

नई दिल्ली
८-२-५१

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपके लिये कुछ अपने लेख व विशाल भारत के अङ्क भेजे हैं। पहुँचे होंगे।

जान कवि पर आपका लेख 'कविवर जान और उसके ग्रन्थ' अभी पढ़ा। कृपया उस पर अपने अन्य लेखों की छाप भी भेज दीजिए। मुझे जान पर कुछ लिखना है। एक अँग्रेज मित्र ने अँग्रेजी में कथा-कौतुहली का अनुवाद किया है। उसकी भूमिका लिखनी है। आपका उल्लेख भी उसमें करूँगा।

तरुण प्रभ सुरि वाला लेख यू० पी० जर्नल के १९४९ वाले अङ्क में छपने गया है। मैंने भी एक अँग्रेजी टिप्पणी पट पर जोड़ दी है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[५५]

नई दिल्ली
२२-२-५१

प्रिय श्री नाहटा जी,

१०।२ और १३।२ के कृपा पत्र मिले। यू० पी० जर्नल छप रहा है और आपका लेख भी आशा है एक मास में छप जायगा।

पोद्दार ग्रन्थ भी प्रेस में देने के लिये मैं कल सायंकाल कलकत्ते ले जा रहा हूँ।

ठ० फेरू के जो शेष ग्रन्थ मेरे पास हैं उन्हें यात्रा से लौटकर देखकर भेजूँगा,वे सुरक्षित हैं। फारसी के फर्मान यदि पुराने और अच्छे हों तो कृपया अवश्य भेजें। ग्रन्थों की पहले सूची भेज सकें तो अच्छा हो।

जान के सम्बन्ध में आपने जो सूचना भेजी उसके लिये अनुगृहीत हूँ। हिन्दुस्तानी पत्रिका मेरे पास यहाँ नहीं है। यदि आप तीनों लेखों में से किसी का रिप्रिंट भेज सकें तो अनुगृहीत हूँगा। दशरथ से भी मालूम करूँगा। संकेत लिपि वाला लेख भेजें उसे देखकर उचित पत्र में छपवा दूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५६]

नई दिल्ली
२५-४-५१

प्रिय श्री नाहटा जी,

अभी 'मिश्रबन्धु की भूलों' वाला आपका लेख पढ़ रहा था। चित्त प्रसन्न हुआ। चन्दायन की प्रतिलिपि क्या आपके पास है ? क्या रावतमल जी उसे प्रकाशित कर रहे हैं ? उनका अब का पता क्या है ?

आपने इतनी बहुमूल्य साहित्यिक सामग्री लेखों में दी है कि अब उसका उपयोग होने के लिये एकत्र लेख संग्रह में छापना अत्यावश्यक है। प्रेमी जी के 'जैन साहित्य और इतिहास' लेख संग्रह की भाँति आपका लेख-संग्रह भी यदि इस वर्ष प्रकाशित कर सकें तो बड़ा लाभ हो। सकुशल।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[५७]

काशी विश्वविद्यालय
२३-८-५२

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपके दो पत्र मिले। राजस्थान भारती के लिये साल्व जनपद वाला लेख भेजने में अप्रत्याशित विलम्ब हो गया कारण मैं इधर १५ दिन से अस्वस्थ रहा। आज मैंने वह लेख पूरा कर दिया है और अपने लेखक को दे दिया है कि वे प्रतिलिपि करके आपके पास भेज दें।

मैं कल चार दिन के लिये पाणिनि व्याख्यान-माला के सम्बन्ध में लखनऊ जा रहा हूँ। पीछे आपके पास लेख अवश्य भेज दिया जायगा। पाणिनि विषयक एक छपा हुआ लेख एवं कुछ अन्य पुनर्मुद्रण भी भिजवा रहा हूँ। २९ सितम्बर से १५ अक्टूबर तक मैं राजस्थान यात्रा पर रहूँगा, श्री भागीरथ जी कानोड़िया के साथ, सम्भवतः बीकानेर भी जाना हो।

भवदीय :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[५८]

काशी विश्वविद्यालय
९-९-५२

प्रिय श्री नाहटा जी,

५-४-५२ का कृपा पत्र मिला। आपने जैन साहित्य के अवलोकन के लिये जो प्रेरणा मुझे दी है उसके लिये बहुत अनुग्रह मानता हूँ। मैं अवकाश मिलते ही इस साहित्य का पारायण करूँगा। आगम साहित्य तो मुझे बहुत ही प्रिय है। मैं भी समझता हूँ कि उससे परिचित हुए बिना संस्कृति विषयक मेरा ज्ञान अधूरा रहेगा।

मैं इधर गत मास टायफाइड से ग्रसित रहा, अभी तक निर्बलता है। राजस्थान की यात्रा इस समय सम्भवतः न कर सकूँगा। अवसर मिलते ही चाहता हूँ एक मास पहाड़ पर रह आऊँ।

ठक्कुर फेरु का काम अबकी दुर्गापूजा की छुट्टियों में निपटाने का प्रयत्न करूँगा। आपके व्याख्यानों का विषय क्या है?

भवदीय :
वासुदेवशरण

[५९]

काशी विश्वविद्यालय
१६-१२-५२

प्रिय श्री नाहटा जी,

पत्र मिला। मेरी दीर्घसूत्रता ने आपका धैर्यबाँध भी क्षुभित कर दिया। मुझे सचमुच लज्जा आती है क्यों मैं अपने आपको इससे अधिक उद्यमी नहीं बना पाता।

अभी १५ दिन के दौरे पर विद्यार्थियों के साथ निकल रहा हूँ। जनवरी प्रथम सप्ताह में लौटते ही ठक्कुर फेरु में हाथ लगा दूँगा। पर इसके लिये आपकी जो सामग्री मेरे पास होगी रोकूँगा नहीं। दौरे से लौटकर तुरन्त भेज दूँगा। आपने ही यह ग्रन्थ मुझे दिया था। आप स्वयं इसे सम्पादित-प्रकाशित करना चाहें तो मुझे बड़ी ही प्रसन्नता होगी। पर साथ ही मुझे अपने उत्तरदायित्व का संकोच आ रहा है। अब तो मैं इसकी व्याख्या तैयार करूँगा ही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'साल्व जनपद' लेख मैंने अधिक प्रचार की दृष्टि से सरल भाव से दोनों पत्रों को भेज दिया था। राजस्थान भारती और अवन्ति के पाठक बिल्कुल अलग हैं। मैंने इसमें त्रुटि नहीं मानी। पर आप ठीक न समझें तो आगे ध्यान करूँगा। कभी-कभी लेखों के तगादों से आकुल होकर भी एक लेख कई जगह देकर जान बचाता रहा हूँ। आपके जैसे लेखा सिद्धि की स्पृहा करता हूँ।

आपका :

वासुदेवशरण

[९०]

काशी विश्वविद्यालय

२१-१-५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

द्रव्य परीक्षा और हिन्दी अनुवाद गणितसार (मूल) और वास्तुसार (मूल) भेज रहा हूँ। धातोत्पत्ति मैं सानुवाद यू० पी० जर्नल के इसी १९५१-५२ वाले अङ्क में जिसके २६० पृष्ठ छप चुके हैं प्रकाशित कर रहा हूँ। द्रव्य परीक्षा के विषय में यह कहना है कि भारतीय न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी के ग्वालियर अधिवेशन (दिसम्बर) में मेरे अनुरोध से परिषद् ने २०००) द्रव्य परीक्षा सानुवाद सचित्र प्रकाशन के लिये स्वीकार किये हैं और उसका कार्य मुझे सोंपा है। मैं इस संस्करण को मार्च मास में तैयार कर दूँगा। ऐसी परिस्थिति में आप जो उचित समझें करें। यदि स्वतन्त्र प्रकाशित करना चाहें तो वैसा कर सकते हैं। किंतु मार्च मास में मुझे यह कार्य परिषद् के निमित्त अवश्य निपटाना ही है। इस सामग्री के वापिस करने में जो विलम्ब हुआ है उस अक्षम्य त्रुटि के लिये आपसे बहुत क्षमा याचना करता हूँ। सामन्त लेख का प्रूफ देखकर भेज दिया है और कृपया अपने लेखों के रिप्रिंट भेजिएगा।

भवदीय :

वासुदेवशरण

पुनश्च :—

१. कृपया कलकत्ते का पता लिख दें।

२. ठक्कुर फेरु के ग्रंथों की मूल प्रति की प्रतिलिपि—युग प्रधान चउपई के दो पृष्ठ लुप्त हैं (पृष्ठ ४४-४५-४६)। कृपया मूल प्रति में देखिएगा कि ये पृष्ठ हैं या नहीं, हों तो प्रतिलिपि भेजिएगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. जैन साहित्य निर्माण योजना के विषय में दलसुख भाई से बात फिर कीजिएगा। और मेरे परामर्श की आवश्यकता हो तो मैं भी आ जाऊँ।

[६१]

काशी विश्वविद्यालय
४-२-५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

२३-१-५३ का पत्र मिला। धातोत्पत्ति तो इसी मास में १९५१-५२ के संयुक्त अङ्क में छप जायगी। यू० पी० जर्नल १९५० का अङ्क आपको मिला है क्या ? जन प्रतिमाओं की एक सूची उसमें छपी है। न मिला हो तो अङ्क भेजूँ। द्रव्य परीक्षा भी आशा है यथा सम्भव न्यू मिस्मैटिक सोसाइटी से प्रकाशित होगी। मैं अपनी ओर से पूरी तैयारी करूँगा।

पत्रिका के सम्पादक मण्डल में मेरा भी नाम अब नहीं है। उसके सम्पादक कृष्णानन्द जी ने गत चुनाव में मण्डल बनाया ही नहीं। आप सदृश विशेषज्ञ उसमें रहें तो इससे पत्रिका और सभा का गौरव ही है। मैं कृष्णानन्द जी का ध्यान इधर आकृष्ट कर रहा हूँ। १९२८ से खोज की पिछड़ी रिपोर्टें सरकार अब नहीं छाप सकेगी। मेरा सुझाव था कि सब सामग्री का भार लेकर १५०० पृष्ठों की एक रिपोर्ट प्रकाशित कर दी जाय। उत्तर प्रदेश सरकार ने उसे मानकर दस सहस्र रुपया सभा को दिया है। पर अब इस विभाग से मेरा सम्बन्ध नहीं है। श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी उसके निरीक्षक हैं। आशा है उनके द्वारा यह कार्य सम्पन्न होगा।

आपने पिछले प्रकाशित विवरण में जो भूलें बताई हैं उन पर एक क्रमबद्ध नोट कृपया लिख दें तो अनुगृहीत हूँगा और उसे पत्रिका में छपवा दूँगा। आपको इस विषय का जितना ज्ञान है मुझे तो कुछ भी नहीं है। कृष्णानन्द जी को भी सूचना दे दी है। जैनेन्द्र महावृत्ति के पाठ के बारे में आपने जो पूछताछ की उसके लिये अनुगृहीत हूँ। मैं यहाँ ज्ञानपीठ से छपने वाले फर्मे में पाठ देखकर सूचित करूँगा। उन्हें अभी पत्र लिखा है। द्रव्य परीक्षा का हिंदी रूपांतर मूल के साथ पत्रिका में छपे तो आपके मनोनुकूल होगा ? उदयपुर शोध पत्रिका के लिये धोसूंडी लेख पर एक टिप्पणी भेज रहा हूँ। यहाँ जैन पार्श्वनाथ आश्रम की ओर से जैन साहित्य का एक इतिहास ३०० पृष्ठों में लिखवाने की योजना बनी है। आवश्यक धन स्वीकृत

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने का आश्वासन दिया है। आपका नाम अपभ्रंश और हिन्दी भाषा में जैन साहित्य के लिये प्रस्तावित है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६२]

काशी विश्वविद्यालय
३-३-५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

२३।२ का पत्र मिला। सरस्वती की उस प्रतिमा का चित्र मेरे पास है जो दिल्ली आई है। दूसरी का चित्र भी भिजवा दें। मैं लेख शुद्ध कर दूँगा। यहाँ श्रमण में या अन्य मासिक पत्र में छपवाने का यत्न करूँगा। यू० पी० जर्नल का मुझे अब भरोसा नहीं कि मेरा उससे सम्बन्ध रहेगा या नहीं।

शुक्ला निधिकर प्रकाशन पुनः होने की आशा हो रही है। आपको अवशिष्ट चन्दे के दो अङ्क भेजे जायेंगे। अन्य ग्राहकों को भी नया विज्ञप्ति पत्र भिजवाइए फोटो लेकर वापिस कर दिया जायगा। सुरक्षित बीमे से भेजिएगा।

धातोत्पत्ति लेख आपके नाम से ही दे रहा हूँ क्योंकि उसमें आपने ही परिश्रम किया था।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६३]

काशी विश्वविद्यालय
१६-३-५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

१४-३-५३ का पत्र २३-३-५३ को मिला। पृथिवी पुत्र संग्रह के लिये दिल्ली लिखा है। आने पर भिजवाऊँगा। फेरू की द्रव्य परीक्षा आने पर विचार करूँगा। शिल्प ग्रन्थों की सूची प्राप्त कर मुझे प्रसन्नता होगी। वर्णनात्मक ग्रन्थों के प्रकाशन पर यहाँ सभा की ओर से कार्य हो जाने का प्रयत्न करूँगा।

जैनागमों के अध्ययन की बात सदा ही मेरे ध्यान में रहती है। कुछ आरम्भ भी किया था। आगे भी करने का विचार है। अनेक प्रकार के साहित्यिक उत्तरदायित्व ले लेने के कारण यथेष्ट समय नहीं दे पाता। श्री पं०

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुखलाल जी यहाँ २२ की रात को आ गए हैं। आज वैशाली जा रहे हैं। ३० को लौटेंगे फिर मीटिंग तक रहेंगे। आपकी योजना कृष्णचन्द्र जी को दे दी है। अपभ्रंश का कार्य किससे कराया जाय यह अभी सोचना है। हिन्दी के लिये भी। मैं तो पहले आपको ही सोच रहा था। अस्तु आपके सुझाव के अनुसार समिति और कोई नाम सोचेगी।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[६४]

काशी विश्वविद्यालय

२५–६–५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका १३-६-५३ का पत्र मुझे पूना–बड़ौदा यात्रा से लौटने पर मिला। आपके स्नेहयुक्त प्रसन्न मनोभाव से मैं गद्गद् हो गया हूँ। यह आपकी सहिष्णु उदारता है जो आपने क्षमापन-पर्व के अवसर मुझे लिखा है। वस्तुतः इस पुण्य पर्व के उपलक्ष्य में आपसे क्षमापन चाहता हूँ कि मेरे दीर्घसूत्री स्वभाव के कारण आपको असुविधा रही है। द्रव्य परीक्षा का कार्य अब शीघ्र ही समाप्त करना चाहता हूँ। वर्णनात्मक ग्रंथ बहुत महत्व के हैं। उनके प्रकाशन के सम्बन्ध में द्विवेदी जी आपको लिखेंगे। राजस्थानी चित्रकला वाला लेख भिजवा रहा हूँ।

भवदीय :

वासुदेवशरण

[६५]

काशी विश्वविद्यालय

२७–११–५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

१६-११-५३ का कृपा पत्र मिला। नागरी प्रचारिणी पत्रिका में वास्तुशास्त्र वाला लेख भेज दूँगा। ठ० फेरू वाला लेख देखकर आपको सूचना दूँगा कि वह छपने की अवस्था में अभी है या नहीं। वर्णनात्मक ग्रन्थों का मुद्रण सभा से कठिन ज्ञात होता है, फिर भी प्रधानमन्त्री श्री राजबली जी से बात की है। उनका विचार है कि प्राचीन ग्रन्थों के प्रकाशनार्थ एक मासिक प्रकाशित करें। उसकी बात ठीक रही तो उसमें यह सामग्री छप सकेगी। मैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उदयनारायण जी को भी लिखकर निश्चित रूप से पूछ रहा हूँ। कायमखां ग्रंथ मुझे नहीं मिला। यदि उदयनारायण जी छापना स्वीकार करें तो क्या मैं ग्रंथ उनके पास भेज दूँ?

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६६]

काशी विश्वविद्यालय
१५-१२-५३

प्रिय श्री नाहटा जी,

ता० ७-१२ तथा ८-१२ के दोनों पत्र मिले। यद्यपि U.P. Historical Society का पूरा अङ्क सम्पूर्ण छप चुका है तो भी आपके पत्रानुसार धातोत्पत्ति ग्रन्थ इसी अङ्क में छपने दे रहा हूँ। आशा है एक सप्ताह में मुद्रित हो जावेगा। पाठान्तर धातु उत्पत्ति ग्रन्थ की मूल प्रतिलिपि के नीचे पाद टिप्पणी के रूप में दिये गये हैं। वह भी केवल ८२ श्लोक तक। मैं समझ नहीं पाया कि वह कैसे और कहाँ से दिये गये हैं। वे महत्वपूर्ण नहीं जान पड़े अतएव छोड़ दे रहा हूँ। ग्रन्थ को कई बार देखने से और भी अर्थ स्पष्ट हुआ है। राजस्थानी चित्रकला वाला लेख कल रवाना करूँगा। द्रव्य परीक्षा अवश्य अब इन्हीं बड़े दिनों की छुट्टियों में देख डालूँगा। गद्य ग्रन्थ की बात उदयनारायण तिवारी जी से अहमदाबाद में की थी। उन्हें पत्र लिखा था उत्तर की प्रतीक्षा में हूँ। द्विवेदी जी से भी बात करके तब आपको लिखूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६७]

काशी वि० वि०
२२-१-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

कविराज वल्लभ कृत 'चित्रसेन पद्मावती चरित' का समय क्या है? उसकी कथा रत्नसेन पद्मावती से मिलती है या भिन्न है?

आपकी 'गद्य संग्रह' पुस्तक के बारे में द्विवेदी जी से बात हुई। अभी सभा को जो बिरला ने रुपया दिया है, उस योजना के अन्तर्गत आपकी पुस्तक भी सभा ही छापेगी। कृपया अब यह सूचित करें कि जिस रूप में आपने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तक भेजी थी उसी रूप में वह छपेगी अथवा इसमें आप कुछ और जोड़ना-बढ़ाना चाहेंगे।

यू० पी० जर्नल तैयार है, शीघ्र ही भेजा जायगा। ठक्कुर फेरु की बात रात-दिन मेरे ध्यान में है, जैसे ही कुछ भी समय पाऊँगा उसे भुगताने का विचार है।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६८]

काशी वि० वि०
२-२-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपके भेजे हुए कायमखाँ रासा और जसवन्त उद्योत ग्रन्थ प्राप्त हो गए। कृपा के लिये धन्यवाद। कायमखाँ रासा की भूमिका पढ़ रहा था। जान कवि के प्रेमाख्यान तो बहुत ही रोचक होंगे। भाषा और विषय दोनों दृष्टियों से उनका अध्ययन आवश्यक है। विषय से तात्पर्य सांस्कृतिक सामग्री से है। मैंने जायसी कृत पद्मावत का हिन्दी भाष्य लिखा है। उससे ज्ञात हुआ कि इन ग्रंथों में कितनी अधिक सांस्कृतिक जानकारी है। ये प्रेमाख्यान अनेक प्रकार की वर्णनात्मक सूचियों के भण्डार हैं। आपके गद्य संग्रह की प्रति इस समय नागरी प्रचारिणी सभा की साहित्य उप-समिति के मंत्री ने मँगवाई है। मैंने द्विवेदी जी से कह दिया है कि आप उसे पुनः सम्पादित करके देना चाहेंगे। प्रति वहाँ से आने पर भेजूँगा।

'छिताई वार्ता' का एक संस्करण तैयार करा दें तो सभा से उसे भी छपवा दिया जाय।

आपका लेख (चन्दन मलयगिरि—लोकवार्ता के विविध रूपान्तर) जनपद के अगले अङ्क में छपेगा। वह मुझे मिला है, दूसरा किसका और क्या लेख है ? मुझे नहीं मिला। स्पष्ट नाम लिखें तो विनोद जी से पूछूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[६९]

काशी वि० वि०
१२-४-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

आज अभी एक हस्तलिखित पुस्तक एक मित्र लाए कुट्टिनीरासक, कर्ता—तिल्हण, संवत् १६०२। क्या इस नाम का कोई ग्रन्थ आपके दृष्टि-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोचर हुआ है ? इसका विषय है वेश्यागमन का कुपरिणाम । पत्र संख्या १८। ग्रन्थ में हिन्दी के छंद मुख्य हैं। बीच-बीच में गाथा और श्लोक भी हैं।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[७०]

काशी वि० वि०
२१–४–५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

कृपापत्र मिला। 'कुट्टिनीरासक' एक मित्र लाए थे उन्हें किसी और ने दिया था। मैंने उनसे कह दिया है कि ग्रन्थ की प्रतिलिपि करके ही उसे वापिस करें। सम्भव है यही वह बिरला जी के यहाँ की प्रति हो। वे सज्जन इसका सम्पादन करना चाहते हैं।

वार्तोत्पत्ति के केवल पहले पृष्ठ पर पाठान्तर थे और कुछ महत्व के भी न थे। मैंने उन्हें छोड़ दिया उस समय आपसे पूछा भी था। मूल लेख की प्रति अब सुरक्षित नहीं है।

द्रव्य परीक्षा अब शीघ्र ही समाप्त हो जायगी। यू० पी० जर्नल की कापी रजिस्ट्री से बीकानेर भेजी थी कृपया वहाँ निश्चित मालूम करके लिखें यदि प्रति न पहुँची हो तो दूसरी भिजवाऊँगा। रीप्रिंट अभी नहीं मिले हैं। अगले सप्ताह तक शायद मिलेंगे। तब भेजूँगा। लेख पत्रिका को भेज दिया था।

आपका
वासुदेवशरण

[७१]

अग्रवाल कोठी, शिवाजी मार्ग
लखनऊ
५–७–५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

२४-६-५४ का पत्र यहाँ मिला। एक मास से मैं यहीं हूँ। मेरे पिताजी का ऑपरेशन हुआ है। अभी एक मास और यहाँ रहना होगा। कोई चिन्ता की बात नहीं है। आगरा जाने की बात टल गई है। मुझे विश्वविद्यालय से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छुट्टी नहीं मिली। आपने और जो पूछा है उसके विषय में काशी लौटकर लिखूँगा।

भवदीय :
वासुदेवशरण

[७२]

काशी वि० वि०
१०-९-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

२-९-५४ का कृपा पत्र मिला। पर्यूषण पर्व सचमुच महान् पर्व है। आपकी उदात्त स्नेह दृष्टि से चित्त गद्गद् हो गया। वस्तुतः ठक्कुर फेरु के काम में विलम्ब का अपराधी मैं ही हूँ। अबकी दसहरे की छुट्टियों में अगले महीने इसे करके प्रकाशित कराऊँगा। अब न्यूमिस्मैटिक जर्नल का सम्पादन सम्भवतः मुझे ही करना पड़ेगा। अगर बहुत बड़ी वस्तु न हो गई तो उसी में छपा दूँगा। मैं दो मास लखनऊ रहा। ७ अगस्त को लौटा। पिताजी अब सकुशल हैं। आपकी लेख सूची मिल गई थी। राजस्थानी प्राचीन गद्य संग्रह सम्पादित करके प्रकाशनार्थ सभा को भेजिए। आप चाहेंगे तो उसका सांस्कृतिक अध्ययन मैं लिख दूँगा।

इधर रात-दिन जायसी का काम निपटा रहा हूँ। ३०० पृष्ठ छपे हैं। ८००·छपेंगे। नए लेख नहीं लिख सका। जनपद के कई अङ्क मिलाकर प्रकाशित करूँगा।

आपका :
वासुदेवशरण

[७३]

काशी वि० वि०
५-१०-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

दानवीर जगदेव पवाॅर पर आपके लेख की कोई प्रति हो तो तुरन्त पढ़ना चाहूँगा। जायसी ने जगदेव का दो बार उल्लेख किया है। उसी सम्बन्ध में यह जानकारी चाहता हूँ। श्रद्धेय मैथिलीशरण जी से जगदेव पवाॅर पर एक कहानी सुनी थी उसका कोई प्राचीन आधार मिला है क्या ?

आपका :
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७४]

बनारस हिंदू विश्वविद्यालय
२७-१०-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

२१-१०-५४ का पत्र मिला। द्रव्य परीक्षा का काम चल रहा है। मैं भी सोचता हूँ कि उसे पुस्तकाकार अलग ही छपाया जाय। लेकिन अन्तिम निर्णय पुस्तक तैयार होने पर ही करूँगा। समाज दिल्ली का जुलाई का अङ्क यहाँ सभा से मँगवाया किन्तु उसमें स्वप्नावती वाला लेख किसी ने फाड़ लिया था। यदि आप अपनी प्रति में से केवल कहानी के अंश की नकल कराकर भेज सकें तो मैं उसे ग्रन्थ परिशिष्ट में छाप देना चाहता हूँ।

छिताई वार्ता वाला विशाल भारत का अङ्क भी सभा में से कोई सज्जन ले गए पर लौटाया नहीं। उदयशंकर शास्त्री के साथ भेजे हुए लेख प्राप्त हुए। बहुत धन्यवाद। किन्तु पुस्तकों की तो यहाँ कॉलिज में आवश्यकता न थी। केवल ऐतिहासिक जैन काव्य अपने लिए रखकर, शेष जहाँ कहेंगे भेज दूँगा।

जायसी तेजी से छप रही है। लगभग पाँच सौ पृष्ठ छप गए हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[७५]

काशी विश्वविद्यालय
२६-११-५४

प्रिय श्री नाहटा जी

'छिताई वार्ता' वाले लेख की प्रति श्री सत्येन्द्र जी ने भिजवा दी है। स्वप्नावती वाले लेख की प्रतीक्षा है।

आशा है आप बीकानेर लौट आए हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[७६]

काशी विश्वविद्यालय
२३-१-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

२०-१-५५ का पत्र मिला। बीकानेर से लिखा पत्र भी मिला था। इधर मैं रात दिन जायसी के काम में लगा था। उसी का चिन्तन था। परसों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह कार्य समाप्त हो गया। ठक्कुर फेरु का कार्य आरम्भ किया था। जायसी के कारण ही बीच में रोक दिया था। अब उसे करूँगा। प्रकाशन तो भारतीय मुद्रा परिषद् करेगी। रत्न परीक्षा के प्रकाशन के लिये मुनि जिन विजय से वार्तालाप हुआ क्या? छिताई वार्ता वाला लेख मुझे आपके द्वारा मिल गया था। स्वप्नावती वाले लेख की प्रतिलिपि कृपया भिजवा दें तो उस कहानी को ग्रन्थ के परिशिष्ट में देना चाहता हूँ। पुस्तक के ६५६ पृ० छप गए हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[७७]

काशी विश्वविद्यालय
१२-२-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

'स्वपनावती' की लोककथा पर आपके लेख की प्रतिलिपि मिली। एतदर्थ अति आभारी हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[७८]

काशी विश्वविद्यालय
९-५-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

२३-४-५५ का कृपा पत्र मिला। आप जैसे कार्यनिरत व्यक्ति को तो सदा स्वस्थ ही रहना चाहिए। नियमित जीवन के बिना कार्य सिद्धि नहीं होती। कृपया स्वास्थ्य और कुशलता का शीघ्र समाचार दें। भूमिका लिख कर शीघ्र भेजूँगा। द्रव्य परीक्षा पढ़ रहा हूँ। अत्यन्त क्लिष्ट ग्रन्थ है। पचासों श्लोक अस्पष्ट हैं। धीरे-धीरे बैठा रहा हूँ। इधर कुछ प्रकाश मिल रहा है। अब भी पुराने शब्दों का अर्थ अस्पष्ट है। मैं प्रयत्नशील हूँ। इस अवकाश में जितना होगा सूचना दूँगा। शेष कुशल।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[७६]

काशी वि० वि०
१-६-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका लेख मलयगिरि चौपाई पत्रिका के सम्पादक के पास भेज दिया है।

'बीकानेर जैन लेख संग्रह' की भूमिका आज रजिस्ट्री डाक से पृथक् भेजी है।

द्रव्य परीक्षा का एकबार अँग्रेजी अनुवाद हो गया है। किन्तु वह आरम्भ में अति क्लिष्ट है। उसकी व्याख्या में अभी और परिश्रम करना है।

आशा है आपका स्वास्थ्य ठीक होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८०]

काशी वि० वि०
२२-६-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

लेख संग्रह की भूमिका १ जून के लगभग भेजी थी (रजिस्ट्री द्वारा)। पहुँच नहीं आई। कृपया सूचित करें।

अपने स्वास्थ्य का भी कुशल समाचार कृपया दें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८१]

काशी वि० वि०
२८-६-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

स्वस्तिमती शान्ति के शुभ विवाह का निमन्त्रण मिला। अनुगृहीत हूँ। वर-वधू के सर्वविध मंगल के लिये भगवान् से प्रार्थना करता हूँ।

भूमिका के सम्बन्ध में आपको दो पत्र लिखे। उसकी पहुँच की सूचना नहीं मिली। आशा है वह आपको यथा समय मिल गई थी। अपने स्वास्थ्य का भी समाचार लिखें।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८२]

काशी वि० वि०
२९-८-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

२८-८-५५ का कृपा पत्र मिला। पर्यूषण पर्व की सुन्दर भावना पढ़ कर मन गद्गद् हुआ।

जायसी भाष्य अभी प्रकाशित नहीं हुआ है। द्रव्य परीक्षा का अनुवाद परमेश्वरी लाल ले गए हैं। वहाँ से उसकी टाइप कापी की प्रतीक्षा में हूँ। तब सोसाइटी उसे प्रकाशित करेगी।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८३]

काशी वि० वि०
२१-११-५५

प्रिय श्री नाहटा जी,

कृपा पत्र मिला। मैं लगभग दो सप्ताह के लिये वैदिक ज्ञान सत्र में जयपुर गया हुआ था। द्रव्य परीक्षा का अनुवाद मैंने कर लिया था। उसे परमेश्वरीलाल टाइप करने ले गए थे। अभी वापिस नहीं किया है। इधर मार्च तक प्रकाशित कर देने का विचार है। जायसी भाष्य कार्तिक पूर्णिमा तक छप जायेगा। इधर पाणिनिकालीन भारतवर्ष नई पुस्तक लिखी है। आपकी क्या साहित्यिक प्रवृत्ति चल रही है?

भवदीय
वासुदेवशरण

[८४]

काशी वि० वि०
८-८-५६

प्रिय श्री नाहटा जी,

पत्र मिले। 'अंग विज्जा' वाला लेख इसी सप्ताह भेज रहा हूँ।

द्रव्य परीक्षा का काम हाथ में ले रहा हूँ। अब मुद्रा परिषद् उसे इसी वर्ष के भीतर छाप ही रही है तब अन्यत्र से उसका प्रकाशन उचित न होगा। उसकी जो फोटो बनी थीं उनका ब्लाक भी बनवा रहा हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८५]

काशी वि० वि०
२८-८-५६

प्रिय श्री नाहटा जी,

श्री माताप्रसाद जी ने 'छिताई वार्ता' का सम्पादन करके अपना ग्रन्थ सभा को प्रकाशनार्थ दे रक्खा है। उसका मुद्रण भी आरम्भ हो गया है। आपको जो 'छिताई वार्ता' की नूतन प्रति मिली है उसका उपयोग भी इस सस्करण में हो सकता तो संपादन परिपूर्ण कहा जा सकता था। अपने संस्करण में गुप्त जी बहुत परिश्रम कर चुके हैं। मूल पाठ-पाठान्तर के अतिरिक्त टीका भी दी है और पाठ विषयक भूमिका के अतिरिक्त ऐतिहासिक भूमिका भी दी है। क्या यह सम्भव होगा कि आप अपनी सामग्री उनके इस संस्करण के उपयोगार्थ प्रदान करने की कृपा करें? श्री गुप्त जी ने मुझे लिखा है कि मैं आपसे इस विषय में अनुरोध करूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८६]

काशी वि० वि०
१८-१०-५६

प्रिय श्री नाहटा जी,

६-१०-५६ का पत्र मिला। अंग विज्जा और द्रव्य परीक्षा का कार्य इन छुट्टियों में निपटा रहा हूँ। आप अपने वर्णन संग्रह को अविकल मुद्रित कराना चाहें तो सत्येन्द्र जी से पत्र-व्यवहार कर सकते हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८७]

काशी वि० वि०
२७-१०-५६

प्रिय श्री नाहटा जी,

सत्येन्द्र जी के पास आगरा हिन्दी विद्यापीठ की ओर से प्रकाशन की व्यवस्था है। आप पत्र-व्यवहार कर देखें। आपका हिन्दी वर्णन संग्रह जैसा सम्पादित हुआ है वैसा ही मुद्रित होना उचित है।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[८८]

काशी विश्वविद्यालय
२२–३–५७

प्रिय श्री नाहटा जी,

समय सुन्दर कृत कुसुमांजलि की प्रति श्री पन्नालाल जैन के हस्ते मिली। देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। अनेक धन्यवाद।

आपके भेजे हुए लेख भी मिले थे। मैं आजकल एक आवश्यक कार्य में व्यस्त था, सो पहले न लिख सका। अब विद्यालय की छुट्टी होने जा रही है। सो पहले काम इन्हीं दिनों पूरे करने हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[८९]

काशी वि० वि०
८–४–५७

प्रिय श्री नाहटा जी,

'हिन्दी अनुशीलन' के १९५६ के संयुक्त अङ्क में कवि साधार कृत प्रद्युम्न चरित पर आपका शोधपूर्ण लेख पढ़कर चित्त प्रसन्न हुआ। आपने सामग्री एकत्र करने में अति परिश्रम किया है। कामताप्रसाद जी की और मेरी भूल का परिमार्जन भी आपने कर दिया, यह अच्छा ही हुआ। एरच (प्राचीन एक्कच्छ) स्थान कानपुर झाँसी लाइन पर यहाँ सुविदित है वही यह एरछ है। पता न चलने जैसी बात एरछ के विषय में कैसे घटित हुई, उसे तो इधर के लोग प्रायः जानते ही हैं। सम्वत् १४११ का यह महत्वपूर्ण ग्रन्थ छप जाय तो हिन्दी का सौभाग्य होगा। मैं उत्सुकता से आपके और काजलीवालजी के प्रयत्नों की संपूर्ति की प्रतीक्षा करूँगा। बीकानेर के लेख संग्रह वाला ग्रन्थ अभी नहीं मिला है।

आपका
वासुदेवशरण

[९०]

काशी विश्वविद्यालय
८–४–५७

प्रिय श्री नाहटा जी,

५-४-५७ का पत्र मिला। वह लेख लौटा दें। तारातंबोल की पहचान पर कोई टिप्पणी जोड़ दें। मैं तो गद्य भाषा के नमूने के लिये उसे कहीं छपवा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना चाहता था। अंग विज्जा पर हिन्दी लेख करीब ५० पृष्ठ में बना है। दलसुख भाई से ज्ञात हुआ कि राजेन्द्र ग्रंथ मुद्रित हो चुका है। अतएव लेख पत्रिका में मुद्रित करा दूँगा।

द्रव्य परीक्षा का काम इन्हीं छुट्टियों में हाथ में ले रहा हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[६१]

काशी विश्वविद्यालय
२२-५-५७

प्रिय श्री नाहटा जी,

१०-५-५७ का पत्र मिला। सिलचर से लौटाया हुआ लेख भी मिल गया था। अंगविज्जा वाला लेख काफी बड़ा हो गया है। लगभग ५० पृष्ठ होगा। उसकी प्रतिलिपि करा रहा हूँ। तब आपका उसे देखना संभव होगा। यतीन्द्र सुरि अभिनन्दन ग्रन्थ कहाँ से निकल रहा है? परिचय दीजिएगा। क्या उसमें इतना बड़ा लेख छप सकेगा? द्रव्य परीक्षा का काम मेरे मन में है। उसे अवश्य निपटाऊँगा। दलसुख भाई अहमदाबाद गए हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[६२]

काशी विश्वविद्यालय
१९-२-६३

प्रिय श्री नाहटा जी,

९-९-६३ का पत्र मिला। कीर्त्तिलता छप गई है। प्रेस ने उसे प्रकाशक साहित्य सदन चिरगाँव के पास भेज दिया है। वहीं जिल्द बँधेगी। वहाँ से प्रतियाँ आने पर आपके पास भेजूँगा।

द्रव्य परीक्षा का काम भी आशा है, इस जाड़े में हो जायगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[९३]

काशी वि० वि०

१०-९-५४

प्रिय श्री नाहटा जी,

कई वर्ष पूर्व आपने राजस्थानी कहावतों पर एक पुस्तक वरदा या किसी दूसरी पत्रिका में छापी थी। कृपया उसका एक आफप्रिंट भेजिए या पक्का पता ही लिख दीजिये। मैंने लगभग २० सहस्र कहावतों का एक कोश तैयार करवाया है। आपके पास अन्य सामग्री हो तो सूचित करें।

भवदीय

वासुदेवशरण

[९४]

काशी हिन्दू वि० वि०

५-१०-६४

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपका पत्र दिनांक ३-२-.४ को मिला। आपकी पुस्तक 'प्रकृति से वर्षा का ज्ञान' की भूमिका मैंने ······ समाप्त करदी है। दो-चार दिन में प्रतिलिपि हो जाने पर भेजूँगा। आपने राजस्थानी कहावतों के सम्बन्ध में एक प्राचीन ग्रन्थ लेख रूप में छपवाया था मैं उसका पता चाहता हूँ कि वह कहाँ छपा था? यदि उसकी प्रतिलिपि भिजवा सकें तो कृपा होगी। आपने लेख के बारे में लिखा है वह कोई दूसरा है या नहीं। आपने राजस्थानी कहावतों का जो संग्रह किया था क्या उसकी कोई प्रति आपके पास है? यदि हो तो मेरे पास भेज दें। मैं प्रतिलिपि उतरवाकर मूल आपको वापिस कर दूँगा।

भवदीय

वासुदेवशरण

[९५]

वाराणसी

२५-२-६५

प्रिय श्री नाहटा जी,

आपकी भेजी हुई कहावतों की सामग्री मिली। उसका उपयोग करके मूल प्रति लौटा दूँगा। आपकी इस कृपा के लिए धन्यवाद। देश व्यवस्था शीर्षक अध्याय शक्ति संगम तन्त्र का एक पटल है। उसके अन्त में पंच प्रस्थान

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नामक अध्याय के केवल साढ़े सोलह श्लोक इसमें लिखे हैं, शेष अधूरा रह गया है। यदि और श्लोक भी हों तो कृपया भेज दीजिएगा। इधर मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं था। डेढ़ मास तक बम्बई के अस्पताल में चिकित्सा करानी पड़ी। अभी २२ ता० को लौटा हूँ। अब अवस्था में कुछ सुधार है। द्रव्य परीक्षा का अंग्रेजी अनुवाद मैंने यजदानी स्मृति ग्रन्थ में छपने के लिए भेज दिया है। किन्तु मूल अनुवाद और विशेष टिप्पणी के साथ स्वतन्त्र संस्करण प्रकाशित करना शेष है सो वह कार्य भी यथा समय करूँगा।

आपका :

वासुदेवशरण

[९६]

गीता भवन नं० २
पोस्ट–स्वर्गाश्रम
ऋषीकेश

दि० ३–६–६५

प्रिय श्री नाहटा जी,

मैं इधर डेढ़ मास के लिये स्वर्गाश्रम आया हूँ। आपका पत्र यहीं मिला। काशी लौटने पर इसके सम्बन्ध में उचित कार्यवाही करूँगा। यह स्थान अत्यन्त रमणीक और स्वास्थ्य के अनुकूल है।

आपका :

वासुदेवशरण

[डा० वासुदेवशरण जी ने नाहटा जी को अनेक पत्र अंग्रेजी में भी लिखे थे। नाहटा जी ने उन पत्रों की प्रतिलिपियाँ भी हमें भेजी थीं। हम उन पत्रों को जानबूझ कर नहीं छाप रहे हैं। इसके कई कारण हैं। प्रथम तो हमारा ग्रन्थ अनिवार्यतः हिन्दी-ग्रन्थ है, इसमें हिन्दीतर भाषा के पत्रों का समावेश इसके स्वरूप के अनुरूप न होता। दूसरी बात विस्तार भय की है। हमने जिस आकार के ग्रन्थ की कल्पना की है अथवा योजना बनाई है उसमें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाहटा जी को लिखे गये पत्रों को यथेष्ट स्थान मिल चुका है। आकार सम्बन्धी निश्चित योजना के परिप्रेक्ष्य में यदि अंग्रेजी के पत्रों का समावेश किया जाता है तो वह अन्य विद्वानों को लिखे गये महत्वपूर्ण हिन्दी-पत्रों को निष्कासित करने के आधार पर ही हो सकता है जो कि हिन्दी के साहित्य की दृष्टि से कदापि उचित नहीं।

—सम्पादक]

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
के पत्र
श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[६७]

लखनऊ
वैशाख पूर्णिमा, २०००

प्रिय चतुर्वेदी जी,

'फगुनहटा' फागुन की विलक्षण हवा है। इसका अनुभव अबकी होली से कुछ ही पहले मार्च के पहले हफ्ते में मुझे मिला। मैं अहिच्छत्रा के प्राचीन दूहों की खुदाई पर गया हुआ था। दो दिन जो प्रचण्ड हवा चली उसने सारे जंगल को झकझोर डाला। हम लोग खुले टीलों पर खड़े थे। मालूम होता था कि हवा उठाकर फेंक देगी। मैंने एक जौनपुरी मित्र से साल भर पहले फगुनहटे का कुछ परिचय सुन रखा था। यह नाम भी मुझे उन्होंने ही बताया था और इसका एक ग्रामगीत भी सुनाया था, जो कुछ इस तरह खुलता था—

फागुन मास बहा फगुनहटा
झर गये पात खड़े रहे रूखा, बड़-बड़ लोग सहा अस दूखा।

फिर गाँव जाकर उन्होंने वह गीत भेजा जिसकी कड़ी इस तरह थी—

फागुन मास बहा हवहरा। तरवर पात सबहि झरि परा।
झरि पर पात खड़ा रह रूखा। भल-भल कन्त सहाएउ दूखा॥

इसी वायु का दूसरा नाम 'हवहरा' भी जान पड़ता है। रामनरेशजी त्रिपाठी की पुस्तक 'घाघ और भड्डरी' में एक कहावत में 'हड़हवा' एक वायु का नाम आया है। आप देखिए कि उन्होंने क्या अर्थ दिया है। यही 'हवहरा' जान पड़ती है, जिसका दूसरा नाम 'फगुनहटा' है और जो फागुन में चलती है। हाँ, तो मैं इस फगुनहटे शब्द का साहित्यिक प्रयोग अपने 'राष्ट्रीय कल्पवृक्ष' नामक लेख में कर चुका था। यह 'लेख 'आर्यमित्र' में एक बार छपा था। मैंने लिखा था— फागुन के महीने में शिशिर का मन्त्र पाकर जब तेज फगुनहटा बहता है तब चारों ओर पतझड़ दिखाई देता है। पर इसके बाद ही वसन्त एक नया मंगल-संदेश लेकर आता है।' किन्तु अहिच्छत्रा के उस दिन से पहिले शब्द और उसके अर्थ-सम्बन्ध का मुझे साक्षात् ज्ञान न हुआ था। मैं सोच रहा था कि क्या यही प्रचण्ड वायु तो फगुनहटा नहीं है? तब तक मेरे मन में एक बात आयी। यदि यह हवा हमारे यहाँ की है तो इसका नामकरण भी हमारे जनपदों के ग्राम-वृद्धों द्वारा हुआ होगा। प्रकृति में दो दिन तक ऐसी बड़ी घटना हो और हमारे पृथिवी-पुत्र पूर्व पुरखाओं ने उसे न पहचाना हो, यह हो नहीं सकता। सौभाग्य से उस समय मेरे साथ एक गौंडे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिले का पुरबिया चपरासी था। मैंने उससे उस हवा का नाम पूछा तो उसने बताया, 'साहब, यह फगुनहटा है।' इस प्रकार इस महत्त्वपूर्ण शब्द और इसके अर्थ के साथ मेरा परिचय हुआ। मन कहता है कि संस्कृत साहित्य में भी कहीं इसका वर्णन मिलेगा। नाम भी संस्कृत से निकला जान पड़ता है। जब कहीं इसका वर्णन मिल जायगा तब एक गाँव मिल जाने जैसी प्रसन्नता होगी। तो इस वाक्य को ठीक यों छाप दीजिएगा—आज नवचेतना के फगुनहटे ने राष्ट्रीय कल्पवृक्ष को झकझोर कर पुराने विचाररूपी पत्तों को धराशायी कर दिया है।

दूसरा शब्द पंचायतनी है। (इस पंचायतनी प्रासाद की दृढ़ जगती में सभी भाषाओं और बोलियों के सुगढ़ प्रस्तरों का स्वागत करना होगा)। इसे 'हिन्दुस्तान' ने पंचायती और 'स्वतंत्र' ने पंचायनी छापा है। यह शब्द तो मैं पिछली देवगढ़-यात्रा में बुन्देलखण्ड से ही लेकर लौटा। पं० माधवस्वरूप वत्स (पुरातत्त्व विभाग, आगरा के सुपरिण्टेण्डेण्ट) ने इसका प्रयोग उन मन्दिरों के लिए किया था, जिनके चार खूँटों पर चार छोटे मन्दिर हों, जिनमें प्रधान देव के अतिरिक्त अन्य देवों की मूर्तियाँ समन्वयात्मक दृष्टि से स्थापित रहती थीं। स्वयं देवगढ़ का विष्णु-मन्दिर पंचायतनी था। इस प्रकार का देवमन्दिर समन्वय का एक सुन्दर प्रतीक था।

उसी भाव को लेकर इस शब्द का प्रयोग उपरोक्त वाक्य में मैंने किया था। विराट् पर्व के श्लोक को छापने में भी 'माहेयी' (गाय, 'महिषी' (भैंस) हो गया है। ठीक पाठ यह है—

सर्वश्वेतेव माहेयी वने जाता त्रिहायनी।

मैं यहाँ दो-एक संकेत भी स्पष्ट कर देता हूँ। लुधियानी के उच्चारणों का अध्ययन डा० बनारसीदास ने The Phonetics Ludhiani में किया है। काश्मीर के हरमुकुट पर्वत पर बैठकर डा० सर आरल स्टाइन ने एक पुस्तक Tales of Hatim (हातिम की कहानियाँ) के रूप में लिखी है, जिसमें काश्मीरी कहानियों का लोकभाषा में संग्रह है…………। दरद देश की बोली की पहचान और उसका अध्ययन डा० ग्रियर्सन के जीवन का मुख्य विषय था। मुंजानी और इश्काश्मी बोलियों का रोचक अध्ययन कुछ विदेशी भाषाशास्त्री कर चुके हैं (देखिए सँजन-स्मृति ग्रन्थ, पृ० २२१, The Iranian Hindukush dialects called Munjani and udghi; Grierson's Linguistic Survey. Specimen Translations of North-West Frontier) ये गल्चा भाषाएँ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वंक्षु नदी के उपरले प्रदेश में हिन्दूकुश के उत्तर में बोली जाती हैं। मुंजान मेरी राय में व्याकरण का मौञ्जायन है, जिसका नडादिगण (४।१।९९) में पाणिनि ने उल्लेख किया है। पाणिनि सूत्र ५।३।११६ (दामन्यादि त्रिगर्त षष्ठाच्छः) के अनुसार यह एक प्राचीन आयुध-जीवी संघ (लड़ाकू कबीला) था, वहाँ के नागरिक मौञ्जायनीय कहलाते थे और शार्ङ्ग रवादिगण के अनुसार वहाँ की स्त्रियाँ मौञ्जायनी कहलाती थीं।

'इश्काश्मी', सम्भव है, व्याकरण-शास्त्र का 'इषुकामशमी' हो जिसका नाम कई बार उदाहरणों में आया है। उससे यह प्रतीत होता है कि इन जातियों के साथ हमारे पूर्वजों का परिचय बहुत पुराना था। यहाँ अवध-साहित्य परिषद् बनाने की बात सोची जा रही है।

अभिन्न :
वासुदेवशरण

पुनश्च :—

गुप्तजी आए और उनसे भी जनपद-आन्दोलन के सम्बन्ध में बातचीत हुई। हमारी सम्मति में विरोध इस कार्य की प्रगति में बाधक होगा। इस आन्दोलन को शुद्ध सांस्कृतिक रखना अत्यावश्यक है। पृथक् प्रान्त निर्माणरूपी राजनीतिक पहलू अभी बिलकुल न उठाया जाना चाहिए, अन्यथा आपका उद्देश्य खटाई में पड़ जायगा। इस विषय का सांस्कृतिक पक्ष स्थायी महत्त्व का है। इस समय सब विवाद स्थगित करके उसी को पुष्ट करना चाहिए। बुद्धिमानी यह है हम जितनी भूमि को जोत सकें, उतने में ही हल चलावें।

सत्येन्द्रजी के पत्र का अवतरण भी पढ़ा। मैं वस्तुतः उनकी विचार-धारा के मूल को अभी तक नहीं समझ पा रहा हूँ कि हिन्दी का हित विरोध कहाँ हो रहा है ? हिन्दी का क्षेत्र एक ओर अखण्ड है। उसमें कार्य-पद्धति के साम्राज्य, स्वराज्य, वैराज्य, द्वैराज्य, भौज्य सभी प्रकार एक साथ प्रयुक्त हो रहे हैं और होंगे। कार्य अनेक प्रकार के हैं। कार्य के अनुसार व्यवस्थाएँ भी अलग-अलग होंगी। खड़ीबोली की दृष्टि से राष्ट्रीय भाषा के विकास और स्वरूप की दृष्टि से, वैज्ञानिक और पारिभाषिक शब्दों की दृष्टि से, कार्य के लिए उसी क्षेत्र में स्थानीय स्वराज्य की आवश्यकता है, उसके बिना कार्य-विभाजन हो ही नहीं सकता और न वैज्ञानिक रीति से काम ही सम्भव है। बिना स्थानीय केन्द्रों के स्थानीय कार्यकर्ता कैसे मिलेंगे ? साहित्यिक मूल प्रवृत्तियों के स्फुरण के लिए हमारी भाषा में वैराज्य चाहिए। अनेक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केन्द्रों में, अनेक मानसों में अनगिनत साहित्यिक प्रेरणाएँ वैसे ही जन्म लेंगी जैसे अरण्य में वृक्ष-वनस्पति। उनमें जो स्थायी मूल्य के हैं, वे बचे रहेंगे, शेष काल-चक्र में विलीन होते रहेंगे। वनस्पति जगत् में भी वर्ष-वर्ष और युग-युग पर विशरण और छँटाव चलता रहता है। हिन्दी और उर्दू का या हिन्दी और शेष प्रान्तीय भाषाओं का द्वैराज्य भी चलता ही रहेगा, परन्तु पारस्परिक हित-बुद्धि से और अन्योन्य उपकार के लिए। भिन्न-भिन्न साहित्यिक दलों और गुटों का भौज्य-शासन भी, जिसमें उनके नेता ऐश्वर्य का भोग और नियन्त्रण करने में स्वतन्त्र होंगे, रहेगा ही। इस तरह साहित्य के विशाल जगत् में भिन्न-भिन्न व्यवस्थाओं का समन्वय देखने की आँख हमें अभी से उत्पन्न करनी चाहिए। ऐसे देव-तुल्य पवित्र और उदार कार्य के विरोध का मूल कारण तो किसी प्रकार से बनता ही नहीं। हाँ, कार्य की शुद्ध सांस्कृतिक मूल भित्ति से कभी अपने आपको हटने न दीजिएगा।

अभिन्न :

वासुदेवशरण

[६८]

लखनऊ

११-६-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

जनपदीय कार्य और प्रान्त-निर्माण का आन्दोलन बिलकुल पृथक् बातें हैं, उनका संकर किसी का हित नहीं कर सकता। इस समय रागद्वेष से ऊपर उठकर प्रशान्त उदात्त भावों से लेखनी पकड़ना बहुत ही आवश्यक है, नहीं तो वर्षों की ईप्सित साधना विफल हो सकती है। सत्य स्वयं अपने तेज से चमकता है, अतएव यदि हमारे कन्धों पर शांत और विवेकी मस्तिष्क पूर्ववत् स्थिर रहेगा तो यह भ्रम-जाल स्वयं ही मिट जायगा।

आपका :

वासुदेवशरण

[६९]

पो० कालसी (देहरादून)

१७-११-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

रात के १० बजे हैं। यमुना की वेगवती धारा सामने बह रही है। उसकी कल-कल ध्वनि बरबस अपनी ओर ध्यान खींचती है। प्रकृति का कैसा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुन्दर क्रीड़ास्थल इस उपत्यका की गोद में है। यह स्थान प्रियदर्शी महाराज अशोक के परम पावन शिला-लेखों से पवित्र हुआ है। जहाँ लिख रहा हूँ, इस स्थल से १०० गज की दूरी पर सम्राट् के पवित्र शब्दों से अङ्कित वह शिला-खण्ड है, जिसके दर्शन से मन दो दिन से बहुत प्रफुल्लित है। कल और आज उन लेखों को मूल पाषाणीय संस्करण में पढ़ता रहा हूँ और उस उदारमना देवानां-प्रिय प्रियदर्शी सम्राट् की जनपद-कल्याणी हितबुद्धि से प्रभावित होकर मुझे बहुत ही आनन्द प्राप्त हुआ है। कालसी यमुना के दक्षिण तट पर स्थित है। यह जौंसार प्रदेश के पश्चिमी छोर पर है। कालसी से लाखामण्डल तक प्राचीन यमुना प्रदेश था, जिसके मुकुट पर यामुन पर्वत के शुभ गिरि-शिखर हैं, जिन्हें आज बन्दर-पूँछ कहते हैं और जहाँ जमनोत्री के हिमगलों से यमुना की पराक्रमशालिनी धारा बही है। अपने पितृ-गृह में यह यमुना कितनी छविधारिणी है। गोलमटोल गंगलोढ़ों के साथ कल्लोल करती हुई, इसकी जल-धारा कितनी निर्मल है। इसके उत्संग में भरी हुई धूप कितनी मनोरम है! इसके प्रेक्षागृह में मन को सुख देने वाला कितना सौन्दर्य है! करोड़ों वर्षों से इस यमुना ने हिमखण्डों की द्रावक-शक्ति से हिमाद्रि को पीस-पीस कर हमारे लिए धरित्री का निर्माण किया है। सामने यमुना के तट पर पानी की चरखी से चलने वाली एक घराट है। वह मानो यमुना की महाघराट का ही एक रूपक है। युग-युगों तक के लिए यमुना की भगीरथ घराट में अथक विक्रम की कुंजी भरी हुई जान पड़ती है। जिस युग में हमारे पूर्वजों ने यमुना के तट पर आकर अपने रथ को विश्राम दिया, तब से यमुना के साथ हमारा राष्ट्रीय सख्य-भाव स्थापित हुआ और उसके अमिट अंक आज तक अशोक की ब्राह्मीलिपि की तरह उज्ज्वल हैं। सचमुच यमुना के पराक्रम की महिमा उसके गति की निराली आभा की तरह मन को खींचती है। पर्वतों के उतार-चढ़ाव में झरनों और गधेरों की सैर करते हुए ५० मील की पैदल यात्रा के बाद परसों यहाँ आया।

जनपदीय जीवन के साथ हमारे परिचय का विस्तार एक राष्ट्रीय महत्त्व की समस्या है। जनपदीय साहित्य का कार्य भी उसी का एक अंग है। मेरी समझ में हमारे भावी जीवन के पचास वर्षों का दिक्‌मंत्र जनपदीय कार्य में समवेत है। जानपद जन के दर्शन के विषय में आज प्रातःकाल ही महाराज अशोक के श्रद्धाभाजन शब्द पढ़े हैं। वस्तुतः राष्ट्र के जानपाद जन का समग्र दर्शन, आत्म-दर्शन की तरह पवित्र, व्यक्तिगत रागद्वेष से अतीत, हमारे बहुमुखी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन के केन्द्र में प्रतिष्ठित, अत्यन्त मंगलास्पद कार्य है। इस खान के सान्निध्य में जो आ सकेगा, वही इसके अनमोल कोष को पहचानेगा।

जनपदीय साहित्य का कार्य स्वयंप्रतिष्ठित, स्वयंमण्डित और स्ववीर्यगुप्त है। उसकी हिन्दी जगत् की आयोजित सहायता आज प्राप्त हो अथवा दस वर्ष बाद, इससे उस कार्य के महत्त्व और गौरव में राई बराबर भी अन्तर नहीं पड़ता। सम्मेलन यदि जयपुर के अधिवेशन में अपने पिछले प्रस्ताव को वापिस फेर ले तो इससे मुझे तनिक भी क्षोभ न होगा। सत्य का दर्शन स्वयं एक महाशक्ति है। जो साहित्यिक इस महाशक्ति को देख सकता है, उसे किसी बाहरी प्रेरणा की टेक नहीं चाहिए, हाँ, जो सत्य को देख सके हैं वे यदि उसकी उपासना में कातर हों, तो सत्य प्रहत होगा।

श्री सत्येन्द्रजी मेरे अभिन्न मित्र हैं। उनका सौहार्द मेरे प्रति गंगा के निर्मल जल की तरह शुद्ध है और मेरा प्रेम उनके प्रति कामधेनु के दूध की तरह निर्विकार है। 'वाक्-संयम और भाव-शुद्धि' ये दो उपदेश प्रियदर्शी अशोक ने विभिन्न सम्प्रदायों की सम्मनस्कता और एकता के लिए कहे हैं। साहित्यिक जगत् में भी इनकी आवश्यकता है। मैं समझता हूँ कि श्री सत्येन्द्र जी का सोचना और लिखना एक शुभ लक्षण है। सत्य का जो पक्ष हमें नहीं दिखायी देता, उसके प्रति हमें सचेत करने के लिए यह ईश्वरी प्रेरणा उनके हृदय में उत्पन्न हुई है। यदि प्रारम्भ में ही जनपद-साहित्य के आन्दोलन को सब ओर से भद्रंभद्रं का स्वागत मिल जाता तो सम्भवत: उसकी आयुष्मत्ता कम होती। जितना ही आन्दोलन का विरोध होगा, उतना प्रचण्ड इसका वेग बढ़ता जायेगा। विरोध से यह कार्य अवश्य आयुष्मान् होगा, ऐसी मेरी धारणा है। हमारे जीवन की अवधि अल्प और परिमिति है; परन्तु गंगा और यमुना की वारि-धाराओं से प्रेक्षित ये महाप्रजाएँ अनन्त जीवन वाली हैं। इनमें अमरता है, क्योंकि हमारे आकाश में उदित होने वाले सूर्य ने किरणों से नित्य अमृत बरसाकर हमारी पृथ्वी पर रहने वाली प्रजाओं को अमर बना दिया है। इन अमर प्रजाओं के जीवन से सम्बन्ध रखने वाला जो कार्य है, वह हमारे अल्प जीवन से कहीं अधिक स्थायी है। यह सम्भव है कि हमारे कंठ की क्षीण सरस्वती अभी दूर तक न सुनायी दे, पर सत्य का घोष जब एक बार सुनायी पड़ने लगता है तब जन्म-जन्म की बधिरता दूर हो जाती है। जब जानपद जन के जीवनकाव्य का सन्देश हमारे साहित्यिक सुनेंगे, तब साहित्यिक जलों का वेग ऐसे बह निकलेगा जैसे इन्द्र के वज्र से चूर्णित मेघों से मूसलाधार वृष्टि।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सत्य महान् है। उसकी तुलना में व्यक्तिगत मत और वाद 'पिनाक पुराने' हैं। वे टूट जायँ तो इसमें शोक की क्या बात होगी ? यदि हमारा ही मन भ्रान्त है तो भी सत्य को तो उद्घाटित होना ही चाहिए। उसके उद्घाटन का श्रेय तो उन्हीं मतिमानों को होगा जो इस समय विरोध में लिखते दिखलायी पड़ रहे हैं। श्री सत्येन्द्रजी को मैं अपनी समस्त सदाशाएँ भेजता हूँ। ईश्वर करे उनकी लेखनी में और अधिक तेज और बल हो। हिंदी-मातृभाषा का हित ही तो हम सबको इष्ट है। जिस प्रकार हिंदी के अक्षय-भंडार की वृद्धि हो, जिस प्रकार हिंदी के साहित्यिकों में पारस्परिक सुमति और वरद बुद्धि से कार्य करने की अभिलाषा उत्पन्न हो, वे ही सब मार्ग हमें भी मान्य हैं। ईश्वर न करे किसी प्रकार हमारे द्वारा जान में अथवा अनजान में हिंदी-मातृभाषा के स्थायी हित की हानि हो। अतएव आइए, वाक्-संयम और भाव-शुद्धि की सहायता से साहित्यिक सत्य जिस प्रकार दृष्टिगोचर हो, उसी प्रकार उसकी उपासना करते जायँ। ऋजु भाव सत्य है, कुटिलता अनृत है। ऋजुता अमृत और जिह्मा मृत्यु की ओर ले जाती है। यदि हम सब एक स्वर से ऋजुता की उपासना करते रहेंगे तो अवश्य ही हमारा साहित्य अमृत-पद की ओर अग्रसर होगा। जीवन में जो सत्य और अमृत है, उसी की प्राप्ति के लिए तो साहित्य का भी द्वार खुला हुआ समझना चाहिए।

आशा है, आप जनपद साहित्य का अलख जगाने में पूर्ववत् धीर और अविचल बने रहेंगे।

आपका

वासुदेवशरण

[१००]

कालसी

ब्राह्ममुहूर्त्त १८-११-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

जनपदीय साहित्य के आन्दोलन की रूपरेखा को अभी और अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता है। उसको निश्चित वैज्ञानिक पद्धति से विकसित करके उसमें कर्तव्य-कर्म की सामग्री भरने की आवश्यकता है।

ज्यों-ज्यों यह विषय स्पष्ट होगा, कार्यकर्त्ता पारस्परिक अभिप्राय को समझ सकेंगे। यह असम्भव है कि गाँवों में एवं जनपदों में बिखरी हुई साहित्य सामग्री और अक्षय शब्द-सम्पत्ति को एकत्र करके हिन्दी-कोष में भरने की बाबत किसी भी सहयोगी को मतभेद हो।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगरों के जीवन का जो उज्ज्वल पक्ष है और जनपदों में जो अकृत्रिम स्वभाव, अपनापन एवं देश की तथा जनता की पारम्पर्यक्रम से आयी हुई संस्कृति का सुरक्षित अंश है, उन दोनों का मेल हो जाना चाहिए। यही सत्येन्द्रजी के चाय और मेवा का मणिकांचन योग है। चाय नगरों की प्रतीक और मेवा हमारे जनपदों की मीठी प्रतिनिधि है। यहाँ जौंसार के प्रकृतिगुप्त अन्तःपुर में अखरोट के कितने वृक्ष हैं! दस दिन तक उनसे तोड़-मरोड़कर उनकी मिश्री-सी स्वादिष्ट गिरी का हमने परिचय प्राप्त किया है और उसी तरह जौंसारी संस्कृति और भाषा की मेवा का स्वाद भी चखने को मिला है।

यहाँ पहाड़ में लकड़ी के विशाल प्रासाद-निर्माण और नक्काशी की प्राचीन कला की परम्परा अभी तक बनी हुई है। देवदारु के सरल स्कंध वाले महावृक्ष हिमवान् के दिग्गज-पुत्रों की तरह उसके उन्नत अधित्यका प्रदेशों में भरे हुए हैं। मार्ग में चलते हुए बार-बार रघुवंश का कवि हमसे पूछता हुआ जान पड़ता है—

"अमुं पुरः पश्यसि देवदारुं पुत्रीकृतोऽसौ वृषभध्वजेन।"

'सामने खड़े हुए इस देवदारु के वृक्ष को देखते हो? गिरिराज के अधिष्ठातृ देव शिव को यह पुत्र की भाँति प्रिय है।' ४० से ६० हाथ तक प्रांशु शरीर वाले तथा २० से २५ हाथ तक के घेरे से युक्त इनके भव्य काव्य को देखकर कौन सहृदय प्रमुदित न होगा? इनकी छतनार शाखाओं के नीचे कितनी सघन छाया है। मान्थात के आनन्दीगिरि निर्झर ने शताब्दियों से जिन्हें पोषित किया है, उन विशाल देवदारुओं के दर्शन से हम भी रस-तृप्त हुए। ये महान् वनस्पति हिमालय के वरदानों की तरह यहाँ के निवासियों के लिए सहज प्राप्त हैं। उनके चन्दनवर्णी सारवान् काष्ठ पाकर भी यदि यहाँ के निवासियों ने देवदारुओं के साथ अपना परिचय न बढ़ाया होता तो हम उन्हें कितना मूठल समझते? अब तो अपने आवासों के रोम-रोम को उन्होंने मानो देवदारुमय बना रखा है। दो बाँट वाले खंभों पर मेहराबदार दरों की पंक्ति वाले बरामदों की रचना अत्यन्त मनोहर है। घरों में, कमरों में, दीवारों में, तीन-तीन इंच मोटे चौबीस इंच चौड़े देवदारु के तख्ते लगे हुए देखकर हमारे आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

लाखामंडल में पैर रखते ही जिस वस्तु ने सबसे पहले हमारा ध्यान आकर्षित किया, वह देवदारु का विशाल भवन था। उसमें ३०-३२ हजार की लागत लगी बतायी जाती है। उसके थंभों पर और उनके बीच में लगी हुई,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आड़ी तख्तियों पर (जिन्हें प्राचीन काल में सूची कहते थे और यहाँ अटाली कहा जाता है) बने हुए फूल-पत्तियों के साज को देखकर हमें बरबस गुप्त-कालीन पत्र-लता के कटाव और अभिप्रायों (motives) की याद आ गयी। नक्काशी के लिए यहाँ 'उकेर' शब्द जीवित है। संस्कृत के 'उत्कीर्ण' का यह सगोता वंशज है। इस 'उकेर' को समझने के लिए हमने स्थानीय कारीगरों की तलाश की। सौभाग्य से लाखामंडल गाँव का ही परमा बढ़ई हमें गुरुवत् मिला। सौहार्द से हमने उसका स्वागत किया और उत्सुकता के पात्र में हम उससे शब्दों का दोहन करने लगे। परमा के साथ का वह घंटा बड़ा कामदुघ सिद्ध हुआ। लगभग ५० पारिभाषिक शब्द हाथ लगे। परमा जानपद जन का सरल प्रतिनिधि था; अक्षर-ज्ञान से उसे सुरक्षित रखकर जनपद ने अपनी संस्कृति की उसके द्वारा रक्षा की है। और उसके प्रवाह को आगे बढ़ाया है। परमा आज भी चतुर्दल और षट्दल कमलों के फुल्लों को 'सुरुज नरायन के फूल' कह कर उसी मनोभाव से उकेरता है, जिस गहरी रुचि से उसके गुप्त-कालीन पूर्वज उनमें सौंदर्य की सृष्टि करते थे। अपने उन विचक्षण कला-रसिकों के वंशज आज एक हम हैं, कला की परख से सब तरह कोरमकोर !

जनपदों का संसर्ग क्या हमारे ही अपने पुनर्जीवन के लिए आवश्यक नहीं है ? उसके प्राण-प्रद वायु में कितना जीवन-रस भरा हुआ है ! पुर और जनपद दोनों को एक-दूसरे की आवश्यकता है। ईश्वर करे, दोनों का गाढ़ परिचय आने वाले युग की विशेषता हो और पारस्परिक कल्याण का साधक बने।

आपका
वासुदेवशरण

[१०१]

लखनऊ
२४-११-४३

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

आपके १९, २० और २१ के तीन पत्र मिले। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र की तरह उनमें भविष्य के लिए जन्म, स्थिति और संहार का रूप एक साथ देखा। मेरी दृष्टि में जनकल्याणीय और 'सेतुबंध' एक ही रथ के दो पहिये हैं। घर में जो धन गड़ा है, उसको भी पहचानो और ढूँढ़ निकालो, यह जनपद-कल्याणीय सन्देश है। बाहर से धन लाकर घर का कोष भरो, यह सेतुबंध

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। अपने में जो 'विभूति' और 'श्री' का पक्ष है, उस पर दृष्टिपात करो और अन्यत्र जहाँ पद्माश्री के सौन्दर्य का निवास है, वहाँ से उसका आवाहन करके अपने निवास को अलंकृत करो। यदि मैं आपके अभिमत को ठीक समझा होऊँ—जैसा कि मेरा विश्वास है—तो जनपदकल्याणीय और सेतुबन्धु दोनों ही हमारे साहित्य की प्रगति के लिए अनिवार्यतः आवश्यक हैं। 'हिन्दी-साहित्य के समग्ररूप' लेख में मैंने यही तो कहा है। इस सन्देश को हमारे मित्र भली प्रकार समझ लें। ऋजु-दर्शन के बाद संकर का भय हट जाता है। बाहर से आने वाले ज्ञान का कपाट, हाथी के मस्तक की चोट से जैसे दुर्ग का द्वार तोड़ा जाता है, ऐसे खोल दीजिए। पर जिस कोठार में उस ज्ञानरूपी महार्घ कोष को संचित रखना है, उसकी भी पूरी पैमाइश हो जानी चाहिए। बाहर से एक साथ यदि कुबेर का कोष आकर फट पड़े तो अकिंचन क्या उस धक्के को सँभाल सकता है? वह तो उसके भार से लड़खड़ा जायगा। अन्तःसार वाला व्यक्ति ही बाहर के सार को पचा सकता है। कवि ने मेघ के लिए ठीक ही कहा है, "रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय।' रीता हल्का और भरा भारी होता है।

हम बाहर से भोजन की सामग्री ला सकते हैं, पर भूख हमारी ही होगी। हम बाहर से खाद ला सकते हैं, पर हमारी अपनी भूमि उपजाऊ होनी चाहिए। बंजर में खाद भी किस काम की होगी? यहाँ तो किसी एक व्यक्ति के विचारों का प्रश्न नहीं है। किसी एक क्षुद्र प्राणी की चाहत और अनचाहत की बात स्वप्न में भी नहीं आती, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो। मैं क्या हूँ? जायसी के शब्दों में 'अहुठहाथ तन सरवर' का एक नमूना मात्र, जिसमें उछलता जल भरा है। ज्ञान का प्रचण्ड सूर्य इतना प्रतापी है कि उसकी गर्मी (Focus) यदि केन्द्रित होकर इस सरोवर के जल पर पड़ जाय तो वह भक् से एक क्षण में उड़ जा सकता है। ऐसे खुद्दक निकाय या क्षुद्र शरीर वाले व्यक्ति के अहं का एकदम कहीं कोई प्रश्न ही नहीं है। यदि मेरे विचार हिन्दी के लिए अहितकर हों तो मुझे ब्रह्महत्या का पातक लगना चाहिए। मैंने नयी ज्योति में पुरानी बातों को देखने का कुछ अभ्यास किया है, अतएव इन मर्यादाओं को बिना हिचकिचाहट के मानता हूँ। ब्रह्म या ज्ञान हमारे निजी व्यक्तित्व से कहीं अधिक महान् है। ज्ञान हमारा आचार्य है, हम सब शिष्य हैं। अथर्ववेद के शब्दों में हमें अपने लिए केवल आयु चाहिए, पर अपने आचार्य के लिए अमृतत्व—अमरपन चाहिए—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'आयुरस्मासु धेहि । अमृतत्वमाचार्याय ।'

हम जियें पर ज्ञान अमर हो ! इसी में कल्याण है ! ऐसे श्रेष्ठ, वरिष्ठ, गरिष्ठ, महिष्ठ, वसिष्ठ आचार्य के लिए पंचधा प्रणाम हो ! बस आइए, अब हम सब एक ही व्रत से साहित्य-सेवा में प्रवृत्त हों—अपने महान् आचार्य के लिए अपने स्वरों में जय-जीव का नाद भरकर। इस पद से हम सबके स्वर संवादी होंगे, विसंवादी नहीं – फिर सरगम के सप्तकों में चाहे जिस स्वर से अपनी शक्ति और रुचि के अनुसार हम बोलें। स्वरों का साम्य (Symphony) जीवन-वर्धक है, उनका वैषम्य शक्ति के क्षय का कारण। अन्तरात्मा की प्रेरणा से, ऊँचे पद से, आप या सत्येन्द्रजी या मैं या हमारे एक-सौ-एक बन्धु जो करेंगे, वही हितकर होगा। जब मनुष्य यह प्रार्थना करता है कि हम श्रुति या ज्ञान के साथ संमनस्क (In harmony) हों, उसके साथ विरुद्ध भाव में न पड़ें तो वह अनेक भूलों से बच जाता है—भगवान् के प्रसाद से। प्राचीन ज्ञान के साधक यही कहते और चाहते थे—

'तं श्रुतेन गमेमहि मा श्रुतेन विराधिषि।'

हिन्दी जीवित राष्ट्र की जीवित भाषा है। उसके अभ्युदय का काल अब आया है। उस अभ्युदय की रूपरेखा देवों के द्वारा पूर्व निश्चित हो चुकी है। हम आप तो देवलोक की उस वाणी को मूर्त्त रूप देने के साधनमात्र बन सकते हैं।

कृतज्ञ होऊँगा, यदि सत्येन्द्रजी को भी इस में साझीदार बना सकें।

आपका सुहृद्
वासुदेवशरण

[१०२]

लखनऊ
२३–१–४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

सत्येन्द्रजी की ग्राम-योजना पढ़ी। ईश्वर को धन्यवाद है कि साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्य के सम्बन्ध में उनका कोई मतभेद नहीं है। 'जनपद' शब्द को लेकर कुछ खींचातानी इधर हिंदी में हुई है। मुझे इस शब्द से बिलकुल भय नहीं लगता। प्राचीन ग्रन्थों में जो अनेक जनपदों के नाम हैं, वे सब देखे जायँ तो कुछ जनपद जिलों के बराबर होंगे, कुछ आजकल की कमिश्नरी जैसे। महाजनपद कुछ-कुछ प्रान्तों का रूप भी धारण किये हुए हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजनैतिक पहलू और पार्थक्य के भाव की ओर हमें कुछ नहीं कहना है। हमें तो जनपदों में बसने वाली जनता की भाषा और संस्कृति का अध्ययन करके हिन्दी-भाषा के भण्डार को भरना है, और उस जनता को आत्म-स्मृति करानी है। अधिकांश जनता गाँवों में ही बसती है; अतएव जनपदों का अध्ययन ग्रामों का ही अध्ययन है। पर जनपदों का विभाजन जिलों के बँटवारे की तरह आज भी मौजूद है। वह अपनी स्वतन्त्रसत्ता प्राचीन काल से रखता आया है। उससे भयभीत न होना, उसे स्वीकार करना और फिर समग्रता या एकता के भाव की प्रधानता रखना ही हमारी विशेषता होनी चाहिए। क्या प्रान्त विभाजन से देश की समग्र एकता किसी प्रकार से भी निर्बल कही जा सकती है? ऐक्य का भाव तो मातृभूमि के प्रेम में है। जो भूमि को माता कहें, वे सब उसके पुत्र हैं। मेरी दृष्टि में जनपदों के नामकरण और सीमाओं का निश्चय इतना महत्त्वपूर्ण नहीं जितना कुछ मित्र समझते हैं। मैंने 'केदार-मानस' नाम कार्य की एकता के लिए लिखा था। सत्यार्थीजी ने केदार और मानस कर दिया तो इसमें भी मौलिक आपत्ति नहीं आ जाती। ग्रामों में बसने वाली जनता की दृष्टि से साहित्यिक-सांस्कृतिक कार्य का आरम्भ होना चाहिए—शेष विवाद स्वयं शांत हो जाँयगे। वेदान्तियों के शब्दों में **'वाचो विग्लापनं हि तत्'** अर्थात् जनपदों के नानात्व के कारण कार्य के स्वरूप के विषय में ही भड़क जाना, वाणी का मुरझाना है। **'मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य उ नानेह पश्यति'**—आइए, नाना भावों की उलझनों से बचकर वास्तविक कार्य में लगें। तभी वसन्त में खिले हुए शंख-पुष्पी के श्वेत पुष्प के हास की तरह हमारी वाणी का भी विकास होगा।

आपका

वासुदेवशरण

[१०३]

लखनऊ

१०-३-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

इस समय प्रकृति की शोभा वर्णनातीत है। अभी डेढ़ मास प्राचीन अहिच्छत्रा के उत्संग में रहकर लौटा हूँ। पट-मंडपों से बना हुआ जो हमारा छोटा-सा आवास था, उसके चारों ओर मधुलक्ष्मी ने अपना सौन्दर्य बिखेर दिया था। आम-मंजरी, वट-किसलय, सहँजन के सहस्रात्मक पुष्प गुच्छक, श्रीवृक्षों की फल-सम्पत्ति, शाल्मली के लाल-लाल फूलों के मधु-कोष, कर्णिकार

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के पुष्पों की आभा, इन सबसे परिचय पाकर अन्तरात्मा गद्गद् हुई। मैंने भगवान् को धन्यवाद दिया कि हमारे वनों पर अभी तक वसन्त की अधिष्ठात्री देवी पद्माश्री का पहले जैसा वरद हस्त विद्यमान है। हम सो गये पर वन-देवी जागती रही। हमारे जीवन में सौंदर्य के प्रति जागरूकता का भाव सुप्त हो गया; परन्तु वन-श्री रोम-रोम में उस पुष्कल सौन्दर्य को धारण किये रही, जिससे किसी दिन उसके उदार दर्शन को पाकर फिर हम आत्म-चैतन्य को प्राप्त कर सकें। वन-लक्ष्मी की रमणीयता को जब हम पहचानने लग जायँगे, तभी हमारे नेत्रों में लोक के निरीक्षण की पैनी दृष्टि फिर से उत्पन्न होगी। बासे के सुन्दर श्वेत पुष्प के पात्र में जो एक मधुबिंदु संचित है, उसका सन्देश क्या मधु-मक्षिका के अतिरिक्त मानव के लिए नहीं है? सेमल की ओर से रंग-बिरंगे प्रसन्न पक्षियों को जो मधुपान का निमन्त्रण मिल रहा है, उसमें अपना भाग-धेय जिस दिन हम पहचानने लगेंगे उसी दिन हम अपनी भूमि के प्रति नये सम्बन्ध से आकर्षित होंगे। पलाश के लाल फूलों में, स्वर्णक्षीरी के पीताभ प्रसूनों में, गेहूँ के पौधों की घरिया में बैठने वाले मक्खन फूलों में कितना काव्य है, इसकी पहचान करने के लिए हमें स्कूल और कालेजों को एक सप्ताह के लिए बन्द करके दल-बल समेत वनप्रकृति का सान्निध्य प्राप्त करना चाहिए। वसन्त के आगमन से सारा पक्षी-जगत् प्रसन्न है। जंगल उनके सुरीले कंठ-गान से रमणीय हो उठा है। इस उल्लास को लिये हुए वसन्त का दक्षिण वायु मधु-श्री का सन्देश साथ लेकर बह रहा है। यह सन्देश नव चैतन्य का सन्देश है, नव जागरणमंत्र है, प्रकृति के साथ अभिनव परिचय का निमन्त्रण है। भूमि के साथ अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त करने का नूतन आमंत्रण है। इसमें सन्देह नहीं कि शीघ्र ही हम सब उदीयमान राष्ट्र की ओर से प्रकृति के चरणों में अपना अर्घ्य चढ़ायेंगे। उसके द्वारा हमारा साहित्य, हमारा जीवन, हमारा चिन्तन विदेशी प्रभावों से पराङ्मुख होकर और अपने केन्द्र में प्रतिष्ठित होकर फूलने-फलने लगेगा। आज सब ओर इसके लक्षण दिखायी दे रहे हैं। गाँवों और शहरों के बीच में जो बनावटी भेद हमने डाल दिया है, उसे दूर हटाना होगा। ग्रामों के जानपाद जन को सम्मान के नये पद पर बैठाना होगा। उसके द्वारा जितना हम फिर से सीख सकते हैं, उसका स्वागत करना होगा। और सीखने की सामग्री कितनी अधिक है, यह तत्त्व दिन प्रतिदिन स्पष्ट होता जा रहा है। कम-से कम गुप्त-काल तक की परम्पराओं को हम अपने गाँवों से प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए पैनी आँख वाले साहित्यिक कार्य-कर्ताओं की आवश्यकता है। जिस क्षेत्र में देखें वहीं भरपूर सामग्री मिलती है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन अहिच्छत्रा में रहते हुए, एक पास के गाँव में शिवरात्रि का बड़ा मेला देखने गये। वहाँ बर्तन-भाँडों का अच्छा बाजार था। काली रेखा-उपरेखाओं से सजे हुए बर्तनों के नाम, उनकी सजावट के लिए पारिभाषिक शब्दों का सग्रह हम करने लगे तो कितने ही प्राचीन शब्द मिले। रामनगर के चिम्मन कुम्हार ने बताया तो मालूम हुआ कि Painted Pottery के लिए अभी तक 'लिखना' शब्द है। लिखने' में कुम्हारी कुम्हार से अधिक चतुर होती है और वही रंग या काबिस बनाकर बालों की पुँछरी या उँगली के पोरों से रेखा काढ़ने या धार खींचने का काम करती है अथवा भाँडों को लिखती है। इस प्रकार कितने ही मधुर अनुभव प्राप्त करके, अहिच्छत्रा की खुदाई से २६ फरवरी को लौटा।

'मधुकर' में जानपदी कहानियाँ खूब अच्छी निकल रही हैं। नवम्बर में चिरगाँव गया था। वहाँ 'गणेशशंकर विद्यार्थी पुस्तकालय' के पुस्तकालयाध्यक्ष श्री हरगोविन्दजी ने बुन्देलखंडी कहावतों का अच्छा संग्रह बटोरा है। उसे क्रमशः 'मधुकर' में छापिए। गुप्तजी को उसका पता है।

आपका
वासुदेवशरण

[१०४]

लखनऊ
२५-७-४०

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

ब्रज साहित्य मंडल नाम का आपका लेख मिला। खूब पसन्द आया। अब किसी दकियानूस को भरती कराने के लिये भेजें तो मथुरा नहीं, लखनऊ का रास्ता बता दें, क्योंकि मैं पिछली ५ जनवरी से यहाँ के कठघरे में आ गया हूँ।

रही प्राचीन बोलियों की बात, वह तो आपने मेरे मन की ही बात कह डाली। मैंने ५ वर्ष तक ब्रज में साहित्यसेवियों का ध्यान इस ओर खींचने की कोशिश की। सम्भव है आपकी प्रेरणा से अब बीज वपन हो जाय। आगरे की साहित्यिक प्रदर्शनी में जो संदेश मैंने भेजा था, उसे यदि महेन्द्र जी कभी छापेंगे तो मालूम होगा कि जनपदों के साहित्य की साधन के लिये मैं कितना उत्सुक हूँ। मेरा तो विश्वास है कि हिन्दी बिना जनपद की बोलियों को साथ लिये उन्नति कर ही नहीं सकती। भाषाशास्त्र की दृष्टि से जनपदों में—गाँवों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बेहिसाब मसाला भरा पड़ा है। डा० स्टेन कोनो ओसलो के विद्वान हैं, उन्होंने (International congress orientalists) के सामने चिन्तातुर होकर यह प्रस्ताव रक्खा था कि भारतीय जनपदों की बोलियों में जो अनमोल भाषा-शास्त्र की सामग्री है, उसकी रक्षा और उद्धार का उपाय शीघ्र से शीघ्र होना चाहिये और यह कार्य भारतीय विश्वविद्यालयों के अध्यापक और छात्र बहुत उत्तमता से कर सकते हैं। मैंने हरिभाऊ जी के जीवन और साहित्य' नामक प्रस्ताविक मासिक पत्र के प्रथमांक के लिये 'पृथ्वीपुत्र' नामक लेख अभी भेजा है, उसमें भी इसी विषय पर ध्यान दिलाया है। आपने ग्रियर्सन कृत बिहार पेजेन्ट लाइफ तो देखी होगी। उस ढंग की पुस्तक बुन्देलखंड के लिये तैयार कराकर छपाइये।

जो काम ब्रज का है वही अवध का है। मैं अभी यहाँ पूरी तरह जम नहीं पाया हूँ। सम्भव है कालान्तर में साहित्य का वैसा कार्य यहाँ शुरू करा सकूँ। महाभारत में भारतीय जनपदों की जो बड़ी सूची है मेरे विचार में हमारी बोलियों के क्षेत्र आज तक वे ही जनपद अपनी संस्कृति की विशेषता लिये हुए बने हैं।

ब्रज में जो कुछ साहित्य का काम हुआ उसकी चर्चा इस प्रकार है। ब्रजभाषा कोष का काम श्री जवाहरलाल जी चतुर्वेदी ने आरम्भ किया था। उनसे मालूम कीजिये क्या प्रगति हुई है और क्या बाधाएँ हैं? सूरदास-शब्द-कोष का कार्य श्री सत्येन्द्र जी की देख-रेख में होने लगा था। मेरे जाने के पीछे मालूम हुआ कि पं० क्षेत्रपाल के पुत्र डा० विश्वपाल जी ने इस कार्य को अपने धन से कराना स्वीकार कर लिया था। ब्रज-ग्राम-गीत, ब्रजभाषा धातु पाठ, लोकोक्ति और मुहावरों के संग्रह की भी बातचीत थी। गीतों का संग्रह सत्येन्द्र जी ने हिन्दी साहित्य परिषद् की ओर से किया भी था। मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के कार्यों में सतत प्रेरणा की आवश्यकता रहती ही है। आगरे में साहित्यिक कार्य का जीता जागता केन्द्र बन चुका है। वहाँ के और मथुरा के साहित्यिकों का एक सम्मिलित सम्मेलन अब की दशहरे पर कराइये और फिर इस प्रकार के कार्यों का क्रमबद्ध सिलसिला शुरू करने की बात सोची जाय तो बहुत सुन्दर होगा। आगरा संयुक्त प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का केन्द्र-स्थान या राजधानी बन जाये, यह प्रस्ताव भी मुझे रुचता है। आशा है आप इसे शीघ्र ही कार्यान्वित करा सकेंगे। क्या कहूँ जब टर्नर की नैपाली डिक्शनरी अथवा ग्रियर्सन की काश्मीरी डिक्शनरी जैसे दिग्गज ग्रन्थों को

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखता हूँ, तव हिन्दी की किसी भी बोली के लिये वैसे कोष की याद करके छटपटाने लगता हूँ। व्रजभाषा और अवधी में तो साहित्यिक धन इतना अधिक है कि उससे भी वड़े कोष वन सकते हैं।

आपका

वासुदेवशरण

यह पत्र लिख चुकने के बाद पत्र अभी मिला। व्रजभाषा का प्रादेशिक नकशा तैयार करने के लिये श्री गौरीशंकर जी सत्येन्द्र, मथुरा को लिखिए। प्रचारार्थ अपने विचार 'सावधान' मथुरा तथा साहित्य-सन्देश और साधना में छपायें और पत्र में निर्दिष्ट सम्मेलन की योजना पर भी विचार करें। शायद यह मेरा पत्र छोटा लेख ही वन गया है।

वासुदेवशरण

[१०५]

लखनऊ

२१-१-५१

प्रिय चतुर्वेदी जी,

मेरा विश्वास है कि भारतीय संस्कृति की जो थाती अब तक नयी है उसका निवास हमारे जनपदों में है। हमारे पुरातन आचार धार्मिक विचार, संस्था, भाषा और वहुमुखी जीवन का अटूट प्रवाह भारतीय ग्राम तथा उनके समुदाय जनपदों में अभी तक विद्यमान है। टर्नर का नैपाली कोष, ग्रियर्सन का कश्मीरी कोष—इनके जैसे कितने ही ग्रन्थ-रत्नों की सामग्री भारतीय जनपदों में सुरक्षित है। आप टर्नर और ग्रियर्सन की पद्धति पर कार्य को हाथ में लेने वाले नवयुवक बुन्देलखण्ड के लिए भी उत्पन्न कीजिये। प्रत्येक जनपदी वोली को ऐसे ही धुन वाले व्यक्तियों की चाह है। ग्रियर्सन ने बिहार में रहते हुए वहाँ के किसानों के जीवन पर एक अमूल्य ग्रन्थ 'बिहार पेजेन्ट लाइफ' (बिहार कृषक जीवन) के नाम से लिखा था। आपने देखा होगा, न देखा हो तो अवश्य देखियेगा। वह आपके कार्यकर्ताओं के लिये एक आदर्श रूपरेखा उपस्थित करता है। प्रादेशिक समस्याओं और बोलियों के लिये कार्य करने की वात अब बहुधा सुनने में आने लगी है। लोगों में उत्साह भी है, पर उनकी वैज्ञानिक पद्धति कुछ विचारशील लोगों को निर्धारित कर देनी चाहिये, जिससे सामान्य कार्यकर्ता तदनुसार कार्य में लग सकें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि एक संगठित और व्यवस्थित रीति से पाँच वर्ष तक कार्य होगा, तो आशा है देश और जनता के वास्तविक जीवन के साथ हम गाढ़ा परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

वासुदेवशरण

पुनश्च :—

जिन दो पत्रों की अतिरिक्त प्रतियाँ छपवाने की बात आपने लिखी है उनकी प्रति लिपि मेरे पास नहीं है। कृपया भिजवाइये अथवा वहीं 'मधुकर' में छापते समय अतिरिक्त प्रतियाँ निकलवा लीजिये। आर्थिक सहायता के प्रस्ताव के लिये आपका और परिषद् का मैं बहुत आभार मानता हूँ। यद्यपि इस प्रकार की सहायता की कोई आवश्यकता नहीं है पर फिर भी उससे आपके आन्तरिक प्रेम और कार्यक्रम के लिये दिव्य उत्साह का मुझे विलक्षण परिचय मिला। आप कृपया पत्र भिजवा दीजिये यदि वहाँ छापना सम्भव न हुआ तो मैं यहाँ छपवा दूँगा। पर उनका वितरण मेरे लिये बड़ी समस्या होगी।

(१) हाथ के बने सुन्दर कागज का जो आप इस्तेमाल कर रहे हैं कृपया पता लिखें। सम्भव हो तो छः दस्ते कागज वी० पी० से भिजवा दें, अच्छे मेल का।

(२) कुण्डेश्वर पहुँचने का ठीक मार्ग स्टेशन आदि कृपया लिखें, न जाने किस समय काम आवे।

वासुदेवशरण

[१०६]

लखनऊ
८-६-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका २४।५।४३ का कृपापत्र यथासमय मिल गया। पर मैं जो आपको पहला बड़ा पत्र भेज चुका था, उसके उत्तर की प्रतीक्षा में अब तक रुका रहा। अब इस पत्र की पहुँच सकारना आवश्यक जानकर लिख रहा हूँ। जनपद-सम्बन्धी कार्य के विषय में आपकी भक्ति देखकर मैं वास्तव में चकित हो गया हूँ। आपने अपने परिश्रम की हवि डालकर सचमुच ही इस पुनीत कार्य को कई कदम आगे बढ़ा दिया है। सम्मेलन ने इस कार्य की महत्ता और उपयोगिता को स्वीकार कर लिया है, यह भी शुभ लक्षण है। उपसमिति के सदस्य सब बड़े योग्य और सुलझे हुए सज्जन हैं। आशा है उनके मिलकर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठने से किसी ठोस कार्य का सूत्रपात किया जा सकेगा। सबसे बड़ी आवश्यकता कार्य को वैज्ञानिक पद्धति से संचालित करना है। जनपदीय कार्य की एक सरल पर क्रियात्मक रूपरेखा हम सबको मिलकर पहले प्रस्तुत करनी चाहिये। इसके लिये किसी केन्द्रीय स्थान में किसी अनुकूल समय में सब सज्जनों का मिलना अच्छा रहेगा, जिससे पारस्परिक विचार-विनिमय किया जा सके। मैं इस कार्य के लिये अपनी सेवायें देने को तैयार हूँ। परन्तु किसी भी हालत में आप जैसे कार्यकर्ता का सहयोग हम लोगों के लिए अपरिहार्य रहेगा। इस समिति में प्राण-संचार करने का श्रेय आपको ही रहेगा।

आपने अपने अमूल्य समय और शक्ति का इस प्रकार उन्मुक्तदान करके मुझे आभारी बना लिया है। मैं समझ सकता हूँ कि इस प्रकार के कलमघिस्सू काम में रात-दिन लगे रहकर आपने अपने आपको कितना श्रम पहुँचाया होगा। मेरा यह अहोभाग्य होता यदि आपके सदृश उत्साही कोई 'दो वेदों का वेत्ता' भी मुझे सहायक रूप में मिल सकता। मेरे एक जीवन के लिये दो वेद ही पर्याप्त हैं। एक तो अपनी समस्त शाखा, प्रशाखाओं सहित लोकरूपी वेद जिसके सर्वांगीण पारायण के लिये इन्द्र के दिव्य वर्ष सहस्र चाहिये और दूसरा मेरा भीतरी अपने आपे का वेद जिसके समझने में मुझे रुचि है और जो मुझे अपने स्थान से बहुत दूर भटकने से रोके रहता है। बस मेरा काम द्विवेदी पंडित से ही चल सकता है। इसलिये गांधी जी के अपरिग्रह व्रत का स्मरण करते हुए मैं एक चतुर्वेदी विद्वान् को गणेश रूप में सहयोगी प्राप्त करने के लोभ का संवरण कर लेता हूँ। यद्यपि पूना के संशोधक विद्वानों ने अपने संस्करण में महाभारत के प्रारम्भ की गणेश और व्यास की सुन्दर कथा को क्षेपक कह दिया है, पर फिर भी वह कल्पना बड़ी हृदयग्राही है और विशेषकर आजकल जब योग्य क्षिप्र लेखकों की उपयोगिता स्वयं सिद्ध है। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि मैं अपना पाणिनि विषयक लगभग आठ सौ पृष्ठों का निबन्ध केवल एक चतुर टाइपिस्ट की सहायता से ही पूरा कर पाया था। फिर भी मैं व्यास जी के पाणिवाद में विश्वास रखने वाला हूँ। व्यास ने मानवी पुरुषार्थ की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए इन्द्र के मुख से 'पाणिवाद' का व्याख्यान कराया है। जिनके पास हाथ हैं, वे क्या नहीं कर सकते? जिनके हाथ हैं वे ही सचमुच सिद्धार्थ हैं। जिनके पास पाँच उँगलियों वाले हाथ हैं, मैं उनकी सबसे अधिक सराहना करता हूँ। पाणि लाभ से बढ़कर और भी क्या कोई नाम है? पंचांगुलक हाथों से जैसा कर्म किया जाता है वैसा ही लाभ हाथ पड़ता है, यही तो शास्त्र का निचोड़ है। (शान्तिपर्व १८०।११।२०)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे हाथ अभी तक मेरे अनवरत साथी हैं। उन्हीं की कृपा से मैं यह पत्र आपको लिख सका हूँ। आपके बुन्देलखन्ड में जितने हाथ हैं वे यदि पाणिवाद की सीख मानकर सिद्धि करने लगें तो वे कौन सा लाभ प्राप्त नहीं कर सकते ? निरन्तर कार्यशीलता का उपदेश देने वाले व्यास के पाणिवाद की हमें इस समय कितनी आवश्यकता है। हर एक क्षेत्र में अनगढ़ सामग्री के विन्ध्याचल खड़े हुए हैं। उसको गढ़ कर उपयोग में ढालने वाले पाँच उँगलियों से सम्पन्न हाथों की चारों ओर माँग है। यही जनपदीय कार्य की भी आवश्यकता है। यह तो हुआ पर आपके मनोरंजक सौहार्द और गाढ़ी साहित्यिक शैली का जैसा अच्छा परिचय इस पत्र से मिला वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। त्रयाणां धूर्तानां की बात खूब कही। क्या विलक्षण कहानी बनाई गई है। विश्व साहित्य में भी ऐसी चुस्त कहानी ढूँढ़े से ही मिलेगी। कहानी को logic absolute है। मुझे तो यही बात सुख देती है कि Common sense का ऐसा सुन्दर साहित्य रखते हुए भी हम बुद्धू ही बने रहे।

'सेतुबन्ध' लेख और श्री बुद्धिप्रकाश चतुर्वेदी के नाम लिखा हुआ आपका पत्र पढ़ा। उसे वापिस कर रहा हूँ। आपके भाव बहुत ही सुन्दर हैं। संसार में जो कुछ भी विभूतिमत्, श्रीमत् और ऊर्जित है, उससे परिचय प्राप्त करने का हमारे उदीयमान राष्ट्र को अधिकार है। यह तो आन्तरिक स्वास्थ्य का लक्षण है कि हमारी भूख इतनी प्रबल हो उठी है। हमारी जिज्ञासा की परिधि दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ रही है। यह शुभ चिह्न है। ऐसे समय हमें अपने केन्द्र को भी भरपूर टटोलना चाहिये। अपने केन्द्र का पर्यवेक्षण ही जनपदों का कार्य है। अपनी महिमा को हम जितना अधिक जानेंगे उतना ही बाहरी महिमा से परिचित होने की क्षमता हममें बढ़ेगी, अन्यथा भय है कि हम भटैती के गड्ढे में न गिर जावें। आपका एक वाक्य मुझे बहुत प्रिय लगा। मैंने इसे कई बार पढ़ा—The principal aim of my life is interpretation of which is best among other people. इसके (other people) शब्द में विश्व भुवन समाविष्ट है। वेद के शब्दों में कहिये तो ब्रह्म के आधे हिस्से से विश्वमुक्त पैदा हुआ, और जो दूसरा बचा वह उसके अपने आपका प्रतीक था।

अर्धेन विश्वं भुवनं जनान, यो स्यार्ध कतमः स केतुः। बस यही समन्वय हमें इष्ट होना चाहिये। other people या विश्व भुवन एक अर्द्धांश में, और our people या हमारा अपना लोक जीवन दूसरे अर्द्धांश में – तभी हमारे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रथ की गति निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच सकती है। 'त्रयाणां धूर्ताणां' वाली साहित्यिक शैली में इसी महँगे तत्त्व को कहना चाहें तो यों कह लीजिये—

अर्धेन भीमो अश्नाति अर्धेन सर्वे पाण्डवाः ।

सर्व पाण्डवों में विश्व भुवन और भीम के आधे भागधेय में हमारा अपना समाज, अपने जनपद और अपना लोक। आइये इसी सुनहले समन्वय का हम इस मंगल प्रभात में आवाहन करें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[१०७]

लखनऊ
११-६-४३

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

आपको दो भारी भरकम पत्र पहले भेज चुका हूँ जिनकी पहुँच मिलना बाकी है। आज सबेरे आपका 'साहित्योपवन' शीर्षक शीतलता देने वाला लेख मिला। पढ़कर तबियत बहुत खुश हुई। आपका यह लिखना कितना सही है कि जब सिर पर साहित्यिक मुरब्बी होता है तो लिखने वाले का जी चौगुना हो जाता है। कालिदास ने क्या ही ठीक कहा है—

प्रायः प्रत्ययमाधत्ते स्वगुणेषूत्तमादरः ।

अच्छा विज्ञजन अपने गुणों की दाद दे इससे बढ़कर आत्मविश्वास उत्पन्न करने का और क्या साधन हो सकता है ? आपने जो यह लिखा है कि हम अकेले-अकेले साहित्य रचना में लीन हैं, साहित्य का उद्यान सँवारने की ओर हममें से बहुत कम ध्यान देते हैं। बहुत ठीक है। मैं अब इसकी आवश्यकता को अच्छी प्रकार देख रहा हूँ। यह भी एक सत्य है कि हमारे महारथियों को जो यत्र-तत्र उपवन खिले हैं उनकी सैर करके उनसे आत्मीय परिचय प्राप्त करना चाहिए। सम्मेलन के सभापति तथा अन्य वयोवृद्ध सज्जन इस प्रकार 'चारिकं चरित्वा' यदि साहित्यिक उपवनों की कुशल जानने का प्रयत्न करें तो उदीयमान लेखकों को बहुत कुछ प्रोत्साहन और पथ-प्रदर्शन प्राप्त हो सकता है। लेख पढ़कर लौटा रहा हूँ।

जनपदीय कार्य और प्रान्त निर्माण का आन्दोलन बिल्कुल पृथक् बातें हैं। उनका संकर किसी का हित नहीं कर सकता। इस समय राग-द्वेष से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से ऊपर उठकर प्रशान्त उदात्त भावों से लेखनी पकड़ना बहुत ही आवश्यक है, नहीं तो वर्षों की ईप्सित साधना विफल हो सकती है। सत्य स्वयं अपने तेज से चमकता है। अतएव यदि हमारे कन्धों पर शान्त और विवेकी मस्तिष्क पूर्ववत् स्थिर रहे तो यह भ्रम-जाल स्वयं ही शीघ्र मिट जायगा। कृपया पहले पत्रों की पहुँच अवश्य दीजियेगा।

आपका
वासुदेवशरण

[१०८]

लखनऊ
२३-८-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२२।८।४३ और १६।४।४३ के कृपा पत्र मिले। जनपद कल्याणीयोजना आपको पसन्द आई, इससे सन्तोष हुआ। कवि ने कहा है—

प्रायः प्रत्ययमाधत्ते स्वगुणेषूत्तमादरः।

लक्ष शब्द लिखते हुए मेरा भी माथा दो बार ठनका था, आपने उचित ही किया जो उसे बदल दिया। इस प्रकार के जो भी परिवर्तन संशोधन चाहें मेरे लेखों में आप कर सकते हैं। आपकी भावना सात्त्विक है। उससे जो कुछ भी आप लिखेंगे ऊँची भूमिका में मुझे मान्य होगा।

योजना को भेजते समय मेरा ऐसा ध्यान था कि आप उसे 'मधुकर' में छापकर रिप्रिन्ट के रूप में अधिक प्रतियाँ निकलवा लेंगे। उससे कम व्यय में कार्य हो सकेगा, साथ में आपकी सम्पादकीय टिप्पणी भी छप सकती थी। 'मधुकर' इस प्रकार की विचारधाराओं के प्रकाशन का सबसे उपयुक्त स्थान है। जैसे योजनान्त की टिप्पणी में लिखा है, इस पर सम्मेलन की उपसमिति को विचार करना चाहिये।

स्थानीय प्रेस ने २५० प्रतियाँ छापने के ५) रु० माँगे थे। मैं छपाने से पहले चाहता हूँ कि समिति इसे स्वीकार कर ले जिससे अन्त का पैरा निकाल दिया जाये इसीलिये छपवाया नहीं। अतएव ५-६ प्रतियाँ कराकर उपसमिति की राय पहले ले ली जाये। यदि वे स्वीकार करें तो अतिरिक्त प्रतियाँ छपवा ली जावें। जिजमानों के संग्रह की बात आपने खूब कही। इस कार्य में आपकी दक्षता का मैं कायल हूँ। कृपया इस योजना को छपाने का पहला जिजमान मुझे ही समझें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मधुकर' जहाँ छपता है वहाँ इसके रिप्रिन्ट छापने का जो व्यय हो मुझे देने की आज्ञा दीजिये। भेजने और प्रचार का कार्य आपके द्वारा ही सफलता से हो सकता है। खुले आकाश के नीचे मुझे विचार घेरते हैं और मैं आप जैसे सहृदय मित्र के पास उन्हें लिखकर अपने को आनन्दित कर लेता हूँ। इससे अधिक की चिन्ता में कहीं पहला कार्य मट्ठर न पड़ जाय।

१६-८-४२ के पत्र के विषय में निवेदन है कि विकेन्द्रीकरण शब्द के साथ कोई विग्रह न ठानकर मैं आपकी इस बात को मान लेता हूँ कि कोई शब्द अपने आप में न तारक है न मारक। हमारे मनोभावों का अमृत और विष उन्हें जो कुछ बना दे। विकेन्द्रीकरण शब्द कुछ विशेष संस्कार लेकर हमारे साहित्य में आया, इसी से उससे मुझे आशंका थी कि कहीं विरोध की मात्रा को बढ़ा न दे। जनपदीय कार्य वैसे तो अनेक केन्द्रों में फैलकर करना ही पड़ेगा। योजना का सार भी यही है। अतएव यदि आप विचार के उपरांत उस शब्द को निरापद मानते हों तो मुझे कुछ भी मतभेद न होगा। पर हमारा प्रधान मंत्री तो जनपद' शब्द ही है। यह विधानात्मक है नकारात्मक भावना से नितान्त अछूता। यदि अपने इस पवित्र शब्द को ही हम अपनाते रहें और बराबर उसी के गौरव को बढ़ाते रहें, तो देखना यह है कि हमारा पूरा कार्य चल सकता है या नहीं? जनपदीय कार्य या जनपद कल्याणीय का अर्थ अत्यन्त विचारने पर बहुत विस्तृत मालूम होता है। वेद के जैसे ऋत-सत्य है वैसे ही हमारे जीवन के जानपद और पौर क्षेत्र हैं। ऋत सर्वव्यापक, अरूप, अमूर्त, अनिरुक्त तत्त्व की तरह है। यही जानपद जीवन का अमर एक रस रूप है। सत्य, मूर्त, परिमित और प्रगट है। यही पुरवासी का जीवन होता है। पौर जीवन समय-समय पर जनपद जीवन के साथ सम्पर्क में आने के लिये उमगता है। गुप्तकाल की पौर संस्कृति के बाद ऐसा ही एक युग आया था जब अपभ्रंश भाषा का पूजन हुआ। मुसलमानी काल में जीवन नगरों की ओर केन्द्रित हुआ। आज पुनः हम जनपदों के साथ हाथ मिलाने को निकले हैं। यह हमारे इतिहास की स्वाभाविक परम्परा के अनुकूल है। कला, साहित्य, भाषा, उद्योग धन्धे— यच्चयावत् जीवन के निस्तार में जानपदीय रूप का आकर्षण हमारी आँखों में बस रहा है। पौर-जानपद जीवन के उचित और बुद्धिमानी से किये हुए समन्वय में ही इस समय देश और जाति का कल्याण छिपा हुआ जान पड़ता है। लोकगीतों का संकलन, खादी की प्रीति, ग्रामोद्धार के कार्यक्रम, देखने-कहने में भिन्न-भिन्न हैं, पर सबका जन्म

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक ही दार्शनिक भूमिका से हुआ है। जनपदों की इस भक्ति में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी, इसे वे मित्र भी देखेंगे जो आज इस काम से शंकित जान पड़ते हैं। परसों देवेन्द्र जी का एक बहुत मधुर पत्र आया है। उनको जो उत्तर लिखा है उसकी एक प्रतिलिपि अपने चिरंजीव से कराकर आपके देखने के लिये भेज रहा हूँ। देखकर भेजने की कृपा करेंगे। हम सब समान शील और व्यसन वाले सखा' हैं। ऋग्वेद में कहा है कि ज्ञान के क्षेत्र में – अर्थात् संस्कृति के जगत् में—सत्यमय सखाओं का प्राप्त करना भी एक बड़ा सौभाग्य है। उन्हीं के पारस्परिक सहयोग, सहानुभूति, सौमनस्यता एवं समाधिपूर्ण चिन्तन से शाश्वत मूल्य के कार्य आगे बढ़ा करते हैं।

'कृत्स्न' के स्थान पर अवश्य ही 'समग्र' शब्द रख देना चाहिये। मुख सुखार्थ उसी का प्रयोग इष्ट होगा। पहले विच्छेद को मैंने बदल दिया है। उसको अब अपनी जगह रक्खें या अन्यत्र हटा दें, मुझे आपत्ति नहीं है। और भी कई हल्के संशोधन कर दिये हैं, भावों को कुछ जोड़ने के लिये—देख लीजियेगा।

'मानव' को अपने पूज्य आसन पर प्रतिष्ठित करने के लिये ही हमारे प्रयत्न हैं। मैं तो इस विषय में वेद व्यास के मानव-केन्द्रिक दर्शन का अक्षरशः भक्त हूँ। (Homo centric view, man at the counter of universe) व्यास शीर्षक लेख में इसे लिख चुका हूँ। व्यास का यह श्लोक सोने के अक्षरों में टाँकने योग्य है—

'गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि
नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्' (शान्तिपर्व, १८०।१२)

आप चाहें तो 'मधुकर' के मुखपृष्ठ के लिये इसे मेरी ओर से जन्माष्टमी के उपहार रूप में स्वीकार कीजिये। 'यह रहस्य ज्ञान या भेद की बात तुमको बताता हूँ कि मनुष्य से बढ़कर यहाँ अन्य कुछ नहीं है।'

व्यास का यह मानव केन्द्रिक मत हमारे अर्वाचीन ज्ञान, विज्ञान की खोज-पद्धति और सामाजिक अध्ययन में सर्वत्र फैलता आ रहा है। मनुष्य को ऊँचा उठाकर ही हमारी सारी क्रियाएँ और साधनाएँ—कला, साहित्य, ज्ञान, विज्ञान—ऊँची उठेंगी। मनुष्य यदि हमसे आदर न पा सका तो हमारे उस सम्मान-भाव का पात्र विश्व में और कौन निकलेगा ? अतएव इस सम्बन्ध में हमारा आपका मत तो नितान्त एक ही है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यास सम्बन्धी अपने लेख की छाप भेजता हूँ। आपको अवकाश मिले तो कृपया देखियेगा। संस्कृत-ज्ञान के विषय में मेरा जो मत है उसे तो मिलने पर ही कहूँगा। हाँ, जिसे अच्छी हिन्दी आती है उसे आधी से अधिक साहित्यिक संस्कृत और तीन-चौथाई कामचलाऊ संस्कृत आती है, ऐसा मान लेने में व्यावहारिक घाटा या धोखा नहीं रहेगा।

आपके पूजनीय पिताजी का परिचय पाकर कुछ काल के लिये मन बहुत ऊँचा उठ गया। उन कोविद ग्राम-वृद्ध को मेरा प्रणाम स्वीकृत हो। उनके परिचय ने मुझे अपने आर्य पितामह का स्मरण करा दिया, जिन्होंने अस्सी वर्ष की आयु में बहुपुत्र पौत्रेण सुख का अनुभव करके स्वस्थ दशा में अपने पुरुषार्थ-प्रधान जीवन से हाल में ही विराम लिया था। उनके गुणों का सौरभ गाँवों को रहने योग्य बनाता है। उनके चारित्र्य की दृढ़ धरन पर ग्राम-जीवन टिका हुआ कहा जा सकता है। उनके संभाषण से अंधेरे देहातों में चाँदनी मालूम होती है। ऐसे कक्का गाँवों की चौपालों के सुहाग हैं। ऐसे जनपद वृद्धों के दो चार चरित्र जो निजवार्ता-गृहवार्ता के ढंग पर हों, पढ़ने को मिलें तो क्या कहना ?

आपका

वासुदेवशरण

२३ का पत्र आज भेज रहा हूँ। इधर मेरी आर्य वृद्ध पितामही बहुत बीमार रहीं। २८ ता० को उनकी आयु पूरी हो गई। क्या संयोग है कि उसके पहले बाबा जी की बात आपको लिख ही चुका था।

[१०६]

लखनऊ

२३–६–४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

८-६-४३ का कृपा पत्र मिला था। आपके सरस सौहार्द के लिये मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। आपने मेरे लेखों के लिये जो निस्वार्थ परिश्रम किया है, उसके लिये मैं चिरकाल तक आपका ऋणी रहूँगा। यदि आप इस प्रकार आन्दोलन करके मेरी जानपदी भावना को पोषित और पल्लवित न करते तो न जाने इसको उचित विकास प्राप्त होता या नहीं। ऋग्वेद में जो ज्ञान के क्षेत्र में 'सखाओं' की प्राप्ति पर जोर दिया है, उसका महत्त्व साहित्यिक जगत में भी कुछ कम नहीं है। आप मेरे सच्चे सखा हैं इसकी मुझे प्रसन्नता है और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका मुझे गर्व है। 'विशालभारत' की प्रति भिजवाइयेगा, जिसमें पं० जयराम जी का रेखाचित्र निकला हो। ऐसी गृहवार्ताओं का प्रचार हमारे साहित्य में अवश्य बढ़ना चाहिये। कह नहीं सकता, यह जानकर कितनी प्रसन्नता हुई कि आप संस्कृत-ज्ञान रूप अपने जन्म-सिद्ध अधिकार की प्राप्ति के लिये तत्परता से लग गये हैं। यदि कभी आपसे भेंट होगी तो एक सप्ताह में संस्कृत-व्याकरण की रूपरेखा के साथ आपको परिचित कर देने की अभिलाषा है।

व्यास हिमालय तथा और दो एक लेख इसी डाक से भेजे हैं। पहले भूल गया जान पड़ता है। आज अशोक के लेखों से एक सुन्दर शब्द मिला—जानपद जन। इसकी मुझे खोज थी। ग्रामीण, गँवार, गँवई, देहाती, दिहकानी, घामड़ आदि शब्दो के स्थान पर इस पवित्र और संभ्रान्त शब्द का प्रयोग और प्रचार होना चाहिये।

पुनश्च—

पत्र लिखने के बाद अभी आपका तीन पैसे का तार मिला। आशुर्भव-स्थिरोभव का काढ़ा मैंने अपने आरोग्य के लिये एक दिन प्रातःकालीन ध्यान में प्राप्त किया था। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि इस काढ़े को आपने अपने लिये भी पसन्द कर लिया है। हमारे एक काशीवासी मित्र रायकृष्णदास हैं। काश उनको भी इसकी एक दो मात्रा मिल जाती।

अथच—

१८ नवम्बर को देहरादून में पुराणमुनि श्री संत निहालसिंह जी से मिलकर आया हूँ। उनके उदार प्रांगण की तरह उदार हृदय में कल्लोल करते हुए गद्गद् भावों से ओतप्रोत होकर कितनों को आनन्द मिला। शिलापद की तरह फैले हुए ललाट के भीतर कितनी स्मृति और मेधा भरी हुई है। भारत का विश्व में जो भावी विस्तार होगा उसके वे अग्र उदाहरण हैं। उनके मन में कितने विषयों के प्रति रुचि और प्रेम है, मुझे थाह नहीं मिली। सहस्रांशु सूर्य के समान उनके ज्ञानांशु प्रति क्षण प्रतिफलित होते रहते हैं मैं कुछ काल के लिये ऊपर उठ गया जब उन्होंने नाद को ऊँचा करके कहा—The begging bowe for knowledge is always in my hand. If you are a student you must never feel ashamed for asking for knowledge: आज भी १६-१८ घंटे अथक परिश्रम करना उनका स्वभाव है। व्यास के जिस पाणिवाद की बाबत पढ़ा था उसका एक प्रतिमान मुझे उनमें मिला। सारे काम लेख लिखना, फोटो उतारना, धोना, छापना, भेजना अपने हाथ से। हाँ, उनकी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रमशीला धर्मपत्नी उनके साथ दो शरीरों में एक प्राण की तरह नित्य स्पंदित है। अपनी अद्‌भुत लेखन शैली का रहस्य बताते हुए उन्होंने कहा—It is my knowledge of Hindu mythology and religion that enables me to write like that दूसरे दिन मैं विचार करके गया था कि उनके वृद्ध अनुभव से अपने लिये एक सन्देश माँगूंगा। बातचीत के सिलसिले में अपनी प्रस्तावित बनती हुई ऊपरी मंजिल को दिखाने के लिये हमें वे ले गये और मेरे कुछ कहने से पहले ही सामने द्रोणाचल के चमकते हुए शिखरों की ओर संकेत करके उन्होंने कहा—The message of निष्काम कर्म Preached in the Gita is the greatest message for public life in the world.

मैंने मर्म समझकर कहा—यह तो आपने मुझे अनकहे ही मन-चीता सन्देश दे डाला। उनके घर की सैर देवभूमि के किसी विलक्षण साहित्यिक की प्रयोगशाला की सैर जैसी जान पड़ी। लगभग ३० वर्षों से सचित समाचार पत्रों की बहुविध कतरनें और २० सहस्र फोटो निगेटिव सब ऐसे साज से सुरक्षित हैं कि बिना विलम्ब कोई वस्तु वे निकाल ले आते हैं।

मथुरा के ६-७ वर्ष पहले के परिचय की सूक्ष्म स्मृति से उन्होंने मुझे चकित कर दिया। वहाँ के संग्रहालय की मातृदेवी की मृण्मय मूर्तियों पर १६३८ में प्रकाशित अपना सुन्दर लेख उन्होंने मुझे पढ़ने को दिया। विश्व की रचना-शक्ति में जो मातृधारा है, उसकी विशिष्ट सुभिव्यक्ति यमुना की अन्तर्वेदी में होती रही है, इस दृष्टिकोण में उन्होंने विषय को पल्लवित किया था। यमुना की अन्तर्वेदी में जो सभ्यता पनपी (Yamuna velley culture) उस पर वे एक बड़ा ग्रन्थ लिखने की सामग्री जुटा रहे हैं। भारतीय संस्कृति पर सहस्रों चित्रों से प्रतिमंडित एक विशाल ग्रंथ लिखने का उनका संकल्प है। ईश्वर करे उनका यह विचार पूर्ण हो।

वे इतना बहुमुखी कार्य कैसे सिद्ध कर लेते हैं, इसका रहस्य उनके इन शब्दों से मुझे मिला—I do not split my mind when I want to do justice to a thing, I concentrate upon it and shut out every thing else.

मन से, शरीर से और प्राण से रोम रोम में जीवन का अनुभव करते हुए वे मुझे प्रतीत हुए। उनका उन्मुक्त अट्टहास थोड़ी-थोड़ी देर में दर्शक के मन के साथ टकराता हुआ उसे चेतना और प्रगति का अनुभव करता रहता है।

वासुदेवशरण

लखनऊ २२-११-४३

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११०]

लखनऊ
२४-१०-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने पत्रिका के विशेषांक 'विक्रमांक' का कार्य मेरे ऊपर रख दिया है। मैं इधर एक मास से उसके सम्बन्ध में इतना व्यस्त रहा कि आपको जनपद साहित्य या कार्य के सम्बन्ध में कुछ लिख न सका। अभी दिसम्बर तक मुझे सभा का यह वृहत् कार्य निबाहना है। लगभग ५०० पृष्ठों का विक्रमांक, अतीत द्विसहस्राब्दी में राष्ट्र के विक्रम की कहानी का प्रतीक। ईश्वर करे यह कार्य सफलता के साथ पूरा उतरे। आशीर्वाद दीजिये कुण्डेश्वर के पवित्र जल में शुद्धता से मनःपूत होकर।

२३-९-४३ के पत्र में आपने जनार्दन राय जी का परिचय देते हुए (जिन्हें मैंने आज ही पत्र लिख दिया है) लिखा था 'ये साहित्यिक सगाइयाँ मुझे अत्यन्त प्रिय हैं।' उस समय पितृपक्ष के दिन थे, इसलिये ब्याह-सगाई की बात मन रहते भी मैंने कुछ न लिखी। आप तो चतुर्वेदी हैं, अपनी भूमि की इस पुरानी परम्परा से अब कृपया परिचित हो जाइये। हाँ, तो आपकी सगाइयों से भी पहले जन्मपत्री मिलाने का कार्य मैंने किया। इसमें मथुरा के श्री कन्हैयालाल जी पोद्दार साक्षी हैं। उन्होंने २५ जुलाई को भोजन से छकाने के बाद पूछा – 'कहिए, आपका और चतुर्वेदी जी का मेल क्या साहित्य-सम्मेलन के हरिद्वार अधिवेशन में हुआ?' मैंने कहा—'नहीं मेरी उनकी कुण्डली तो इससे पहले ही मिल चुकी थी।' बूढ़े सेठ जी खूब ठठाकर हँसे। हम दोनों ने ही स्वच्छन्द हँसी हँसकर बात का भरपूर रस लिया। सत्येन्द्र जी भोजन में तो साथ थे, पर इस अट्टहास से कमरा भरने में उन्होंने साथ दिया या नहीं, यह इस समय स्मरण नहीं। सत्येन्द्र जी जनपदों की पृथकता से सशंक थे। परिस्थिति कितनी निष्ठुर है, उनको हिन्दी के एक दूरस्थ जनपद के गढ़ में ही ले जाकर बन्द कर दिया—मध्यदेश की उछलती गंगा-यमुना की धाराओं से एकदम दूर। सहानुभूति का सरस पत्र उनको लिखना न भूलिएगा। मरुस्थल में गये व्यक्ति को मध्यदेश की इस सरसता की कितनी आवश्यकता रहती है इसका कुछ ज्ञान जातकों के पढ़ने से जाना जा सकता है। जातकों का नाम राहुलजी से पूछिये, साहित्यिक कुटुम्ब बढ़ रहा है, यह देखकर आपके भीतर की पुरन्ध्रिता प्रसन्न हो रही होगी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जम्बू के डाक्टर सिद्धेश्वर जी इस परिवार के नये सदस्य हुए हैं। वे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के भाषाविद् हैं। स्वभाव के प्रशान्त, आर्यभावों से युक्त, नवयुवकों जैसी स्फूर्ति से सम्पन्न। मुझे दिसम्बर १९४१ में हैदराबाद दक्षिण में उनके दर्शन मिले। दोनों एक दूसरे के प्रति आकृष्ट हुए। वस्तुतः वे गंभीर पुरोधा हैं। उन्होंने जम्बू से ६० मील दूर अपने एकान्त साधना स्थान 'आनन्द आश्रम' से जो सरस, सहृदयता से भरा हुआ पत्र भेजा था, उसकी एक प्रतिलिपि आपको मैंने अभी भेजी है, मिल गई होगी। उनको भी आज ही मानों एक महीने की समाधि से जागकर जो पत्र लिखा है उसका एक खोखा आपको भेजता हूँ।

आज तो साहित्यिक मित्रों के मानस-मिलन का पर्व है। मेरा मन भी एकादशी व्रत के द्वारा आज रस-तृप्त है। वह देखिये लाहौर से श्री देवेन्द्र जी सत्यार्थी का पत्र २९ सितम्बर का आया है। उनको भी उत्तर जा रहा है। श्री मैथिलीशरण जी गुप्त के निमन्त्रण को स्वीकार करते हुए ३० अक्टूबर को साहित्य सदन चिरगाँव में उनके दर्शन करने की सूचना अभी भेजी है। ३१ को मोठ में कुछ शिलालेख देखने हैं।

सत्यार्थी जी जनपद कार्य के आदि ऋषि हैं। उन्होंने जीवन की साधना के जल से इस कार्य की जड़ों को दूर तक सींचा है। मथुरा में एक मास तक उनके साथ रहकर उनकी साधना से मैं परिचित हो चुका हूँ। उनके पैरों का रथ सारी धरती पर फिर आया है। वे हमारे जनपद-जगत् के सच्चे 'चक्रवर्ती' हैं।

उनके पत्र की जो प्रतिलिपि आपने भेजी है उसे केदार-मानस खण्ड की छोटी टिप्पणी के साथ वापिस भेजता हूँ। सत्यार्थी जी ने कृपा कर आपके लिखे अंग्रेजी पत्र के अधिकांश की प्रतिलिपि मुझे पहले भेज दी थी। मैं विकेन्द्रीकरण शब्द के प्रयोग से आपको सजग करना चाहता था। मैं देखता हूँ आपके अन्य हितू मित्र भी वैसे ही विचार के हैं। जनपद कार्य की आवश्यकता, उसका महत्त्व, उसकी उच्चता, उसकी प्राणदायकता, उसकी हितसाधकता के विषय में हम सब प्रायः एकमत ही हैं। मैं आपके अकथ परिश्रम, घनीभूत उत्साह की कहाँ तक प्रशंसा करूँ। भवभूति के शब्दों में 'हृदयस्त्वेव जानाति' का यह विषय है। आपने ही इस कार्य को आन्दोलन का रूप दिया और आप ही के बल पर उसके प्रचार की रीढ़ सधी हुई है। चन्द्रबली जी को जो आपने लिखा है कि हमें जनता को 'विचार करने और अपने परामर्श

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपस्थित करने का मौका' देना चाहिये, यही ठीक भाव है। अभी तो हमारे समाचार पत्रों को अपनी बहुत सी सुविधाएँ इस कार्य को देनी हैं। अनेक सम्पादकों को अपनी लेखनी घिसनी पड़ेगी, कितने लेखकों को मस्तिष्क की उधेड़बुन इस काम में खर्च करनी पड़ेगी; अनेक भाषणों में इस सन्देश की व्याख्या करनी होगी, तब इस महानाद का सम्मिलित घोष सिन्धु और ब्रह्मपुत्र के बीच की अगणित प्रजाओं तक पहुँच पायेगा। और इन सबसे बढ़कर आवश्यकता होगी—किसी तपस्वी दधीचि को अपनी हड्डियों को इस काम में गलाने की। बिना तप के कोई महान् कार्य आज तक पूरा नहीं उतरा। यह सृष्टि का नियम है। साहित्य के क्षेत्र में भी इसका अनुशासन है। सम्भव हो तो 'मधुकर' के पिछड़े अंकों को पूरा पार कर समय के साथ मिला लाइए। इससे लेखों की उपादेयता की ओर जनता का ध्यान और अधिक आकृष्ट होगा। 'आशुर्भव स्थिरोभव' का मन्त्र आप ले चुके हैं। 'मधुकर' को भी उसका लाभ मिलने दीजिये। इस विषय में द्विवेदी जी हम सबके गुरु बनकर मार्ग प्रदर्शित कर गये हैं।

श्री पं० अमरनाथ झा अपनी व्यवहार-निपुणता के लिये विख्यात हैं। यह बड़ा लाभ है कि वे भी आपके जनपद के साथ हैं। उनको प्रेरित करके कुछ अच्छे लेख 'मधुकर' में प्रकाशन के लिये प्राप्त कीजिए और उन्हें हिन्दुस्तान, प्रताप आदि में भी प्रचारित कीजिये। डॉ० सिद्धेश्वर जी का मूल पत्र अनुवाद के साथ मधुकर में छापने योग्य है। वह हम सबके लिये उत्साहप्रद प्रमाण-पत्र है। उससे हमें ज्ञात होता है कि हमारा मार्ग ठीक है और बाहर के टकसाली विद्वान् भी उसको आशीर्वाद देते हैं। यह बात हिन्दी के साहित्यिकों को जाननी चाहिये।

यहीं पर एक विषयान्तर आ गया। क्षमा कीजिये। मेरी धर्मपत्नी अपने बच्चे विष्णु को एक कहानी सामने बैठी सुना रही थी, उसमें से 'काग उड़ावनी' शब्द मेरे कान में पड़ा। मुँदे कान जैसे कुछ खुले। मैंने पूछा कि यह क्या कहानी है? तो नाम बताया 'झनझन गुड़िया' और कहा कि भृगु (विष्णु का बड़ा भाई) कहता था कि यह कहानी 'मधुकर' में निकल चुकी है। मैंने कहानी का पिछला भाग अभी सुना। उसमें यह गाथा आई है जो उसकी पूरी 'वस्तु' (प्लाट) की सूचक है—

रानी ही सो बांदी हो गई
बांदी ही सो रानी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारह बरस तक मुरदा से कै उठाया दुख
जब भी न पाया सुख।

मुझे भी कुछ याद है 'मधुकर' में श्रीमती यशपाल व्रज की ठेठ बोली में इसी मूल पाठ से विकसित एक कहानी लिख चुकी हैं। सम्भवतः यह किसी प्राचीन जैन कहानी पर अवलम्बित है, क्योंकि इसमें राजा के देशान्तर में व्यापार के लिये जाने और माल से जहाज लादने का वर्णन आता है। अनुमान होता है कि अवदानों के युग में गुप्तकाल में जब द्वीपान्तरों से हमारा जीता-जागता सम्बन्ध कहानी साहित्य से जुड़ा तभी इस कहानी की मूल रचना हुई होगी जो लोक में आज तक जीवित है—असंख्य बालकों का मनोरंजन करने के लिये। बड़ा आनन्द होगा जब इसका मूल कहीं मिल जायगा। 'नेक और बद' वाली दूसरी कहानी का मूल मुझे 'भविष्यदत्ता' कथा नामक जैन ग्रन्थ में मिल गया था। उस पर एक लेख मैंने कई महीने पहले भेजा था। आशा है मिला होगा। उसे 'मधुकर' के किसी अंक में छापियेगा।

विनीत
वासुदेवशरण

[१११]

लखनऊ
२६-१०-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

व्यास वाला लेख आपको पसन्द आया, इससे मन हर्षित हुआ। महाकवि ने कहा है—

प्राय: प्रत्ययमादत्तेस्वगुणेषूत्तमादरः।

हाँ 'पाणिवाद' शब्द बहुत सुन्दर है। मुझे वह बहुत प्रिय है। स्कूल कालिजों के बालकों में इस शब्द और इसके अर्थ का प्रचार होना चाहिये। Philosophy of manual labour आपका अनुवाद बहुत अच्छा है। ऋजुभाव का अर्थ ईमानदारी सीधापन है। जीवन की सीधी सादी सचाई के साथ जीवन के मुकाबिले के लिये डटना या टूट पड़ना ऋजुभाव है। फेरफार की बात से या भावताव से या आगा-पीछा टालने से ऋजुभाव जाता रहता है। हषीका का अर्थ सींक है। हषीका से ही सींक निकला है। मैंने उसी पंक्ति में पहले सींक लिखकर उसके पास ही हषीका लिखा था। जिससे दोनों शब्दों के सम्बन्ध की ओर पाठक का ध्यान जा सके। वाल्मीकि का 'अराजक जनपद' अयोध्या-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काण्ड सर्ग ६७, श्लोक ८-३६ में कृपया देखें चित्त प्रसन्न होगा। मैंने उसका अनुवाद अपने 'बाल्मीकि वाले लेख में दिया है जो हिन्दी विश्वभारती (अंक ६, पृष्ठ ७८१-७८७) में छपा है।

तपोवनों तक पहुँचने के लिये कुछ परिश्रम करना होगा। आशा है आप किसी की अँगुली पकड़कर वहाँ तक नहीं पहुँचना चाहते। इस तरह वहाँ जाकर भी उससे दूर रहेंगे। वहाँ के लिये जायसी की 'दूर सो नियर नियर सो दूरी' यह उक्ति ठीक है। मेरा तात्पर्य यह है कि तपोवन के वर्णनों के लिये वाल्मीकि रामायण, महाभारत, कुमारसम्भव का पाँचवाँ सर्ग तथा शकुन्तला के एक से चार तक अङ्क देखिये।

आपका

वासुदेवशरण

मैं ३० से २ तक चिरगाँव गुप्तजी के पास रहूँगा। क्या मिल सकेंगे? बुन्देलखण्ड मण्डल का निमन्त्रण मिला। धन्यवाद। क्षमा चाहता हूँ, मैं उस समय न आ सकूँगा।

[११२]

लखनऊ

६-११-४३

(रेल यात्रा में, बालामऊ)

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

२२-१०-४३ के पत्र के साथ आपने जो 'ग्रामीण लेखकों की समस्या' शीर्षक लेख भेजा है उसे मैंने पढ़ा। श्री चन्द्रभानु जी ने एक आवश्यक विषय की ओर ध्यान दिलाया है। गाँव के साहित्य सेवियों को ग्रामीण न कहकर प्रारम्भ में ही उन्हें जनपदीय लेखक या जानपद लेखक कहना पसन्द करूँगा। अशोक ने अपने शिलालेख में गाँव की जनता को ग्रामीण न कहकर 'जानपद जन' का प्रतिष्ठित नाम दिया है। इस पर आपको एक लेख भेज चुका हूँ। जनपदों में रहने वाले जो लेखक साहित्य में रुचि रखते हैं उनके विषय में हमें उदारता से सोचना चाहिए। लेखक गाँव में बैठकर लिखे या शहर में, दोनों में बन्धुत्व का नाता है। इस सख्यभाव से कभी-कभी एक लेखक दूसरे की सहायता से बहुत उन्नति कर सकता है। जैसे हम व्यावहारिक जीवन में अपने काम साधने के लिए समान रुचि वाले मित्रों को ढूँढ़ लेते हैं वैसे ही ज्ञान के क्षेत्र में समानशील सखाओं को प्राप्त करना और भी आवश्यक है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस प्रकार के सम्पर्क के लिए हर एक नए लेखक को सचाई के साथ प्रयत्न करना चाहिए। सचाई का बर्ताव बहुत आवश्यक है। यदि लेखक इस विषय में अनधिकार पूर्वक क्षेत्र में प्रवेश करता है तो उसे इस प्रकार के सख्यभाव या सम्पर्क प्राप्त करने में न केवल असफलता ही होगी बल्कि निराश भी होना पड़ेगा। आप यदि स्वयं कुछ मेहनत नहीं करते तो केवल ऊँचे सम्पर्क से भी कुछ न होगा। इसलिए हरएक लेखक को स्वयं साधना करने की जरूरत है, चाहे वह गाँव में हो चाहे शहर में। आप अपने प्रति सच्चे हैं तो अपनी रुचि के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ परिश्रम करिए। श्रमशील लेखक हो कुछ प्राप्त कर सकता है। अपने जनपदीय साहित्य बन्धुओं से मैं यही कहूँगा कि वे अपने प्रति सम्मान का भाव रखकर अपने कार्य में श्रद्धालु होकर खूब परिश्रम करें। एक दिन में किसी को सिद्धि नहीं मिलती, अतएव निरंतर माँजने से ही ज्ञान की मणि चमक सकती है।

जिस मानसिक स्थिति में गाँव का या शहर का भी, कोई लेखक हो उसमें उन्नति करने के लिए किसी ऊँचे मस्तिष्क के साथ टक्कर की आवश्यकता को मैं मानता हूँ। जब दो मस्तिष्क टकराते हैं तो उनसे स्फूर्ति और चिनगारी पैदा होती है। जब दो जातियों में ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण टक्कर लगती है तब संस्कृति की नई धारा वेग से फट पड़ती है। जाति मे नये विचार, नई प्रेरणा ऐसे वेग से दौड़ती है जैसे इन्द्र के वज्र ने पर्वतों के कपाटों को फोड़कर रुके हुए जलों की वहिया छोड़ दी हों। अतएव हरएक उदयशील लेखक को यह इच्छा रखनी चाहिए कि वह अपने लिए अवसरों की तलाश में रहे और उनसे लाभ उठावे।

जनपदीय बन्धुओं के लिए एक उपयोगी सुझाव यह भी है कि वे अपने-अपने जनपद में ही अपने से श्रेष्ठ लेखक या साहित्य-सेवी को ढूँढ़े और आपस में मिलकर विचार करने की प्रथा को प्रचलित करें। हर एक जिले में भी तो सब लेखक एक से नहीं होते। उनमें भी छोटे बड़े की बहुत सी कोटियाँ हैं। जनपदों में रहने से ही कोई लेखक हीन नहीं हो जाता और न इसी कारण उसे शहरी लेखक की शरण के लिए अधीर होना चाहिए। खूब देख-भाल कर अपने क्षेत्र के लेखकों के साथ परिचय बढ़ाइये जो आपको अपने से अच्छे जान पड़ें। उनसे साहित्यिक मित्रता का नाता जोड़िये और उस नाते को प्रेम और उमंग के साथ सोचते रहिए। महीने में एक बार, तीन महीने में एक बार, छः महीनों में एक बार या साल में एक बार परस्पर मिलने के लिये

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मेलन, गोष्ठी, समाज या मेले करने की प्रथा का आरम्भ होना चाहिए। इन मेलों में सादगी हो, दिखावा या आडम्बर न किया जाय। कुछ न कुछ काम की बात हर एक लेखक लेकर आवे और आपस में विचार करके लाभ उठावे। इसी साहित्यिक मिलन या यात्रा को सुविधा या अवसर को, आप अपने क्षेत्र से बाहर जाकर भी पूरा कर सकते हैं।

जनपदीय लेखक को काम करने की निश्चित दिशा तय कर लेनी चाहिए। जानपद साहित्य का काम बहुत बड़ा है। उत्साहवश हम सारे क्षेत्र पर अधिकार कर लेना चाहते हैं और जो काम अपने बस का नहीं है उसमें भी हाथ डाल देते हैं। अपनी शक्ति को तौल कर, मित्रों से सलाह लेकर, काम करने की ठीक दिशा का निर्णय कर लीजिए और धीरे-धीरे उस रास्ते पर चलिए। एक काम को हाथ में लेकर उसमें जब कुछ सफलता आप पा लेते हैं, तो आपको मानों अपने परिश्रम का फल मिल जाता है और उससे आपको प्रसन्नता होती है, स्वयं अपने ऊपर विश्वास जम जाता है। इसी तरह गाँव के लेखक आगे बढ़ सकते हैं।

जैसे-जैसे आप काम करते जाते हैं उसको परीक्षित करा लेना भी आवश्यक है। जिन लेखकों से आपने सम्पर्क प्राप्त किया है उनसे कभी मिलकर यह जान लेना चाहिए कि किए हुए काम में फीसदी कितना सही है, कितनी कमी है और किस तरह उसका सुधार किया जाय। यदि सच्ची नीयत से ऐसा किया जायेगा तो अवश्य ही सच्ची सलाह मिल सकेगी। परन्तु यह आवश्यक है कि केवल मन बहलाव के लिए किसी का या अपना समय आप नष्ट न करें। कैसा भी सहृदय कोई साहित्यसेवी हो उसकी शक्ति और समय तथा साधन परिमित हैं। इसका ध्यान हर एक लेखक को रखना आवश्यक है।

यदि गाँव के लेखक स्वयं परिश्रम करने में मन लगायेंगे, यदि वे आस-पास विद्वानों को ढूँढ़कर उनसे मिलेंगे, यदि वे अपनी भूमि के साथ सम्बन्ध बढ़ाएँगे तो उनको मानसिक भोजन का पचास प्रतिशत तो अवश्य मिलने लगेगा। भूमि के साथ सम्बन्ध, यह एक अर्थगर्भित सूत्र है। भगवान् ने ही पृथिवी में उत्पादन की अनन्त शक्ति भर दी है। हर साल कितने वृक्ष वनस्पति लताओं को इस मही माता से जन्म मिलता है। कितने उन्नत सदस्यों की यह धात्री है। इसकी उर्वरा शक्ति का उस साहित्यिक पर भी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य प्रभाव पड़ेगा जो इसके सम्पर्क से अपने मनोभावों को अनुप्राणित करना चाहेगा ।

आपका
वासुदेवशरण

[११३]

कालसी
१८-११-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

गाँव के लेखकों को अपने चारों ओर की प्रकृति से पृथिवी से, जनता से और उसकी संस्कृति से विषयों को चुनना चाहिए । नये-नये विषयों को सोचने और उनपर सामग्री का संकलन करने की आँख उत्पन्न करनी चाहिए। लेखों का मसाला कैसे और कहाँ से इकट्ठा किया जाय, इस प्रश्न का उत्तर यही है कि जनपद लेखक के लिए अपना जनपदीय क्षेत्र ही बड़ी भारी खान है । उसी में से उसे उन रत्नों को लेना चाहिए जो आज तक आँख से बचे हुए पड़े हैं । मेरठ के एक गाँव में बैठकर वहाँ की गाय और भैंसों के विषय में पचास से अधिक शब्द मैं प्राप्त कर सका । उनमें कुछ ऐसे थे जिनकी परम्परा भाषानुसार भाषाशास्त्र की दृष्टि से निरुक्तकार यास्क के समय तक जाती है ।

अभी जौंसार इलाके की यात्रा में एक लाखामण्डल गाँव के एक अनपढ़ परमा नामक बढ़ई से लकड़ी पर नक्काशी के पचास शब्द इकट्ठे किए जा सके जिनमें काफी मसाला पुराना है । किवाड़ों में लगे हुए पीतल के कुल्ले के लिए चन्दक शब्द और उसमें झूलते हुए कड़े के लिए कंकण शब्द मुझे परमा की कृपा से ही प्राप्त हुए । किसी कोष में ढूँढ़कर भी इन्हें प्राप्त नहीं किया जा सकता । इनकी प्रयोगशाला तो जनपद की जीती जागती परम्परा ही है । यदि आप श्रद्धावान् हैं तो अवश्य ही दिन प्रतिदिन आपकी झोली भरती जायगी ।

यों तो साहित्य का क्षेत्र बहुत विशाल है पर किसी भी भाषा के निखिल वाङ्मय के तीन विभाग किए जा सकते हैं। प्रत्येक लेखक इन्हें ध्यान में रखकर अपने-अपने विषयों का और कार्यक्षेत्र का वर्गीकरण कर सकता है। ये तीन विभाग मौलिक हैं और प्रत्येक जाति की सभ्यता में पाये जाते हैं। संक्षेप में उनका सूत्र यह है— पृथिवी, जन, ज्ञान, अर्थात्—

१. पृथिवी और उसका भौतिक रूप,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२. पृथिवी पर बसने वाला जन समुदाय। मनुष्यों की नस्ल;

३. उस जन का मानसिक चिन्तन अथवा ज्ञान-सृष्टि। साहित्य रूपी विष्णु के इन्हीं तीन चरणों में समस्त वाङ्मय का विस्तार समाया हुआ होता है। हम भी इनमें से कहीं न कहीं पर काम करते होंगे।

पहले पृथिवी का भौतिक रूप हमारे सामने फैला है। मिट्टी, जलवायु, लता, वृक्ष, वनस्पति, पशु, खनिज आदि सैकड़ों विषयों का अध्ययन पृथिवी का अध्ययन है। आपके यहाँ वर्ष भर में कितनी तरह की हवाएँ चलती हैं, किस महीने में कौन सी हवा आती है, मौसम और खेतीवाड़ी पर उसका क्या असर है, महुए के चूने और आम के पकने के लिए कौनसी हवा चाहिए, कौनसी हवा गेहूँ के दूधभरे दानों को पिच्ची कर डालती है, इत्यादि विषयों का मन्थन आप गाँव में ही आँख खोलकर कर सकते हैं। ये उदाहरणमात्र हैं। एक बार इस मंगलद्वार से जब आप जनपद के संसार में प्रवेश करेंगे तो आपके लिए धनपति कुबेर का अमित भण्डार खुला हुआ मिलेगा।

पृथिवी पर बसने वाले जो मनुष्य हैं उनका अध्ययन साहित्य का दूसरा विभाग है, उन्हें हम वैज्ञानिक भाषा में 'जन' कह सकते हैं। जन की संस्कृति, रहन-सहन, वस्त्र-भूषा, नृत्य-गीत, काम करने के औजार, पेशे, उद्योग-धन्धे, एक-एक अंग साहित्यरूपी अन्न का कोठार ही समझना चाहिए। भाषा में पेशेवर लोगों के सूचक कितने शब्द हैं इसी की सूची बड़ी रोचक बन सकती है। मैं इस समय इसका विस्तार नहीं करूँगा।

हमारे जन ने जो मानसी सृष्टि की है, ज्ञान के क्षेत्र में नीति, धर्म, साहित्य और आचार के जगत में जो अपना विकास किया है, वह साहित्य का तीसरा विभाग है। हमारी रुचि हो तो हम उसके किसी अंग का अध्ययन कर सकते हैं।

प्राचीन परिभाषा में कहें तो पृथिवी के भौतिक रूप के अध्ययन को देवऋण, पृथिवी के भौतिक पर बसने वाले जन के अध्ययन को पितृऋण और जन की ज्ञान-साधना के अध्ययन को ऋषि-ऋण कह सकते हैं। इन तीन ऋणों का उद्धार ही साहित्यिक का उद्देश्य होना चाहिए।

आपका

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[११४]

लखनऊ
२१-१२-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

इधर कार्य में बहुत अधिक संलग्न रहने के कारण आपके सुन्दर विशेषांक ('मधुकर' का बुन्देलखण्ड प्रान्त निर्माण-अङ्क) की पहुँच भी न लिख सका। इस महीने में इसी कारण विशेष अवकाश नहीं निकाल सका, जनपद-कार्य पर कुछ लिखता। जनपद कल्याणी योजना पर लिखने की बात मन में है। वह मानसिक भूमि पर बराबर बढ़ रही है। आशा है किसी दिन प्रवृद्ध सत्य-सम्पत्ति के साथ प्रकाशित हो सकेगी। अथर्ववेद का पृथिवी सूक्त (१२।१। १-६३) पृथिवी-पुत्रीय भावना का आदि स्रोत है। उसके अध्ययन से अनमोल सामग्री मिलती है। भारतीय इतिहास और संस्कृति के अध्ययन में सबसे पहले पृथिवी-सूक्त के ६३ मन्त्रों का अध्ययन करा देना चाहिये और सामूहिक रूप से उसे कंठ कराना चाहिये। राष्ट्र-संवर्धन की सब योजनाओं और भावनाओं का वह सूक्त अक्षय स्रोत है। किसी पूर्व युग में सुन्दरी सूर्या के विवाह-महोत्सव में अमर्त्स देवों ने जिस कमल की गन्ध को उत्पन्न किया था, उसे आप आज फिर सूँघना चाहते हैं तो 'पृथिवी-सूक्त' को देखिये।

आपका
वासुदेवशरण

[११५]

लखनऊ
२२-११-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका 'प्रवृत्ति' के समय निवृत्ति सूचक पत्र मिला। क्या आप प्राण को मेंटकर शरीर को खड़ा रखना चाहते हैं? जब विषय आया है तब यह कल्मश कैसा? क्या इस भगवान के वाक्य का मर्म अर्जुन के लिये आपसे अधिक था? मैं क्या कहूँ, लिखूँ? सूत्र रूप में 'नैतत् त्वयि उपयुज्यते' याद आता है। जो धीर है वह अमृत की ओर बढ़ता है। विपक्ष के लेख नश्वर हैं, ऐसा जानकर अपने अमृतकल्प जनपद कल्याणीय अलख को और भी अधिक निष्ठा से जगाते रहना चाहिये।

नकारात्मक शब्द विपरीत भावनाओं को उत्पन्न करते हैं। विकेन्द्रीकरण की पहली प्रतिक्रिया के समय मैंने भी आपको और श्री सत्यार्थी जी ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीं यही लिखा था, आप कृपया एक वर्ष के लिये इस शब्द के प्रयोग को स्थगित रखिये। जनपदों के स्वतन्त्र जीवन से हिन्दी के अखण्ड साम्राज्य को केवल बल मिल सकता है, भय नहीं। हममें से कौन हिन्दी का भक्त नहीं है? जनपद साहित्य की खोज हिन्दी के अहित के लिये नहीं है। यह तो मातृभाषा हिन्दी को चारों ओर से समृद्ध करने का एक प्रयत्न है। सूर्य के समान तपते हुए इस सत्य के साथ कौन खिलवाड़ कर सकता है?

श्री चन्द्रबली जी और श्री माखनलाल जी के विचार भी पढ़े। जनपद साहित्य के विमर्श का आन्दोलन स्वयं हिमवान् के समान ऊँचा है। उसको दूसरों के कन्धों की अपेक्षा नहीं। सम्मेलन इसके महत्त्व को समझने के लिये यदि अभी अधिक समय चाहे तो इसमें खेद की क्या बात है? इससे सत्य असत्य नहीं बन जाता। जो सत्य के उपासक हैं उनका विश्वास जिस दिन चूर हो जायगा उस दिन सत्य की हानि होगी। अन्यथा नहीं। जयपुर में हरिद्वार का प्रस्ताव रहे, चाहे जाय, यह एक छोटी नगण्य घटना है। कार्य का क्षेत्र कब से प्रस्ताव की पेटी में बन्द हुआ है।

आपने 'मधुकर' के द्वारा जो किया है वह न करते तो प्रस्ताव कहाँ का कहाँ होता। कालसी से भेजे पत्रों की पहुँच दीजियेगा।

आपका
वासुदेवशरण

[११६]

लखनऊ
५-१२-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

तपोवनों के लिये जैसा मथा हुआ साहित्यिक मक्खन आप चाहते हैं वैसा मैं जानबूझकर न भेजूंगा। मैं चाहूँगा कि आप वाल्मीकि, व्यास, कालिदास के आश्रमों की कामधेनुओं को दुहकर दुग्ध प्राप्त करें और फिर नवनीत बनावें। तपोवन संस्कृति के यही अधिक अनुकूल है। चम्मच से दूध पिलाना वहाँ मना है। 'स्वयं जुषाय स्वयं यजाय'—आप जुटो, आप आहुति बनो, यही उस क्षेत्र का रसमय विधान है।

आप धन्य हैं जो इतने सन्निकट तपोवन का आनन्द पा सकते हैं। हमारी इस पुरी में उसका अभाव कल्पना से पूरा करना पड़ता है। फिर भी छोटे से छोटे तृण में भारी शक्ति है। हम कितना ही उन्हें अपने से दूर रखें

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे हमारी दीवार और ईंटों के झरोखों से झाँकने ही लगते हैं। जहाँ एक भी हरा तृण जीवित है वहाँ भगवान् की सत्ता प्रत्यक्ष है।

श्री राजकुमार जी को मेरी ओर से भी आपके आश्रम में अभिनन्दन। उनसे कहिये कि सतत अभ्यास करें, ज्ञान का शतधार वर्षण सर्वत्र सुलभ है। उसकी ओर नेत्र खोलकर सजग रहें, जितना पढ़ें उसमें प्राण प्रतिष्ठा करने का प्रयत्न करें। ज्ञान को ब्रह्मोदन कह सकते हैं, यह ब्रह्म का भात है। इसमें वही भात उत्तम है जिसके पकाने से अमृत उत्पन्न हो। भात का विन्ध्याचल भी सामने खड़ा रहा तो किस काम का ? उसे खाकर जितना अमृत पक्व सिद्ध किया जाय वही सब कुछ है। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि भगवान् पतंजलि ने ही महाभाष्य में थाली या पत्तल पर लगे हुए भात के ढेर की विन्ध्य पर्वत से उपमा दी थी—'विन्ध्योवर्ध्रितकम्' का यही अर्थ था। आपने तृप्तिकर भोजन की चर्चा की है। प्राचीन नाटकों के महामना माढव्यों का यही भागधेय था। आशा है विन्ध्योवर्ध्रितकम् आपकी तृप्ति के लिये पर्याप्त होगा। श्री अजितप्रसाद जी दो पीढ़ी से मेरे परिवार से परिचित हैं। मेरे भी अभिन्न हैं। आप आएँगे, कृपा होगी। मैं २४ दिसम्बर से ५ जनवरी तक कई ऐतिहासिक सम्मेलनों के लिए यात्रा में रहूँगा, अलीगढ़ व काशी की तरफ। वाराणसी के प्रसाद से आप जन्म भर उपकृत हुए हैं। वहाँ आकर ओरियन्टल कान्फ्रेन्स देखिये न ?

पत्र समाप्त कर रहा था पर आपके श्वेत द्वीपी भवान्तर की बात याद आ गई। महाभारत के शान्तिपर्व (अध्याय ३३८) में हमारे नारद जी श्वेत द्वीप की यात्रा करने गये थे। वहाँ श्वेतांग मानवों की साक्षी में उन्होंने नारायण का महापुरुष स्तोत्र पढ़ा था, उसे देखियेगा। क्या आपने उसे उस समय सुना था ? भवान्तर की स्मृति आपको आज भी जान पड़ती है। यह अच्छा है। आप खनियों में काम करते थे। इस जन्म में भी निधियों की खोज में आप रहे हैं। आपके एक मित्र की सम्मति है कि मिली हुई मणियों का समय पर उपयोग भी करते जाइये, कहीं आपके संग्रह की खान में ही वे न रह जायें।

महावीर पर लिखने का विचार किया है, अच्छा प्रस्ताव है। ब्राह्मण कहते हैं—सशक्त, बलिष्ठ प्राण महावीर है 'प्राणो वै महावीरः' यह जिसमें रहता है वह पवित्र शरीर धन्य है, वह अर्हणीय, अर्चनीय, अर्हत् है।

भद्रबाहु के कल्पसूत्र का जैकोबी का संस्करण देखिये। Indian antiquary Vol. IX में Mahavir and his predicessors लेख देखिये।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशेष श्री कामताप्रसाद जैन पोस्ट-अलीगंज एटा से पत्र व्यवहार द्वारा मालूम करें। वे इस प्रकार के कार्य में सहायता देंगे।

आपका
वासुदेवशरण

उत्तम आदर्शों की प्राप्ति की मनुष्य में जो उत्कट भावना है, वही उसके जीवन का चिह्न है। कण्व के आश्रम में प्रतिपालित दो किशोरियों के इस मार्मिक वाक्य पर ध्यान कीजियेगा—

'अनभ्यन्तरे खलु आवां मदन गतस्य वृत्तान्तस्य।'

शकुन्तला के साथ-साथ बढ़ने वाली ऋषि कन्याएँ, अनुसूया और प्रियम्वदा मदनवृत्त से अस्पृष्ट रहीं। शकुन्तला को ही उसने अपना लक्ष्य बनाया। क्यों? वस्तुतः तप और संयम भीतर से पनपने वाली सामग्री है।

वासुदेवशरण

[११७]

लखनऊ
२१-१२-४३

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

इधर कार्य में बहुत अधिक संलग्न रहने के कारण आपके सुन्दर विशेषांक की पहुँच भी नहीं लिख सका। 'मधुकर' के इस अङ्क में आपने काफी परिश्रम किया है और बहुत अच्छी सामग्री एकत्र की है। मुझे उसे देखकर (यद्यपि अभी सब नहीं पढ़ सका हूँ) प्रसन्नता हुई।

मैं इधर नागरी प्रचारिणी पत्रिका के 'विक्रमांक' के लिये सामग्री एकत्र करने में बहुत व्यस्त रहा। कितने ही लेख लिखे। विक्रम का महाकोष (Encyclopedea Vikram) लेख हिन्दू संघ कानपुर को विक्रमजयंती को भेजा। विक्रम का सम्मान आज 'जयाजी प्रताप' के लिये भेजूँगा।

'शिवका स्वरूप' (मेघदूत में कालिदासीय दर्शन) लेख काशी से विक्रम जयन्ती पर सम्पादित होने वाली कालिदास ग्रन्थावली के लिये तैयार है और 'मेघदूत एक अध्ययन—कामरूप पुरुष', यह लेख ग्वालियर के श्री हरिहर-निवास द्विवेदी को ग्वालियर से प्रस्तावित विक्रम ग्रन्थ के लिये भेजने को रक्खा है। 'श्रीविशाला विशाल' उज्जैन के 'विक्रम' पत्र को आज ही भेज रहा हूँ। विक्रम संवत्सर का अभिनन्दन, चरैवेति गान, गुप्तकला में मध्यदेश का चित्रण, भारत वन्दना, पृथिवी सूक्त एक अध्ययन (जो अभी इस समय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखा जा रहा है) आप ना० प्र० प० काशी के विक्रमांक में पढ़ेंगे। इसके अतिरिक्त भारतीय कला का अनुशीलन, वैदिक दर्शन, लभ्यसकस की रजत-पात्री पर भारतमाता का चित्रण, दाराशिकोह का ग्रन्थ समुद्र संगम, भारत के नामकरण का निरुक्त आदि लेख इसी मास में लिखे हैं। महमूद गजनी के टंके पर लिखे संस्कृत कलमे पर जिसका ठीक अर्थ आज तक मुद्राशास्त्रियों की समझ में नहीं बैठा था, लगभग १५ दिन अध्ययन करके एक लेख अंग्रेजी में लिखा है। इसी मास के अन्त में काशी में ओरियंटल कान्फ्रेंस है जिसके लिये मध्यकालीन हिन्दू स्थापत्य (Indian temple Architecture) लेख भेजा है। एक दूसरा लेख लखनऊ के एक शिलापद पर महावीर के जन्म महोत्सव पर अंग्रेजी में इसी कान्फ्रेंस के लिये और आरा की जैन एन्टीक्वेरी के लिये भेजा है। पाणिनि के भूगोल पर एक लम्बा लेख यू० पी० हिस्टारिकल जर्नल के अङ्क में छपकर आने वाला है। आपको भूगोल में कुछ अभिरुचि हो तो उसकी एक छाप आपको भी भेज दूँगा। इस महीने में इसी कारण विशेष अवकाश नहीं निकाल सका कि जनपद कार्य पर कुछ लिखता। जनपद कल्याणी योजना पर लिखने की बात मन में है। वह मानसिक भूमि पर बराबर बढ़ रही है। आशा है किसी दिन प्रबुद्ध सस्य सम्पत्ति के साथ प्रकाशित हो सकेगी। अथर्ववेद का पृथिवी सूक्त (१२।११-६३) पृथिवी पुत्रीय भावना का आदि स्रोत है। उसके अध्ययन से अनमोल सामग्री मिली है। भारतीय इतिहास और संस्कृति के अध्ययन में सबसे पहले 'पृथिवी सूक्त' के ६३ मन्त्रों का अध्ययन करा देना चाहिये और सामूहिक रीति से उसे कंठ कराना चाहिए। राष्ट्र-संवर्धन की सब योजनाओं और भावनाओं का वह सूक्त अक्षय स्रोत है। किसी पूर्व युग में सुन्दरी सूर्या के विवाह महोत्सव में अमर्त्य देवों ने जिस कमल की गन्ध को उत्पन्न किया था, उसे आप आज फिर सूँघना चाहते हैं तो 'पृथिवी सूक्त' को देखिये।

आपका :
वासुदेवशरण

[११८]

लखनऊ
२८-१२-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका २१-१२-४३ का पत्र मिला। कृष्णचन्द बाबू के नाम लिखा हुआ पत्र भी पढ़ा। रसगुल्लों का वर्णन उसमें बहुत रुचा। आपने वस्तुतः

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राचीन माढव्यों की संस्कृति को पूरी तरह समझा है और साहित्य में कैसे उसकी अन्नमयी सुरुचि का उपयोग किया जा सकता है, इसे भी आप जानते हैं।

पत्रकार कला—यह तो मेरा ही स्वप्न है। ईश्वर ने मुझे पत्रकार ही बनाकर भेजा था। द्विवेदी जी की 'सरस्वती' जब मैं देखता तो कहता कि इस तरह की कितनी पत्रिकाएँ सम्पादित कर सकता हूँ। मेरा उत्साह किसी समय असीम था। जीवन ने दूसरा ही क्रम लिया और पत्रकार कला के अपने पुराने स्वप्न की पूर्ति के लिये सम्भवतः मुझे एक जन्म और ग्रहण करना होगा। हो सकता है यह जन्म उसी की एक तैयारी हो। बहुविध अभिराम पुरुषों की रमणीयता को पहचानने की आँख और उनके मधुमय अंश को संगृहीत करने की शक्ति, ये ही तो पत्रकार की सफलता की कुंजी हैं। पत्रकार गीता के 'यद्यद्विभूतिमत्सत्वं' श्लोक को जीवन में प्रत्यक्ष करता है। जहाँ-जहाँ तेज उसे दिखाई पड़ता है वहीं-वहीं से वह उसका संचय करता है। जहाँ विभूति—श्री ऊर्ज का निवास है वहीं पत्रकार की पहुँच है। विभूति क्षात्र वैभव (राजनीति) श्री ब्राह्मधर्म या संस्कृति है और ऊर्ज वैश्यधर्म या संस्कृति है, इन्हीं तीनों की उपासना पत्रकार का ध्येय होना चाहिये। ये ही तीन पदार्थ हमारी जनता या राष्ट्र में बसने वाला 'जन' चाहता है—

विभूति—श्री—ऊर्जः प्राण—मन—शरीर

इनको पुनः तेजस्वी बनाना पत्रकार का कर्तव्य है। राष्ट्र या समाज में इनको प्रदीप्त करने को जहाँ से सामग्री मिल सकती है उसी दीप्तिपट को उठाकर प्रकाश का स्वागत करना पत्रकार को इष्ट होना चाहिये। इसी से राष्ट्र का प्राण, मन-शरीर पुष्ट बनाया जा सकता है।

हिन्दी पत्रकार कला तो भारत के भावी पत्रकारों की नींव या प्रतिष्ठा हो सकती है, अगर ढंग से इस कला का संचालन किया जाय। भारत भूमि को देखने, जानने और समझने की जो शुद्ध भारतीय पद्धति है, इस समय उसकी आवश्यकता है। राष्ट्र-निर्माण में उसकी पदे-पदे आवश्यकता है। जनता भी उसको जानना चाहती है। यदि हिन्दी पत्रकार उससे परिचित है तो अंग्रेजी पत्रकारों को भी वह सिखा सकता है और उसका ज्ञान उन पत्रकारों की ईर्ष्या का विषय बन सकता है। प्राचीन साहित्य में से कितना राष्ट्र के नवप्राण में पुनः ढाला जा सकता है इसकी कुंजी हिन्दी पत्रकार के हाथ में ही है। हिन्दू-संस्कृति से भारत के भावी निर्माण में कितनी अधिक सहायता मिल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती है इसको पहचानकर लेखनी उठाने वाले पत्रकार जिस उत्साह से कार्य करेंगे, वह बहुत ही श्लाघनीय होगा। तब वे अपने आसन से मिशनरी बनकर कार्य करने वाले होंगे। राजनीति, भाषा-निर्माण, पारिभाषिक शब्दावली, साहित्य,संस्कृति, राष्ट्रीय रंगमंच, कला, संगीत अनेक विषयों की भारतीय पद्धति का ज्ञान भारतीय पत्रकार के लिये आवश्यक है और हिन्दी का पत्रकार उसका प्रतिनिधि समझा जायगा। मनु ने गंगा यमुना से सींचे जाने वाले मध्यदेश के लिये माना है कि यह भूभाग मातृभूमि का हृदय है और यहीं से पृथ्वी में चरित्र की शिक्षा (Standards & ideals of life) फैलती है। यही ऊँचा लक्ष्य हिन्दी पत्रकार का होगा। वह भारतीय पत्रकार कला का मानदण्ड होगा। उससे ही अन्य पत्रकार अपना जीवन-रस ग्रहण करेंगे। यह आदर्श मेरे मन में हिन्दी भाषा की पत्रकार-कला के लिये है। मनु का 'स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवा:' वाक्य हिन्दी पत्रकार के लिये अक्षरशः सत्य है, अर्थात् भारतीय भाषाओं के अन्य पत्रकार हिन्दी के अग्रजन्मा अग्रेतर (यह शब्द अथर्ववेद के पृथ्वी-सूक्त का है) सम्पादकों से अपने लिये शैली, आदर्श चरित्र (Code of conduct) की शिक्षा ग्रहण करें। इसके लिये सम्पादकों को साधना और तप की आवश्यकता है। राष्ट्र का जन्म तप से ही होता है। कहा है—

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदः तपो दीक्षामुपनि षेदुरग्रे।
ततो राष्ट्रं बल ओजश्च जात तदस्मै देवा उपसंनमन्त॥

ऋषियों ने कल्याण की कामना से पहले तप और दीक्षा की उपासना की। तब राष्ट्र और बल का जन्म हुआ। तब देवों ने उस राष्ट्र को प्रणाम किया। यह तप किस प्रकार किया जा सकता है? यह तप ज्ञानमय होगा।

ज्ञानमय तप ही हिन्दी-पत्रकार या सम्पादक के लिये है। अध्ययन-निरन्तर अध्ययन—अपनी बुद्धिके उत्कर्ष से प्राचीन संस्कृति का अनुशीलन और फिर अर्वाचीन जगत् के लिये उसका प्रकाशन और प्रकटीकरण—यही ज्ञानमय तप हिन्दी पत्रकार के लिये है। राष्ट्र क्या है? धर्म क्या है? राष्ट्र और धर्म का क्या सम्बन्ध है? व्यास के राष्ट्रीय धर्म एवं मनु के और कौटिल्य के धर्म का ऐहलौकिक अभ्युदय से क्या सम्बन्ध है? राष्ट्र में बसने वाले जन का स्वरूप क्या है? मातृभूमि का स्वरूप, उसके भूगोल का परिचय, उसके साथ जन की घनिष्ठ एकता 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' का अर्थ—इस प्रकार के अनेक विषयों पर हिन्दी पत्रकार का ज्ञान होना चाहिये। यह पृथ्वी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूत और भविष्य दोनों की अधिष्ठात्री है। अतएव जो कुछ भूतकाल का वरदान है वह भविष्य के काम का कहाँ तक हो सकता है, इस दृष्टि से हमें सतत विचार करने की आवश्यकता है। भूतकाल की शक्तियों को भविष्य में विकसित करके राष्ट्र निर्माण के लिये उन्हें कितना शक्तिशाली बनाया जा सकता है इसका अनुभव या विचार हिन्दी सम्पादकों को होना चाहिये। मेरी दृष्टि में व्यास, वाल्मीकि, कालिदास आदि राष्ट्र के उत्तमोत्तम मस्तिष्कों का सुन्दर ज्ञान हमारे पत्रकारों को होना चाहिये। जितना सशक्त चिंतन देश में पहले हुआ है उससे परिचित हुए बिना हमारी लेखनी में तेज नहीं आ सकता। हिन्दी का क्षेत्र विशाल हो रहा है, हिन्दी को अपने ही देश में अन्य भाषाओं और प्रान्तों के साथ अपना सम्बन्ध विकसित करना है और विदेशों के साथ भी अन्तरंग परिचय प्राप्त करना है। मैं इस दृष्टिकोण को प्राचीन अथर्ववेदीय सांस्कृतिक परिभाषा में चातुर्दिश दृष्टिकोण कहूँगा। नालन्दा महाविहार के आर्य भिक्षु इस चतुर्दिश दृष्टिकोण की उपासना करते थे। सुवर्णद्वीप (सुमात्रा) और यवद्वीप तक उनकी चक्षुष्मत्ता का विस्तार था आज हिन्दी के चक्षुष्मान् सम्पादकों को पुनः चातुर्दिश दृष्टिकोण को अपनाने की आवश्यकता है तभी हिन्दी अपने ऊँचे आसन पर प्रतिष्ठित होकर रह सकेगी— **वर्ष्मोस्मि समानाना-मुद्यतामिव सूर्यः**—अर्थात् 'मैं बराबरी वालों में इस प्रकार बढ़कर हूँ जैसे उगने वालों में सूर्य'।

अथवा—

"अहमस्मि सहमान उत्तरो नाम भूम्याम्"

(मेरा नाम बल है। मैं भूमि पर सबसे उत्तर हूँ।) के लिए इस आदर्श को हिन्दी-पत्रकारों को उद्योग करना आवश्यक है। हिन्दी पत्रकार-शिक्षा-प्रतिष्ठान की स्थापना एक अच्छा कार्य है। उसके द्वारा बहुत कुछ प्रगति सही दिशा में हो सकती है, उसके लिये एक क्रियात्मक योजना आप, श्रीमूल-चन्द जी, पराड़कर जी सदृश अनुभवी व्यक्ति बनायें और उस पर विचारशील अन्य विद्वानों की सम्मति प्राप्त करें, तो बहुत ही नई बातें सामने आवेंगी। श्री कृष्णचन्द्र जी का प्रस्ताव हिन्दी-पत्रकार-शिक्षा के लिये किसी संस्था की स्थापना के सम्बन्ध में बहुत ही बुद्धिमत्ता से भरा है। मेरी ओर से उसका पूरा समर्थन समझिये। कुछ काल तक अंग्रेजी पत्रकारों से हमें अपना मार्ग सीखना भी पड़ेगा। पर वह शिक्षा प्राणवन्त व्यक्तियों के अपने विकास के लिये रसग्रहण करने के समान होगी। उससे हमारी चेतना और कर्मण्यता की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वृद्धि ही होगी। अतएव मुझे उसमें कोई हानि दिखाई नहीं पड़ती। हाँ, उस रसपोषण में वास्तविक मूल हमारी अपनी ही आत्मा है जिसे हम एक क्षण के लिये भी नहीं भूल सकते।

आपका
वासुदेवशरण

[११६]

लखनऊ
२४-१०-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

जैसा पहले ही सूचित कर चुका था इधर पत्रिका के 'विक्रमांक' में पर्याप्त संलग्न रहा। अतएव आपके कई पत्र आने पर भी उत्तर न लिख पाया। मैं 'विक्रमांक' से गंगा नहाकर आज सायं बरेली जिले में प्राचीन अहिच्छत्रा की खुदाई पर जनपदीय वातावरण में एक मास बिताने के लिए जा रहा हूँ। पटमंडपों के वातातयिक जीवन में भी कैसा विशाल सुख मिलेगा? कालिदास ने डेरों के लिए 'उपकार्या' और 'पटमंडप' (रघु० ५।१३) शब्दों का प्रयोग किया है। बाण ने हर्ष की सेना के प्रयाण का वर्णन करते हुए तो डेरों का बड़ा विशद वर्णन किया है—किस प्रकार तम्बू उखाड़ते हुए उनके रस्से और खूँटे चमड़े के बोरों में भरकर ले जाये जाते थे। इसी सम्बन्ध में 'दीप्तिपट' जैसा सुन्दर शब्द भी मिला। अभी इसका प्रयोग विक्रमांक के लेख में किया है। डेरों में हवा और प्रकाश के लिये जो चिकनुमा छोटे पर्दे लगे रहते हैं उन्हें दीप्तिपट कहा है।

आइये, हम लोग भी जीवन के पटमंडपों में प्रकाश और वायु का स्वच्छन्द आवाहन करने के लिये नये-नये दीप्तिपट उठावें। ब्रजसाहित्य मंडल में प्राण-प्रतिष्ठा वहीं के कार्यकर्त्ता कर सकते हैं। बाह्य प्रेरणा उर्वरा भूमि में ही सफल हो सकती है।

सेठ कन्हैयालाल जी, नागर जी, डा० विश्वपाल जी, राधेश्याम जी, बा० वृन्दावनदास जी, कृष्णानन्द आचार्य, शर्मनलाल आदि अनेक उत्साही कार्यकर्त्ता वहाँ मौजूद हैं जो सुमति और सहयोग से क्या नहीं कर सकते? जवाहरलाल जी चतुर्वेदी का नाम इस सूची में नहीं है क्योंकि दो दल होने के—अथवा मृदुल शब्दों में कुछ मतभेद के—कारण वे आजकल पृथक् हैं। मैं यद्यपि प्रधान हूँ पर मेरा मन कहता है कि सारा कार्य स्थानीय कार्यकर्त्ताओं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के करने से ही चलेगा। बाहर से सामयिक प्रेरणा और उत्साह ही मिल सकता है। जवाहरलाल जी को रात पत्र लिखा है। आजकल जयपुर में सूरसागर की प्राचीन प्रतियों के लिये दौरा कर रहे हैं और श्री मदनमोहन नागर को अभी लिखने जा रहा हूँ। आपका उधर जाना हो तो कुछ मन्त्र फूँक आइयेगा। 'मधुकर' के द्वारा भी कुछ प्रेरणा दीजिएगा।

मैं यह जानकर हर्षित हुआ कि हमारी महानदियों को अपनी जीवन-गाथा के लिये वैशाम्पायनों की प्राप्ति हो रही है। हिन्दुस्तानी एकेडेमी के धीरेन्द्र जी का पत्र अभी मिला कि गंगा की कहानी के लिये राय कृष्णदास जी से अनुरोध किया गया है। अच्छा हो रायसाहब अपनी टकसाली भाषा में इस कथा को लिखें। मैंने गंगास्नान के द्वारा जो मानसिक बल प्राप्त किया है उससे उत्साहित होकर गंगा की कहानी के लिये स्वतन्त्र रूप से २० अध्यायों में एक ग्रन्थ लिखने का संकल्प किया है। ईश्वर इस कार्य की पूर्ति का बल दें।

इतना लिखने के बाद आपके बेतवा के उद्गम लेख में देख रहा हूँ कि श्रीराम शर्मा जी भी गंगा-कथा लिखने के लिये प्रतिज्ञा कर चुके हैं। मेरे लिखने की बात आप अपने तक ही पचाये रखियेगा। श्रीराम जी जिस शैली में लिखते हैं वह जानदार होती है, वे अवश्य लिखें। उन्हें बार-बार प्रेरित करते रहिए। आपकी वेत्रवती अञ्जलि में जो पुष्प-सुगन्धि है उससे चित्त प्रसन्न हुआ। इस देश में जो वारि-धाराएँ प्रमादरहित अहोरात्रि बहती हैं, जिन्होंने कोटि-कोटि वर्षों में पर्वतखण्डों को पीसकर भूमि का निर्माण करके आर्यावर्त और मध्यप्रदेश जैसे प्रदेश हमें प्रदान किये हैं उनके लिए हमारा बारम्बार प्रणाम है। उनका श्रम, उनका वीर्य, धन्य है! उदयगिरि की गुफा में गंगा-यमुना और प्रयागराज तथा सिन्धु के चित्रण द्वारा जो मध्यप्रदेश की कल्पना गुप्तयुग में हुई थी उस पर एक लेख 'विक्रमांक' में प्रकाशित किया है। एक प्रूफमय चित्र आपको भी भेज रहा हूँ। आपकी श्रद्धा हुई तो बढ़िया रिप्रिंट यथासमय पहुँचेगा।

सत्येन्द्र जी की ग्राम-योजना पढ़ी। ईश्वर को धन्यवाद है कि साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्य के सम्बन्ध में उनका कोई मतभेद नहीं है। जितना उन्हें मैं जानता हूँ उसके अनुसार हो भी नहीं सकता। जनपद शब्द को लेकर कुछ खींचतान इधर हिंदी में हुई है। मुझे इस शब्द से बिल्कुल भय नहीं लगता। प्राचीन ग्रन्थों में जो अनेक जनपदों के नाम हैं, वे सब देखे जाँय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो कुछ जनपद जिलों के बराबर होंगे, कुछ आजकल की कमिश्नरी जैसे। महाजनपद, कुछ-कुछ प्रान्तों का रूप भी धारण किए हुए हैं। राजनीतिक पहलू और पार्थक्य के भाव की ओर से हमें कुछ नहीं कहना। हमें तो जनपदों में बसने वाली जनता की भाषा और संस्कृति का अध्ययन करके हिन्दी भाषा के भण्डार को भरना है और उस जनता को आत्मस्मृति करानी है। जनता निस्सन्देह गाँवों में ही बसती है, अतएव जनपदों का अध्ययन ग्रामों का ही अध्ययन है। पर जनपदों का विभाजन जिलों के बटवारे की तरह आज भी मौजूद है। वह अपनी स्वतन्त्र सत्ता प्राचीन काल से रखता आया है। उससे भयभीत न होना, उसे स्वीकार करना और फिर समग्रता या एकता के भाव की प्रधानता रखना ही हमारी विशेषता होनी चाहिए। क्या प्रान्त-विभाजन से देश की समग्र एकता किसी प्रकार से भी निर्बल कही जा सकती है? ऐक्य का भाव तो मातृभूमि के प्रेम में है। जो भूमि को माता कहें वे सब उसके पुत्र हैं। मेरी दृष्टि में जनपदों के नामकरण और सीमाओं का निश्चय इतना महत्त्व पूर्ण नहीं जितना कुछ मित्र समझते हैं। मैंने केदारमानस कार्य की एकता के लिये लिखा था। सत्यार्थी जी ने केदार और मानस कर दिया तो इसमें कोई भी मौलिक आपत्ति नहीं आ जाती।

आपका

वासुदेवशरण

[१२०]

लखनऊ

१०-३-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आज सबेरे बन्धु-बान्धव, हित-मित्रों के साथ खूब फाग खेला। रंग और अबीर के प्रवाह में मैंने भी उन्मुक्त होकर अपने आपको बह जाने दिया। इस समय प्रकृति की शोभा वर्णनातीत है। अभी डेढ़ मास प्राचीन अहिच्छत्रा के उत्संग में रहकर लौटा हूँ। पटमंडपों से बना हुआ जो हमारा छोटा सा आवास था, उसके चारों ओर मधुलक्ष्मी ने अपना सौन्दर्य बखेर दिया था। आम्रमंजरी, वटकिसलय, सहजन के सहस्रात्मक पुष्प गुच्छक, श्री वृक्षों की फल सम्पत्ति, शाल्मली के लाल फूलों के मधुकोष, कर्णिकार के पुष्पों की आभा—इन सबसे परिचय पाकर अन्तरात्मा गद्गद् हुई। मैंने भगवान् को धन्यवाद दिया कि हमारे वनों पर, अभी तक वसन्त की अधिष्ठात्री देवी पद्मा श्री का पहले जैसा कृपाहस्त विद्यमान है। हम सो गये, पर वनदेवी जागती रही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे जीवन में सौन्दर्य के प्रति जागरूकता का भाव सुप्त हो गया, पर वनश्री रोम-रोम में उस पुष्कल को धारण किये रही, जिससे किसी दिन उसके उदार दर्शन को पाकर फिर से हम आत्मचैतन्य को प्राप्त कर सकें। वनलक्ष्मी की रमणीयता को जब हम पहचानने लग जायँगे तभी मानों हमारे नेत्रों में लोक के निरीक्षण की पैनी दृष्टि फिर से उत्पन्न होगी। वासे के सुन्दर श्वेत पुष्प के पात्र में जो एक मधु-बिन्दु संचित हैं, उसका सन्देश क्या मधु-मक्षिका के अतिरिक्त मानव के लिये नहीं है? सेमल की ओर से प्रसन्न पक्षियों को जो मधुपान का निमन्त्रण मिल रहा है उसमें अपना भागधेय जिस दिन हम पहचानने लगेंगे उसी दिन हम अपनी भूमि के प्रति नये सम्बन्ध से आकर्षित होंगे। पलाश के किंशुक पुष्पों में, स्वर्णक्षीरी के पीताभ प्रसूनों में, गेहूँ के पौधों की धरियों में बैठने वाले मक्खन-फूलों में कितना काव्य है—इसकी पहिचान करने के लिये हमें स्कूल और कालिजों को एक सप्ताह के लिये बन्द करके दलबल समेत वन-प्रकृति का सान्निध्य प्राप्त करना चाहिये। वसन्त के आगमन से सारा पक्षी-जगत् प्रसन्न है। जंगल उनके सुरीले कंठगान से रमणीय हो उठा है। इस उल्लास को लिये हुए वसन्त का दक्षिण वायु मधुश्री का सन्देश साथ लेकर वह रहा है। यह सन्देश जन चैतन्य का सन्देश है, नवजागरण का मन्त्र है, प्रकृति के साथ अभिनव परिचय का निमन्त्रण है। भूमि के साथ अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त करने का नूतन आमन्त्रण है। इसमें सन्देह नहीं कि शीघ्र ही हम जब उदीयमान राष्ट्र की ओर से प्रकृति के चरणों में अपना अर्घ्य चढ़ाएँगे, उसके द्वारा हमारा साहित्य, हमारा जीवन, हमारा चिन्तन, विदेशी प्रभावों से पराङ्मुख होकर और अपने केन्द्र में प्रतिष्ठित होकर फूलने फलने लगेगा। आज सब ओर इसके लक्षण स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं।

गाँव और शहरों के बीच में जो बनावटी भेद हमने डाल दिया है, उसे दूर हटाना होगा। ग्रामों के जनपद जन को सम्मान के लिये नये पद पर बैठाना होगा। उसके द्वारा जितना हम फिर सीख सकते हैं उसका स्वागत करना होगा और सीखने की यह सामग्री कितनी अधिक है, यह तत्त्व प्रतिदिन स्पष्ट होता जा रहा है। कम से कम गुप्तकाल तक की परम्पराओं को हम अपने गाँव से प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिये पैनी आँख वाले साहित्यिक कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता है। जिस क्षेत्र में देखें वहीं भरपूर सामग्री मिलती है। प्राचीन अहिच्छत्रा में रहते हुए एक पास के गाँव में शिवरात्रि का बड़ा मेला देखने गये। वहाँ बर्तन-भांडों का अच्छा बाजार था। काली रेखा-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परेखाओं से सजे हुए बर्तनों के नाम, उनकी बनावट-सजावट के लिये पारिभाषिक शब्दों का जो संग्रह हम करने लगे तो कितने ही प्राचीन शब्द मिले। रामनगर के चिम्मन कुम्हार ने बताया तो मालूम हुआ कि painted pottery के लिये अभी तक 'लिखना' शब्द है। 'लिखने' में कुम्हारी, कुम्हार से अधिक चतुर होती है और वही रंग और काविस बनाकर बालों की पूँछरी या उँगली के पोरों से रेखा काटने पर या धार खींचने का काम करती है अथवा भाँडों को लिखती है। इस प्रकार के कितने ही मधुर अनुभवों को प्राप्त करके अहिच्छत्रा की खुदाई से २९ फरवरी को लौटा तो इधर मित्रों की डाक में आपके कई पत्र मिले। बहुतों को उत्तर लिखने बैठा हूँ।

पत्रव्यवहार परिषद् की पद्धति अच्छी है। चलाइये। मैं उसमें रुचि रक्खूँगा। परन्तु अनेक बन्धनों के कारण सम्भव है उसमें क्रियात्मक योग न दे सकूँ। इधर कुछ साहित्यिक कार्य का सिलसिला शुरू कर रहा हूँ। अभी तक फुटकर ही लिखता रहा। सम्भव है आप सदृश मित्रों के सौमनस्य भाव को प्राप्त कर कुछ लिख सकूँ। पत्र व्यवहार परिषद् वाला लेख 'हमारा साहित्यिक संगठन' मेरे पास पड़ा रह गया, अब उसे यथानिर्देश सत्येन्द्र जी के पास भेजा जा रहा है।

पत्रकार विद्यालय वाला लेख आज की डाक से मिला। उसी समय रुचिपूर्वक पढ़ा। स्वाध्याय मडल वाला सुझाव बहुत पसन्द आया। 'श्रीयुत वासुदेवशरण अग्रवाल तो यहाँ तक कहते हैं कि हिन्दी पत्रकारों को ही समस्त भारत के लिये आदर्शों का निर्माण करना है।' आपके इस वाक्य ने मुझे एक नया चैतन्य प्रदान किया। वस्तुतः अपनी आस्था मुझे ठीक जान पड़ती है। हिन्दी में तेजस्वी सम्पादक होंगे तो अन्य भाषा-भाषी उनसे मनु के लेखानुसार 'एवं, स्वयं चरित्र' की शिक्षा ले सकेंगे! लोक-संस्कृति को किस आँख से देखना है? इस प्रश्न के समाधान का भार हिन्दी सम्पादक पर ही है। लोक-चक्षु उत्पन्न करना, उस नेत्र में देखने की शक्ति लाना, उसके दृष्टिपथ में नवीन विषयों का अवतार कराना—यह सम्पादक की प्रतिभा पर निर्भर है। मैंने पहले जो इस विषय में पत्र लिखा था उसमें कोई बात काम की हो तो उस ('क्ष त्र ज्ञ') नाम से प्रकाशित करने की स्वतन्त्रता आपको है।

इधर की यात्रा का प्रस्ताव हो तो सूचित कीजियेगा। पूर्व सूचना मिलने से दौरे पर बाहर रहने की आशंका दूर हो सकती है। पहलवानी चित्र की बात खूब कही, इस चित्र में कुछ स्टालिन जैसा रिटच है। हमें तो आपका

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इधर हाल का टटका चित्र चाहिए। चित्र छपने पर भी पूर्व निमन्त्रण को अक्षुण्ण समझिएगा।

नागरी प्रचारिणी पत्रिका का 'विक्रमांक' मिला या नहीं ? 'मधुकर' में जनपदी कहानियाँ खूब अच्छी निकल रही हैं। नवम्बर में चिरगाँव गया था। वहाँ गणेशशंकर विद्यार्थी पुस्तकालय के पुस्तकाध्यक्ष श्री हरगोविन्द जी ने बुन्देलखण्डी कहावतों का अच्छा संग्रह बटोरा है। उसे क्रमश: 'मधुकर' में छापिए। गुप्त जी को उसका पता है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१२१]

लखनऊ
३१-३-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपके पत्र आते हैं और कार्यों के कारण कुछ दिन पड़े रह जाते हैं। इससे आप क्षोभ न मानिएगा। साहित्यिक जब अवधान के साथ कुछ काम करना चाहता है बाहर की बहुत सी बातों की सुधि नहीं रहती। ऐसी दशा में आपके पत्रों के उत्तर में कभी विलम्ब हो अथवा वे बिना उत्तर के ही रह जायें तो विलग मानने का कारण नहीं है।

'हमारा साहित्यिक संगठन' लेख पढ़ा। साहित्यिक परिषद् की विचारधारा बहुत अच्छी है। एक स्थान पर भी इसे व्यवहार्य बनाकर देखना चाहिये। चीज बिल्कुल स्वाभाविक होनी चाहिये। जहाँ बन्धन हुआ नहीं कि साहित्यिक उससे जान बचाने की सोचने लगता है। साहित्यिक का अन्तर्जगत् बहुत स्वतन्त्रता-प्रेमी होता है। उस पर जब भी वरुण के पाश डालने का प्रयत्न किया जाता है वह कुण्ठित होने लगता है। बहुजन संसदि भीड़ भड़क्के से जल्दी ही मन ऊब जाता है। उससे अन्तर्मुख होकर ही स्थायी वस्तु तैयार की जा सकती है। बस इस तत्त्व को ध्यान में रखते हुए किसी साहित्यसेवी को गुदगुदाते रहना चाहिए। वैसे तो गोस्वामी जी जो लिख गये हैं वह ध्रुवसत्य है। 'सात्विक श्रद्धा धेनु सुहाई, भाववत्स जो पाय पन्हाई।' भाव रूपी वत्स-बल को पाकर साहित्यसेवी रूपी धेनु पन्हाने लग जाती है। यही आध्यात्मिक जगत् का नियम है। इसकी सत्यता का अनुभव हममें से कितनों ने ही किया होगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी ही क्यों, हमारे समस्त राष्ट्र के लिये एक साहित्य परिषद् की आवश्यकता है। साहित्य-सेवी के पद को ऊँचा उठाने के लिये ऐसी देश-व्यापिनी परिषद् की आवश्यकता है उसमें ५० या अधिक से अधिक १०० ही सदस्य हों। पर प्रत्येक साहित्यिक के मन में उसके होते हुए यह आदर्श तो बना रहेगा कि उसको भी ऊंचे उठकर एक दिन उसमें स्थान मिल सके, अर्थात् गुणिगण गणनारम्भ में उसके नाम के आगे भी कभी सारे राष्ट्र की कठिनी का सुसम्भ्रम से निशान लग सके। जिस परिषद् में गुप्तजी, प्रेमचन्द जी और प्रसाद जी होते उसके साथ कौन सम्बन्धित न होना चाहेगा ? श्रीयुत् मुंशी कविवर नान्दलाल, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी जैसे प्रख्यात साहित्यसेवी वर्ष में एक बार इस परिषद् के नाते ही कहीं मिल सकते तो कैसा अच्छा होता। देश में इस समय सामग्री पर्याप्त है, नियोक्तान्तकों की आवश्यकता है। मुझे यीट्स के सात्त्विक भाव बहुत रुचे। उन्हें सुलभ करने के लिये आपको धन्यवाद है।

पत्रकार विद्यालय वाला लेख भी मिला। 'विश्वमित्र' के विशेषांक में भी इसे देखा। मैं हिन्दी पत्रकारों के सम्बन्ध में पूर्वपत्र में अपने विचार प्रकट कर चुका हूँ। अब इस विषय की चर्चा भी काफी उठ चुकी है। यदि इस क्षेत्र में कोई कर्मवीर सज्जन कार्य को अल्पारम्भ रूप में ही हाथ में ले लें तभी इष्टसिद्धि हो सकती है। 'विश्वमित्र' संचालक की ओर से ही इसका सूत्रपात हो तो क्या कहना है ? दो प्रकार के पाठ्यक्रम रखना अच्छा होगा। एक तो नया आरम्भ करने वालों के लिए ३-४ वर्ष का और दूसरे सम्पादक-कार्य में पहले से ही कुछ सीखे हुए लोगों के लिए परिमित सत्र वाला पाठ्य-क्रम। कभी महीने पन्द्रह दिन की गोष्ठी भी होनी चाहिये। पत्र-व्यवहार द्वारा ज्ञान विस्तार का प्रबन्ध भी इस विद्यालय को करना चाहिये। इस पद्धति में तो प्रत्येक पत्रकार दूर बैठकर भी विद्यालय के ज्ञानसूत्र का भाग प्राप्त कर सकता है। जन-संस्कृति के अध्ययन के लिये सम्पादकों के यात्रा-मंडल भी कुछ कम उपयोगी न होंगे। उत्तरापथ से पाँच सम्पादकों का एक शिष्टदल दक्षिणापथ की संस्कृति के अध्ययन को निकले और प्रत्येक सदस्य २०-२० लेख लिखकर दे तो हिन्दी जगत् को १०० लेख बहुत ही अपूर्व प्राप्त हो सकते हैं। कालिदास और तुलसीदास का मध्यदेश उन लेखों द्वारा शंकर और रामानुज के भूभाग की संस्कृति के विषय में बहुत कुछ नया ज्ञान प्राप्त कर सकता है। उत्तर और दक्षिण के बीच के विन्ध्यगिरि को प्रणत कराने वाले अगस्त्य महामुनि के नवावतारों की इस समय बड़ी आवश्यकता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् ३७ से आज तक दक्षिण की तीन यात्राओं का सुयोग मुझे प्राप्त हो सका है। हर बार मैं उस देश के प्रति नये उदार भावों को लेकर लौटा हूँ। पहली यात्रा का अनुभव तो सबसे विलक्षण था। जान पड़ता था कि कहीं के नये कपाट खुले हैं। उत्तरापथ की दिक् सीमाओं का मेरे हृदय में नया विस्तार उस यात्रा के द्वारा दक्षिणापथ की ओर हुआ। कन्याकुमारी और सेतुबन्ध में रत्नाकर और महोदधि के संगम को देखकर देश के प्रति नई श्रद्धा का उदय हुआ। दक्षिणापथ की सांस्कृतिक एकता को प्रत्यक्ष करने से पूर्व दक्षिण के विषय में एक विचित्र धुंधला सा भाव मन में था वह मिट गया। कितने ही साहित्यिक सम्बन्ध नये जुड़े। इस प्रकार के यात्रोत्सव पत्रकार विद्यालय की ओर से आयोजित हों तो बहुत से पत्रकार उनका अभिनन्दन करेंगे।

पत्रकार विद्यालय अपनी आवश्यकताओं को जानकर अपने क्षेत्र के पारिभाषिक शब्दों का कोष भी तैयार करें तो और अच्छा है। विभिन्न विषयों की सूची और निर्दिष्ट ग्रन्थों की सूची को बताने वाली पुस्तिकाएँ भी छप सकती हैं। उदाहरण के लिए भारतीय कला के सम्बन्ध में विद्यालय अपने दृष्टिकोण से लेख या पुस्तक लिखवा सकता है। भारतीय कला का क्षेत्र क्या है? विस्तार क्या है, महत्त्व और श्रेष्ठत्व क्या है? उसका साहित्य क्या है, उसके अच्छे जानकार देश विदेशों में कौन हैं, किनके द्वारा इस विषय की आलोचना कराई जा सकती है, कौन-कौन से अंगों पर विशेष ज्ञान विस्तार की क्या आवश्यकता है, संग्रहालय और पुरातत्त्व विभाग से क्या सुविधायें जनता को प्राप्त हो सकती हैं, इन विषयों पर पत्रकार विद्यालय की एक दृष्टि हो सकती है; और उसकी व्याख्या की जानी चाहिये। इसी रीति से जीवन से सम्बन्धित कितने ही विषयों को हम ले सकते हैं। जिस विधि से भी पत्रों के स्तम्भों में नये ज्ञान का अवतार कराया जा सके, या जनता के नेत्रों में नवीन आलोक, नई देखने की शक्ति उत्पन्न की जा सके, वही श्रेयस्कर और वांछनीय है। हिमालय क्या है? उसकी विजय के कितने प्रयत्न हुए हैं, भारत के लिये उसका क्या महत्त्व और उपयोग है, कौन से सरकारी विभाग से हिमालय से सम्बन्धित चित्र और सामग्री मिल सकती है। इस एक विषय पर ही पत्रकारों के जानने योग्य काफी मसाला दिया जा सकता है। विद्यालय पुस्तकों, लेखों और व्याख्यानों द्वारा इस प्रकार की सामग्री प्रस्तुत कर सकता है। पत्रकार विद्यालय को अपने सुसंचालित निश्चित ध्येय रखने वाली पत्रिका तो रखनी ही होगी।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डॉ० राम स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट
[१२२]

हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

लखनऊ
२०-४-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२०-४-४४ के पत्र के साथ 'अर्धकथानक' की प्रति मिली। धन्यवाद। आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इस सुन्दर पुस्तक की ६ पृष्ठों में विस्तृत आलोचना, मैं हिन्दुस्तानी एकेडेमी की त्रैमासिक पत्रिका जनवरी-मार्च १९४३ के अंक में (पृ० ७१-७६) लिख चुका हूँ। रिप्रिंट्स नहीं मिले इससे नहीं भेज सका। मूल की प्रतिलिपि भिजवा रहा हूँ। आप एकेडेमी पत्रिका का अंक भी मँगवा सकते हैं।

'अर्धकथानक' पुस्तक मुझे बहुत अच्छी लगी और मैंने उसे ध्यानपूर्वक पढ़ा। आपने अपना प्राक्कथन भी सुन्दर भावुकतापूर्ण ढंग से लिखा है।

भवदीय
वासुदेवशरण

पुनश्च—

आपका ९-३-४३ का पत्र भी सामने है। कामुकता को जीतने का उपाय किसके लिए चाहिए? मैं समझता हूँ कि यह स्वयं मेरे लिये ही चाहिये। मैं भी मनुष्य हूँ, मन वाला हूँ। जहाँ मन है वहाँ मनसिज है। मानस जन्मा काम को वश में करना बुद्धि और मन के धरातल को ऊँचा उठाने की पहली सीढ़ी है, ऐसा मेरे आप्त पुरुषों ने मुझे बताया। ९ अक्टूबर १९४३ आश्विन शुक्ला एकादशी को प्रातःकालीन संध्या करते हुए, अपने जीवन के सम्बन्ध में विचार करते हुए मन में ब्रह्मचर्य-सेवन के लिये प्रेरणा उत्पन्न हुई। जीवन में जो करना है उसे पूरा करने के लिये ब्रह्मचर्य होना चाहिये। इस समय मेरी आयु का चालीसवाँ वर्ष चल रहा है। २२ वर्ष की आयु में मैंने भोगों से परिचय प्राप्त किया। २७ वर्ष की आयु से उसमें विशेष रूप से आसक्ति करके शरीर और मन के तेज को खोना शुरू किया। आज १४ वर्षों तक इस मार्ग पर चलते रहने के बाद जान पड़ता है कि जीवन में आगे बढ़ने की जगह कितना पीछे घिसट गया। पढ़ा बहुत पर सचाई से उसका अनुभव नहीं लिया, मन कमजोर होता गया। अब अनेक विचार मन में उत्पन्न होते हैं साहित्य-सेवा के द्वारा देश और आत्मसेवा के लिये। पर उनकी शक्ति से तब तक लाभ नहीं उठाया जा सकता जब तक मन से और शरीर से ब्रह्मचर्य

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धारण न किया जाय। इस आयु में अब प्राचीन आदर्श के अनुसार वानप्रस्थ में आ जाने से ब्रह्मचर्यमय जीवन रखा जा सकता है। पर अभी तो एकदम वन में जाकर रहना या गृहस्थी से अलग होना संभव नहीं है। ऐसी दशा में अपना जो अध्ययनाश्रम है उसी में पवित्रता और ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर रहना चाहिये। शक्तियों को न बखेर कर उनको केन्द्रित करना चाहिये। (डायरी से) [छापने के लिए नहीं।] जीवन को ऊँचे धरातल पर लाकर उससे काम लेने के लिये बड़े परिश्रम की आवश्यकता है। अब मन में पहले से अधिक विश्वास, शक्ति और आनन्द मालूम होता है। कई बार मन कच्चा पड़ता है। उपवास की सहायता से मन को समझाकर कमी पूरी करनी पड़ती है। बराबर भाव शुद्ध रखने से ऐसा हो सकता है कि ब्रह्मचर्य की स्थिति ऐसी परिपक्व हो जाय कि जाग्रत और स्वप्न दोनों अवस्थाओं में एक सी प्रशान्त, निर्बाध धीर मानसिक दशा प्राप्त हो सके। इतना भारी पूरे सवामन का जो यह शरीर है इसकी कुंजी मन में है। देह के रोएँ-रोएँ पर मन का राज है। उसे ही पहचान कर विकारों से बचा जा सकता है। मन के भले विचार भी क्या करेंगे जब तक स्थूल शरीर में वे सत्य प्रमाणित न किये जाँय? उपनिषदों में ठीक कहा है—'वाक् या स्थूल शरीर मन में प्रतिष्ठित है और मन वाक् या स्थूल देह में प्रतिष्ठित है। वह मन भीतर से बाहर आविर्भूत होता रहे।' 'देह की टेक मन में, मन की सचाई देह में'— यही तो जीवन का सच्चा रूप है। एवमस्तु।

वासुदेवशरण

[१२३]

लखनऊ
१०-८-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपने मेरे पत्रों को छापकर पत्र लिखने की स्वतन्त्रता को जैसे कुछ कुण्ठित कर दिया। प्रवाह में बहुत सी बातें लिख जाता था। सम्भव है वैसा अब न बने। अब की आधा सावन सूखा बीत गया। वृष्टि के लिये जनता व्याकुल थी। भादों के साथ आशा लहलहाई है। आज प्रातःकाल घूमने के बाद स्नान करके बैठा था कि आकाश में घन छाने लगे। देखते-देखते काले बादलों ने नीले आकाश को ढक लिया। दिन में अँधरिया रूपक दीखने लगा। बिजली चमकी और गड़गड़ाहट के साथ बूंदें आ गईं। फिर तो आकाश ने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उग्र रूप धारण कर लिया। इतने जोर से तड़ातड़ हुई कि जान पड़ता था कि अम्बर के टुकड़े हो जाँयगे और मेघों के घने जाल से मूसलाधार वृष्टि होने लगी। मुझसे भी न रहा गया, मेघों के इस वरदान का स्वागत करने के लिये वाहर निकल आया। आज उपवास का तीसरा दिन था। फिर भी शरीर की प्राणशक्ति ने प्रकृति में ओजायमान प्राणों के साथ संमनस्क होकर बहुत सुख अनुभव किया। मेरे ही समान छत पर के वृक्षों ने – पारिजात, कामिनी, बेला, मोतिया, रजनीगंधा, अमृता आदि जो अभी हैं सुकुमार पर मेघों के सच्चे पुत्र—जीभर जीवन-रस का स्वागत किया। उनके उमगाये हुए भावों को देखकर अथर्ववेद के ऋषि की बात याद आती है—गरजते और पठारते हुए मेघों को देखकर औषधियाँ कहती हैं, हे आयुष्मान तुमने हमें प्राणों से सींचा है और तुमने हमारी आयु को बढ़ाया है। आकाशचारी मेघ और पृथ्वी पर स्थित औषधि-वनस्पतियों के बीच कितना अधिक सख्यभाव है। प्रकृति में मेघों के आगमन से प्रतिवर्ष इसी गाढ़ सम्बन्ध की दुहाई फिर जाती है, यही मेघदूत है जिसके अमिट अङ्क भारतीय अम्बर के भाल पर कालिदास ने बाँचे थे। उसी पुष्करावर्तक लिपि की व्याख्या उनके मेघदूत काव्य में है। क्षितिज के एक सिरे पर सटकर जब मेघ बिजली के साथ टिमटिमाता है और वही फिर उग्र रूप धारण करके आकाश की छाती पर दहाड़ते हुए सिंह की तरह झपटता है, इन दोनों के बीच में मेघ की जितनी परिभाषाएँ हैं, जितने रंग-विरंगे रूपों में हमें उसका दर्शन प्राप्त होता है, उसके मन्दध्वनि कंठ से स्वरों के जो सरगम प्रतिवर्ष हम सुनते हैं, उसके अनुकूल मित्र पवन और प्रभंजन के जो पराक्रम होते हैं, उनका सांगोपांग वर्णन कालिदास के मेघदूत में है। हमारे आकाश की ये घटनाएँ हैं हमारे ही कवि इनसे कैसे परिचित न होते ? इनके वर्णन की क्षमता उनकी कृपा से हमारी भाषा को प्राप्त हुई। क्या ही अच्छा हो यदि इन परिभाषाओं का एकत्र अध्ययन किया जाय। कुछ वर्ष पूर्व 'मेघशास्त्र' नामक लेख में मेघदूत का इस प्रकार का एक अध्ययन मैंने 'माधुरी' में प्रकाशित कराया था। परन्तु तब से बराबर यह बात मेरे मन में रही है कि समस्त संस्कृत और हिन्दी साहित्य का मन्थन करके और लोक में मेघ और वृष्टि सम्बन्धी प्रचलित शब्दों का संकलन करके यदि कोई विद्वान् भारतीय मेघशास्त्र की रचना करता तो वह अपूर्व आकर्षण की वस्तु होती और उसके द्वारा अनेक पारिभाषिक शब्दों का हमारे साहित्य में फिर के उद्धार हो जाता। बादलों की हलकी आँखमिचौनी के लिये 'बदलचल' शब्द मैंने मेरठ के अपने ही गाँव में सुना था। उसी के समीप बिजली के चमकने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये 'विजोना' और गरजने के लिये 'घोरना' धातु भी मुझे प्रचलित मिली। विजोना' स्पष्ट ही संस्कृत के विद्योतते' से सम्बन्धित है। इसी प्रकार साहित्य और लोक के समन्वय से बहुत कुछ मूल्यवान सामग्री एकत्र की जा सकती है। अपने यहाँ की पच्छिवाँ हवा के लिये 'ओड टू दी वैस्ट विंड' नामक जीवटदार कविता का अर्घ्य चढ़ाकर शैली कृतकृत्य हो गया। क्या अपने यहाँ की पुरवैय्या का हम सत्कार न करेंगे ? जिस पुरवैय्या के लिये आज भी अवध के गाँवों में गाते हुए सुना जाता है—

भुइयाँ लोट चलै पुरवाई।
तब जानो बरखा रितु आई॥

उस भूमि में लोटती हुई, धूल को उड़ाती हुई, विरवा-रूखों को झकझोरती हुई पुरवैय्या के लिए जो धरती आकाश को हिला देती है, जिस दिन हम इसकी प्रशस्ति लिखेंगे उस दिन हमारी भाषा धन्य होगी। अपने यहाँ के बताज और फगुनहटों से, लूक और हुडहरों से हमें अति निकट से परिचित होने की आवश्यकता है। पछियांव और पुरवाई, उतरहा और दखिनहा—इन सब हवाओं का ऋतुचक्र से क्या सम्बन्ध है, उनकी क्या विशेषताएँ हैं, और वृक्ष—वनस्पति तथा मनुष्यों के जीवन पर उनका क्या प्रभाव पड़ता है, यह सब विषय भारतीय जलवायु के अध्ययन का अनिवार्य अंग होना चाहिये।

उस दिन फीरोजाबाद स्टेशन से आपका साथ खूब रहा। 'मधुकर' के जनपद अंक के ७२ पृष्ठ तक मिले हैं। पत्रों के प्रूफ-संशोधन में पर्याप्त असावधानी हुई है। जगदीशप्रसाद जी ने अपने अस्वास्थ्य को कारण लिखा है। फिर भी जो छापा गया है उसके शुद्ध छपने से मुझे और अधिक प्रसन्नता होती। मथुरा में सेठ जी के यहाँ से बोलिस्तान लेख पढ़ने को मिल गया। सचमुच वह जनपदांक में फिर से दुहराने के योग्य तो है नहीं। उसमें वैज्ञानिक पद्धति से विषय का प्रतिपादन होता तो बात दूसरी थी।

जनपदीय कार्य की भावी प्रगति के विषय में जो संकेत मैंने राजामंडी स्टेशन पर बिदा होते समय किया था, उसको आगे बढ़ाने की बात और कृपया सोचिएगा। समानधर्मा, उत्साही और श्रद्धालु साहित्यसेवियों को एकत्र एकसूत्र में पिरोकर जो कार्योपयोगी संगठन की तैयारी हो सके, वही कार्य के लिये अपूर्व बल होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१२४]

लखनऊ
२५-८-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपके १५-८-४४ और १८-४-४४ के पत्र मिले। मुझे आपका यह निश्चयात्मक मंत्र सबसे अधिक रुचा। वाद-विवाद का अब अन्त हो। ठोस साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्य के सत्र का आरम्भ हो।

जनपदीय साहित्यिक कार्य स्वयं इतना रोचक है कि इसका एक बार स्वाद लगने पर उसे छोड़ना कठिन होगा। जो साहित्यसेवी इसके मिठास से परिचित हो जायगा वह जनपदयात्रा का तीर्थयात्रा की तरह वर्ष में कई बार स्वागत करेगा। हमारा मुख्य उद्देश्य भूमि के साथ साक्षात सम्पर्क बढ़ाना है। उसके द्वारा हम अपने साहित्य और जीवन की सुरक्षित परम्परा और भीतरी शक्ति से परिचित होंगे। जीवन का विकास भाषा और शब्दों के द्वारा होता है। अतएव जनपदीय कार्य में भाषा और शब्द-समूह के अन्वेषण पर सबसे अधिक गौरव है। पतंजलि ने महाभाष्य में जो यह कहा है कि अकेला शब्द ही अगर ठीक तरह जान लिया जाय और ठीक व्यवहार का विषय बना लिया जाय तो उससे इस लोक और परलोक के जीवन से सम्बन्धित जितनी कामनाएँ हैं उन सबकी प्राप्ति हो सकती है, वह बिल्कुल सत्य है और यह अनुभव अपने भीतर गहरी सचाई रखता है। हमारे जनपदीय जीवन में जो अपरिमित शब्द सामग्री है, जो विशाल शब्द-भंडार है और चोखे शब्दों के जो कोठार भरे हैं, उनके पास तक यदि हम पहुँच पावें तो हमारी भाषा सम्बन्धी दरिद्रता का अन्त हो जाय। फैलन (Fallen) ने अपने हिन्दुस्तानी कोष की भूमिका में आज से साठ वर्ष पहले जनपदीय भाषा, गाँवों की बोली और विशेषतः स्त्रियों में प्रयुक्त कहावत और मुहावरों की ओर पर्याप्त ध्यान दिलाया था और यथा-संभव अपने कोष में उन्हें सम्मिलित भी किया था। उस सामग्री से परिचित होने और उसे बढ़ाने की आवश्यकता है। भूमिका में लिखा है कि उसने बारह हजार कहावतों का एक संग्रह तैयार किया था जिसमें हिन्दी क्षेत्र के साथ साथ मारवाड़ी, मगही, भोजपुरी और तिरहुती क्षेत्रों की कहावतों का भी संग्रह था। यह मालूम करना है कि यह संग्रह छपा या नहीं : छपा हो तो अमूल्य वस्तु होगी। मैं कई दिन से यह सोच रहा था कि नागरी प्रचारिणी सभा को समस्त हिन्दी कहावतों का एक बड़ा कोष बनवाना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहावतों का स्थान प्रत्येक भाषा में बहुत ऊँचा माना गया है। वे जातीय अनुभव के गठे हुए सूत्र हैं। जिनकी सचाई सुनने के साथ ही मन में घर कर लेती है। भाषा की दृष्टि से ये लोकोक्ति सूत्र उन रत्नों की तरह हैं जो भाषा रूपी पृथ्वी-गर्भ में फैले हुए विस्तार में ज्ञान-सूर्य की रश्मियों के प्रताप से दीप्तदेह धारण कर लेते हैं। संस्कृत, प्राकृत और प्रान्तीय भाषाओं से यह भली भाँति जाना जाता है कि हमारे देश में नीति-साहित्य की ओर सविशेष ध्यान दिया गया था। जीवन के अनुभव का निचोड़ नीतिशास्त्र में है, और नीतिशास्त्र का चुआया हुआ रस या खोया लोकोक्ति सूत्रों में पाया जाता है। हिन्दी साहित्य में लोकोक्तियों के संग्रह का जितना भी कार्य शुरू से आज तक हुआ है उसका परिचय देने वाला एक लेख 'मधुकर' में प्रकाशित होना चाहिए। इसके अतिरिक्त बंगला, गुजराती, मराठी, पंजाबी, सिन्धी, काश्मीरी, पस्तो, नैपाली भाषाओं की कहावतों के विषय में भी बहुत कार्य हुआ है और उसका परिचय भी हमें हो तो अच्छा है। जिस दिन हिन्दी लिखने की शैली में कहावतों का उचित आदर होगा उसका रूप खिल उठेगा। यही हाल मुहावरों का है जो वाक्यों में जान डाल देते हैं। धातुओं का संग्रह और धातु-पाठ का निर्माण भी प्रत्येक भाषा के लिये आवश्यक है। धातुओं से बनने वाले कृदन्त शब्द और कृदन्त के प्रत्ययों का अध्ययन भी कम रोचक न होगा। अपभ्रंश के द्वारा प्रान्तीय बोलियों को जो प्रत्यय मिले उनके मिठास के सामने संस्कृत के प्रत्ययों को हार माननी होगी। यह सब सामग्री जब एकत्र होगी तब हिन्दी शब्दों के निरुक्त कोष के लिए कितनी मूल्यवान सिद्ध होगी। अनेक जनपदों में बिखरी हुई, पर लोक के कंठ में सुरक्षित भाषा-सम्पत्ति का संग्रह कुबेर के कोष की तरह आकर हिन्दी के टटपुंजिया भंडार को भर देगा। उसे अपनाने के लिये हमें अपने ही युग-युग के आलस्य को जीतने की आवश्यकता है और उससे भी अधिक आवश्यकता है मन को नये स्वागत-भाव से भरने की और ग्रामों को नये प्रतिष्ठाभावों से ऊँचा उठाने की। गँवार शब्द का अर्थ 'गाँव सम्बन्धी' 'गाँव में पनपने वाला' इतना ही होना चाहिये। ग्राम से सम्बन्धित होना न पाप है और न लज्जा का कारण। गाँव भी श्रेष्ठ मानवता के केन्द्र हैं। नई राष्ट्रीय भावना में गाँवों की पूजा, गाँवों का सम्मान सार्व-जनिक उत्थान की बारहखड़ी समझी जायगी। बिना उसका पाठ पढ़े, कोई भी शालीन नागरिकता का अधिकारी न बन सकेगा। ग्राम और जनपद हमारे विशाल लोक के प्रतिनिधि हैं। जो उन्हें प्रसन्न करेगा उससे ही राष्ट्र के जागे हुए देवता प्रसन्न होंगे। जीवन का जो पथ जनपदों की पगडंडियों को साथ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकर चलेगा उसे ही 'जनायनपन्थ' का गौरव प्राप्त होगा। 'जनायनपन्थ' वह राजमार्ग है जिससे राष्ट्र के सम्पूर्ण जन का सम्बन्ध हो, जिसकी धूलि सबके चरणों से पवित्र हो। जनायनपन्थ उस लोक में जाता है जहाँ मानव का सत्कार होता है। जिस मंडल के केन्द्र में मानव की स्थापना नहीं है वह भविष्य के कार्य के लिए उपयोगी न हो सकेगा। मनुष्य के लिए सार्वभौम आदर का भाव ही जनपदीय आन्दोलन की दार्शनिक पृष्ठभूमि है। मातृभूमि से जिसका जीवन जुड़ा है वह किसी प्रकार भी त्याज्य या हेय नहीं है।

भाषा के क्षेत्र में कुरु जनपद के संगठन की बात आपने लिखी। श्री प्रभाकर जी यदि ठोस कार्य करें तो कौरवी भाषा का, जिससे कि हमारी खड़ीबोली का जन्म हुआ है, बहुत सा भूला हुआ साहित्य फिर से प्राप्त कर सकेंगे। समानशील वाले उत्साही कार्यकर्ता शनैः शनैः बहुत कुछ कार्य कर सकते हैं। परन्तु कोरे आडम्बर या थोथे विज्ञापन से कार्य के बिगड़ने के सिवा किसी का भला न होगा। प्राचीन भौगोलिक नामों के पुनः सजीव हो जाने से कोई हानि नहीं है, यदि कार्यकर्ताओं के उद्देश्य पवित्र हैं।

आपके लिए जनपदीय कार्यक्रम गौण कैसे हो सकता है? 'जनपद कल्याणीय' और 'सेतुबन्ध' एक ही रथ के दो पहिये हैं। जनपद कल्याणीय का अर्थ है—अपने घर में छिपे हुए धन को ढूँढ़ निकालना। अपनी दरिद्रता को मिटाने के लिए घर की पूँजी से बढ़कर और कुछ नहीं। परन्तु हमारे जीवन के दीप्तिपट बाहर के प्रकाश को यदि रोकने वाले हों तो भी हमारे मन में अंधेरा छा जा सकता है। अतएव संसार में जहाँ भी जो कुछ श्रेष्ठ और सार्वभौम है उस तक पहुँचने के लिए हमें पुल बाँधना होगा यही हमारे साहित्य का सेतुबन्ध है जिसे आपने Interpretation कहा है। 'घर खीर तो बाहर भी खीर'—अर्थात् जनपद कल्याणीय कार्य के द्वारा यदि हम अपने साहित्य और भाषा के तेज को पहचान लें तो बाहरी साहित्य के चमकीले प्रकाश को देखने की शक्ति हमारे नेत्र में उत्पन्न होगी। एक की सिद्धि के बिना दूसरे की ओर बढ़ना शक्ति का अपव्यय हो सकता है। हमारे जीवन का रहस्य तो समन्वय में है। अतएव आइए अन्तर्द्वन्द्व से शक्ति की रक्षा करके कार्य में सन्नद्ध हों।

प्रत्येक कार्य का प्रकृति में बँधा हुआ समय है। कई दिन हुए भृगु ने एक गुलाब का फूल मेरी मेज पर ला रखा। उसकी खिली हुई पंखुड़ियों ने बरबस मेरा ध्यान अपनी ओर खींच लिया। इस सुन्दर पुष्प के खिलने में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना रहस्य और सन्देश भरा है। सूर्य के सम्मुख काल की नियमित प्रगति से गद्‌गद्‌ होकर एक-एक पंखुड़ी ने अपने रूप-सौन्दर्य को विकसित किया है। कालचक्र ने जो क्षण नियत किया था उसी क्षण पुष्प ने अपना उत्सव मना लिया। काल की वंचना करके उसकी गति को ठहराने की प्रवृत्ति क्या एक क्षण के लिये भी पुष्प के जीवन में उत्पन्न हुई? परन्तु मनुष्य ही है जो आज की अपेक्षा कल का विश्वास अधिक करता है और जो परसों के लिये कल की भी वंचना करते हुए नहीं डरता। हमारी दीर्घसूत्रता से आज और कल दोनों ही वंचित होकर हमसे रूँठ जाते हैं और हम रह जाते हैं, 'कालो न यातो वयमेव याताः' के एक तिरस्कृत उदाहरण मात्र।

भगवान चरक के कथनानुसार 'आसप्ततेर्यौवनम्' सत्तर वर्ष तक यौवन की मर्यादा है अर्थात् आयु का यह वह काल है जब मनुष्य का यात्रा-पथ जीवन-रथ के चक्रों की गति से मुखरित रहना चाहिये। आपने तो अभी पचास से आगे केवल दो ही वर्ष और नापे हैं, अभी तो अठारह वर्ष तक निर्द्वन्द्व साहित्यिक सेवा में दृढ़ व्रत बने रह सकते हैं।

श्रीनाथसिंह जी ने जनपदीय कार्यक्रम को जैसा थोथा मकड़ी का जाला समझा है वह वैसा कदापि सिद्ध न होगा ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। इस आन्दोलन की शक्ति उस अमृतवल्ली की तरह है जो महाविटप को सब ओर से छा लेती है। मुझे तो इसका काण्डभ ग उस मालझन के महावीर्य कांड के सदृश दिखाई पड़ रहा है जिसके दर्शन गत वर्ष हिमालय में हुए थे और जो नीचे के खड्‌ड में से सैकड़ों हाथ ऊपर उठकर ऊँचे वृक्षों को भी अपने प्रसर्पी तन्तुओं से बाहुपाश में बाँध लेती है।

डा० मुकर्जी को आपका भेजा हुआ अवतरण दिखाऊँगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१२५]

लखनऊ
२४-१०-४३

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२३।९।४४ और ६।१०।४४, का संयुक्त पोस्टकार्ड मिला। हर्ष और विषाद साथ-साथ हुए। हर्ष इसलिये कि जयपुर सम्मेलन के समाचार प्राप्त

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए और विषाद इसलिये कि आपके स्वर्गीय प्रियबन्धु के दुःखपूर्ण संस्मरण की छाया इसमें दिखाई पड़ी। काल बलवान है। सब पर उसका शासन है। कोई आगे कोई पीछे सभी उसके चरणों में भेंट लेकर पहुँचने वाले हैं।

जनपद-योजना की चर्चा जयपुर में अवश्य हुई होगी। 'मधुकर' का जनपदीय अङ्क तो बहुत ही परिश्रम और न्यायपरायण बुद्धि से प्रकाशित किया गया जान पड़ता है। इसे देखकर प्रसन्नता हुई। जनपद और ग्राम-संस्था ये शब्द-भेद से एक ही तत्त्व के वाचक हैं। कार्य की आत्मा की ओर देखा जाय तो हमारे परस्पर मतभेद धुएँ की तरह विलीन हो जाते हैं। जनपद सम्बन्धी जितना भी साहित्यिक कार्य सोचा या किया जा सकता है, वह केवल मात्र हिन्दी भाषा की ही शक्ति और समृद्धि को बढ़ाने के लिए है। हिन्दी भाषा ही इस युग की सर्वलोक नमस्कृता वाणी है, हिन्दी के अर्थ ही हमारे साहित्यिक जगत् की शत-सहस्र वन्दनाएँ प्रचारित हैं। हिन्दी ही एक मात्र महती देवता है, जनपद कल्याणी योजना उसी हिन्दी के हित को दिन दूना रात चौगुना बढ़ाने के लिये है। आने वाली दीपावली के अवसर पर हिन्दी-हित के लिये यह गाथा आपकी भेंट करता हूँ—

एकैव वन्दनीया सा हिन्दी हिन्दी महती देवता।
जनपद कल्याणीयं योजनाऽस्ति यस्यै शिवा॥

ईश्वर करे हिन्दी के प्रति कल्याण-बुद्धि का जगमगाता दीप सब जगह प्रकाशित हो।

जनपदों के सम्बन्ध में हमें अब दूसरा पग ठोस साहित्यिक कार्य का उठाना चाहिए। सैकड़ों मित्रों का आवाहन कीजिए कि सामग्री का संकलन करें, लेखों के द्वारा पत्रों में उसका प्रचार करें, अपने चारों ओर के जीवन को देखने-परखने, समझने और बखानने के एक नये सत्र का आरम्भ करें। जनपद आन्दोलन अङ्क के समान जनपद साहित्य अङ्क में १५०-२०० पृष्ठों की ठोस सामग्री यदि सब मिलकर प्रस्तुत करें तो कैसी बढ़िया चीज बन सकती है। कितने कार्यकर्त्ताओं को उससे नई आँख मिलेगी। कितने लेखकों को उससे उत्साह प्राप्त होगा। स्थूल भौतिक जगत् मानों हमारे साहित्य-सेवियों से भरा हुआ है। उसे शब्दों के द्वारा कसकर पकड़ने की आवश्यकता है। हममें से प्रत्येक व्यक्ति को दो-दो हजार नये नाम और शब्द जनपद-साहित्य से सीखने के लिये तैयार हो जाना चाहिये। पाठ्य-पुस्तकों की क्रमबद्ध श्रेणी के द्वारा लगभग सहस्त्रों जनपदीय शब्द हमें अपने बालकों के कण्ठ में प्रतिष्ठित करने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होंगे। यदि हमें धान और गेहूँ के लहलहाते खेतों में छोड़ दिया जाय, यदि किसी उपवन में वसन्त की लक्ष्मी का परिचय करने का भार हमें सौंप दिया जाय, तो क्या उस समय के लिए दो चार सौ पारिभाषिक शब्दों की पूँजी का आसरा हमारे पास है ? क्या उस समय हमें अपनी भाषा के टुटपुंजियापन पर खींझना तो न पड़ेगा ! गुड़ के कोल्हू में जाकर जो साहित्यिक सौ, दो सौ वहीं के शब्द और मुहाविरों में उस समस्त प्रक्रिया का वर्णन साहित्य को भेंट में चढ़ाएगा, वह सचमुच बड़ी भारी सेवा करेगा। घर और बाहर, खेत और क्यार, वन और रन सभी जगह साहित्य की पुस्तक खुली हुई है। परमा बढ़ई, चिलन कुम्हार, केशव किसान, ठकुरी मुराव और उनके एक सौ एक बन्धु उस खुली हुई साहित्यिक पुस्तक के पृष्ठ हैं जिन्हें हम जब चाहें सुविधानुसार बाँच सकते हैं।

लगभग ६ दिन से यहीं इसी कमरे में श्री मैथिलीशरण जी, राय कृष्णदास जी और मोतीचन्द्र जी से साहित्यिक सत्संग का आनन्द लूटता रहा हूँ। आज ही प्रातः सब लोग एक सप्ताह का सत्र मनाकर यथास्थान गए हैं। अनेक प्रश्नों और समस्याओं पर विचार विनिमय होता रहा। एक दिन प्रातः जागते ही गुप्तजी ने बड़ी प्रिय बात कही। कहने लगे कि हम और मोतीचन्द्र रात विचार करते हुए इस परिणाम पर पहुँचे कि हिन्दी की प्रमुख बोलियों (भोजपुरी, अवधी, ब्रजी, बुन्देलखण्डी आदि के पृथक-पृथक कोष पहले बनने चाहिए फिर उन सबके आधार पर उन सबसे शब्दों का चुनाव करके साहित्यिक हिन्दी के लिए एक बड़े कोष का निर्माण होना चाहिए। मोतीचन्द जी ने बताया कि एक बार पेरिस में वे सिलवोलेवी से मिलने गये। उन्होंने पूछा कि भारतीय सभ्यता के बारे में आपकी क्या राय है ? लेवी ने उत्तर दिया कि स्पष्ट कहने से यदि आप बुरा न मानें तो कहें। इनके आश्वासन दिलाने पर उन्होंने पूछा कि वह कौन सी एक बात है जिसे सभ्यता का सबसे मुखर प्रतीक मान सकते हैं अर्थात् किसी देश की सभ्यता का सबसे अचूक मापदंड क्या है ? मोतीचन्द्र जी के जिज्ञासा करने पर उन्होंने स्वयं ही बताया कि सभ्यता की सबसे चोखी कसौटी देश की भाषा का शब्द-कोष है। शब्द-कोष अपने आप बोल उठता है कि किसी जाति ने सभ्यता के सहस्रमुखी भागों पर कहाँ तक प्रगति की है। इस माप से देखा जाय तो आप लोग संस्कृत भले ही हों सभ्यता की कोटि में नहीं आते (you may be cultured but not civilised) सभ्यता जीवन के क्षेत्र का दसों दिशाओं में विस्तार ढूँढ़ती

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। आपकी भाषा को संस्कृत या फारसी बनने से पहले ठेठ चुस्त हिन्दी बनना चाहिये और उसके लिये उसे अपनी बोलियों से सम्बन्ध ढूँढ़ना चाहिये। बोलियों में ही शब्द-भंडार पनपता है। हमारी प्रेय भाषा भी अपनी बोलियों के सहारे घनी हुई है। मोतीचन्द्र जी कहते थे कि फिर उन्होंने हिन्दी की बोलियों के कोषों के निर्माण की बात कही। गुप्त जी ने और मैंने उनसे प्रार्थना की है कि वे उस पुण्यात्मा भारत हितू साहित्यिक के इस वार्तालाप को लिपिबद्ध कर दें तो नागरी प्रचारिणी पत्रिका में उसे छपा दिया जाय। इससे बहुतों को कर्तव्य का ज्ञान होगा और सोचने की दिशा प्राप्त होगी।

आपके पत्र के अन्तिम अंश के सम्बन्ध में लिखना आवश्यक है। प्रेमी अभिनन्दन-ग्रन्थ के बुन्देलखण्ड विभाग में क्या रहना चाहिये यही मैंने लिखा था, आप क्या रखना चाहते हैं ऐसा मैंने कदापि न लिखा होगा क्योंकि आप सबकी ओर से मेरे मन में द्विविधा का भाव न था। इस दृष्टिकोण से आप पत्र को फिर पढ़कर देखेंगे तो स्पष्ट हो जायगा। जहाँ सब विभागों के विषय में क्या रहे क्या न रहे' की शैली से निर्देश किया था वैसा ही यहाँ भी था। अस्तु, पारस्परिक भ्रान्ति की कल्पना तो निर्मूल ही है। इसके विषय में मन को लगाना या सोचना भी व्यर्थ है। प्रेमी-ग्रन्थ का बोझ आप सब पर है। उसे जिस उत्साह से उठाया था, उसी उत्साह से चलाइये और पूरा कीजिये। किसी प्रकार का कठोर या निष्प्राण नियन्त्रण करने की इच्छा स्वप्न में भी मुझे नहीं है। हम सब तो साहित्यिक सहयोग के सार्थवाह हैं। सरस्वती के प्रशस्त आँगन में सबके लिये उदार अवकाश है, और रागद्वेष का वहाँ नितांत अभाव है। दूषित भाव वहाँ कदाचित पहुँच भी जाँय तो भी स्थायी रूप से टिकने की आज्ञा नहीं पाते।

श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी को जनपद अङ्क के तैयार करने में जो सफलता मिली है उसके लिए उन्हें बधाई भेजता हूँ। पहले सोलह पृष्ठों की भूमिका में उन्होंने बड़े स्वतन्त्र ढंग से खरे शब्दों में आन्दोलन की धाराओं का और पक्ष-विपक्ष की तर्कों के तारतम्य का विवेचन किया है। यह अच्छा ही हुआ कि मैं आपकी इच्छानुसार इन पृष्ठों के लिये सामग्री भेजने में आलस्य कर गया। आशा है अन्य सब तरह से आप प्रकृतिस्थ हैं।

अनन्या हिन्दीयं सरससरसा सारसहिता,
सुवर्णा सत्काव्यैर्नव रसयुतैर्भाविभरितैः।
सदा सारज्ञानां रमयति मनो या सुमनसां,
विधेयाच्छन्तस्यं जनपदहितं योजनमिदम्॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरसा सारसम्पन्ना या हिन्दी देवता शुभा।
शिवं तस्यै वितन्वति सा जानपदयोजना॥

(पं० ललताप्रसाद शास्त्री)

भवदीय
वासुदेवशरण

[१२६]

लखनऊ
२६-१०-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका भेजा चित्र मिला। कैमरा के चित्र अनेक प्रकार के होते हैं। काँच की स्वच्छता और धुँधलेपन का चित्र पर असर पड़ता है। कैमरे की दूरी और उसके दनदनाने का काल भी अपना प्रभाव डालते हैं। सभी चित्र वस्तु के एक रूप को प्रकट करते हैं इसलिए वे सदा रोचक होते हैं। परन्तु वस्तु का अन्तर बाहर महान है वह सदा चुनौती देकर अपने केन्द्र पर यही अलख जगाती है—

'योऽस्मि-सोऽस्मि'
'मैं जो हूँ सो हूँ।'

मैं भी क्या हूँ? जैसा लिख चुका हूँ—जायसी के शब्दों में 'अहुठ हाथ तन सरवर' का एक नमूना, पर भगवान शंकर इसे 'वाचो विग्लापन' की धिक्कार बताते हुए मनुष्य के लिये 'अहं ब्रह्म' के देवप्रांशु रूप की कल्पना करते हैं।

सच झूँठ की भगवान जाने पर यह तो हम नित्य आँखों से देखते ही हैं कि एक ओर मनुष्य का बौना रूप है जो कला में चित्रित उन बिलसरियों की भाँति है जो शरीर के कुरूप आकार में बैठे, अपने अस्तित्व के लिये भी इतस्ततः दुबकते हुए दिखाये जाते हैं, और दूसरी ओर नर का नारायणी रूप है जो अजन्ता के महान बोधिसत्व के तुल्य बेरुल के तांडवकारी शिव के सदृश अथवा धारापुरी के कैलाश मन्दिर के त्रिमूर्ति शिव के प्रकार का है। इस दूसरे स्वरूप में मानवी मन ही जो देवों के विराट आकार-प्रकार से स्पर्धा करता है सब कुछ है। मानव की आत्मा विष्णु के तीन पैरों की तरह धरती आकाश के बीच में सब कुछ नाप लेना चाहती है। साहित्य, राष्ट्र, जन सब इसी ज्यायान महान मानव के संकल्प के फल हैं। उसके कर्मों को देखकर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना पड़ता है— एतावती महिना संबभूव ।' अम्मूण की कुमारी ने किसी पूर्वयुग में अपने मन के स्फुरण से ओजायमान होकर यहाँ तक कहा—आह, मैं ही हवा के रूप में सब जगह तैरती रही हूँ । भुवनों का आरम्भ करती हुई, धरती से परे और अम्बर से भी मैं ऊपर हूँ, मेरे बड़प्पन का कहीं अन्त है ?

आइये, श्रेष्ठ मानव को प्रणाम करके हम वहीं आवें जहाँ हैं और यह अनुभव करें कि मैं जो हूँ सो हूँ योऽहमास्मि-सोऽहमास्मि ।' यही वस्तुस्थिति है, इसी से हम सबका नित्य का काम चल रहा है । इस धरती पर खड़े होकर हमें श्रेष्ठ मानव के रव-बिन्दु की ओर आँख लगानी चाहिये । यही स्वाभाविक समन्वय है । अथर्ववेद के पृथिवीसूक्त के सबसे अन्तिम मन्त्र में कही हुई बात आज भी मुझे रुचती है । द्युलोक के साथ मेल करके धरती पर हम प्रतिष्ठित हों ।

खड़े होने के लिए सदा पृथिवी की ही आवश्यकता होगी । अधर में हम उड़ सकते हैं, खड़े नहीं हो सकते । जीवन की वस्तुस्थिति ही ठोस प्रतिष्ठा-भूमि है । मन के संकल्प तो द्युलोक के गम्भीर अन्तराल के समान हैं । उन्हीं में हमारे ज्ञान का सूर्य निकलता है । आकाश को प्रकाशित करके ही भगवान सहस्रांशु मारीचिमाली सूर्य नित्य दर्शन देते हैं पर जीवन की प्राणधारा को पुष्ट करने वाले अन्न पृथ्वीमाता की गोद में ही पनपते हैं । पृथ्वी की शरण में ही आकर हम स्थूल जगत से नाता जोड़ते हैं । पृथ्वी के साथ मथकर हमारा जो रूप निखर सके उसी के लिए प्रयत्न करना चाहिए । मैं सचमुच यही पृथिवी पुत्र हूँ । 'माताभूमिः पुत्रो ह पृथिव्याः'— मेरे कार्य का सूत्र है । आपने ठीक ही मेरे रूप को समझने का यत्न किया है । लखनऊ के पार्थिव इक्षु-विकार से बने हुए रसगुल्ले सदा आपकी प्रतीक्षा में रहेंगे ।

भवदीय

वासुदेवशरण

पुनश्च—

मेरा रेखाचित्र भेजते हुए जो पत्र आपने लिखा है वह कुछ हृदय का बोझ लिये हुए है । उसमें वह वातातपिक उछाह नहीं है जो प्रकृति के सम्पर्क में बसने वाले प्राणी के पुत्र में होना चाहिये । जयपुर के वाग्वाणों ने क्या योद्धा के मन को भी झाझरा बनाने में सफलता पा ली है अथवा शरीर में विजातीय विषों के संचय से जनित मन की उदासी का यह परिणाम है ? अस्तु, इस कल्मष से आपको ऊपर उठना ही चाहिये । इसका एकमात्र उपाय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने पिछले पत्र में लिख भेजा था—'मधुकर' का एक विशेष अङ्क निकालना है जिसमें जनपदीय साहित्य का नगद सौदा प्रस्तुत किया जाय, अभी तक की चर्चा उधार धर्म को लेकर हुई है। उसे पीछे छोड़िए। अब कार्य को सकारात्मक योजना देनी चाहिए। मैं इस अंश को लिख दूँगा। साथ ही ऐसा बंधज लेखों का बाँधना चाहिए कि जनपद-साहित्य के लगभग दो हजार शब्द इस अङ्क के द्वारा हिन्दी जगत को भेंट किये जाँय। गन्ने के खेत में बोने से लेकर गुड़, राब, खाँड़ बनाने तक की सारी प्रक्रिया पर किसान की पारिभाषिक बोली में एक लेख अवश्य रहेगा। उससे 'मधुकर' का नाम चरितार्थ होगा और सम्पादक के चौबेपन का भी। खिन्न हुए युधिष्ठिर के रीते मन में अश्वमेध के द्वारा प्राण-रस भरने की सलाह कृष्ण ने दी थी, उसी भाव से इसे भी ग्रहण कीजिये।

वासुदेवशरण

[१२७]

स्थान देवगढ़
२५-११-४४

प्रिय चतुर्वेदी जी,

कल हम लोग यहाँ आये। देवगढ़ भारतीय शिल्प का तीर्थ है। इसकी शिल्पश्री का माहात्म्य और तीर्थों के माहात्म्य-गान की तरह अभी कला-कोविदों को रचना है। शिल्प-लक्ष्मी और वनदेवी का ऐसा सान्निध्य अनुपम है। पर्वतोत्संग का उदार प्रांगण, उसके समीप से बहती हुई वेत्रवती की चंचल जलधारा और दोनों के रूपमंडल को अधिक छवि प्रदान करने वाली सौन्दर्य की कमनीय कृति, गुप्तकालीन दशावतार मन्दिर, ये किस सहृदय को गद्गद् करने के लिए पर्याप्त न होंगे। आज यहाँ सुनहली धूप का वरदान उसी प्रकार फैला हुआ देखा—देवप्रासाद के रूप को निखारता हुआ—जैसा महाराज श्री गोविन्द गुप्त के काल में रहा होगा। वन-प्रकृति आज भी पूर्ववत् आनन्द और सौन्दर्य का रहस्य-मन्त्र लिये हुए देवगढ़ की अधिष्ठात्री बनी हुई है। वह सामने महान न्यग्रोध धरती का स्वामी बनकर स्थित है। इसकी जटाएँ नीचे आकर पृथ्वी को प्रणाम कर रही हैं। देवगढ़ के अतीत इतिहास और हमारे बीच में काल का जो व्यवधान हो गया है उसका प्रतीक यह वृद्ध न्यग्रोध जान पड़ता है। इसी के लिये किसी कवि ने कहा है—

चित्रं वटतरोर्मूले शिष्यो वृद्धः गुरुर्युवा।
गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस वट की चटशाला का यही चुपचाप व्याख्यान है। शिष्य बूढ़े हो रहे हैं, ज्ञानी गुरु सदा युवा बना बैठा है। यही काल-धर्म है। ज्ञान सबका गुरु है—सदा एकरस, नित्य और चिन्तन यौवन का स्वामी जिसका एक बाल भी कभी जीर्ण नहीं होता, न वह मृत्यु की धौंस में आने वाला है और न उसे काल-धर्म ही खाता है। यह ज्ञान ही हम सबका आचार्य है। जो जिज्ञासु हैं वे इस आचार्य के शिष्य हैं। कला, विज्ञान, साहित्य के अमर रस की प्राप्ति के लिए जो प्रयत्नशील हैं, जो उस रस को आत्मसात करके उसके आनन्द से छक जाना चाहते हैं वे ही सच्चे शिष्य हैं। ऐसे शिष्यों का एकमात्र गुरु या आचार्य 'ज्ञान' है जिसका साक्षात् सर्वत्र सब काल में हो सकता है। अथर्व-वेद में ऐसे ही आचार्य के लिए शिष्यों ने मिलकर प्रार्थना की थी।

आयुरस्मासु धेहि, अमृतत्वमाचार्याय।

हमें एक आयु भर का जीवन-काल चाहिए। परन्तु हमारी आयु रूपी कड़ियों से जो सुदीर्घ शृङ्खला तैयार हो उससे आचार्य को अमरपन प्राप्त हो। (देवगढ़ में लिखते-लिखते अधूरा रहा हुआ पत्र)।

आपका

वासुदेवशरण

[१२८]

लखनऊ

१३-२-४५

प्रिय चतुर्वेदी जी,

ब्राह्म मुहूर्त्त में उठ बैठा हूँ। विचार आ रहे हैं। पटेढ़ी (सारन) के श्री महामायाप्रसादसिंह का पत्र 'क्ष-त्र-ज्ञ' को बधाई देते हुए मिला है। उसी से आपका ध्यान आया। यह कौन सा लेख है जिसकी आपने उनसे चर्चा की। हिन्दी पत्रकार और भारतीय संस्कृति का लेख जहाँ छपा हो, कृपया उसकी एक प्रति भिजवाइए। हिन्दी पत्रों की बात इसी समय मेरे मानस-सिन्धु में घुलमिल गई और एक नये अंकुर के रूप में पनप उठी।

ब्राह्म मुहूर्त्त के इस ब्रह्मदाय में आपको भी साझी बना रहा हूँ। हिन्दी पत्रों के मानस किसी बोझ से कातर जान पड़ते हैं। उन्हें हिमालय की तरह भारी भरकम विषयों की चिन्ता रहती है, विदेशों के समाचार भारतीय जनता के परोसने के लिये, वहाँ के नट-नटी तक की बात छापने के लिये वे छटपटाते रहते हैं, पर गरिष्ठ पारस को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते अपनी ही जनता के लिए आवश्यक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्यकारी पथ्य छापने की ओर उनका ध्यान नहीं जाता। पैरों के नीचे जो हरियाली दूब जीवन-रस से लहलहा रही है, उसकी भी तो कुशलवार्ता पूछनी चाहिए। किसान के नंगे पैरों को स्पर्श करने का सौभाग्य तो उसी को मिला है। क्यों नहीं हमारे पत्र किसान-जीवन के भीतर पैठकर उसकी चर्चा उठाते, क्यों नहीं वे अपने घरों में ही रातदिन बीतने वाले जीवन को सँवारने के लिए आतुर होते ? लखनऊ से 'अधिकार' पत्र निकल रहा है। उसके कन्धों पर सारे विश्व के समाचार देने का ऐसा भारी बोझ लद गया है कि उसे अभी तक लखनऊ के जीवन पर एक विशेष अङ्क प्रकाशित करने का या साप्ताहिक संस्करण के रूप में केवल लखनऊ की ही चर्चा उठाने का अवकाश नहीं मिला। यहाँ कितने उद्यान-उपवन आराम वाटिका हैं, पहले उनके प्रति नागरिकों का क्या भाव था, अब क्या भाव है, कौन उनके प्रबन्ध का उत्तर-दायी है, उनकी हरी दूब के प्रति इतना उपेक्षा-भाव क्यों है, वहाँ के पुष्प किसके दोष से अपना श्वेत हास खो बैठे हैं, वहाँ के फव्वारों में कब से जल का स्पर्श नहीं हुआ है इन प्रश्नों के प्रति और नागरिक जीवन से सम्बन्धित इनके एक सौ एक बान्धव प्रश्नों की ओर हमें सचेत करने वाला कौन है ? 'अधिकार' का नाम आ गया है इसलिये लिख देता हूँ। इसके सुविशाल कार्यालय से पचास गज पर ही सामने एक सुन्दर फव्वारा किसी कला-भावुक नगर-प्रतिनिधि ने केशरबाग चौक की शोभा के लिए कभी बनवा दिया होगा। दिन भर में चालीस पचास हजार व्यक्ति उसकी परिक्रमा के पथ को छूते हुए निकल जाते हैं। पर हाय आज कई वर्षों से उस फव्वारे ने जल की एक बूंद के भी दर्शन नहीं किये। वह खड़ा है जीवन के शुष्क दुर्भिक्ष का अभि-शाप लिये ! किस अपराधी को वह इसके लिए दण्डित करे। वह मूक है पर उसकी मौन भाषा का तीक्ष्ण स्वर हमारी सार्वजनिक जड़ता को रात दिन पुकार कर कह रहा है। चाहिये तो यह था कि उसमें सूरज की धूप में हँसने वाले कुछ लाल पीले सफेद कमल खिलते हुए होते, और नागरिकों के खिल-खिलाते हुए बच्चों के समान प्रसन्न उन कमलों को फव्वारे के उछलते हुए जल के निर्मल छींटे स्नान कराते, पर ज्ञात होता है कि कलहंसों से मुखरित और नील-पीत कल्हारों से सुशोभित वापियों की कल्पना करने वाले भारतीय मानवों का युग चला गया, और उनके नये वंशजों ने अभी तक जन्म नहीं लिया है। जीवन के चारों ओर कला का अभाव है। भय है कि कलामय जीवन की सुधि यदि समय रहते न ली गई तो हम सबको जीवन की कुरूपता ग्रस लेगी। सुरूप जीवन ही तो मानव का सबसे बड़ा लाभ है। हिन्दी पत्रों

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की यही बड़ी भारी राष्ट्रीय सेवा समझी जायगी कि वे समय पर अपने जन-समूह को सुरूप जीवन के प्रति सचेत कर दें और प्रति सप्ताह के संस्करण में इसका अलख जगाते रहें। यदि हमारे यतिमान सम्पादकों ने अपने इस कर्त्तव्य को भली भाँति समझकर इसके लिए उद्योग की गाँठ बाँध ली, तो न केवल 'अधिकार' के पड़ोसी फव्वारे को ही सहानुभूति के चार अक्षर मिल जाँयगे वल्कि उसके सैकड़ों कुटुम्बियों का दुखड़ा भी लखनऊ के नागरिकों के ध्यान में आ जायगा। और एक लखनऊ क्या भारत के सारे गाँव और शहरों के नगरोद्यानों में फूलने-वाले पुष्प नये जीवन का आशीर्वाद पाकर खिलने लगेंगे; एवं उनकी भूमि दूब और दूधी की हरी बानात से सज उठेगी। उस सजावट और खिलखिलाहट में अपनी ही स्वस्थ संस्कृति और सुरूप जीवन की झाँकी हम देखेंगे। ईश्वर करे हिन्दी पत्रों के नागरिक कर्त्तव्य की यह डौंडी शीघ्र बजे !

भवदीय

वासुदेवशरण

[१२६]

लखनऊ

१७-६-४५

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२७ अगस्त से ६ सितम्बर तक का समय शिमला-यात्रा की भेंट हो गया। इस बीच बहुत सी डाक जमा हो गई। आज सबको भुगता लाया हूँ। एकादशी व्रत का दिन था। खूब छक कर काम हुआ। प्रातःकाल भिवानी के दीनोदिया जी को हरियाना के जनपद-कार्य के सम्बन्ध में लिखा। अभी मोतीहारी के श्री गणेश चौबे को बिहार में जनपद कल्याणी योजना का कार्य करने के सम्बन्ध में पत्र लिखा है। अब अन्त में आपका २७।८।४५ का पत्र सामने है। शिमला की सात हजार फुट ऊँची चोटी पर, जिसका नाम समरहिल या ग्रीष्मगिरि है, जब मैं टहलने जाता तो जी रौस और चीड़ के वनों को देखकर आपका स्मरण करता, और शिमले से नौ मील दूर आठ हजार फुट ऊँचे मशोवरे के शिखर पर, जो १५०० सेवों के वृक्षों से लहलहाता हुआ भारी वगीचा है, उसमें जिस दिन मैं वनविहार करने गया, उस दिन भी (५ सितम्बर को) उस प्रशान्त वनदेवी के प्रांगण में बार-बार आपको याद करता रहा। कदाचित आप उस समय मेरे साथ होते तो मुझे विश्वास है कि बीरबहूटी के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे चमकीले रंग वाले सेवों को देखकर आपका आन्तरिक ज्वर अवश्य ही छूमन्तर हो गया होता। जहाँ तक दृष्टि जाती थी, लाल-लाल फलों से लदे हुए वृक्ष स्वास्थ्य की लालिमा से लहलहा रहे थे। उनके दर्शन से स्वाभाविक स्फूर्ति प्राप्त होती थी। मनुष्य तो क्या देवता भी उनका सान्निध्य प्राप्त करना चाहेंगे। पहाड़ में प्रकृति के वरदान से सभी कुछ सुन्दर है। चोटी और घाटी सभी एकदम सीधे और लम्बे वृक्षों से भरी हुई हैं। उन सरल और उदार वनस्पतियों को देखकर चित्त में विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है। रौस (फर) केल आदि सूची भिन्न वृक्ष इन पर्वतीय प्रदेशों की विशेषता है और ऊँचे जाकर देवदारुओं के भी सघन वन कहे जाते हैं। पर इस यात्रा में हमें हिमालय के उन वरद पुत्रों के दर्शन न मिल सके जिन्हें लाखा मंडल की यात्रा के समय जी भरकर देखा था। फिर भी हिमालय सभी जगह मनोरम है। एक से एक विचित्र दृश्य भरे हुए हैं। शिमला के पर्वतीय प्रदेश से देशी राज्यों की ऐसी भरमार है जैसे कटहल में कोए। कोटी, जूंगा की रियासतें तो मिली हुई ही हैं। शिमला से ३३ मील उत्तर में सतलज नदी है। वहाँ सतलज के तट पर एक जगह गरम पानी के सोते हैं जिन्हें यहाँ तत्ता पानी कहते हैं। बहुत लोग यहाँ विहार यात्रा के लिए जाते हैं। इस यात्रा में तो हम केवल संकल्प करके ही संतोष मान बैठे कि फिर कभी आकर महान शुतुद्र नद को अपना अर्घ्य चढ़ावेंगे। यह शुतुद्र हिमालय का शतधा विद्रावर्ण करके पश्चिमी तिब्बत को चीरकर बशंहा रामपुर में अपने लिये मार्ग काटता हुआ पंजाब में बहा है। शुतुद्र का दर्शन करने की लालसा बहुत दिनों से हमारे मन में छिपी हुई है। जिस दिन उसके अमृत-तुल्य जल के तीन आचमन करने का हमें सौभाग्य प्राप्त होगा उस दिन हम अपने आपको सचमुच कृतकृत्य समझेंगे।

शिमला से ६० मील पर कोटगढ़ है जहाँ सेव के वृक्षों को धरती ने खूब माना है। बीसियों मील तक पृथिवी सेव के बगीचों से पटी हुई है। कोटगढ़ के सेवों से शिमला के बाजार भी जगमगाते हैं। कोटगढ़ एक बार अवश्य देखना चाहिए। हमारे साथी वीरसिंह ने हमें विश्वास दिलाया कि वह कभी-कभी एक दिन में ही अपने घर कोटगढ़ तक धावा मार लेता है। छोटी-छोटी घंटियों की माला पहने हुए जिन्हें पहाड़ी भाषा में 'कंगरियालो' कहते हैं (संभवतः किंकिणी-जाल) और रंग-बिरंगे साजों से सिंगारे हुए तगड़े खच्चर रात-दिन बिना आयास के ऊँचे-नीचे पहाड़ों की धूल छानते रहते हैं। संभवतः

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहाड़ी मनुष्यों को ऊबड़ खाबड़ धरती तय करने में उतना भी आयास नहीं जान पडता। कोटगढ़ से आगे वही रास्ता रामपुर व शहर को चला गया है जो सतलज के किनारे एक प्रसिद्ध रियासत है और जहां से तिब्बत को मार्ग जाता है। शिमले से लगभग ढाई सौ मील पर तिब्बत की प्रसिद्ध मंडी गरतरेक है जहाँ लगभग एक करोड़ के मूल्य की ऊन की मण्डी लगती है। कार्तिकी पूर्णिमा के निकट रामपुर में भी एक बड़ा मेला लगता है जिसमें अनेक प्रकार का ऊन का सामान बिकने आता है। ऊन की कताई-बुनाई पहाड़ियों की जन्मघुट्टी के साथ जुड़ी है। रिक्शा खींचने वाले फटेहाल कुली भी तकली पर बढ़िया ऊन कात लेते हैं। अपने हाथ से काता हुआ ऊन बुनकरों को देकर नियत दर पर बुनवा लिया जाता है। पहाड़ों में जो बे-हिसाब दरिद्रता है उसे दूर करने का यह अमोघ नुस्खा है—ऊनी वस्त्र का उत्पादन और व्यापार। यदि जनता की हितैषी संस्थायें और सरकार ऊनी व्यवसाय को संगठित और उन्नत कर दें तो निस्संदेह इन ठंडे प्रदेशों से करोड़ों रुपयों का ऊनी माल तैयार होकर बाहर जा सकता है। आज जो यहाँ की जनता नितान्त दुखियारी बनी हुई है उसका वह चिरन्तन अभिशाप भी बहुत शीघ्र दूर हो सकता है। शिमला, मंसूरी, नैनीताल सब जगह एक सी दुखद गाथा अनुभव में आती है। अर्थात् इन स्थानों में और सब तो सुखी दिखाई पड़ते हैं पर पर्वत की गोद में जो जन्मे हैं, जो माई के लाल इसी धरती के पृथ्वीपुत्र हैं, वे नितान्त दरिद्र दीन दुखी और अपढ़ हैं। उनके क्षीण भौतिक काय पर पैर रखकर ही और लोग इन प्रदेशों में गुलछर्रे उड़ा सकते है। अतएव नैतिक दृष्टि से पर्वतीय जनता को अज्ञान और दारिद्रय के महान दुख से बचाना हम सबका पहला कर्त्तव्य होना चाहिए। उनको सुखी बनाकर आगन्तुक लोग सच्चे अर्थों में सुखी बन सकेंगे। बिना पृथ्वीपुत्रों को सुख दिये सुख का मिलना विडम्बनामात्र है।

इस शिमला-चर्चा में आपके प्रेमी ग्रन्थ की बात रही जाती है। उसकी जो रूपरेखा निर्धारित हो चुकी है उसमें परिवर्तन करने का पर्याप्त कारण होना चाहिए। मुझे प्रान्त-निर्माण के आन्दोलन से भय नहीं होता पर मैं दो योजनाओं के संकर को हितावह नहीं मानता। श्री रघुवीरसिंह जी के पत्र से ज्ञात होता है कि वे बुन्देलखण्ड के इतिहास पर लेख लिख रहे हैं। मैं समझता हूँ कि वह ग्रन्थ की योजना के अनुरूप ही होगा। विशेष तो लेख देखने पर ही कहा जा सकता है। उनका पत्र वापिस कर रहा हूँ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेमी ग्रन्थ की काया का विस्तार संचित धनराशि के अनुसार ही होना चाहिए। ऐसा मेरा आरम्भ से ही विचार रहा है। अब आपने शेष धन संग्रहीत करने का संकल्प कर लिया है, यह शुभ समाचार है। ईश्वर करे आपका सत्प्रयत्न सफल हो।

अक्टूबर के पहले सप्ताह में यदि यशपाल जी सब सामग्री लेकर आ सकें तो उसका सम्पादन हो जायेगा। उससे पहले मैं कार्यव्यस्त रहूँगा और फिर १५ अक्टूबर के बाद भी कई दूसरे कार्यों में फँस जाऊँगा। सम्भव है लखनऊ से बाहर की यात्रा भी करनी पड़े। अतएव १ से १५ अक्टूबर के बीच का समय मुझे अनुकूल होगा।

जमडार के षडानन कुमार की जय हो। उसकी शरण में आप अवश्य ही शीघ्र अपना स्वास्थ्य वापिस पा सकेंगे। भगवान वेदव्यास को आप यथावत 'मधुकर' में उद्धृत कर सकते हैं। मेरा भी मन करता है कि सवा सौ वर्षों की आयु पाकर जनपद कल्याणी-योजना का शतशः विस्तार करता रहूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

श्री मैथिलीशरण जी गुप्त को लिखे गये पत्रों की प्रतिलिपि

नई दिल्ली
१४–२–४६

प्रिय श्री गुप्त जी,

नई दिल्ली में जब से आया हूँ न जाने किस उदार सूत्र ने मन को छू लिया है। आज प्रातः केन्द्रीय दफ्तरों की ओर घूमने गया था। उन अधिकरणों को देखकर विचारों के स्वच्छन्द प्रवाह बह निकले। उनके तोरणों पर मेरे मानस-चक्षुओं ने 'भारतीय जनराज्याधिष्ठानाधिकरणस्य' के सुनहले अक्षर बाँचे। मान्धाता और भरत-सदृश राजर्षियों एवं प्रतापी संघ-राज्यों की आत्मा उन विशाल भवनों में नवावतार पाने के लिए प्रकट होती हुई जान पड़ी। भारत के भावी छत्र का उदीयमान चित्र जिस समय नेत्रों में आया मेरे मुख से सहसा निकल पड़ा—

महते क्षत्राय
महते जान राज्याय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन दो सूत्रों में राष्ट्र की युग-युग से संचित सदाशाएँ प्रतिफलित हैं। आज इनकी पूर्ति के लिए भारतीय प्रजाएँ सोत्साह हैं—

महान जनराज्य के देवताओं की विजय हो।
सत्य और न्याय के द्वारा भारतीय राष्ट्र का विकास हो
समता और स्वतन्त्रता की कर्णिकाओं के साथ राष्ट्र की विजय-वैजयन्ती
नई दिल्ली में ऊँची उठे
समता
स्वतन्त्रता

आज की उषाकालीन किरणों में इस प्रकार का नवदर्शन प्राप्त हुआ है। उसके भागधेय में आपको भी सम्मिलित कर रहा हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३०]

मोहन जोदड़ो
१–५–४६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

सप्रेम नमस्कार। आपके पत्रों को सँजो कर रखता गया हूँ कि अवसर पाते ही विस्तृत उत्तर लिखूँगा। इधर मेरे पैरों में चक्कर रहा है। रवीन्द्र के चिरसारथि की तरह दो महीने तक 'मुखरित पथ दिनराती' का अनुभव करता रहा हूँ। सारनाथ, पाटलिपुत्र, नालन्दा, पावापुरी, राजगृह आदि प्राचीन स्थानों में घूमकर अब लाहौर होता हुआ सिन्धु की प्राचीन सभ्यता के दर्शन परिचय के लिए २८ अप्रैल को यहाँ मोहनजोदड़ो आया। स्टेशन पर ही ताँगेवाले के मुँह से सुना कि स्थानीय उच्चारण 'मोयाँजोदड़ो' है जिसका अर्थ है 'मरे हुए की ढेरी या टीला'। नाम की निरुक्ति ने इस स्थान के साथ बड़ा हित किया। अपढ़ जनता ने इसे भूतों का टीला समझकर यहाँ की ईंटों और मलवे को अछूता रहने दिया। सम्भवतः इसी कारण ईंटों की लूट से जो दुर्गति हड़प्पा की हुई, मोहनजोदड़ो उससे बचा रह गया (मोहनजोदड़ो नाम स्थानीय उच्चारण की अशुद्ध अनुकृति है, अब उसकी एक व्युतत्ति 'मोहन का टीला' अर्थात् 'मोहन का बसाया हुआ गाँव' इस प्रकार भी की जाती है, पर वस्तुतः 'मुयां जो' अथवा 'मोयाँ जोदड़ो' ही शुद्ध सिन्धी नाम है।)

वर्तमान सिन्ध प्रान्त का प्राचीन नाम 'सौवीर' था और आजकल पंजाब का जो इलाका सिन्ध सागर दोआब कहलाता है, उसका पुराना नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'सिन्धु जनपद' था। सिन्ध सौवीर नामों का जोड़ा प्राचीन भारतीय भूगोल में प्रसिद्ध है। सौवीर की राजधानी 'रौरुक' नगर थी जिसे आजकल रोहड़ी या रोड़ी कहते हैं। रोड़ी सिन्धु नद के बाएँ या पूर्वी तट पर है। उसके ठीक पश्चिमी किनारे पर दूसरा प्रसिद्ध नगर सक्खर है। रोड़ी से सक्खर तक सिन्धु पर पुल बना हुआ है। सक्खर भी अति प्राचीन स्थान है। इसका पुराना नाम 'शार्कर' था जो पाणिनि की अष्टाध्यायी में भी आया है। वहाँ लिखा है कि पहाड़ी कंकड़-पत्थर (संस्कृत शर्करा) के पास बसा होने के कारण इसका शार्कर नाम पड़ा। आज भी सक्खर से पहाड़ी प्रदेश शुरू हो जाता है; सक्खर से रेल की लाइन लड़काना होती हुई सिन्धु के दाहिने किनारे होती हुई (डोकरी तक जाती है जो कि मोहनजोदड़ो का स्टेशन है) सिन्धु नद भूमि का महान देवता है। अब गाड़ी तैयार है और हम लोग प्रातःकाल के सुखद समीर का आनन्द लेते हुए सिन्धु को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिये व शरीर को उसके जल से प्रोक्षित करने के लिए जा रहे हैं। शेष वृत्तान्त फिर।

वासुदेवशरण

लगभग ५ घण्टे तक सिन्धु नद के तट पर जंगल और गाँवों की सैर से नया अनुभव प्राप्त हुआ। यह देश भी विचित्र है। अब से पाँच हजार वर्ष पहिले की खुदाई में जिस प्रकार की गाड़ियाँ मिट्टी के खिलौने में प्राप्त हुई हैं ठीक वैसी ही शक्ल की गाड़ी आज भी सिन्ध के गाँवों में चलती हैं। गाँवों में मिट्टी के बर्तनों और घड़ों पर काली रेखाओं के अङ्कन भी बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। अनाज रखने के बड़े और छोटे लम्बोत्तरे घड़े बहुत से घरों के बाहर रक्खे हुए दिखलाई पड़े। इनका आकार भी पुराने घड़ों से मिलता है। अब इन कच्चे घड़ों को 'गोन्दी' कहते हैं। पग-पग पर सिन्धी भाषाभाषियों के मुँह से 'पुराने' संस्कृत-प्राकृत शब्द सुन पड़ते हैं। बैलगाड़ी पर बैठते ही गाड़ीवान ने बताया कि पलाल रखकर गाड़ी में बैठने की जगह को गुदगुदा बनाया गया था। यहाँ यह शब्द ठेठ संस्कृत रूप में है जिसको अपने यहाँ पुवाल, पयार कहते हैं। सिन्धु नद के किनारे पर 'डब्ब' का घना जंगल है। यह 'डब्ब' संस्कृत की 'दर्भ' या 'कुश' है जिसे सारे पंजाब सिन्ध में 'डब्ब' नाम से पुकारते हैं। मार्ग में झाऊ के पेड़ों का बहुत दूर तक घना जंगल चला गया था। सिन्धु का कछार गंगा-यमुना के कछारों की तरह झाऊ से भरा हुआ मिला। एक बार काशी में पढ़ते हुए गंगा के तटवर्ती झाऊ के जंगल में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने मार्ग भूलकर अपने आपको खो ही दिया था। कहीं कहीं बबूल के वृक्ष भी थे। मार्ग में सर्वत्र गोभी घास अपने पीले फूलों से इतरा रही थी। इधर उसे 'मंत्तर' कहते हैं।

मोहनजोदड़ो में प्राचीन असुर-प्रधान सभ्यता के अवशेषों का परिचय प्राप्त करके हड़प्पा आया। यह प्राचीन हरियूपा नगरी है। यहाँ भी सिन्धु-सभ्यता के अवशेष मिल चुके हैं। आजकल पुरातत्त्व विभाग की ओर से खुदाई हो रही है। पुराने नगर या पुर का परकोटा ढूँढ़ निकाला गया है जिससे मालूम होता है कि इन पुरों की बनावट कोट या कोटले के ढंग पर थी। संभव है ऐसे पुरों वाली सभ्यता को ध्वस्त करने के कारण ही आर्यों के प्रधान देवपुर में या पुरन्दर कहलाते रहे हों। इन दो स्थानों की सभ्यता का सम्यक् अध्ययन अपने देश में होना चाहिये। प्राचीन इतिहास की गूढ़ अनुश्रुति सुलझाने की कुंजी हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के खंडहरों में ही कहीं छिपी रखी हुई है। देखें किस बड़भागी के हाथ लगती है। आज यहाँ तक्षशिला आकर यह पत्र पूरा किया है।

वासुदेवशरण

[१३१]

नागार्जुनी कोंडा (जिला गुंटूर)
२३-५-४६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

सुदूर मद्रास प्रान्त के गुण्टूर जिले में कृष्णा नदी के तट पर पर्वतों से परिवेष्टित नागार्जुनी कोंडा स्थान है। इसका पुराना नाम विजयपुरी था जिसे दक्षिण के इक्ष्वाकुवंशी राजाओं ने अपनी राजधानी बनाया था। ईसवी तीसरी शताब्दी में यहाँ बीसियों स्तूप थे जिनके चारों ओर संगमरमर के शिलापट्ट पड़े थे। ये शिलापट्ट शिल्प-लक्ष्मी के अनुपम प्रतीक हैं : हमारा सौभाग्य है कि प्राचीन भारतवासी अपने अनन्त कला-प्रेम, सौन्दर्य और यौवन को पत्थरों के अङ्कों में अमर बनाकर छोड़ गये हैं। जैसी सुन्दरता इन शिलापट्टों पर अङ्कित है वैसी भारतीय कला में अन्यत्र कम देखने को मिलेगी। पत्थर में चित्र जैसा रेखा-लालित्य उत्पन्न किया गया है। शिल्प की यह सुन्दर सामग्री राष्ट्र की बहुमूल्य निधि है।

यहाँ वनप्रान्तों में अनेक वन्य जातियाँ बसती हैं। अभी अभी लम्बाड़ी बालाओं का नृत्य हमने देखा। बनदेवता की चार स्वस्थ और प्रसन्न पुत्रियाँ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने उत्साह और उमंग भरे मन को नृत्य में प्रदर्शित कर रही थीं। कितना स्वच्छ और स्वस्थ विनोद यह था जो केवल वन्यप्रदेशों में प्रकृति के अपने प्रांगण में सुरक्षित रह गया है। रक्ताम्बर की घाघर और कांच के परेलों से सुशोभित पैरों में घुंघरू और वाँकड़ी, हाथों में हाथी दांत की वलियाँ (वलय), कानों में कुण्डल और नाक में चन्द्रिका पहने हुए वनबालाएँ अत्यन्त सुन्दरी लगती थीं। नृत्य और गीत इनके प्रसन्नता भरे स्वास्थ्य की प्राणवायु हैं। पैर और हाथों के संचार में वे भीतरी प्रसन्नता को उँडेल कर इन एकान्त प्रदेशों को आनन्द से भर देती हैं। यहाँ रात दिन पर्व और उत्सव का आनन्द है जो उन्हें जीवित रखता है। यह जाति हिन्दू है और उनकी भाषा और आकृति से ज्ञात होता है कि वे किसी समय फिरन्दर रूप में पंजाब या उत्तरी भारत से यहाँ आकर बसी होंगी। उनकी निजी बोली चारों ओर की तेलुगु भाषा से भिन्न है, यद्यपि यह जाति तेलुगु भी बोलती है और समझती है। बाहुओं में भरे हुए हाथी दांत के कंगनों के लिए उनकी बोली में 'वलियाँ' शब्द है जो स्पष्ट संस्कृत 'वलय' से बना है। वलय से ही निर्गत 'वला' (बहुत्वले) शब्द मेरठ की बोली में इसी अर्थ में आज तक व्यवहृत होता है। पैरों के घुमावदार कड़ों के लिए प्रयुक्त उनका 'वाँकड़ी' शब्द भी हिन्दी में चालू है। पंजाब और पश्चिमी युक्तप्रांत की कितनी ही उठाऊ चूल्हा जातियों में काँच के गोल टुकड़े सींकर बनाये हुए वस्त्रों को पहनने की प्रथा आज तक जीवित है। बनजारों में एव जाट-गूजरों की स्त्रियों में भी इस प्रकार के काँच के परेलों (उत्तरीय) का रिवाज है। हमारे मित्र श्री जवाहरलाल जी चतुर्वेदी ने ब्रजभाषा का एक लोकगीत मुझे सुनाया था, जिसमें एक नवेली अपने रसिया पति से काँचों का परेला मोल ले देने का आग्रह करती है। लम्बाड़ी बालाओं को भी काँच-जटित वस्त्र बहुत प्रिय हैं। रंगीली घाघर और अँगिया में काँच के गोल चन्दों की पंक्तियाँ टाँककर वे उन्हें अनोखे रूप से सजाती हैं। यह प्रथायें उनके उत्तरापथ से आने की सूचना देती हैं। नाचते समय वे कुछ गीत भी गाती हैं जो उनकी अपनी बोली के हैं। उनके संकलन और अध्ययन में इस जाति के विकास पर बहुत प्रकाश पड़ सकता है। हमारे देश में न जाने कितनी जातियाँ अभी तक अपने रंगभरे जीवन को पर्वत और वनों की गोद में सुरक्षित रखकर जीवित हैं। जब तक उनमें नृत्य और गीत का प्रचार है तब तक वे अविनेश्वर हैं। उनका सख्यभाव प्राप्त करके उनका समग्र अध्ययन करने के लिए कितने ही लोकवार्ता-शास्त्रियों की एवं नृतत्व-विशेषज्ञों की आवश्यकता है। ईश्वर करे प्रकृति के स्वच्छन्दचारी प्राणवायु और कृष्ण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की निर्मल जलधारा की भाँति उन जातियों का जीवन और उनकी लोकस्थिति भी चिरंजीवी हो।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३२]

फिल्लौर (ट्रेन में)
२४–१–४७

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका १०-६-४७ का कृपापत्र मिला—'मधुकर' का अवसान-पत्र। रेखाचित्रांक के साथ इस अत्यन्त उपयोगी पत्र ने अपनी जीवनलीला समाप्त कर दी, या लीला-संवरण के लिए उसे बाध्य होना पड़ा, यह जानकर मार्मिक दुख हुआ। मुझे और मेरे परिवार के बालकों तक को 'मधुकर' प्रतिमास जीवन-रस से तृप्त करता था, उसके विछोह में भावों में विषाद आना स्वाभाविक है। मेरी ही तरह और पाठक भी 'मधुकर' के उत्सन्न होने से दुखी होंगे। जनपद-आन्दोलन का तो 'मधुकर' प्रतीक ही बन गया था। जनपद कल्याणीय भावों के प्रचार में 'मधुकर' से जो सहायता मुझे मिली उसके लिए मैं चिर ऋणी रहूँगा। 'मधुकर' के सहयोग के बिना मेरा कार्यक्षेत्र अत्यन्त सीमित रह जाता। जनपदीय आन्दोलन जनपदजन की पुनः प्रतिष्ठा का मन्त्र है। यह अलख समय के साथ दिन दूना रात चौगुना होकर बढ़ेगा। तीन दिन बाद वसन्त पंचमी है। आज दिन भर नेत्रों को तृप्त करने वाली खेतों की हरियाली देखता रहा हूँ। मेरा विश्वास है कि जिस प्रकार वसन्त के आने से वनस्पति जगत में जीवन का रस बस जाता है और फुटाव लेता है, वैसे ही स्वराज्य और स्वातन्त्र्य के स्वागत-काल में प्रजाजनों के जीवन का अक्षय रस नये प्रकार से अंकुरित हो उठेगा। इस नये जीवन की खोज और पहचान के लिए ही जनपदीय आन्दोलन एवं जनपद कल्याणी योजना का सूत्रपात हुआ है। एक केन्द्र क्या सैकड़ों केन्द्रों से इस प्रकार का शोधकार्य करना आवश्यक होगा। ग्रामवासिनी भारत माता ने अब तक अपना जो स्वरूप सुरक्षित रखा है उसके परिचय के लिए शतधा प्रयत्न करने होंगे और किये जायेंगे। इस कार्य में युगवाणी की आज्ञा का पालन है। इन्द्रियों के द्वारा भूमि से परिचित होने की जो प्राचीन परम्पराएँ थीं, विदेशी शिक्षा के कारण उनका द्वार रुँध गया और हमारे मन और बुद्धि को मानों पक्षाघात हो गया। यह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिस्थिति असह्य है। इससे उबरने के लिए ही पुनः भूमि की शरण में जाने की आवश्यकता है। मेरे विचार में चलने का दूसरा मार्ग ही नहीं।

नान्यः पन्था विद्यते अयनाय।

आशा है 'मधुकर' की वाणी लोक की सामूहिक किलकारी बनकर पुनः पुनः उठेगी और पृथिवी से आकाश तक फैले हुए हमारे दिगन्तराल को सर्वथा भर देगी। इसके लिए शरीर और शक्ति रहते हमें पुनः पुनः प्रयत्न करने की आवश्यकता है। आशा है राजामंडी की जिजमानी का नाता इसमें हम दोनों को जीवन पर्यन्त बाँध रखेगा। सवा सौ वर्ष जीवित रहने का आपका आशीर्वाद मैं इस क्षण शिरसा ग्रहण करता हूँ। पर यह जीवन कर्म से भरा पूरा हो तभी सार्थक होगा अन्यथा नचिकेता के शब्दों में 'अति दीर्घे जीविते को रमेत' लम्बे जीवन की परिनिष्ठा क्यों पीटें। कर्म बड़ी शक्ति है, कर्म रत्न है, उसकी प्राप्ति हुई तो सब कुछ मिला, नहीं तो कोरे ही रहे। इस युग में जनता के मन डोल गये हैं। ईश्वर का दर्शन किसी को प्रत्यक्ष नहीं होता, देवता भी आँख से ओझल है। किस पर आस्था करे और कहाँ जाकर लोक टिके यह बड़ा भारी प्रश्न है। इससे जीवन में जो शून्य पैदा होता है उसको कोई तत्त्व भर सकता है तो वह सत्यात्मक कर्म हैं। सत्यात्मक कर्म ही डिगे हुए विश्व की धुरी बन सकते हैं, अन्यथा कहीं टेक नहीं मिलती। सत्यात्मक कर्म से ही लोक के मानस में वह दृढ़ भूमि उत्पन्न होगी जिस पर फिर अविचाली भाव से पदप्रतिष्ठा प्राप्त हो सकेगी। अपने चारों ओर जब मैं विचार करता हूँ तो ज्ञात होता है कि आज गाँधी जी के जीवन में इस उदात्त सत्यात्मक कर्म के हमें दर्शन मिलते हैं। सत्य पर प्रतिष्ठित उनकी कर्मशक्ति को देखकर जीवन में श्रद्धा उत्पन्न होती है और जीवन के प्रयत्न से अपने और मानव के कल्याण की एक उज्ज्वल आशा प्राप्त होती है। जो उस कर्म-शक्ति से जितना प्रकाश ले सकता है उतना ही छोटा या बड़ा उसका जीवन है। आत्महित और जगकल्याण दोनों कर्म की धुरी में पिरोये हुए हैं। कर्म की शक्ति को हम भूल गये हैं, आज के भारतवासी को फिर से उसे पहचानना है। सत्यान्वित कर्म से संचालित जीवन इस युग के लिये चाहिए। ऐसा जीवन ही समाज की धारा के साथ ब्यौंत पूर्वक जुड़ा हुआ पाया जायगा अन्यथा आधे पराधे जीवन के क्षुद्र बोझ को ढोने वाले व्यक्ति ठट्ठ के ठट्ठ हैं।

दिल्ली में आ अवश्य गया हूँ पर मन मेरा मध्यदेश में ही है। दिल्ली एक बड़े भारी यन्त्र की तरह है जिसमें आत्मा चींटी की भी नहीं। यहाँ के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारे विचार और कार्यकलाप यन्त्र सदृश हो रहे हैं—मानवी भावों के गर्म संस्पर्श से विरहित। परिवर्तन होना चाहिए। सम्भव है परिवर्तन की बेला आई हो। अभी संक्रान्तिकाल है। अभी तो अधिकांश व्यक्ति निष्प्राण पुर्जों की भाँति यन्त्र को ढकेल रहे हैं। यहाँ के व्यक्तियों के नेत्रों में गर्म आँसुओं का अभाव है, करुणा के अनुभव से वे कभी गीले नहीं होते। मनुष्यों के हृदय सहानुभूति के भावों से शून्य पड़े हैं। बाहर से सारा देश देहली की ओर रह रहकर देखता है पर देहली उनको कभी नहीं देखती। क्या देहली को अपने इस संचित निष्करुण पाप का प्रायश्चित करना पड़ेगा? अथवा देहली के उद्धार या कायाकल्प के लिए कोई मनस्वी दधीचि आत्मोत्कर्ष करेगा। भारती महाप्रजाओं को देहली ने अनेक बार निराश किया है। यहाँ का वातावरण नकारात्मक जीवन और निर्माणशून्य विधान से भर गया है। यहाँ की कमाई में बोझ बहुत है, चमक नहीं।

जालंधर आया और निकल गया। मैं प्रवाह में लिखता गया। कल प्रातः तक्षशिला पहुँचूँगा। यशपाल जी का एक पत्र देहरादून से आया था। दिल्ली में अभी उनसे भेंट नहीं हो सकी। इधर काशी के रायकृष्णदास, बम्बई के डा० मोतीचन्द्र और श्री देवेन्द्र सत्यार्थी से भेंट हुई।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३३]

नई दिल्ली
२३-११-४८

प्रिय चतुर्वेदी जी,

सुना है श्री गुप्त जी ने आगरा विश्वविद्यालय से डाक्टरी की उपाधि लेना स्वीकार कर लिया है। गुप्त जी को यह डाक्टरी डोज सुखद हो। अपने राम तो खिन्न हुए और उस खेद में आपको भागीदार बनाने के लिए उस पत्र की प्रतिलिपि भेजता हूँ जो आज गुप्त जी को लिखा है।

भवदीय
वासुदेवशरण
नई दिल्ली
२३-११-४८

प्रिय श्री गुप्त जी,

१६-११-४८ का कृपा पत्र मिला। आपके भाग्य में क्या मैं मानूँ, ऐसा बदा है कि 'श्री' को डाक्टरी पदच्युत कर डालेगी? मुझे तो अपने लिये

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री की रक्षा करने का भला सारा प्रयत्न करना पड़ता है। जिस दिन 'सरदार' के गढ़ पर डाक्टरी ने छापा मारा, मैंने समझ लिया कि प्राचीन पदवियों का कोट गिर गया! जब प्राचीन 'अभ्यर्हित पदों' के उद्धार का युग आना चाहिए था उसी समय यह सौत डाक्टरी आ गई। झनझन गुड़िया की लोक कहानी याद आती है। बारह बरस तक सेवा 'श्री' ने की। अन्त में छलिया डाक्टरी ने बाजार लूट लिया।

आपका
वासुदेवशरण

[१३४]

नई दिल्ली
३१-१-१९४९

प्रिय चतुर्वेदी जी,

कल दिन भर उपवास के बाद राजघाट पर बापू के चितास्थल के दर्शन किये। अर्धरात्रि के समय पिछले पत्रों की सम्भाल करते हुए आपका पत्र सामने है। पौष सुदी २ को ५७वीं वर्षगाँठ पूरी करने पर आपने मुझे भी सद्भावनाओं में साझा करने का आमन्त्रण दिया था। मनुष्य अपने लिए स्वयं मार्ग का निर्माण करे और उस पर दृढ़ता से चले। 'सत्येन पंथा विततो देवयानः' —देवायन मार्ग सत्य से बिछा है। देव जिस मार्ग से जाते हैं उस पर सत्य का चँदोआ छाया है। इस उक्ति में कितना सत्य है उसे हमें पकड़ना है—संकल्प और कर्म में ओझल होते और टिमटिमाते सत्य को हमें पकड़ना है। कभी वह मुट्ठी में आया जान पड़ता है, पर फिर छूट जाता है और अपने पीछे विषाद की रेखा छोड़ जाता है। इसी तरह मन बार-बार जूझने की लालसा लिये रहता है। कहीं एक बार हमारी दृढ़ मुट्ठी में आया हुआ सत्य हमारा चिरसखा बनाया जा सकता तो जीवन में हमारे कर्त्तव्य-कर्म का क्षेत्र कितना विस्तृत और व्यवस्थित बन जाता। सत्य के द्वारा जिसका कर्त्तव्य-कर्म रच गया है उसी के मन में तृप्ति, प्रसाद और उत्साह बसते हैं, वही अपने जीवन में अपने विचार और वाणी को ढला हुआ देखकर सुखी होता है। 'आमार जीवनेइ आमार वाणी' बापू का यह बंगला वाक्य उनके सत्यात्मक जीवन का सूत्र है। मानसरोवर की भूमिका वाली पुस्तक 'मेरी कैलाश मानसरोवर यात्रा' हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ने छापी है।

आपका
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१३५]

नई दिल्ली
१२-५-४६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

समय पर जो कार्य न किया जाय काल उसका रस पी लेता है। तृणावर्त को पछाड़ो। हमारे चारों ओर तिनकों का चक्कर है। छोटे-मोटे अनावश्यक कार्य और चिन्ताएँ, विचार और मन के खटके तृण या तिनके हैं, वे निस्सार है। उन्हीं में सारा जीवन अटका रहता है। इस तृणजाल को वश में करके जो समय को मुट्ठी में कर लेता है, वही कुछ कर पाता है। अथवा जो थोड़ा वहुत हम कर पाते हैं वह भी उसी समय जब इस तृणावर्त को जीत लेते हैं। अनेक साहित्यिक मित्रों के जीवन तृणावर्त में घुमनी खा रहे हैं। मन की दृढ़ इच्छाशक्ति, जागी हुई चेतना, यह आत्मविश्वास कि जो कुछ मैं हूँ इसी समय हूँ (योऽहमस्मि सोऽहमस्मि) तृणावर्त के भँवर से निकलने में सहायक हो सकते हैं। कृष्ण ने तृणावर्त को आकाश में उठकर पछाड़ा था। हमें भी भूमि के तिनकों के ऊपर उठना होगा विचार के जगत में।

वासुदेवशरण

[१३६]

नई दिल्ली
१२-५-४६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

दोनों पत्र मिले—जुड़वा भाइयों की तरह। साहित्यसेवी नौकरी के फंदे में फँस जाय यह प्रकृति का उसके विरुद्ध षडयन्त्र ही है। क्या ही अच्छा हो यदि आपको, मुझे और देवेन्द्र सत्यार्थी को नौकरी से अर्द्धचन्द्र देकर कोई आकाश-वृत्ति से रहने के लिए छोड़ दे। फिर तो 'अमृतं स्यादयाचितम्' का स्वाद आ जाय। आपने यह फल चखा भी होगा पर मैं तो पढ़ने के बाद ही तुरन्त सरकारी शिकंजे में कसा गया और आज तक जनसम्पर्क की प्राणमयी धारा को छूकर स्वयं अंगारा वनने से वंचित ही रह गया। क्या ही अच्छा होता यदि सन् १९३४ के त्यागपत्र के बाद फिर सरकारी नौकरी के भँवर में पड़ने के वजाय मैं बापू के मार्ग पर चलने का साहस करता, तो आज जीवन में सेवा की शक्ति का कितना विस्तार हुआ होता और सत्य के आमने-सामने जूझने की, या दो चार हाथ हो लेने की साध पूरी हुई होती। राज्य के अन्न में तरमाल तो रहता है, स्वास्थ्य नहीं। अतएव यदि आपको फीरोजाबाद की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दशांगुल भूमि में फिर पैर टेककर आकाश से टपकने वाला अमृत चूसकर जीना पड़े तो यह सचमुच कल्याण के लिये ही होगा। बुद्ध के शब्दों में यह 'अपरिहानेयधम्म' है परिहाणि या मन को छीजने से बचाने वाला बीमा है। इसे पाकर प्रसन्न मन से अपनी जन्मभूमि में जाकर बैठिये वह आपको पुसेगा। मेरे लिए भी मनाइये— कब लौं हौं यहि रहनि रहौंगो।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३७]

सेन्ट्रल एशियन एण्टी ग्रेरोज म्यूजियम,
नई दिल्ली
८-७-४६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका २-७-४६ का पत्र मिला। 'धरती' लेख 'पृथ्वीपुत्र' भावना की पूर्णाहुति है। 'पृथ्वीपुत्र' संग्रह छपकर तैयार हो गया था, तब 'धरती' छपकर आया और श्री यशपाल जी ने कुछ अपनी प्रेरणा से और कुछ मेरे अनुरोध से उसे संग्रह के अन्त में छाप दिया है। 'धरती' में हृदय का रस समाया हुआ है। मित्रवर मोतीलाल जी के शब्दों में व्यान प्राण पर बल देकर मैंने उसे लिखा उसमें मेरा कुछ नहीं है। किसान, हलधर, पृथ्वी-पुत्र, जनपद जन के हृदय की टीस उसमें है, उसी के शब्दों में उसकी बात पिरोई गई है। आह! यदि हम किसान की बात समझ पाते तो हमारे दुखड़े परली पार हो जाते। जानपद जन की बात सीधी है, राष्ट्रपिता उसे समझकर कह गये थे, पर हम उसकी सरलता के कारण ही उसमें आस्थावान् होने से चौंक रहे हैं। और आगे बढ़ते हैं फिर ठिठक जाते हैं। हमारी पूर्वपद्धति उस सरलता को जटिल बनाकर रखती है, और किसान का हित पकड़ में नहीं आता। काश, धरती तक हम पहुँच सकते। वहाँ ही हमारे सब प्रयत्नों की सच्ची कसौटी रखी है। जो प्रयत्न हमारे या शासन के द्वारा होता है, धरती पर उसका कैसा कस उतरता है, इसी परख से प्रयत्नों का खरा खोटापन जाना जायगा। 'धरती' सदा बारह बानी सोना है, उसमें ओख नहीं है। धरती से जो जितना दूर है वह उतने ही बान हटा हुआ है।

मेरी भाषा पर आप व्यर्थ मुग्ध होते हैं। उसमें सब-कुछ किसान को श्रेय है। उसकी जो थोड़ीबहुत प्रसादी मुझे मिल जाती है उसी से भाषा में वर्णन आ जाता है। जनपदों में तो भाषा और भावों के भण्डार भरे हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'षडानन' के नूतन जन्म मंगल का समाचार पढ़कर मन प्रफुल्लित हो गया, मेरा उसे वात्सल्य भाव से भरा आलिंगन। उसके अच्छोद सरोवर में कूदकर जो स्नान किया था उसकी याद अभी तक है। पक्के बँधे घाट के बीच में क्या सरवर की शोभा है ? कुण्डेश्वर के जल प्रपात पर जो भावधारा बही थी अभी तक उसका सान्निध्य मुझसे नहीं छुटा है। यही मेरे लिए पर्याप्त आनन्द की बात है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३८]

नई दिल्ली
१७-२-५०

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आज प्रातः ही १२ दिन की राजस्थानीय यात्रा से मालामाल होकर लौटा हूँ। शब्दों की मनचीती राशि मेरे हाथ लगी है। शिल्प और स्थापत्य के शब्दों के भण्डार राजस्थान के परम्परागत स्थापित गुरुओं के पास भरे हैं। कोटा में नन्दराम सिलावट से दिन भर मैं शब्दों का अमृत-दुग्ध दुहता रहा और मन न छका। उसके पास सामग्री का अटूट सोता है। जालियों के तरह-तरह के कटावों के अनेक चित्र उसने बनाकर दिये। छत्रांस जाली के खुरपा वेंटी, तीकरी, डोलरी, कोहनी, डमरू, अरा छत्रांस आदि कितने ही भेद मालूम करके हृदय गद्‌गद् हो गया। जगती पीठ में जितने घाट के गोले गलते बनते हैं उनके नाम और भेद जानकर मेरा मन आनन्द से भर गया। अनपढ़ नन्दराम को मैंने हृदय से अपना गुरु मानकर प्रणाम किया। वह भारतीय स्थापित सम्राटों के वंशज्ञान का सच्चा उत्तराधिकारी है। अंग्रेजी शिक्षा ने उसकी श्रुत-ज्ञान-निधि को निर्मूल करने का अवसर नहीं पाया। इसी से नन्दराम जीवित बचा रह गया। एक हम हैं अंग्रजी बूकने वाले, पर तत्त्व से कोरमकोर। जब नन्दराम ने मेरी नौंधनी पुस्तक में (नोटबुक के लिए नौंधनी चालू शब्द है सं० निबन्धनी) मागपेच और एक नाग—आठ नागनी का माडना लिखकर दिया, मैं थोड़ी देर के लिए मध्ययुग के शिल्प-समृद्ध वातावरण में पहुँच गया। मैं जो शब्द उससे पा सका हूँ उन्हें एक लेख में उतार कर सबको उसमें साझीदार बनाऊँगा।

अलवर के पंडित रामदत्त से मुझे तलवारों के भेदों को बताने वाले शब्दों का जखीरा ही मिल गया था। वह निधि भी सुरक्षित है। पंडित

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रामदत्त मेरी प्रार्थना पर इस विषय की एक पुस्तक लिख रहे हैं। राजस्थान, चित्रकला और स्थापत्य की जन्मभूमि है। मैंने इस यात्रा में कितना अधिक देखा और सराहा है।

गोर्की का जो मन्त्र आपने भेजा है—Every region has its own soul. उसी की व्याख्या मेरा राजस्थान-सम्बन्धी अनुभव है। क्यों नहीं इस देश में शीघ्र सौ पचास व्यक्ति फेंटा बाँधकर इस काम में लग जाते? दस बीस वर्ष बाद जब पुराने लोग ढुलक जायेंगे कुछ करना, न करने जैसा होगा। हमारे यहाँ सच्ची राष्ट्रीयता की सुधि लेने वालों का टोटा है। अन्तर्राष्ट्रीयता के पचड़े में मन लगाना अपने को नहीं भाता। जब अपने द्वारे पर ही साहित्य और कला की लोकलक्ष्मी बिललाती हुई हमारे ध्यान और कर्म की बाट देख रही है।

१०-१२ दिन की जमा हुई डाक को निपटाते हुए इस समय रात्रि के पौने तीन बज गये हैं। नमस्कार, अब सोकर प्रातः उठना है।

पुनश्च—

आजकल मेरा मन काम के लिए तरंगित है। सन् ४३ की पुनरावृत्ति हो रही है। दिन भर दफ्तर में फाइलों का गड्डा पीटकर निबटाया। लौट कर नेहरू-अभिनन्दन ग्रन्थ देखता रहा। वात्स्यायन जी ने अपूर्व साहित्यिक यज्ञ रचा है। इस प्रकार काम के लिए स्वात्मा की आहुति देने वाले कार्य-कर्त्ता बहुत थोड़े हैं। लेखों और चित्रों के चुनाव में बहुत ही सुरुचि से काम लिया गया है। वात्स्यायन जी को मैंने अपना गुरु मान लिया।

गणेश चौबे ने धानों के कितने ही नामों पर एक बिहारी लोकगीत भेजा है। कृष्णानन्द (सम्पादक नागरी प्रचारिणी पत्रिका) के द्वारा भेजे हुए दो लेख देखकर लौटाये हैं। नया समाज' के संस्कृति विशेषांक के लिए सेंगर जी को एक योजना पर विचार लिखकर दिये हैं। श्री कंठमणि शास्त्री से सूरदास के दो सुन्दर पद जो प्रकाशित हैं मिले हैं, उन्हें पोद्दार-ग्रन्थ में दे रहा हूँ। मथुरा से श्री प्रो० गोपालदत्त जी ने भारतीय चिड़ियों के नामों के विषय में लम्बा पत्र लिखा है, जिसमें लोक में प्रचलित नामों की वैज्ञानिक छानबीन करने की ओर उचित ध्यान खींचा गया है। इसकी प्रतिलिपि पत्र के साथ सुरेशसिंह जी के पास भिजवा रहा हूँ। बम्बई के श्री अहिवासी जी को सूर का एक रंगीन चित्र बनाने के लिए लिखा है। बंगाल हिन्दी-मंडल वाले

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहते हैं। कलकत्ते से डा० राधाकुमुद मुखर्जी आकर मेरे यहाँ ठहरे हैं। कल प्रातः से उनके साथ अपना 'पाणिनि' निबन्ध दोहराना है। एवमस्तु।

भवदीय
वासुदेवशरण

श्री रामचन्द्र वर्मा को प्रामाणिक हिन्दी-कोश के सम्बन्ध में लिखे गये पत्र की प्रतिलिपि

नई दिल्ली
३०–४–५०

प्रिय वर्मा जी,

२७-४-५० का पत्र मिला। कल कोश की प्रति भी मिली। अनुग्रहीत हूँ। प्रस्तावना ध्यानपूर्वक पढ़ी। कोश भी कितने ही स्थानों पर देखा। अकार प्रायः सम्पूर्ण देख गया। इस समय हिन्दी में कोशों की बड़ी आवश्यकता है। इस दिशा में जो प्रयत्न किया जाय, स्वागत के योग्य है। जो पहले हो चुके हैं उनके कंधों पर खड़े होकर, जितना देख सके, उससे आगे हमें देखना है। आपने अपनी घटती हुई नेत्र-ज्योति का सदुपयोग करके इतना वृहत् प्रयास किया, सचमुच यह प्रशंसा के योग्य है। कितने ही शब्दों की व्युपत्तियाँ आपने ठीक की हैं। यह सब शुभ लक्षण हैं।

किन्तु हिन्दी-कोश-रचना का एक वैज्ञानिक पक्ष भी है। उस पर अभी विचार हुआ नहीं जान पड़ता। उसकी मोटी बातें इस प्रकार हैं। खड़ीबोली और बोलियों का क्या सम्बन्ध रहना चाहिए? बोलियों में फैले हुए अनेक पारिभाषिक शब्दों का संकलन किस प्रकार किया जाय, उन्हें कोश में अवश्य आना चाहिए। प्रत्येक पेशे के सैकड़ों शब्द भाषा में भरे हैं जो कोशकार से बचे रह जाते हैं। शब्द में किस अर्थ को पहले प्रधानता दी जानी चाहिए? ऐतिहासिक क्रम-विकास की दृष्टि से अर्थों को सँजोना कहाँ तक उपयुक्त है? एक ही रूप वाले, किन्तु भिन्न व्युत्पत्ति वाले, दो या तीन शब्दों के अर्थों को अलग-अलग शब्दों के नीचे लिखा जाना चाहिए, न कि एक ही शब्द के नीचे अङ्क डालकर। उदाहरण के लिए खाता शब्द (पृ० २७०) इसके अर्थ सजाने के क्रम से सहमत होना कठिन है। लोक में खाता का लेन-देन का लेखा वाला अर्थ अधिक प्रचलित है। पहले वही देना चाहिए। दोबारा खाता शब्द लिख कर खत्ता वाला अर्थ देना चाहिए। मैंने खत्ता ही सुना है, खाता नहीं पर यदि किसी बोली में खाता हो भी, तो बोली ऐसा निर्देश करना चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दो अर्थ वाले 'खाते' शब्द बिल्कुल अलग हैं। एक का दूसरे से अर्थ और व्युत्पत्ति की दृष्टि से कोई सम्बन्ध नहीं। खत्ते वाला 'खाता' सं० खात से सम्भव है। लेखे वाला फा० खत से बना है, खत-लकीर वह बही जिसमें दो खत लगे हों। दाती के नीचे अर्थ दो हैं, व्युत्पत्ति एक दो अर्थों की व्युत्पत्ति भी अलग हैं। खाती जाति के लिए खनतृ होना चाहिए। बढ़ई वाले अर्थ की व्युत्पत्ति ख्या धातु (खिआना) तृ प्रत्यय करके बन सकती है जिसका अर्थ होगा तक्षण करने वाला, गढ़ छीलकर कम करने वाला। खाद्य से खज्ज, खाजा बनेगा, पांस वाला खाद शब्द सं० खात प्रा० खाद से बना है। पनच और सरौते की ठीक व्युत्पत्ति देखकर प्रसन्नता हुई। हिरनौटा के आगे हिरन लिखना काफी नहीं, हिरन-उत्त (हरिणपुत्र) से यह बनेगा, जैसे बिलौटा। सहस्रार छठा-चक्र नहीं, छठा आज्ञा चक्र है, उससे आगे सातवां सहस्रार है। खांवां—मिट्टी का चारदीवारी खंबे बन ही नहीं सकता, स्कन्धक (कन्धे के बराबर दीवार) से बनेगा, जैसे खवा (कन्धा) से बनता है। खलियान, खलिहान में खल तो ठीक है, लेकिन स्थान से थान बनेगा, अतएव खलथान से हरिहान बनेगा। बीच के आगे सं० विच लिखा है, संस्कृत के कोशों में विच नहीं मिला। हेमचन्द्र ने वर्त्म से विच्च-बीच माना है। दूसरों का मत भी ऐसा ही है। मैंने इसी पर एक बार लिखा था जिस पर पं० किशोरीदास बाजपेयी ने आपत्ति उठाई थी और सम्भवतः उनका पक्ष ठीक था। मुझे दूसरी व्युत्पत्ति नहीं सूझी, तब डा० आर्येन्द्र शर्मा ने स्वतन्त्र रीति से एक लेख में व्दीच से बीच की व्युत्पत्ति सुझाई जो सम्भवतः ठीक है। सयाना तो सज्ञान से ठीक लिखा है, पर अयाना अजान से अशुद्ध है, अज्ञान से ही होना चाहिए जिसका प्राकृत में अजाना होकर तब अयाना रहेगा। खोआ क्षुद्र से नहीं क्षोद से है, खोद-खोअ-खोआ। खोजना धातु का मूल खोज है, न कि खोज का खोजना। खोज सं० क्षोद्य—प्रा० खोज्य खोज से बना है, पैर का वह निशान जो गीली मिट्टी पर बन गया हो खोज कहलाता था। खोज देखकर चोरों का पता लगाने वाले या जानवरों के पैरों से पता लगाने वाले खोजी कहलाते हैं। जायसी ने पैर के निशान अर्थ में खोज का प्रयोग किया है, खोजना क्रिया पीछे चली ज्ञात होती है।

अंकुड़ा अंकुश से नहीं, अंकुटक से बन सकता है। शब्दों की व्युत्पत्ति उनके विकास और बनने के निश्चित से नियम हैं। अङ्गारा के बजाय अङ्गारक से बताना चाहिए। अङ्गारक—अङ्गारअ—अङ्गारा। उच्चारण की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुविधा के लिए अं का अनुस्वार जब आनुनासिक हुआ तब उसने अन्न के अकार को लेकर ध्वनि का पेटा पूरा किया। अङ्गा के आगे अङ्गरखा लिख देना भर पर्याप्त नहीं माना जाना चाहिए, उसकी व्युत्पत्ति अङ्गक से है जैसे अङ्गिया की अङ्गिका से। अङ्गीठी अग्निष्ठिका से जो मध्यकालीन संस्कृत में चल गया था। अंगूठा भी अंगुष्ठ से नहीं, अंगुष्ठक से पूरम्पट्ट बनेगा। बीज या गुठली के लिए जो अंठुली या अंठी शब्द है वह अंठ से नहीं, अस्थि से है अट्ठि-अठुली और उसमें अनुसार या Spontanceas nasalization हो जाता है। प्याज की गंठी के लिए आणी शब्द चलता है वह आंडीक से है, यह प्राचीन शब्द कमलगट्टे के लिए मुझे अथर्ववेद से मिला। अंदरसे के लिए जो संस्कृत इन्द्राश शब्द आपने लिखा उसका कृपया पूरा पता मुझे भेजिएगा, किस कोश में मिलेगा। यदि मिठाई के लिए यह शब्द प्राचीन हुआ तो मुझे जानकर बहुत प्रसन्नता होगी। मैं तो इसे 'आदर्श' (दर्पण की तरह गोल आकृति वाला) से निकले होने वाला की अटकल लगा रहा था।

अंधौटी की व्युत्पत्ति केवल अंधा से नहीं, अंधपट्टिका से हो सकती है। लंगोटा, जुगौटा, अंधौटा सब एक ही वजन पर हैं। अम्बर का तीसरा सुगन्धि द्रव्य अर्थ सं० अम्बर से बनना सम्भव नहीं। यह अम्बर तो अलग ही शब्द होगा। अकनना के आगे आकर्णन देना ठीक रहेगा। अकवन (–मदार) अर्कमर्ण से ही सिद्ध हो सकता है।

आपने तो ठीक ही लिखा है कि हिन्दी की व्युत्पत्ति का विषय अभी अधूरा ही है। कितने विद्वान् परिश्रम करके जब इस विषय को मथेंगे तब अब तक के अनजाने शब्दों की ठीक-ठीक कुण्डली शोधनी होगी। मैंने जो ऊपर लिखा है वह प्रसंगवश विषय को स्पष्ट करने के विचार से लिखा है, आपके कोश की त्रुटियाँ दिखाने के भाव से नहीं, क्योंकि मुझे विदित है कि हिन्दी की शब्द-व्युत्पत्ति का काम बहुत पित्तेमारी का है और अभी तक इस पर रुपये में एक आने भर काम ही हो पाया है। अनहुए काम के पहाड़ खड़े हैं, उनकी चोटी पर पहुँचने की साधें रखने वालों का जन्म भविष्य में होगा। इस साध शब्द की व्युत्पत्ति पृ० १११६ पर सं० उत्साह से लिखी है, वस्तुतः यह श्रद्धा, प्रा० सद्धा, हिन्दी साध का रूप है। सं० श्रद्धा का यह अर्थ आप्टे के कोश में दिया हुआ भी है।

श्री रामचन्द्र वर्मा के प्रामाणिक हिन्दी कोश के विषय में लिखे हुए

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र की प्रतिलिपि भेजता हूँ। सम्भव है आपको भी इस शब्द-चमौरी में कुछ रुचि हो।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१३६]

काशी विश्वविद्यालय
८-१२-५१

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२६-११-५१ के युगल पत्र मिले। १६३६ में अदयार में मैंने जो श्लोक एक वटवृक्ष के नीचे लिखा देखा था, वह आपका पत्र पढ़कर याद आ गया। 'धन्यवटतरोर्मूले शिष्यो वृद्धः गुरुर्युवा। गुरोस्तु मौनं व्याख्याने शिष्याः संच्छिन्नः संशयाः।'

'किसी वटवृक्ष की छाया में बूढ़े शिष्य और युवा गुरु का मेल हुआ है। गुरु अखण्ड मौन रखकर उपदेश दे रहा है और शिष्य के सन्देह हटते जा रहे हैं।' काश, मुझे भी ऐसे युवा के चरणों में बैठने को मिलता। गुरु के लिए शाश्वत यौवन और शिष्यों के लिए बुढ़ापा यही ठीक भावना है। गुरु की आसन्दी सदा नई रहती है। शिष्य उसके समीप आते और बूढ़े हो होकर हटते जाते हैं। अथर्ववेद के ब्रह्मचर्य-सूक्त में भी कहा है—'आयुरस्मासु धेहि अमृतत्वमाचार्याय' शिष्य चाहते हैं, हमें तो एक-एक आयु का भाग मिले, आचार्य को सदा रहने वाला अमरपन मिले। आचार्य अमर रहेगा तो कितने शिष्य बन जायेंगे। ज्ञान आचार्य है वह नित्य युवा है, अमर है, उसके बड़े बूढ़े-बूढ़े शिष्य हैं।

द्विवेदी जी चतुर्वेदी जी को अपना शिष्य बनावें यह पूछने की आवश्यकता न ज्ञात हुई। 'मधुकर' के अङ्कों का सैट अवश्य भेजिए। जनपदीय अङ्क भी। एक सैट गुरुकुल काँगड़ी को भी। आपका भेजा राष्ट्रभाषा कोश मिला। मैं मदरास गया था। यहाँ भी पीछे एक प्रति डाल गये। कोश के सम्पादक मेरे मित्र पं० कृष्णविहारी मिश्र के सुपुत्र पं० व्रजकिशोर मिश्र लखनऊ वि० वि० में अध्यापक मेरे सुपरिचित हैं। वे अभी सीखतर हैं आलोचना क्या करूँ? आशीर्वाद ही देना ठीक है। हिन्दी में जो प्रयत्न हो अच्छा ही है। जनपदीय कार्यकर्त्ताओं की बैठक यहाँ कीजिए मैं प्रबन्ध करा दूंगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४०]

काशी वि० वि०
१-३-५२

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपने जो दिल्ली की कथा कही है, वह तो आज समस्त देश की बात है। आदर्श की ऊँची प्रेरणा व्यक्तियों के मन में और कर्म में इस समय कहाँ है? नये जीवन के लिए नया दर्शन चाहिए। यह कार्य जवाहरलाल जी कर पाते तो शुभ होता। किन्तु मानव को तो करना ही होगा—आत्मरक्षा—आत्मविकास की अनिवार्य आवश्यकता के लिये। यह नया दर्शन चीन के क्षितिज पर देखा जा सकता है।

'नान्यः पन्था विद्यते अयनाय'। यह बात लिख लीजिये। पुराने विचारों और शासन के प्रयाण पटह बज चुके हैं। नये जीवन-दर्शन का मंगलशंख सुनाई पड़ रहा है। क्या आपके कानों में उसकी ध्वनि आ रही है? मैंने तो सुन लिया है। एक दिल्ली क्या, आज तो सारा देश dusty musty धूल-धक्कड़ से भरा है।

आपका
वासुदेवशरण

[१४१]

काशी विश्वविद्यालय,
बनारस-५

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण जी गुप्त के ७० वर्ष पूर्ण कर लेने पर उनके सम्मान में एक अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित करने का आयोजन किया है। आपका गुप्त जी से निकट परिचय है। उनके जो संस्मरण आप लेखबद्ध करके इस ग्रन्थ में देना चाहें, उन्हें कृपया भेजने का अनुग्रह करें। इस सम्बन्ध में आपने पहले अपनी स्वीकृति भिजवाने की कृपा की थी। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप यह कष्ट स्वीकार करें। आपके संस्मरण का लेख या पत्र इस मास के अन्त तक प्राप्त हो सका तो बड़ी कृपा होगी।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४२]

काशी विश्वविद्यालय
१५-५-५६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपके दोनों पत्र मिले। जिस कम्पनी में 'मुंडन' (नवीन जी की व्याख्या के अनुसार, जिसे मैं संगत समझता हूँ) का व्यापार हो उसमें घाटे का प्रश्न ही नहीं है। पर आपको वह कर्म नहीं आता। यहाँ तो अपना ही मुंडन हो जाता है। कभी कभी केश-लुंचन भी भक्त लोग कर ले जाते हैं। अपने देश में ब्राह्मण भोजन की प्रथा टूट गई। इसी से घाटे का अनुभव हो जाता है। आचमन अपने को आता नहीं। आप भी उस कला में कोरे हैं। मैं साहित्य में कुछ कर ले जाता हूँ (पर जितना चाहता या सोचता हूँ उतना नहीं) इसका कारण है। एक चतुर व्यापारी की तरह मेरी नियमित दूकान भी चलती है और सट्टा भी। लेख, अभिनन्दन ग्रन्थ, सम्पादन, सन्देश, भाषण ये सब सटोरिये के रूप में मन्दी-तेजी के भुगतान के साथ चलता है। पर जो कुछ लिख लेता हूँ वही नियमित पूँजी बचती है. सो आप भी दादा इलाही पूँजी से नियमित व्यापार कुछ करते रहें तो साहित्य के हाट में बैठकर शायद पछताना न पड़े। पर मैं देखता हूँ कि आपकी तो महाजनी भी खूब चमकी है और आपको पछताने का कारण नहीं है। भाई श्री नारायण जी को हँसते-हँसाते ७० वर्ष तक जीवित रहना है तब उन्हें अभिनन्दन ग्रन्थ समर्पित किया जाय आपके सम्पादन में।

आपका
वासुदेवशरण

[१४३]

काशी वि० वि०
काशी
२३-५-५६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

२५-५-५६ का पत्र मिला। भाषण में बँभनऊँ शब्दाडम्बर न मिला, काम काज की बनियाऊ शैली देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। प्रान्त-निर्माण या पार्थक्य की भावना छोड़कर शुद्ध साहित्य के स्तर से जो किया जाय मुझे मनःपूत है। ब्रजभाषा परीक्षाओं की भी स्थिति ऐसी ही है। शुद्ध प्रचार का

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाव होना चाहिए। कहीं महन्ती न बननी चाहिये। वस्तुतः आजकल अपने यहाँ का वातावरण भयावह बनता जा रहा है। चारों ओर से सरकारी चंगुल और गद्दीधर साहित्यिक आचार्य, स्वतन्त्र चिन्तन, साहित्य-कार्य और जीवन को छेकेले ले रहे हैं। संस्थाओं में दिखावा बढ़ रहा है। ठोस काम घट रहा है। उद्घाटन, अधिवेशन, सम्मेलन, सम्मति और सन्देशों से जनता बहिर्मुखी बनती जा रही है। सब हड़बड़ी में पड़ गये हैं। दृढ़ आसन और सुशीतल चित्त से दीर्घकाल तक निरन्तर कार्य में लगने की वृत्ति का लोप अच्छा नहीं।

आपने 'पृथिवीपुत्र' का स्मरण सार्वजनिक रूप से किया। इससे चित्त प्रसन्न हुआ। पृथिवीपुत्र पुस्तक नहीं वह तो युग की विचारधारा है और वही उसे बनना चाहिए।

आपका

वासुदेवशरण

[१४४]

काशी वि० वि०

श्रावणी १९५६

प्रिय चतुर्वेदी जी,

'पद्मसिंह शर्मा के पत्र' की प्रति हजारीप्रसाद जी के हस्ते मिली। आपकी भूमिका पढ़कर मैं छटपटा गया कि इस युग में जन्म लेकर भी पं० पद्मसिंह जी से क्यों नहीं मिला? ऐसे साहित्यधनी व्यक्ति की स्मृति से जब तब मन ताजा हो जाता। अस्तु, मुझे तो डाक का रोग है। पत्रों से रस चूसता हूँ। मेरी समझ में कि ी व्यक्ति की भारी भरकम साहित्यिक कृति आँधी के समान है, उसके साहित्यिक पत्र उन झोंकों के समान हैं जो धीरे-धीरे से आते जाते रहते हैं और थोड़ी मात्रा साथ लाने पर भी साँस बनकर जीवन देते हैं। अन्न की उत्पत्ति और मेघों की वृष्टि के लिए अन्धड़ भी चाहिए, पर मन्द वायु में जो फरहरी है उसका भी कुछ अनूठा आनन्द है। आपने तो पत्रों का एक क्षेत्र ही साहित्यिक जगत् के समक्ष रख दिया है। जिस भवन की आधारशिला आपके द्वारा इस उत्साह और सजधज से रक्खी गई है, वह चिरस्थायी हो।

आपका

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४५]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

७-७-६५

प्रिय चतुर्वेदी जी,

आपका पत्र दिनांक २०-६-६५ पाकर परम प्रसन्नता हुई। वर्षों से कुछ समाचार नहीं मिला था सो पाकर मिलने जैसा सुख हुआ। मैं अभी कल शाम स्वर्गाश्रम के गीताभवन में डेढ़ मास रहकर लौटा हूँ। वहाँ पूरा विश्राम किया और भागवत सुनता रहा। श्री भाई हनुमान प्रसाद पोद्दार भी आये हुए थे। वियोगीहरि जी भी मिले। हिमालय की गोद में यह यात्रा-प्रसंग बड़ा सुखप्रद हुआ।

गुप्त जी के लिए श्रद्धांजलि अङ्क की बात अच्छी लगी। आपके निर्देशन में वह साहित्य की स्थायी वस्तु बनेगी ऐसी आशा है। गुप्त जी विलक्षण व्यक्ति थे। उन्होंने प्राचीन भारतीय संस्कृति का समुद्र-मन्थन किया और अनेक रत्न निकाले। वे हमें उत्तम विचारों के अनमोल रत्नों से मालामाल कर गये। लगभग ३० वर्षों तक राष्ट्र के नवयुवकों ने गुप्त जी का साहित्य पढ़ा। गुप्त जी ने एक शक्तिशाली स्वस्तिक की रचना की। उन्होंने संस्कृति की आराधना करते हुए भारत की चिरकालीन संस्कृति के आदर्शों को अपनाया। जो ऋषियों की संस्कृति थी वही उन्हें मनःपूत हुई, यह मानों आदर्शों के गौरी-शंकर शिखर पर उनकी पहली विजय थी। उस विजयशालिनी पताका को उन्होंने अर्वाचीन मानव के लिए आकर्षक बनाया। उनके लिए प्राचीन संस्कृति नये जीवन की कसौटी थी। उसकी कंचन रेखा शुद्ध स्वर्ण का प्रकाश कहलाती थी। गुप्त जी ने देवों और ऋषियों के चरित्रों को अर्वाचीन भारतीय मानव के लिए अनुकरणीय बताया। उन्होंने मानव को नया सम्मान और प्रतिष्ठा प्रदान की। गुप्त जी के चतुर्भुजी स्वस्तिक का तीसरा दृष्टिकोण अर्वाचीन सभ्यता, संस्कृति और विज्ञान के प्रति समझदारी का दृष्टिकोण था। उन्होंने पूर्व और नूतन एवं प्राच्य-प्रतीच्य सभ्यता के समन्वय का स्वप्न देखा—चौथे वर्ग में वे समस्त मानव समाज के कल्याण के पोषक थे। किसान, हरिजन, स्त्री समाज, नानाधर्म और सम्प्रदायों के बीच में समन्वय और कल्याण का स्वप्न देखते थे। गुप्तजी ने हमारे नवीन राष्ट्रीय अभ्युदय में एक बड़ा प्रबल साहित्यिक यज्ञ किया। गाँधीयुग की पूरी शक्ति उन्होंने अपने प्राणवन्त श्वास-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्वास में भर ली और राजा और रंक का भेद न करते हुए साहित्य की नींव पर प्रजातन्त्र के भवन-निर्माण का जीते जी प्रयत्न किया। गुप्त जी सच्चे वैष्णव या भागवत थे, जिन्होंने भगवान् की विजय को मानव की विजय समझा और मनुष्य कैसे रहे या क्या करे इसका सरल पाठ पढ़ाया। कवि वह है जो आदर्शों का निर्माण करता है। इस दिशा में गुप्त जी बहुत ऊँचे उठे। उनका निर्मित साहित्य एक ज्योति स्तम्भ है।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

डा० सत्येन्द्र के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४६]

नई दिल्ली
२०-१-४७

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

आपका ६-१-४७ का कृपा-पत्र लाहौर में मिला था। परसों प्रातः मैं लौटकर आया। फिर एक बड़ी यात्रा के लिये न जाने कब जाना पड़े। अपनी वर्तमान परिस्थिति में अभिनन्दन ग्रन्थ किंवा तत्सदृश अन्य साहित्यिक योजनाओं में सहयोग मेरे लिये असम्भव है। ऐसा कई बार लिखने पर भी आपको विश्वास नहीं हुआ यह आपके स्नेह का ही सूचक है। परन्तु सत्य से हम सब बँधे हैं और सत्य वही है जो मैं लिख चुका हूँ।

मेरी यह इच्छा है कि इस ग्रन्थ का सम्पादन आप ही करें। आपकी महती साधना का भी जनता को परिचय होना आवश्यक है।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि ग्रन्थ के लिये आर्थिक प्रश्न हल हो गया है। आशा है इसे ब्रज का सांस्कृतिक कोष बनाने का आपका उद्देश्य सफल होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१४७]

तक्षशिला के मार्ग में
२४-१-४७

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

गाड़ी ने अभी व्यास नदी पार की है। आज प्रातः देहली से तक्षशिला के लिये रवाना हुआ। एक अत्यावश्यक कार्यवश यह यात्रा अकस्मात् करनी पड़ी। अन्य सब कार्यक्रम जो वसन्त पंचमी के आस-पास थे स्थगित करने पड़े। आशा है पोद्दार जी की जयन्ती का समारोह सुसम्पन्न होगा। अब प्रचार का कार्य यथेष्ट हुआ। प्रेरणा दीजिए कि मंडल के कार्यकर्ता ठोस वैज्ञानिक पद्धत्ति से कुछ काम उठाकर पूरा करें।

वसन्त के लिये नवीन शुभ कामनाएँ भेजता हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४८]

नई दिल्ली
१७-१२-४७

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

(१) जनपदीय अध्ययन वाले लेख की एक प्रतिलिपि या प्रूफ कापी अविलम्ब चाहिए। सस्ता साहित्य मण्डल के लिये जनपदीय लेखों का एक संग्रह मैं तैयार करा रहा था, उसमें इस लेख को भी मैं सम्मिलित कर लेना चाहता हूँ। कल यशपाल जी ने फिर स्मरण दिलाया तो यह बात सूझी।

(२) कल रात मित्तल जी और गोपालप्रसाद व्यास आए एवं राय कृष्णदास के साथ बातें होती रहीं। मेरे पास हाल ही में राजस्थान से सूरदास जी का एक पुराना चित्र आया है। उसी की चर्चा करते हुए निम्नलिखित प्रस्ताव निश्चित हुए—

१—उस चित्र के आधार पर सूरदास जी का एक वड़ा (काय परिमाण) तैल चित्र बनवाया जाय।

२—उसका उद्घाटन समारोह आगामी वैशाख शुक्ल पंचमी को मथुरा में किया जाय।

३—श्री राजेन्द्रप्रसाद जी से उसके लिये प्रार्थना की जाय।

४—उस अवसर पर ब्रजभारती का एक सूर विशेषांक प्रकाशित किया जाय।

५—उसी अवसर पर हो सके तो ब्रज साहित्य मण्डल के भवन का शिलान्यास नई भूमि में श्री सम्पूर्णानन्द जी के द्वारा कराया जाय।

तैलचित्र राय कृष्णदास जी काशी में तैयार करा देंगे जिसकी लागत ४००) के लगभग होगी। व्यास जी और मीतल जी इसके लिये बहुत सोत्साह दिखाई पड़े। पर ये प्रस्ताव मण्डल की कार्यकारिणी द्वारा स्वीकृत होने चाहिएँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

गुप्त जी राय साहब के साथ नहीं आए। व्यास जी पुत्र के साथ चिरगाँव जाएँगे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१४९]

नई दिल्ली
२६-१-४८

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

लेख के प्रूफ की या प्रतिलिपि की बहुत प्रतीक्षा है, उसे प्रस्तावित जनपदीय संग्रह में देना चाहता हूँ। कृपया तुरन्त भेंजे।

सूर जयन्ती के चतुष्पाद कार्यक्रम का निश्चय व्यास जी से ज्ञात हुआ—चित्रोद्घाटन, ब्रजभारती विशेषांक, उत्सव और शिलान्यास। कृपया लिखें कि इनकी पूर्ति के लिये क्या योजना है और कार्यविधि क्या है? आशा है कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न होगा। प्रचार अभी से करना आवश्यक है।

चित्र के सम्बन्ध में श्री अहिवासी जी से बातचीत हुई थी, वे कार्य के लिये तैयार हैं। आप मण्डल की ओर से निश्चित सूचना भेजें तो अहिवासी जी से कार्यारम्भ करने के लिये कहा जाय।

ब्रजभारती के विशेषांक के सम्पादन का कार्य भी आपने हाथ में ले लिया होगा। सहायक रूप में व्यास जी से भी इसमें काम लीजिए; आप पर इस समय कार्य का पर्याप्त भार होगा। व्यास जी से आज फोन पर मैंने कहा है कि मन से इस कार्य में जुटें। आशा है बहुत ही सौमनस्य और सहयोग के भाव से यह महोत्सव सम्पन्न होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१५०]

नई दिल्ली
९-१०-४९

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

व्यास जी ने दो पत्र दिये। आज यथास्थान भेज रहा हूँ। ब्रज में हस्तलिखित ग्रन्थों की शोध विषयक लेख के लिये आपने ठीक ही लिखा। डा० जानकीनाथ सिंह का लेख ब्रजभाषा साहित्य शोध शीर्षक बहुत व्यापक है। मैंने उसे अभी देखा। उसमें पं० रामचन्द्र शुक्ल के इतिहास से ब्रजभाषा के १६४ काव्य-निर्माता कवियों का ब्यौरेवार वर्णन है। परन्तु यह केवल शुक्लजी की सूचियों की नकल है। कुछ भी विशेष बात लेखक ने नहीं कही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रज के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज का विषय तो दूसरा ही है। उसमें तो ब्रज के जो पुस्तक भण्डार (निजी या सार्वजनिक) हैं उनकी खोज से जिन अच्छी आदर्श प्रतियों का या अप्रकाशित नये साहित्य का पता चला है अथवा जो कुछ और परिणाम निकला हो उसका उल्लेख रहना चाहिए। जो खोज मण्डल की और आपकी एवं नागरी प्रचारिणी सभा आगरा की देखरेख में हुई है उसका मूल्यवान् अंश या फल इसमें दे देना चाहिए।

मार्ग व्यय का ब्यौरा मिला। धन्यवाद। कलकत्ते से रुपया आते ही भेजूँगा। मदनगोपाल को पत्र लिखा है। मैं उस दिन मार्गव्यय की बात पहले सोच रखने पर भी समिति में रखना भूल गया। द्वितीय श्रेणी के तीन किराये दिये जाने का मेरा प्रस्ताव है। आप और बाबूजी दोनों सहमत हों तो कृपया सूचित कीजिएगा। व्यासजी से भी पूछ लूंगा। बाबूजी का बिल भी भिजवा दीजिएगा।

पोस्टेज के लिये भी आप दोनों के पास १०-१०) भिजवा दूंगा।

भवदीय

वासुदेवशरण

[१५१]

नई दिल्ली

१८–५–५०

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

१३-५-५० का पत्र मिला। आपके काम का निश्चय जानकर प्रसन्नता हुई। मैं भी इसको समाप्त करने का प्रयत्न करूँगा। सभी अपना कार्य नियमित करेंगे तब यह गिरिराज उठेगा।

आपको १६-३-५० को मैंने पत्र में सम्मति भेजी थी। 'ब्रज लोक-साहित्य का अध्ययन' जनपदीय समुद्र के मंथन से उत्पन्न चमकता हुआ रत्न है। लोक साहित्य का दोहन करने से क्या कुछ मिल सकता है यह आपने कर दिखाया। इस ग्रन्थ के रूप में मेरे अपने मन का एक स्वप्न पूरा हुआ है। ब्रज लोक-गीत और लोक-कहानियों के सम्बन्ध में चार सौ पृष्ठों की अत्यन्त सुपाठ्य सामग्री आपने प्रस्तुत की है। उनके अध्ययन का वैज्ञानिक दृष्टिकोण अनेकों के लिये मार्गदर्शक होगा। मदारी का रचा हुआ ढोला पढ़कर चित्त प्रसन्न हो गया। उसने करहे का जो वर्णन किया है वह मुझे सारे साहित्य में कहीं नहीं मिला। ब्रज के दूसरे ढुलैयों की रचनाओं की रक्षा भी समय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते होनी चाहिए। आपने जनपदीय साहित्य के संकलन के क्षेत्र में एक साका किया है जिसका ठीक मूल्यांकन आगे चलकर होगा। ब्रज साहित्य मण्डल का यही एक मीठा फल हृदय को तृप्त कर देने वाला है। अकेला ब्रज ही क्या ऐसा कौन सा जनपद है जहाँ लोक साहित्य के सरोवर इसी तरह लबालब न भरे हों? आपके सदृश छोर वृत्ति के सुलझे हुए कार्यकर्ता चाहिए। मेरी शुभ कामना है कि आप जीवनपर्यन्त इस कार्य का विस्तार करते रहें। अभी ब्रज में अपरिमित सामग्री मिलने की आशा है।

आपका
वासुदेवशरण

पुनश्च —

पृ० ३८१ बनैचा या पनैचा कौनसा पाठ ठीक है, अर्थ क्या है? गजगाह भारतीय कला का पुराना अलंकरण था, लोकगीत में बच गया है। हलव्वी काँच का हवाला महत्त्वपूर्ण है। 'सोवेका करहा' में सोवा कौनसा देश है? अरब या अफ्रीका का ऊँट यहाँ प्रसिद्ध रहा होगा। हेलक का क्या अर्थ है? इसी प्रकार ब्रज की देहाती बोली और पारिभाषिक शब्दों का कोष कभी आपके द्वारा सम्पन्न देखकर मुझे अत्यधिक प्रसन्नता होगी।

[१५२]

नई दिल्ली
२८–६–५१

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

२६-६ का पत्र मिला। साहित्य सन्देश का वह अङ्क कृपया भेजिए जिसमें मेरा लेख छपा था: त्रिपुर और त्रिशिरा वाली बात पर मैं विचार करके लिखूँगा।

पोद्दार ग्रन्थ की सामग्री कलकत्ते भेज दी गई है। आप ग्रन्थ के आरम्भ के इतिहास से सुपरिचित हैं। कृपया उस पर एक छोटा सा वक्तव्य भेज दीजिए उसी में रामकृष्ण जी की सेवाओं का उल्लेख भी कर दीजिए। मुझे उनके विषय में कुछ भी ज्ञात न था।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५३]

काशी विश्वविद्यालय
२-७-५२

प्रिय सत्येन्द्र जी,

मंडल के भवन का नक्शा plan, elevation आदि के सहित जो यहाँ बनवाया है भेज रहा हूँ। आप देखेंगे कि यह नक्शा बहुत ही सुविधाजनक है। सामने दुकानें, बीच से रास्ता, फिर बगीचा, फिर दो बड़े हाल और टीले पर फिर बगीचा और विभिन्न आवास की जितनी सुन्दर व्यवस्था और maximum space इस नक्शे के निर्माता ने इस जमीन में की है वह अद्भुत है। जिस व्यक्ति ने नक्शा बनाया है वह genius है और बहुत मौलिक सूझ वाला है। उसने लगभग दो महीने परिश्रम करके यह काम किया है। कृपया उसके पारिश्रमिक के १००) भेज दें। पुराने नक्शे की जो दिक्कतें रामनारायण और गुलाबराय जी ने मुझे लिखीं थीं वे अब नहीं रह जातीं और भवन भी सुन्दरतम हो जाता है। आप मंडल की समिति में इस पर विचार करके इसे स्वीकार करें।

'जनपद' पत्र के लिये अपना लेख कृपया भेजें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१५४]

काशी विश्वविद्यालय
२१-२-५३

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

पत्र मिला। अब यह निश्चित है कि श्री पोद्दार-अभिनन्दन-उत्सव रामनवमी को या उसके एक दिन पूर्व किया जाय। मदनगोपाल जी आपको इस विषय में लिखेंगे जिससे समय रहते आवश्यक घोषणा और उचित प्रबन्ध आप कर सकें। इस अवसर पर श्री मावलंकर जी को लाने का प्रयत्न किया जाय।

ग्रन्थ की छपाई समाप्त कराने का ब्यौंत भी इसी हिसाब से निश्चित किया जा रहा है। यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भूमिका होली से पूर्व आप लिखकर भेज देंगे। छोटी बड़ी जैसी सम्भव हो तैयार करके कृपया भेज दीजिए। मेरा विचार इन्डेक्स का पहले न था किन्तु आपके सुझाव की उपादेयता मानते हुए यह निश्चय किया है कि १६ पृष्ठ में इन्डेक्स समाप्त कर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दी जाय। प्रत्येक पृष्ठ पर तीन कालम रखने से अधिक सामग्री इन्डेक्स में भरी जा सकेगी। अतएव कृपया इन्डेक्स बनवाते जाइए और जिस दिन अन्तिम फार्म आपके पास पहुँचे, इन्डेक्स पूरी करके कलकत्ते भेज दीजिए। चित्रों के ब्लाक के लिए आवश्यक निर्देश कलकत्ते भेज दिये गये हैं। ग्रन्थ तैयारी, सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन में जिन-जिन सज्जनों ने सहयोग और सहायता दी है उन सबके प्रति मैं कृतज्ञता प्रकाशित करता हूँ। आशा है आप भी इसमें मेरे साथ हैं।

वासुदेवशरण

[१५५]

काशी वि० वि०
६-५-५३

प्रिय सत्येन्द्र जी,

मदनगोपाल जी का पत्र कल मिला। लिखा है सेठ जी का कलकत्ता यात्रा के लिये मन कम है। और उत्सव के बारे में आपकी सम्मति प्रधान है। मैंने अभी उन्हें उत्तर लिखा है कि उत्सव मथुरा में ही सूर जयन्ती के अवसर पर अच्छे आयोजन के साथ किया जाय। उत्सव एक दिन का १८ मई को ही हो तो दिल्ली से पधारने वाले सज्जनों को सुविधा होगी। आशा है आप भी इसे स्वीकार करके मथुरा के सम्बन्धित सज्जनों को सूचना दे देंगे कि तदनुसार सब प्रबन्ध करके सूचना निकाल दें। यदि दो उत्सव १६ और १८ को अलग-अलग करने हों तो भी मुझे आपत्ति नहीं है पर निर्णय तुरन्त होना चाहिए क्योंकि मुझे अन्यत्र भी जाना है। दिल्ली से गुप्त जी और नवीन जी को लाने का प्रयत्न कीजिए। गोविन्ददास जी को भी आना चाहिए। ग्रन्थ गुप्त जी के कर कमलों से समर्पित कराया जाय।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१५६]

काशी वि० वि०
२५-६-५४

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ के विषय में एक लम्बा पत्र लगभग तीन सप्ताह पूर्व लिखा था। बड़ा बाजार लाइब्रेरी के द्वारा भेजा था। आपको वह मिला या नहीं। कृपया लिखें। आगे का समाचार जानने के लिये उत्सुक हूँ।

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१५७]

काशी वि० वि०
८-१०-५४

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

३०-९-५४ का पत्र मिला। मैं आपकी सब बातों से सहमत हूँ। आधुनिक हिन्दी कविता वाले नए भाग के जोड़ने से भी। कृपया कार्य को आगे बढ़ाइए। सभी सम्बन्धित व्यक्तियों को भी सूचित कर दीजिए जिससे वे तत्परता से काम में लग जायें। सब को यह भी सूचित कर देना उचित होगा कि लेख संग्रह, सम्पादन और मुद्रण, प्रकाशन का तिथिक्रम क्या रहेगा जिससे गुप्त जी की ७०वीं वर्षगाँठ पर ग्रन्थ प्रस्तुत किया जा सके।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१५८]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
११-३-५५

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

कृपापत्र मिला। आपको जो हानि हुई उसकी बात जानकर दुख हुआ। दिल्ली में २१ फर्वरी को गुप्त अभिनन्दन ग्रन्थ के सम्बन्ध में बैठक हुई। उसमें नवीनजी, नगेन्द्रजी, कामिल बुल्के, भगवतीचरणजी और मैं उपस्थित थे। कई निश्चय हुए। गुप्तजी को अभिनन्दन ग्रन्थ सं० २०१३ में जब वे अपना सत्तरवाँ वर्ष पूर्ण करेंगे दिया जायगा। सं० २०१२ के श्रावण मास में गुप्त जी अपनी आयु के सत्तरवें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। आगामी श्रावण तक ग्रंथ का सम्पादन और मुद्रण सम्भव नहीं दीखता। अतएव व्यावहारिक निर्णय यही है कि सं० २०१३ के श्रावण मास तक ग्रंथ सर्वथा सम्पन्न कर दिया जाय। दूसरा निश्चय प्रबन्ध सम्पादक के विषय में है। इस विषय में श्री नवीन जी का बहुत दृढ़ मत था कि प्रबन्ध सम्पादक के स्थान पर आपका नाम रहे। श्री बरुआ कार्यालय-मन्त्री रहेंगे।

तीसरा निश्चय यह है कि चौथा और पाँचवाँ खण्ड संयुक्त कर दिया जाए। उसके सम्पादक आप और श्री बुल्के जी रहेंगे। पाँचवाँ खण्ड भारतीय संस्कृति और कला होगा जिसके संयुक्त सम्पादक श्री मोतीचन्द्र और मैं रहेंगे। छठा खण्ड हिन्दी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन और इतिहास होगा जिसके

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादक श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी रहेंगे। सातवें खण्ड में कवितायें रहेंगी जिसके सम्पादक भगवतीचरण वर्मा होंगे। ऐसा निश्चय करने का कारण यह था कि हम सब यह अनुभव कर रहे थे कि अब केवल रामविषयक लेखों के लेखक पर्याप्त संख्या में नहीं मिल रहे हैं। अभी तक जो उत्तर आए हैं उनके आधार पर ग्रन्थ का स्वरूप सम्पादन असम्भव है। अनेक अच्छे लेखक छूटे जा रहे हैं। ग्रन्थ का अखिल भारतीय रूप भी नहीं बन रहा था अतएव मध्यम मार्ग का आश्रय लेना आवश्यक हुआ। मुझे आपके विचार विदित थे फिर भी अनुभव के आधार पर यही उचित जान पड़ा। आप भी हमारे साथ होते तो सम्भवतः सहमत होते। अब मेरा आपसे नम्र अनुरोध है कि कृपया इसे स्वीकार कर ग्रन्थ के कार्य को प्रगति दें। आप ही के बल पर यह भार उठाया गया है। ऐसा प्रयत्न होना चाहिए कि सितम्बर मास तक लेख आ जायें। अक्टूबर में हम और आप एक साथ बैठकर सामग्री का सम्पादन कर डालें और फिर ग्रन्थ मुद्रण के लिए दे दिया जाए। कागज का प्रबन्ध तब तक कर लेना चाहिए। चित्रों की व्यवस्था भी करने का प्रयत्न करूँगा। छुट्टी में इधर आवें तो मुझे प्रसन्नता होगी। श्री बरुआ अपना सीधा नाम रक्खें ऋषि आदि उपाधि का मुद्रण इस पत्रिका मैं अनुपयुक्त है। नवीन जी इससे काफी क्षुब्ध हुए। प्रूफ लौटा रहा हूँ।

आपका

वासुदेवशरण

[१५६]

काशी विश्वविद्यालय

२६-४-५५

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

ग्रन्थ की प्रगति के विषय में कृपया सूचित कीजिए। परिपत्र छपाने के विषय में क्या रहा ? वह प्रकाशित हुआ या नहीं। इन छुट्टियों में सामग्री तैयार होनी चाहिए। अगस्त तक सामग्री आएगी तभी समय से प्रेस में दी जा सकेगी। आप कृपया सब सम्बन्धित सज्जनों को आवश्यक पत्र भेज दें।

आपके ही भगीरथ प्रयत्न से यह कार्य पूर्ण हो सकेगा। ऐसा लगता है कि अभी तक इसमें प्राण प्रतिष्ठा नहीं हो पाई है। क्या मई मास में संपादक मंडल और आप सबकी एक बैठक काशी में बुलाई जाय तो कार्य की प्रगति हो सकेगी ? कृपया पत्र दीजिए।

भवदीय

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६०]

कलकत्ता
२२-४-५५

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

५-५-५५ का पत्र मिला। मैं कुछ अस्वस्थ रहा। सो पहले न लिख सका। मैं यह समझा था कि हम लोग गुप्त जी का अभिनन्दन करने के लिये प्रवृत्त हुए थे; वासुदेवशरण, सत्येन्द्र या बरुआ के लिये यशोवर्धन हमें इष्ट न था। बरुआ जी की आराधना न की जा सकी, अतएव इतने से कलकत्ते का सम्पादक-कार्यालय ठप हो गया और उससे काशी और दिल्ली भी कर्त्तव्य मूढ़ बन गए—यदि यही सच्ची स्थिति हो तो फिर गुप्त जी का अभिनन्दन संभव नहीं दीखता। आप तो सारी स्थिति से विज्ञ हैं। अपने सहयोगियों से भी परिचित हैं। अतएव बड़ा बाजार पुस्तकालय के सज्जनों से परामर्श करके मुझे स्थिति से अवगत करें, वैसा ही किया जाय। यदि ग्रन्थ प्रकाशित करना है तो अगस्त तक लेख आने चाहिए। दो मास में संपादन कार्य समाप्त करके नवम्बर में सामग्री प्रेस में देनी चाहिए। तब कहीं अगले श्रावण तक ग्रन्थ प्रकाशित हो पावेगा। इसके लिये बरुआ जी के सहयोग की आवश्यकता आप वहाँ समझें तो लें, अन्यथा अपना संपादकीय कार्यालय पृथक् स्थापित कर लें। इसी भाँति काशी और दिल्ली में भी कार्य अविलम्ब होना चाहिए। जैसी स्थिति और विचार हो कृपया मुझे अविलम्ब सूचित कीजिएगा जिससे लोक हँसाई का अवसर न आवे। मुझे केडियाजी की बात का भरोसा है। आशा है उनकी स्थिति से भी कृपया अवगत करेंगे।

भवदीय
वासुदेवशरण

मैं ३१ मई तक यहीं हूँ। उससे पूर्व एक दिन के लिये आप मिलने की कृपा करते तो कार्य के हित में होता।

[१६१]

काशी विश्वविद्यालय,
बनारस—५
१४ सितम्बर, १९५५

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

३-९-५५ का कृपा पत्र मिला। आपने जो लिखा सर्वथा मान्य है। उसी आधार पर कार्य आरम्भ कर दिया गया है। अपने सहयोगियों से मैं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुरोध कर रहा हूँ कि अक्टूबर के अन्त तक ग्रन्थ को पूर्ण कर दें। बरुआ जी यहाँ आ गये हैं और अब ग्रन्थ की तैयारी तक यहीं ठहरेंगे। कलकत्ते में ११ सितम्बर को प्रबन्ध समिति की एक बैठक श्री सीताराम जी सेकसरिया के सभापतित्व में श्री मदनगोपाल जी पोद्दार के निवास स्थान पर हुई। उसमें भी उन्होंने यह दृढ़ निश्चय किया है कि ग्रन्थ अवश्य प्रकाशित किया जाए और नवम्बर के प्रथम सप्ताह में उसकी सामग्री प्रेस में दे दी जाए। मेरा आपसे नम्र अनुरोध है कि जितने भी साहित्यिक लेख आप अपने प्रभाव से एकत्र कर सकें कृपया करें। अब इस कार्य को सम्पन्न करना ही है। अतएव, समय और प्रयत्न की प्राथमिकता इसे मिलनी चाहिए।

आपकी भेजी हुई लेख सूची मिली। कृपया यह और सूचित करें कि प्रत्येक लेख के कितने हस्तलिखित पृष्ठ हैं। परिपत्र छपने के लिए कलकत्ते भेज रहा हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१६२]

काशी विश्वविद्यालय
२२-१२-५५

प्रिय सत्येन्द्र जी,

मैंने आपको क्या लिख दिया, याद नहीं आ रहा है। आपके मन को कष्ट पहुँचाने या किसी प्रकार की शंका की सौ-सौ कोस बात न थी। मुझे उसकी एक प्रतिलिपि कृपया भेज दें तो मैं अपनी भूल का परिमार्जन कर डालूँ।

साहित्य में व्यंग्य की शक्ति बड़ी विलक्षण है। मनोभावों को बलात् वह कहाँ खींच ले जाय इसकी संभावना तो रहती ही है। मेरा आशय शुद्ध इतना ही था कि उस लेख को एक बार फिर ढूंढ लिया जाय। मिल जाय तो यहाँ रूठे रायसाहब को मना लूँ।

इस ग्रंथ के व्याज से मुझे अभिनव अनुभव हुए।

आपके लिये स्वास्थ्य की मंगल कामना करता हूँ।

सस्नेह
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६३]

काशी वि० वि०

४–३–५६

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

अभी 'सूर की' झाँकी' पढ़ रहा हूँ। आपने बड़े श्रम से इतनी प्रामाणिक सामग्री एकत्र कर दी है जो अतीव उपयोगी है। सूर के जीवन और वार्ताओं पर आपका मनन और संग्रह बहुत उपयोगी है। सूर पर जितना पढ़ता हूँ यही विचार होता है कि हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर उनके काव्य का प्रामाणिक संस्करण पहली आवश्यकता है।

भवदीय

वासुदेवशरण

[१६४]

काशी विश्वविद्यालय

२२–१०–५७

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

आपका लेख पढ़ गया। आश्चर्य हुआ आपने कितनी अन्तःपैठ से अध्ययन के एक नए दृष्टिकोण का आविर्भाव किया है। 'गुप्तजी में मानव आत्मा ने ही कवित्व प्राप्त किया है' आपकी यह स्वर्णाक्षरी अन्तिम स्थापना मानों हमारे सारे अभिनन्दन ग्रंथ की सूत्रात्मा ही बन गई है। इस अध्ययन के पीछे बहुत मनन किया गया है। बधाई। मैंने शीर्षक में 'विकास' शब्द जोड़ दिया है ('मैथिलीशरण गुप्त का काव्य' की जगह ...... काव्यविकास कर दिया है)। आपको यह मनःपूत हो तो ठीक, नहीं तो बरुआ जी को एक पत्र लिखकर उस शब्द को हटवा दें। लेख आज रजिस्ट्री से कलकत्ते भेज रहा हूँ।

भवदीय

वासुदेवशरण

मेरा जायसी के शब्दों वाला लेख महेन्द्र जी से मिला होगा। वह किस दोहे तक है सूचित करें। आगे पूरा कर दूं। आप भारतीय साहित्य में छाप सकते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६]

काशी विश्वविद्यालय
२-१-५८

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

२१-१२-५७ का पत्र मिला।

पदमावत के २०८ दोहे ही भेजे थे। शेष अब लिखकर भेजूँगा।

नलदमन के २० दोहे तो आपने छापे थे। २१-४० दोहे दूसरी बार भेजे थे। वे मिले या नहीं। शेष के लिये जुयाल जी से पूछूँगा। नूरजहाँ के सम्बन्ध में शीघ्र निर्णय कर रीवाँ सूचना दीजिएगा।

Microfilm के बिल की बात ज्ञात हुई।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१६६]

काशी वि० वि०
१७-२-५८

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

दोनों पत्र मिले। 'नूरजहाँ' लौटा दी गई, यह शुभ नहीं हुआ। मुझे एक बार लिखना कर्तव्य था, जब मेरे द्वारा वह पुस्तक आपको मिली थी। मैं रामशरणसिंह जी को समझा लेता। ग्रन्थ प्रकाशित होने योग्य था। अवधी भाषा के लिये मेरा उससे मोह था। भगवदिच्छा। बेनफे की जर्मन भूमिका के अंग्रेजी अनुवाद के लिये डा० सुभद्र झा, लाइब्रेरियन गवर्नमेंट संस्कृत कालिज को लिखकर पूछें।

माइक्रो० की बात मैंने इसलिये लिखी थी कि कहीं वह विस्मृत न हो जाय।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१६७]

काशी विश्वविद्यालय
९-१-५९

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

३-१-५९ का पत्र मिला। अब वह कार्य १८ जनवरी को रक्खा है। रजिस्ट्रार का उत्तर अभी नहीं आया है। पर आशा है कार्यक्रम रहेगा। आप भी उनसे (अष्ठानाजी से) कह दें।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नलदमन के ५० दोहे साथ लेता आऊँगा। मैं १७ को अपर इंडिया से चलकर वहाँ आगरा सिटी स्टेशन पर उतरूँगा।

आपका
वासुदेवशरण

[१६८]

काशी विश्वविद्यालय
२४–७–६२

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

१९-७ का पत्र मिला। धन्यवाद। मेरा स्वास्थ्य अब कुछ पटरी पर आया है, पर अभी यात्रा के लिये सक्षम नहीं। आपकी योजना मौलिक है। उसकी सफलता चाहता हूँ।

आपका
वासुदेवशरण

पुनश्च—'नलदमन' की शब्दानुक्रमणी की छपाई का क्या रहा ?

[१६९]

काशी विश्वविद्यालय
१२–२–६०

प्रिय श्री सत्येन्द्र जी,

१०-२-६० का पत्र मिला। ईश्वर के अनुग्रह से ही ग्रन्थ पूरा हुआ। डी० लिट० निबन्ध छप जाने पर ही भेजिएगा।

आप इच्छानुसार पधारें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

पुनश्च—मुझे उस दिन गाड़ी पकड़ने की त्वरा थी। आपसे मिलने की इच्छा तो थी ही।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

श्री प्रभुदयाल मीतल के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१७०]

हड़प्पा
जि० मांटगुमरी
५-५-४६

प्रिय श्री प्रभुदयाल जी,

मैं दौरे पर इधर आया हुआ था। कल आपका भेजा हुआ ब्रज साहित्य मण्डल का पंच वार्षिक कार्य विवरण प्राप्त हुआ। उसे आद्योपान्त पढ़कर बहुत ही प्रसन्नता हुई। आपने इस पौधे को श्रम-जल से सींचकर जिस तरह बढ़ाया है, उससे बहुत ही सन्तोष और आशा होती है। ईश्वर आपके कार्य को और उन्नत करे और आपको सहयोगियों की और दृढ़ सहायता प्राप्त हो।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१७१]

'पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ' कार्यालय
३५/१६, फीरोजशाह रोड,
नई दिल्ली.

६-१०-४६

प्रिय मीतल जी,

व्यास जी के नाम आपका पत्र अभी मिला। उत्तर मैं ही लिख दे रहा हूँ। पोद्दार ग्रन्थ का काम अब निश्चित कार्यक्रम के अनुसार समाप्त करना है, ऐसा हम सब का विचार है। वह आप सबके सहयोग पर ही संभव है। यह जानकर हर्ष हुआ कि आपने दो महीने में लेख देना स्वीकार कर लिया है। यह हमारे कार्यक्रम के अनुकूल रहेगा। दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में आपका लेख आ जाने से टाइपिंग आदि सुविधापूर्वक करा लिया जा सकेगा।

आपने अष्टछाप की नई सामग्री का उल्लेख किया है। वह तो ग्रन्थ में भी और इस लेख में भी अवश्य आनी चाहिए। इस ग्रन्थ को ब्रज संस्कृति का कोष बनाने की योजना है। लेख सूची बना ली गई है। एक प्रति आपके पास भी भिजवा दूँगा। आप किसी भी विषय को जोड़ना चाहें, तो कृपया सूचना दें। ब्रज संस्कृति का कोई पक्ष हो जो रखना आवश्यक है, तो उस पर लेखक का नाम भी सुझावें। परामर्शों का स्वागत करूँगा। इस ग्रन्थ में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तियों के लिये श्लाघा या श्रेय का स्थान न होकर ब्रज की महान् संस्कृति का उद्‌घाटन ही हमें इष्ट है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१७२]

३५/१६ फीरोजशाह रोड,
नई दिल्ली
११-१२-४६

प्रिय श्री मीतल जी,

आपका पत्र पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। मन में सात्विक भावों का उदय हो, यही साहित्य-साधना का फल है। मंडल के प्रति मेरा तो भाव केवल साहित्य से प्रेरित है। आप उस दिन न आते, तो मेरे लिये मंडल में बहुत कुछ रस की न्यूनता रह जाती। आपने अनुरोध मानकर वातावरण से भरे हुए विष की ज्वालाओं का शमन किया और मेरे ऊपर व्यक्तिगत अनुग्रह किया। मंडल में यदि कोई सज्जन अन्य भाव से प्रेरित हों, तो वे उसी प्रकार के सुख के भागी होंगे। इसलिए भीतरी कुचक्रों को जानने और उनसे विचलित होने का शुद्ध साहित्यिक के पास न अवसर है, न रुचि। आपके सहयोग का मुझे पूरा भरोसा है, कारण आपको मैं अपना ही मानता हूँ। श्री राधेश्याम जी, श्री जवाहरलाल जी आदि सज्जनों से भी अनुरोध कर रहा हूँ कि वे एक बार पुनः इस उदार भवन में आवें। मंडल का भवन बनाना, ब्रज साहित्य की खोज और प्रकाशन का काम, पोद्दार ग्रन्थ की तैयारी, ब्रजभारती की नियमित व्यवस्था—ये ऐसे काम हैं जिनमें सभी सज्जनों का पूरा सहयोग चाहिए। व्यास जी की बुद्धिमत्ता, कार्य-शक्ति और सहज व्यवहार से मुझे आशा है कि कार्य में वास्तविक प्रगति होगी।

पर ब्रजभाषा और साहित्य का ठोस कार्य तो वहाँ है, जहाँ आपने अपने को सब टंटो से परे हटा कर ग्रन्थ निर्माण में हाथ लगाया है। मुझे अष्टछाप और सूरदास सम्बन्धी आपके ग्रन्थ बहुत अच्छे लगे। पूर्व प्रकाशित सामग्री का भली प्रकार मंथन और अप्रकाशित सामग्री की छान बीन—ये दो विशेषताएँ मुझे जान पड़ीं और इस शैली के लिए आपको बधाई है।

कृष्ण को केन्द्र में रखकर ब्रजप्रदेश ने भारतीय संस्कृति को जो देन दी है, उसके उद्धार के लिये जो सेवा आप कर सकें अवश्य करें। साहित्य-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवा एक चिनगारी है, जो सब में सदा नहीं रहती। उसके रहते जो कार्य कर लिया जाय, वही श्रेयस्कर है। पोद्दार ग्रन्थ के लिये आपके लेख की कब तक प्रतीक्षा करूँ ?

भवदीय
वासुदेवशरण

[१७३]

नई दिल्ली
२२-१-५०

प्रिय श्री मीतल जी,

'अष्टछाप परिचय' की भूमिका भेजी जाती है। कृपया देखकर शुद्ध छापने का यत्न कीजिएगा। कुछ थोड़ी (५०) प्रतियाँ अलग भी रिप्रिंट रूप में निकलवा लीजिएगा। मैं सम्भवतः २६ को वहाँ स्थायी समिति में आऊँगा। 'ब्रज भारती' का कार्य आप ही के कंधों पर है। उसको मंडल की प्रतिष्ठा के अनुरूप आगे बढ़ाना है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[१७४]

नई दिल्ली
१५-४-५०

प्रिय श्री मीतल जी,

'अष्टछाप-परिचय' पुस्तक, मेरे लेख की छाप, और आपका लेख मिला। धन्यवाद। पोद्दार ग्रंथ के लिये आपको अष्टछाप पर भी एक ठोस लेख लगभग ४० पृष्ठों में लिखना है, जिसमें तत्सम्बन्धी समस्त जानकारी सार रूप में समाविष्ट कर दी जाय। इस ग्रंथ को ब्रज संस्कृति का प्रतिनिधि बनाना है। उसके लिये मुझे प्रयत्न और परिश्रम करना पड़ेगा। आपको भी इसमें योग देना है। यदि यह ग्रन्थ ठीक प्रकार का बन गया, तो सम्भव है मथुरा की प्राचीन अध्यात्म वाणी का एकरस प्रवाह हिन्दी जगत् के लिये सुलभ हो सके।

आशा है आप मेरा अनुरोध मानकर और अपने ध्यान-प्राण पर बल लगाकर इस लेख को प्रस्तुत करेंगे, जो पाठकों को सुखदाई होगा। लेख में विवाद कम, रससिद्ध सामग्री अधिक हो।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१७५]

राष्ट्रीय संग्रहालय,
नई दिल्ली
२५-४-५०

प्रियवर श्री मीतल जी,

सीहीं के सम्बन्ध में मेरी टिप्पणी इस प्रकार है—"दिल्ली राज्य में सीहीं नाम का कोई गाँव नहीं है। मौखिक रूप से पूछताछ करने पर मुझे बतलाया गया कि सीहीं गांव गुड़गाँवा जिला में वल्लभगढ़ से प्रायः एक मील दूर मथुरा सड़क पर है। वल्लभगढ़ दिल्ली से लगभग २२ मील की दूरी पर है। मुझे यह भी बतलाया गया कि इस क्षेत्र में इस बात की पर्याप्त प्रसिद्धि है कि सूरदास का जन्म सीहीं गाँव में ही हुआ था।"

आपका
वासुदेवशरण

[१७६]

नई दिल्ली
२३-५-५१

प्रिय श्री मीतल जी,

आपका पत्र मिला। अभिनन्दन ग्रन्थ की सामग्री सम्भवतः जून में कलकत्ते पोद्दार जी के पास भेज दी जायगी, वहाँ प्रेस ठीक हो गया है। कागज का प्रबन्ध भी होने की आशा है। 'ब्रज भारती' के लिये लेख द्वारा सेवा कर सकूँ, यही मेरे लिये कम सौभाग्य नहीं है। सम्पादन का समय पाना असम्भव ही है। आप स्वयं उसका सम्पादन करें, यदि उसे कुछ बनाना चाहते हैं। यही मेरी सच्ची सम्मति है।

आपका
वासुदेवशरण

[१७७]

नई दिल्ली
३०-६-५१

प्रिय श्री मीतल जी,

'पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ' की सामग्री कलकत्ता भेज दी गई है। आप वहाँ जा रहे हैं, अतः उसकी छपाई की व्यवस्था के बारे में देखभाल लीजियेगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सूरदास के रंगीन ब्लाक को बनवाने का प्रबन्ध मैं कर रहा हूँ। जुलाई मास की १५ तारीख के बाद मेरा भी कलकत्ता जाने का विचार है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१७८]

नई दिल्ली
१४-७-५१

प्रिय श्री मीतल जी,

आपका लेख तो ग्रंथ में देने योग्य है ही। इसमें काफी सामग्री है। भूल से ही भेजने से रह गया है। अब भेजा जा रहा है।

सूरदास का रंगीन ब्लाक बनने के लिये दे दिया गया था। आज सम्भवतः मिलेगा। ठीक हुआ तो तुरन्त भिजवाऊँगा। अन्यथा ३-४ दिन का विलम्ब और होगा। "ब्रज भारती' के लिये भी कुछ लिखूँगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

डा० अग्रवाल जी बाद में दिल्ली संग्रहालय की राजकीय सेवा का परित्याग कर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राध्यापक हो गये थे। उस समय उन्होंने श्री मीतल जी द्वारा सम्पादित 'सूर विनय पदावली' की सचित्र प्रति को देखकर बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की थी। इस सम्बन्ध में उनका पत्र इस प्रकार है :—

[१७९]

काशी विश्वविद्यालय
२-२-५२

प्रिय श्री मीतल जी,

'सूर विनय पदावली' को देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। सूरदास के चित्र को इस रूप में और उनके विनय पदों को पृथक् हिन्दी जगत् के सामने लाकर आपने सराहनीय कार्य किया है। राय साहब की प्रति उनको भिजवा रहा हूँ। पुस्तक की सिलाई तीस की न कराकर जुजबन्दी की कराएँ तो अच्छा रहेगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१८०]

काशी विश्वविद्यालय
४–४–५६

प्रिय श्री मीतल जी,

२७-३-५६ के पत्र के लिये धन्यवाद। बधाई के लिये आपका अनुग्रह मानता हूँ। वह तो बड़ाई भगवान पाणिनि की है। मै भी उनके नाम का आश्रय लेकर उबर गया।

हरिहर निवास जी की पुस्तक पर आप अपने विचार अवश्य लिपिबद्ध करें। उनके उद्वेगकर वाक्य जो हों, वे उनके लिए व्यक्तिगत हैं। आपको और मुझे उनसे प्रयोजन नहीं। साहित्यिक तथ्यों के धरातल पर विचार-बिमर्श होना चाहिए। अवधी और ब्रज भाषाओं का महत्व अक्षुण्ण है।"

आपका
वासुदेवशरण

[१८१]

काशी विश्वविद्यालय
६–६–५६

प्रिय श्री मीतल जी,

"आयु के ५५ वर्ष समाप्त करने पर वही व्यक्ति हर्षित हो पाता है, जिसने उन वर्षों का सदुपयोग किया हो। सो आपकी साहित्य-रचना आपको सर्वथा आनन्दित करने के लिये पर्याप्त है। पर जीवन एक यात्रा है। चतुर नाविक वही है, जिसकी नौका के चप्पू बराबर चलते रहें। आप जैसे कर्मठ व्यक्ति से मुझे बहुत आशाएँ हैं। आशा है, 'जयंती समारोह' का पुण्य आपके लिये और भी मंगलों का आवाहन करेगा।"

शुभेच्छु
बासुदेवशरण

[१८२]

काशी वि० वि०
१४–१२–५७

प्रिय श्री मीतल जी,

१२-१२-५७ का कृपा पत्र मिला। आपकी शुभ कामना के लिए आभारी हूँ। यह तो वाण की महिमा है, जो उनका आश्रय लेकर मैं भी यश का भागी बन गया। मैंने अभी तक ऐसा कुछ कार्य नहीं किया, जिसे हिन्दी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मातृभाषा की सेवा कहा जाय। भगवान से प्रार्थना है कि मुझे इस कार्य की कुछ योग्यता मिले।

सस्नेह
वासुदेवशरण

[१८३]

काशी विश्वविद्यालय
२७–४–५८

प्रिय श्री मीतल जी,

'सूर सारावली' का संस्करण निकाल कर आपने हिन्दी साहित्य की सेवा की है। भूमिका में आपने पर्याप्त सामग्री संकलित की है। 'सारावली' का साहित्यिक रूप तो सुलभ हो ही गया, पर इसकी प्राचीनता और कर्त्तृत्व का प्रश्न हस्तलिखित ग्रंथ-सामग्री के मिलने पर ही तय हो सकेगा, ऐसा अभी भी लगता है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१८४]

काशी वि० वि०
५–२–५९

प्रय श्री मीतल जी,

३-२-५९ का पत्र और आपके द्वारा निर्मित 'ब्रज साहित्य संस्थान' के विधान के प्रारूप आदि मिले। इन्हें देखा। सब ठीक है। अब इसका विधिवत् पंजीयन करा लीजिये और कार्यारम्भ का सूत्रपात कर दीजिए।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[१८५]

काशी विश्वविद्यालय
४–५–५९

प्रिय श्री मीतल जी,

३०-४-५९ का पत्र मिला। सत्येन्द्र जी का प्रस्ताव अच्छा और सरल है। आप अपने जीवनकाल में साधनों की सीमा में जितना कार्य कर सकें, वही लाभ है। भविष्य की चिन्ता से संप्राप्त अवसर की निवृत्ति कल्याणकर नहीं।

सस्नेह
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सन् १६५६ के दिसम्बर मास में स्वामी दयानन्द जी की 'दीक्षा-शताब्दी' का बृहद् समारोह मथुरा में हुआ था। उस अवसर पर 'वेद सम्मेलन' का भी आयोजन किया गया, और उसके सभापतित्व के लिए डा० अग्रवाल जी से प्रार्थना की गई थी। उस समय अग्रवाल जी उदर रोग से पीड़ित थे, किन्तु उस स्थिति में भी उन्होंने अपनी स्वीकृति प्रदान की थी। उन्होंने समारोह-स्थल की अपेक्षा मीतल जी के निवास-स्थल पर ठहरने की इच्छा व्यक्त की थी। उस सम्बन्ध में लिखा हुआ उनका पत्र इस प्रकार है—

[१८६]

काशी विश्वविद्यालय
१४-१२-५६

प्रिय श्री मीतल जी,

मुझे २६ दिसम्बर को 'वेद सम्मेलन' का सभापतित्व करने के लिए मथुरा आना है। मैं आजकल उदर रोग से अस्वस्थ हूँ। शौच के लिये एनीमा लेना होता है, और कई बार बाथरूम में जाना पड़ता है। आशा है, आपके नए घर में फ्लश का प्रबन्ध है। आपके लिये मैं कष्ट देने वाला अतिथि बनूँगा, जिसके लिये अभी से बहुत क्षमा चाहता हूँ। २५ को किस गाड़ी से पहुँचूँगा, यह अभी ठीक नहीं कर पाया हूँ। पर आप चिन्ता न करें, मैं स्वयं आपके घर पहुँच जाऊँगा।

आपका
वासुदेवशरण

[१८७]

काशी वि० वि०
१-१-६०

प्रिय श्री मीतल जी,

परसों रात सकुशल लौटा। आपके यहाँ ठहरने और आतिथ्य का जैसा सुपास मिला, उससे चित्त अभी तक गद्गद् है। आपके निकट परिचय का यह अवसर बड़ा सुखद रहा।

'ब्रज साहित्य संस्थान' की उत्साहमयी प्रवृत्ति शीघ्र फलवती हो, ऐसी भगवान् से प्रार्थना है। आशा है, वसंत पंचमी तक आपके संकल्प का प्रभाव प्रकट होगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका स्वास्थ्य उत्तरोत्तर कार्य के साथ संवर्धित हो, यही चाहता हूँ। मैं भी अवश्य ठीक हो जाऊँगा, ऐसे लक्षण आ रहे हैं। त्रिलोकीनाथ जी को सस्नेह आशीर्वाद।

सस्नेह

वासुदेवशरण

[१८८]

काशी विश्वविद्यालय

१७–९–६०

प्रिय श्री मीतल जी,

तानसेन एवं बैजू और गोपाल सम्बन्धी पुस्तकें मिलीं। आपने तानसेन की जीवनी के सम्बन्ध में किंवदन्ती और इतिहास से उपलब्ध सामग्री का बहुत ही विवेकपूर्ण उपयोग किया है और दोनों के बीच की संकरी रेखा पर इतनी सावधानी से पैर रक्खा है कि मुझे लगा जैसे कोई सुलझा हुआ इतिहासज्ञ लिख रहा है। आपके परिणाम सजगतापूर्ण हैं। तानसेन का मुख पृष्ठ पर या आरम्भ में दिया हुआ चित्र ही प्रामाणिक है; और देने योग्य है। आशा है, आपकी ये पुस्तकें तानसेन, बैजू और गोपाल जैसे संगीतज्ञों की जीवनी के सम्बन्ध में ऐतिहासिक छानबीन को उत्तेजित करेंगी।

क्या बाँधवगढ़-रीवाँ के पुराने कागजों में तानसेन के सम्बन्ध की सामग्री की खोज की गई है? ग्वालियर में जन्म लेने पर बाँधवगढ़ से उनका सम्बन्ध कैसे बना, यह विचारणीय है। बैजू और गोपाल सम्बन्धी आपकी मान्यताएँ भी खोजपूर्ण हैं।

आपका

वासुदेवशरण

[१८९]

काशी वि० वि०

१०–४–६१

प्रिय मीतल जी,

'साहित्य लहरी' की प्रति के लिये अनुग्रहीत हूँ। आपने इसे बहिरंग से तो आकर्षक बनाया ही है, साथ ही 'साहित्य लहरी' पर ऐसा पाण्डित्यपूर्ण विवेचन भी पहले कभी नहीं हुआ। ८० पृष्ठों की लम्बी भूमिका में इसके सम्बन्ध में ठोस विचार किया गया है। इसके कर्त्तृत्व की प्रामाणिकता पर जो कहना शक्य है, आपने कहा है और समस्या को नया बल दिया है, यद्यपि किसी प्राचीन हस्तलिखित प्रति के अभाव की त्रुटि तो है ही। टीका के अंश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में आपकी विद्वता की छाप सर्वत्र है। मैं इधर आठ मास से अस्वस्थ था, पर अब बहुत कुछ ठीक हो गया हूँ। निश्चिन्त रहें।

भवदीय

वासुदेवशरण

[१६०]

काशी विश्वविद्यालय

२१-२-६६

प्रिय श्री मीतल जी,

'साहित्य संस्थान' द्वारा प्रकाशित आपकी चार नई पुस्तकें गो० हरिराय जी, स्वामी हरिदास जी, चंदसखी जी और चैतन्य मत एवं ब्रज-साहित्य से सम्बन्धित मिलीं। ये ब्रजभाषा साहित्य के महत्त्व को प्रकट करने के लिये बहुत उपयोगी हैं। गो० हरिराय जी के पदों का संकलन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। आशा है, इसका पर्याप्त स्वागत होगा।

इसी प्रकार स्वामी हरिदास सम्बन्धी पुस्तक भी रोचक और उपयोगी है। स्वामी जी के पदों में सच्चा भक्ति रस उड़ेल दिया गया है। कुछ पदों के सुनने से ही हृदय गद्गद् हो जाता है।

आपने चन्दसखी के वास्तविक जीवन की रूप-रेखा का उद्धार किया और उनके लगभग ४०० गीत और पद प्रकाशित किये हैं। इससे मुझे बहुत प्रसन्नता प्राप्त हुई। चन्दसखी पुरुष थे, अब इस विषय में किसी को सन्देह न रहेगा।

महाप्रभु चैतन्य का ब्रज साहित्य पर जो प्रभाव पड़ा, उसका सारभूत वर्णन अपनी पुस्तक चैतन्यमत और ब्रज साहित्य में आपने किया है। उससे इस विषय का स्पष्ट परिचय प्राप्त होता है, जो मुझे बहुत रुचिकर प्रतीत हुआ।

आशा है, आगे आप सनातन गोस्वामी और रूप गोस्वामी के ग्रन्थों को भी अपनी पुस्तक माला में स्थान देंगे।

भवदीय

वासुदेवशरण

श्री मीतल जी ने कई वर्षों के परिश्रम के उपरांत 'ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास' नामक बृहत् ग्रन्थ की रचना की थी। डा० अग्रवाल जी ब्रज संस्कृति के अनन्य प्रेमी थे। वे इस प्रकार के ग्रन्थ की आवश्यकता का अनुभव प्रचुर काल से कर रहे थे। मीतल जी इस तथ्य से भली भाँति परिचित थे, अतः

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्होंने इस ग्रन्थ की 'भूमिका' लिखने के लिए डा० अग्रवाल जी से अनुरोध किया। उनके पत्र के उत्तर में डा० अग्रवाल जी की स्वीकृति इस प्रकार प्राप्त हुई—

[१६१]

काशी विश्वविद्यालय,
१९–२–६६

प्रिय महोदय,

आपका पत्र दिनांक १६-२-६६ का मिला। आप अपने ग्रन्थ के छपे फर्में भेज दीजिए। डाक्टर साहब उन्हें देखकर 'भूमिका' लिख देंगे।

भवदीय
कृते–वासुदेवशरण

अभी तक जितने पत्रों का उल्लेख किया गया है, वे सभी स्वयं डा० अग्रवाल जी के हाथ के लिखे हुए हैं। केवल उपर्युक्त पत्र ही उनकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति ने लिखा था। इससे मीतल जी को कुछ सन्देह हुआ। जब उन्होंने इस विषय में पूछताछ की, तब ज्ञात हुआ कि डा० अग्रवाल जी पिछले कई माह से अत्यधिक रुग्ण हैं, और वे प्रायः शैया पर लेटे-लेटे ही पत्रों का उत्तर लिखवाया करते हैं। मीतल जी को उनका हालचाल जानने की बड़ी उत्सुकता हुई। वे काशी पहुँच कर इनके निवास-स्थान पर गये। उस समय डा० अग्रवाल जी की शोचनीय शारीरिक स्थिति को देखकर वे स्तब्ध रह गये। उन्हें इस बात का बड़ा पश्चाताप हुआ कि उन्होंने इस दशा में डा० अग्रवाल जी को भूमिका लिखने का क्यों कष्ट दिया। किन्तु डाक्टर साहब ने प्रसन्नता पूर्वक कहा — उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ। यद्यपि वे उठने-बैठने और स्वयं लिखने में असमर्थ हैं, तथापि वे बोलकर लिखवा देते हैं। इसी प्रकार भूमिका भी लिखाई गई है। उन्होंने मीतल जी से उक्त ग्रन्थ को शीघ्र प्रकाशित कराने को इच्छा व्यक्त की, ताकि वे उसे देख सकें। जब मीतल जी अपने ग्रन्थ के प्रकाशन का आयोजन कर रहे थे, तभी उनके ज्येष्ठ पुत्र श्री स्कन्दकुमार जी का यह पत्र मिला—

[१९२]

"सूचित करते हुए अत्यन्त शोक है कि हमारे पूज्य पितृचरण वासुदवशरण जी अग्रवाल का स्वर्गवास २६ जुलाई की रात्रि को हो गया है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकादशाह शनिवार ६ अगस्त एवं त्रयोदशाह सोमवार ८ अगस्त १९६६ को होगा।"

काशी हिन्दू विश्वविद्याल
वाराणसी–५

स्कन्दकुमार अग्रवाल

उपर्युक्त समाचार से मीतल जी सहित समस्त ब्रजवासियों को हार्दिक दुःख हुआ। किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि डाक्टर अग्रवाल जी जैसे संयमी महापुरुष का देहावसान इतनी छोटी आयु में हो जावेगा। मीतल जी का ग्रन्थ 'ब्रज का सांस्कृतिक इतिहास' डा० अग्रवाल जी की भूमिका सहित प्रकाशित हुआ, किन्तु उसे वे स्वयं नहीं देख सके, इसका सभी को खेद रहा।

(सम्पादक)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
के पत्र
श्री गणेश चौबे के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१९३]

लखनऊ
१९-७-४३

श्रीमन्,

आपका २१-६-४३ का पत्र मिला। यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आप जानपदिक लोकगीत और कहानियों के संग्रह का कार्य कर रहे हैं। यह हिन्दी साहित्य का मौलिक कार्य है। इसकी जड़ें धरती में बहुत गहरी गई हैं, अतएव इसमें जीवन का रस भी बहुत है। कहानियों को ठीक जानपदी भाषा में लिखना चाहिए जैसे लोकगीत वहीं की ठेठ भाषा में लिखे जाते हैं। मैंने इस विषय के सुझाव मधुकर में लिखकर भेजे हैं, आप वही पढ़िएगा। लोक कहानियों के पाठान्तर भी संग्रह करने की वस्तु है। संपादन में उनका भी महत्त्व है। बीरबल अकबर के चुटकुले छोड़ सकते हैं, पर कभी-कभी लम्बी कथाओं को अकबरी जामा पहनाकर चालू कर देते हैं, वहाँ सावधानी की आवश्यकता है। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों को छोड़ना ठीक नहीं। उनका जैसा रूप आपके जनपद में हो, लिख लेना चाहिए। कार्य बहुत है और आप जैसे धैर्यशील व्यक्ति जितना परिश्रम करेंगे उतना ही ठोस परिणाम निकलेगा। बड़े लोकगीत तो अनमोल हैं। उनका संग्रह अवश्य होना चाहिए। वे प्राचीन वीरकाव्य, प्रेमकाव्यों के अवशिष्ट संस्करण हैं। यह सौभाग्य की बात है कि जनपद के निरापद वातावरण में आज तक उनकी रक्षा हो गई। बड़े होने के कारण उनका त्याग तो किसी प्रकार नहीं किया जाना चाहिए। लोरिकायन आपको सम्पूर्ण लिखना चाहिए। सम्भव है, प्राचीन कथा साहित्य में उसका मूल मिल जावे। आपका एक बार का किया परिश्रम कल्पवृक्ष की तरह स्थायी फल देने वाला होगा। जिस पुनीत कार्य को आपने उठाया है उसी में अपने जीवन की अभिव्यक्ति जानकर उसे सम्पूर्णता तक पहुँचाइए।

आपका शुभ चिन्तक
वासुदेवशरण

[१९४]

लखनऊ
२७-४-१९४४

प्रियवर,

आपका १५-५-४४ का पत्र मिला। आपने जो भोजपुरी जनपद में प्रस्तुत कहानियों का संग्रह किया है, उसे जानकर प्रसन्नता हुई। आपका संग्रह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खड़ी बोली में है, इससे भी कोई हानि नहीं। अब उन कहानियों का उचित रूप में वर्गीकरण और अध्ययन होना चाहिए। यह आपके परिचय और अध्ययन के विस्तार पर निर्भर है कि आप उनमें से कितनी कहानियों की प्राचीन परम्परा को ढूँढ़ निकाल सकते हैं। जितनी भी कहानियों का मेल जातक की कथाओं से मिला सकते हैं मिलाने का प्रयत्न कीजिए। इस समय कहानी-साहित्य की बालकों और स्त्रियों के लिये लोक में बड़ी माँग है। बिहार के उत्साही प्रकाशकों को उनके प्रकाशन के कार्य में भाग लेना चाहिए, जिससे लोक-साहित्य, लेखक और प्रकाशक— इन तीनों का हित हो सके। जातक-कहानियों के हिन्दी अनुवाद की दो जिल्दें साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से छप चुकी हैं।

विक्रम के सम्बन्ध में गाई जाने वाली गाथाओं के गद्य-पद्य-मय रूप का संग्रह भी उपयोगी होगा। उनके द्वारा विक्रम की प्राचीन परम्परा का परिज्ञान हो सकेगा।

ग्रामीण कवियों की कविताएँ प्रायः लोकगीत के अन्तर्गत नहीं आतीं। खड़ी बोली के विवाह के गीत यदि जनपदों में पहुँच गये हैं तो वे अपेक्षाकृत आधुनिक होंगे। उनके संग्रह का प्रयत्न अभी न करना चाहिए। ब्रजभाषा के गीत यदि वहाँ तक पहुँचे हैं तो उनका संग्रह उपयोगी होगा।

भवदीय

वासुदेवशरण

[१६५]

लखनऊ

१७–६–४५

प्रिय श्री गणेश चौबेजी,

आपका २६-८-४५ का पत्र शिमला से लौटने पर ६ ता० को मिला। 'नवशक्ति' में जनपद कल्याणी योजना के अनुसार बिहार में कार्य करने के विषय में आपका लेख पढ़ा। बहुत प्रसन्नता हुई। बिहार का क्षेत्र तो बहुत विशाल है। बिहार की पुण्यभूमि भारतीय संस्कृति और लोकभाषा के प्राचीन साहित्यिक रूप की बहुत वर्षों तक एकमात्र धात्री रही है। बिहार में लोक-जीवन की जो परम्परा उपलब्ध होगी वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसी क्षेत्र में आर्य और शाबर संस्कृतियों का सम्मेलन भी गाढ़े रूप में हुआ। दोनों अपने-अपने ढंग से खुल खेलीं। शाबर संस्कृति ने जिस अनोखे ढंग से हिन्दूकरण की प्रक्रिया

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को स्वीकार किया वह अर्वाचीन समय में आश्चर्य की वस्तु है। पारस्परिक आदान-प्रदान के द्वारा दोनों धाराओं ने एक-दूसरे को श्रीसम्पन्न किया। सहिष्णुता, समन्वय और हितबुद्धि से आर्य और निषाद एवं शबर एक दूसरे के साथ घुल मिल गए और फिर भी अपना स्वतन्त्र अस्तित्व रखते रहे। इन अनेक मौलिक दृष्टिकोणों से बिहार के लोक-साहित्य और लोक-संस्कृति का अध्ययन बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

आपने जितने विषयों का परिगणन किया है वे तो सैकड़ों साहित्यिकों के उत्साह को थका डालने के लिये पर्याप्त हैं। समानधर्मा, समानशील साहित्यिक मित्रों की सब जगह आवश्यकता है जो कार्य की प्रफुल्लता से मार्ग के श्रम को दूर करते हुए आगे बढ़ते रहें, स्पर्धा और निन्दा से बचे रहें और सचाई के साथ वैज्ञानिक पद्धति से कार्य करते रहने के इच्छुक हों। ग्रियर्सन ने बिहार कृषकों के जीवन Behar Peasant Life में जो कार्य किया है उससे ही अपनी जनता को परिचित कराने के लिए बहुत से लेख लिखने की आवश्यकता है। रिस्ले आदि विद्वानों ने जो कार्य कर दिया है उससे हमें स्वयं परिचित होना चाहिए और तदुपरांत अपनी जनता को उससे परिचित कराना चाहिए। श्री आर्चर नेरे भी परिचित हैं। वे कैसी लगन के साथ वन्य जातियों के लोक-गीतों पर कार्य कर रहे हैं! क्या ही अच्छा होता यदि उनके जैसी योग्यता और कार्यशक्ति हमारे आधे दर्जन साहित्यिक मित्रों की बाँह में आ जाती? उनके चरणों में बैठकर यदि उनकी कार्य-प्रणाली का गुरुमन्त्र जान सकते तो भी कम लाभ की बात न होती। फिर भी हम जो हैं और जैसे हैं, उसी से काम चलाना है। अपने ही बलबूते पर दृढ़ता और परिश्रम से कार्य को प्रगति देना है। यह सोचकर हमें एक क्षण के लिये भी निराशा को पास न फटकने देना चाहिए। यह कार्य ऐसा ऊँचा है कि इसमें किया हुआ थोड़ा भी परिश्रम बहुत फल देने वाला होता है। हमारे चारों ओर सामग्री का ऐसा अक्षय भंडार भरा हुआ है कि थोड़े से सत्संकल्प से भी हम मालामाल बन सकते हैं, जनपद कल्याणी योजना साहित्यिक साधना का सरल और सीधा मार्ग है। उसमें पद-पद पर आनन्द की अनुभूति होती है।

आशा है आपकी साधना अन्य अनेक समानधर्मी सखाओं को प्राप्त करके उत्तरोत्तर वृद्धि को प्राप्त होगी। जानपद जन के प्रति इस समय सर्वत्र प्रीति का भाव फैला हुआ है। आने वाले युग का यही महामंत्र ज्ञात होता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विशाल भारतीय लोक जीवन के लिये हार्दिक प्रेम और सहानुभूति—यही सार्वजनिक निष्प्राणता और मृत्यु से बचने का एकमात्र उपाय ज्ञात होता है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१९६]

सेन्ट्रल एशिअन म्यूजियम
नई दिल्ली
२८—८—४६

प्रिय श्री चौबे जी,

फरवरी ४६ से मैं यहाँ आ गया हूँ। कहावतों और कहानियों के संग्रह में मुख्य भाग तो उन्हीं का रहेगा जो शिष्ट हैं। पर साहित्य के फूहड़ भाग का भी अपना स्थान है और आपकी उस ओर रुचि हो तो उसे भी अवश्य संगृहीत करें। शुद्ध वैज्ञानिक दृष्टि से भद्र और फूहड़ दोनों ही अध्ययन-क्षेत्र के अन्तर्गत लाये जा सकते हैं। संग्रह कर लेने के बाद इस बात का निर्णय ठीक होगा कि फूहड़ का कितना अंश किस प्रकार की टीका-टिप्पणी के साथ प्रकाशित कराया जाय। संग्रह के समय प्रकाशन की चिन्ता से ग्रसित न होना चाहिए।

२—जिन कहावतों के साथ कहानियाँ जुड़ी हैं उन्हें कहानियों के साथ जुटाइए और कहावतों के संग्रह में ही उन्हें स्थान दीजिए। कहानियाँ गौण और परिवर्तनशील एवं कहावतें नित्य होती हैं।

३—लोकगीतों का अनुवाद अंग्रेजी में होना चाहिए। किसी अच्छे अंग्रेजी-हिन्दी और हिन्दी-अंग्रेजी कोष से सहायता लीजिए। Fallon कृत कोष अच्छा रहेगा। आशा है, आप गाँव के प्रशान्त वातावरण में स्वास्थ्यप्रद प्राणवायु ले रहे हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[१९७]

नई दिल्ली
२१—११—४९

प्रिय श्री गणेशजी चौबे,

आपका २९-१०-४९ का पत्र मिला। आपकी कुशलवार्त्ता और नूतन परिस्थिति में भी अनवरत साहित्य-साधना का समाचार जानकर प्रसन्नता

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई। आप गाँव में रहकर वहाँ के साहित्य और लोकवार्त्ता संकलन के अपने पुराने प्रेम को कायम रख रहे हैं और उसे पोस रहे हैं यह तो आत्मा के चैतन्य का लक्षण है। यदि आप उस ओर से विमुख हो जाते तो सबसे अधिक हानि आपकी ही सर्व प्रथम होती। अनेक व्यक्ति ऐसी परिस्थितियों में खीझकर या परास्त होकर साहित्य-साधना से हाथ खींच लेते हैं। वह इष्ट मार्ग नहीं है। साहित्य-साधना योग है। योग आत्मसुख आत्मोन्नति के लिये ही है। दूसरों को तो आनुषंगिक रीति से उसका लाभ पहुँचता है। जहाँ प्रकाश होता है, तम का निराकरण हो जाता है। ऐसे ही जहाँ साहित्य सेवी बैठता है, वहीं वह अपने चारों ओर बुद्धि के प्रकाश की किरणें छिटकाता है, उसके उस कार्य में अनेकों को रुचि होती है। अन्यथा हल की मुठिया पकड़कर खेती करने वाले, अथवा वाणिज्य से जीविका चलाने वाले व्यक्ति तो सर्वत्र सुलभ हैं, उनमें कब किसको विशेष रुचि हुई है? अतएव आपसे मेरा यही अनुरोध है कि अन्य सब कर्तव्य-कर्मों का यथोचित निर्वाह करते हुए भी अपने इस प्रकाश लक्षण कर्म में अपनी ध्यान शक्ति का कुछ अंश अवश्य देते रहें और अपने केन्द्र से कभी विचलित न हों। देहात स्वयं एक महाभारत जैसी विशाल पुस्तक है। जो उसके अक्षर बाँचने का अभ्यास कर लेता है उसके लिये वहाँ अथाह सामग्री है। देहाती जीवन के कितने विषय, कितने पहलू अध्ययन की सीमा के भीतर लाए जा सकते हैं. इसी का कुछ विचार कर कभी लिखिएगा। सकलित सामग्री का सदुपयोग अवश्य करना चाहिए। आप सोहरों, लोरियों और खिलौनों के गीतों को एक भाग में प्रकाशित करना चाहते हैं, यह जानकर प्रसन्नता हुई। किस पद्धति से गीतों का सम्पादन करने का विचार है इसका परिचय कराने के लिए कृपया नमूने का गीत टिप्पणी आदि के साथ भेजिए। कभी-कभी बहुत विस्तार से भी हानि होती है। अतएव मूल विषय तक परिमित रहना और जितना आवश्यक है उतना ही व्याख्या में लिखना, यह नीति उचित होगी: मल्लिनाथ ने टीकाकार के लिये दो गुर बताए हैं—(१) बिना प्रमाण कुछ कहना नहीं, (२) जिसकी आवश्यकता न हो, उसे भी नहीं कहना। ये साहित्य सेवी के लिये काम के गुर हैं। अभी तो अपने देश में लोकसाहित्य, लोकवार्त्ता आदि विषयों के ज्ञाता और काम करने वाले बहुत कम हैं, अतएव बाहर से बहुत पथ-प्रदर्शन या सहायता की आशा न करनी चाहिए, नहीं तो निराशा हो सकती है। अपने ही मनन और अध्ययन या सुविचार से जितना हो सके सादगी के साथ करना चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागनाथन के चार गीत मिले। इनमें से कितने रूप दिये जाँय यह तो आपके संग्रह के क्षेत्र विस्तार पर निर्भर है। गीत के चारों ही रूप भाषा की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं। लेकिन शुरू में आपको एक ही रूप को जो सबसे अच्छा जान पड़े, देकर सन्तोष करना पड़ेगा। लेकिन जो नये प्रतीक या अभिप्राय (मोटिफ) हों उनका परिचय कराया जा सकता है। जैसे उत्तर सारन के गीत में गेंद का जमुना में उपटना, जमुनादह में जा लगना, कृष्ण का कुशा के डाभ उखाड़कर नाग नाथने की बात कहना और अन्त में साँप के लिये गेडुरवा शब्द का प्रयोग साहित्यिक दृष्टि से ध्यान देने योग्य हैं। शाहाबाद वाले गीत में हर हरवाहे और गैया चरवाहे को छोड़कर कालीदह में आना, नागिन के हाथ में पंखा या बीजना होना, वन से वनकुसा काटकर लाना, और सिन्दूर वखशना अच्छे अभिप्राय हैं। नाग के सहस्र फन और उनसे कन्हैया का काला पड़ जाना भी रोचक है। देवरिआ के गीत में कई बातें बड़े मार्के की हैं, जो अन्य किसी गीत में नहीं हैं। जैसे—गजनपुर देस का उल्लेख, कृष्ण का अपने आपको वसुदेव का पूत, शूरसेन का नाती और कंस का भान्जा बताना, नागिनियों का अपनी खोंच में तिल चावल लेकर सूर्य देवता को मनाना और सूर्य से अहिवात मांगना बहुत महत्त्वपूर्ण हैं।

वस्तुतः नाग-गरुड़ संग्राम का साहित्यिक अभिप्राय (मोटिव) वैदिक है। नाग अन्धकार या तम या पार्थिव अंश के प्रतिनिधि हैं, गरुड़ सुपर्ण या सूर्य प्रकाश या दैवी अंश के प्रतीक हैं। नाग विष और सूर्य या सुपर्ण अमृत के वाहक हैं। नागिनी अपने अहिवाद के लिए सूर्य को मनाती है, अर्थात् सूर्य का उपस्थान करती है, यह कल्पना मूल वैदिक भावों का स्मृति चिह्न है। 'सोनवा के सुअवा' का भाव समझ में नहीं आया। सुवर्ण के सूए से नाग के नाथने की बात क्या कही गई है?

दक्षिण चम्पारन वाले गीत में कदम्ब के वृक्ष का उल्लेख मथुरा वृन्दावन का स्मारक है। नागों के लोक में कृष्ण रूप मानुष का जाना नागिनी भाँप लेती है जैसे देव-परी की कहानियों में देव-दानवों के घर में मनुष्य गंध की बात सुनी जाती है (मानूस एक आइल हे)। कृष्ण का अपने आपको नंद जी का बेटा और सुनंद का नाती कहना किसी अन्य परम्परा को प्रगट करता है जो सम्भवतः जातकों से या जैन साहित्य वे ली गई होगी। वन में से कुश उखाड़कर लाने और उससे नाग नाथने की बात तो तीन गीतों में है। नाग-गरुड़ की प्राचीन वैदिक कहानी (सुपर्णाख्यान) में कुशाओं का घनिष्ठ

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्बन्ध है। कहते हैं गरुड़ जी ने अमृत का घट कुशाओं के वन में लाकर रक्खा था और अमृत का कुछ भाग कुशाओं पर भी गिर गया था। इसी को नागों ने चाटना चाहा तब कुशाओं से उनकी जिह्वा चिरकर वे द्विजिह्व बन गए और कुशाएँ अमृत स्पर्श से पवित्र एवं यजीय बन गईं। यज्ञ के अध्यात्म कर्मकाण्ड में कुशाएँ प्राणों की प्रतिनिधि हैं। अतएव अमृत अंश से युक्त हैं।

इस प्रकार के गीतों के सब ही क्रम कुछ न कुछ नई बात बताते हैं, किसी नए अभिप्राय की ओर संकेत करते हैं। और लोकवार्त्ताशास्त्र की किसी पुरानी बीते युग की स्मृति की ओर ध्यान दिलाते हैं। उनका महत्त्व तो है ही, पर किसी परिमित विस्तार वाले संग्रह में मूल में एक ही पाठ रखकर टिप्पणी में भिन्न अभिप्रायों की चर्चा की जा सकती है। यदि अपने पास पर्याप्त स्थान हो तो सब ही पाठान्तर प्रकाशित करना उपयोगी हो सकता है परन्तु इतना साधन दुर्लभ है।

क्या नाग नाथन के और भी गीत आप भेज सकते हैं? क्या कृष्ण के दावानल आचमन के भी गीत वहाँ हैं? क्या कृष्णलीला सम्बन्धी १० चुने हुए सर्वोत्तम गीत आप भेज सकते हैं?

भवदीय
वासुदेवशरण

[१६८]

नई दिल्ली
२७-२-५०

प्रिय श्री गणेश जी,

आपका १५-२-५० का पत्र मिला। आपने 'पृथिवी पुत्र' पुस्तक रुचि से पढ़ी यह जानकर प्रसन्नता हुई। 'ठेम' शब्द के लिये धन्यवाद। यह मेरे ध्यान में बना रहेगा। व्युत्पत्ति हाथ लगने पर लिखूँगा। धानों का जो गीत भेजा है, उसको टीका सहित लिख डालिए। एक लेख बन जाय जिसमें 'धान की विहारी किस्मों' का वर्णन आ जावे। चरक सुश्रुत ने धानों की सूचियाँ दी हैं। उन्हीं की तरह यह सूची भी काम की चीज होगी। लेख जहाँ छपे उसकी सूचना मुझे भी देवें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[१६६]

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी
१४-११-५१

प्रिय श्री गणेश जी,

दीपावली से दो वर्ष के लिये मैं यहाँ आ गया हूँ। College of Indology में Art & Architecture के Professor के पद पर deputation पर आया हूँ।

आपका लोकगीतों के अलंकरण पर नया लेख बड़े चाव से पढ़ गया हूँ। आपने लोकगीतों से सुन्दर सामग्री संकलित की है। उसमें साहित्य का रस मिला। लोकगीतों पर तो जितना काम हो थोड़ा है। कृपया इस लेख का दूसरा भाग प्रतीक वाला भी पूरा कीजिए। पृ० ६५ पर दौल्हापाती का क्या अर्थ है ? लाख आमों वाले वाग के लिये लखराँव शब्द बड़ा अच्छा लगा। क्या हजार पेड़ों वाले वाग के लिये भी कोई शब्द बचा है ? संस्कृत में 'सहस्सम्ब वन' पालि साहित्य में आया है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२००]

बनारस हिन्दू यू०
८-१२-५१

प्रिय श्री गणेश जी,

२६-११ का पत्र मिला। धन्यवाद। दोल्हापाती खेल से नया परिचय हुआ।

लोकगीतों के सम्पादन के विषय में अवश्य प्रयत्न करें। मेरे योग्य कार्य की सूचना यथा समय देवें। नाग नाथन का गीत भी भेजें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२०१]

काशी विश्वविद्यालय
२६-७-५३

प्रिय श्री चौबे जी,

बरह्म के सम्बन्ध में सूचनाओं के लिये आभारी हूँ। प्राचीन संस्कृत साहित्य और लोक में प्रचलित सामग्री के आधार पर मैं यही समझा हूँ कि

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीर-बरह्म की पूजा प्राचीन यक्ष पूजा का ही अवशेष है, यद्यपि इसके साथ स्थानीय वीरों की देव तुल्य पूजा भी कालान्तर में सम्बन्धित हो गई।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२०२]

काशी विश्वविद्यालय
४-१०-५३

प्रिय श्री गणेश जी,

८-९-५३ का पत्र यथासमय मिला। आपने जो सूचनाएँ भेजी हैं वे महत्त्वपूर्ण हैं। संझा और गंगाजली की सूचना लोक की अनुश्रुति में किसी पौराणिक विश्वास की रक्षा है। गंगाजली तो स्पष्ट ही गंगाजी हैं जो गौरी की सौत के रूप में संस्कृत कवियों द्वारा चित्रित हुई हैं। संझा माई की मान्यता उत्तर प्रदेश में भी प्रचलित है। शिव के साथ उसका सम्बन्ध मातृदेवी की पूजा की ओर संकेत करता है। महाचीन सम्भवतः तिब्बत की संज्ञा था। आचीन सुमात्रा की, कोचीन हिन्द चीन की और चीन मध्य एशिया के चीनी तुर्किस्तान प्रदेश की। जोगियों का महाचीन से सम्बन्ध माना ही जाता था, और वस्तुतः था। लोकगीत में इसकी अनुश्रुति का पर्याप्त महत्त्व है। सूर्य उपासक कारिख का अर्थ मैं अभी नहीं समझ पाया। राजा सलीम की कथा में सम्भवतः किसी सालिवाहन या पंजाबी राजा रिसालू का संकेत हो सकता है। रिसालू की पहचान वेमतक्षम से की जाती है। वे ऋषिक वंशी थे। दोनों कहानियों के अभिप्रायों की तुलना करनी होगी। रिसालू की कहानी Indian Antiquary में छपी थी। आप इस नई सामग्री पर लेख तैयार करें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२०३]

काशी वि० वि०
१५-११-५३

प्रिय श्री गणेश जी,

८-११-५३ का पत्र मिला। आपका पावस-गीत लेख विनोद जी को मिल गया था। मैं स्वयं उसे देखकर यदि सम्भव हुआ तो पत्रिका में दे दूँगा। देवास सम्बन्धी नई सामग्री के विषय में जानकर कुतूहल हुआ। आप उस पर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य जनपद के लिये लिखें। पिछले दिनों जनपद की स्थिति डावाँडोल हो गई थी। तब तक आर्थिक प्रबन्ध में मेरा हाथ न था। अब मैं उसे संभाल रहा हूँ! निश्चय किया है कि उसे आगे भी प्रकाशित किया जाय।

भवदीय

वासुदेवशरण

[२०४]

काशी विश्वविद्यालय

११-१-५४

प्रिय श्री गणेश जी,

९-१-५४ का पत्र प्राप्त हुआ। जनपद का चौथा अङ्क प्रेस से आगया। भेजा जा रहा है। कृपया मेरा निवेदन पढ़कर सम्भव हो तो वहाँ उसका कुछ प्रचार करें।

अपना लेख कृपया भेजें।

आपका

वासुदेवशरण

[२०५]

काशी विश्वविद्यालय

१-३-५४

प्रिय श्री गणेश जी,

९-२-५४ का पत्र मिला। जनपद प्रथम वर्ष के ४ अङ्कों की वी० पी० श्री दयाचन्द जालान के पते पर भेज दी गई है। सूचनार्थ निवेदन है।

भवदीय

वासुदेवशरण

[२०६]

काशी वि० वि०

१०-११-५४

प्रिय श्री गणेश जी,

जायसी कृत पद्मावत (माताप्रसाद संस्करण) दोहा ५४४ (=शुक्लजी सं० ४५।४) में चावलों के ये नाम आये हैं—रायभोग, काजररानी, झिनवा, रौदा, दाउदखानी, कपुरकान्त, लेंजुरि, रितुसारी, मधुकर, ढेला, जीरासारी, घिर्तकांदौ, कुँवर वेरासू, रामरासि, सगुनी, बेगरी, पढिनी, गड़हन, बड़हन,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसार तिलक, खंडचिला, रायहंस, हंसाभौंरी, रूपमांजरि, केतुकी, बिकौरी— इनमें से जिन नामों पर प्रकाश डाल सकें मैं अनुगृहीत हूँगा। कृपया लिखें कि ये धान हैं या जड़हन, रंग कैसा होता है, और भी उनके बारे में जो ब्यौरा रोचक हो। आपके प्रदेश में कौन से इनमें से होते हैं ?

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२०७]

काशी वि० वि०
१०-११-५४
कार्तिकी पूर्णिमा

प्रिय श्री गणेश जी,

जिस नई पुस्तक की आपने चर्चा की है वह रोचक जान पड़ती है। उसकी ठीक पहचान के लिए कृपया आरम्भ, अन्त और मध्य के एक-एक पृष्ठ की प्रतिलिपि भेज दीजिए। मैं स्वयं देखकर और यहाँ सभा के विशेषज्ञ से दिखलाकर आपको लिखूँगा। मुझे यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आपके द्वारा ५०० हिन्दी हस्तलिखित ग्रंथों का उद्धार हो गया। कृपया इस काम को जारी रखते रहें। न जाने भविष्य में और क्या-क्या मिल जावे। ज्योतिरीश्वर ठाकुर कृत वर्णरत्नाकर की खंडित प्रति मिली थी जिसे सुनीति बाबू ने छापा है। उसकी पूर्ण प्रति मिथिला से मिलनी चाहिए।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२०८]

काशी वि० वि०
१७-११-५४

प्रिय श्री गणेश जी,

१३-११-५४ का कृपा पत्र मिला। 'साम-सामी' कोई नई पुस्तक ही है। यह पूर्व परिचित प्रेमाख्यान काव्य नहीं है। सभा के हिन्दी अन्वेषक श्री दौलतराम जुयाल बहुत अनुभवी हैं। मैं उन्हें भी आपके भेजे उद्धरण दिखाऊँगा। सम्भव है कुछ और प्रकाश डाल सकें। आपके प्रदत्त ग्रन्थों की सूची तो साहित्य में छपनी चाहिए जिससे उस संग्रह का यथार्थ परिचय मिल जावे। मैथिली भाषा के वर्ण रत्नाकर और विद्यापति की कीर्ति लता एवं

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कीर्ति पताका पुस्तकों की कोई फी पाण्डुलिपि कभी मिले तो विशेष ध्यान रखिएगा। वे हिन्दी के लिये अपूर्व निधियाँ होंगी।

धानों वाला आपका कवित्त अब मेरे ध्यान से उतर गया है। पुराने कागजों में कहीं रक्खा होगा पर शीघ्र खोज न पाऊँगा। यदि आप उसे देखकर पद्मावत की सूची से मिलाकर नामों पर कुछ प्रकाश डालें तो कृपा होगी।

आपका

वासुदेवशरण

[२०६]

काशी विश्वविद्यालय

२०-११-५४

प्रिय श्री गणेश जी,

१७-११-५४ का पत्र बड़े समय से मिला। मेरे अनुवाद का यह अंश अब छपने के निकट आ गया था। सो उसमें आपकी बताई पहचानों का उपयोग कर सकूँगा। जायसी के इस दोहे का पाठ शुक्ल जी की प्रति में कुछ भिन्न है और माताप्रसाद जी की प्रति में संशोधित पाठ के नामों में कुछ भेद है। माताप्रसाद जी का पाठ नीचे लिखता हूँ—क्रमांक दोहा ५४४ (शुक्ल जी ४५।४)—

सोझहिं चाउर बरनि न जाही। बरन-बरन सब सुगँध बसाहीं।
रायभोग औ काजर रानी। झिनवा रौदा दाउदखानी।
कपुरकांत लेंजुरि रितुसारी। मधुकर ढेला जीरासारी।
घिर्तकादौं औ कुँअर बेरासू। रामरासि आवै अति बासू।
कहिअ सो सोंधे लाँबे बाँके। सगुनी बेगरी पढिनी पाके।
गड़हन जड़हन बड़हन मिला। औ संसार तिलक खँड़चिला।
रायहंस औ हंसा भौरी। रूप मांजरि केतुकी बिकौरी।

सोरह सहस बरन अस सुगँध बासना छूटि।
मधुकर पुहुप सो परिहरे आइ परे सब टूटि॥

मुझसे किसी ने बताया है कि रायभोग धान है, छोटा दाना होता है, छीट कर पैदा होता है। खाने में सामान्य जन काम में लाते हैं। क्या यह वर्णन सत्य है? रानी काजर नाम मिर्जापुर जिले का प्रसिद्ध चावल सुरेशसिंह

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी ने लिखा है । आपके यहाँ यह है या नहीं ? कैसा होता है और गुण क्या है ? झिनवा झीना एक ही होने चाहिए । क्या लोकगीतों के अतिरिक्त आपके यहाँ यह नाम प्रयुक्त होता है ? कैसा चावल है ? क्या झिनवा और कनकजीर एक है ? रुदवा (रौदा) वस्ती जिले में प्रचलित कहा गया है । क्या आपके यहाँ भी है ? दाउदखानी बंगाल का उपभेद आपने लिखा है । क्या बिहार में यह नाम नहीं है ? कपुरकांत रितुसारी नामों पर अभी तक कहीं से भी प्रकाश नहीं पड़ा । लाँजी लेंजुरि एक ही हो सकता है । मधुकर पर आपने प्रकाश डाला ही है । ढेला दिहुला ज्ञात होता है । एक प्रति में इसे धेला लिखा भी है । आपके यहाँ यह नाम चलता है क्या ? अवधी में तो मैंने सुना है । (ईख सरौती देहुला धान । इन्हें छाँड़ि जिनि बोयो आन) घिर्तकादौं के लिये घीकांडरि नाम एक सज्जन ने मिथिला में प्रचलित बताया है । दूधकांडर भी दूसरा नाम कहा है । कुँअर बेरासू और रामरासि पर कहीं से प्रकाश नहीं पड़ा है । सगुनी मिथिला का सउनि जान पड़ता है । मुझे बतलाया गया है कि इसका दाना महीन होता है और सनजीरे की भाँति यह बढ़िया किस्म का चावल है । बेगरी और पढिनी भी अभी विचाराधीन हैं । पढनी बढनी की की भ्रान्ति सम्भव है, किन्तु एक उत्तम पाण्डुलिपि मेरे सामने है उसमें पढिनी ही है । गड़हन, बड़हन नाम भी कहीं नहीं मिले । संसार तिलक, खँडचिला, हंसा भौंरी, रूपमंजरी और विकौरी नामों का कहीं से कुछ परिचय मिले, इसके लिए मेरा मन छटपटा रहा है । केतकी के बारे में एक मित्र ने बताया कि यह प्रसिद्ध जड़हन है । सोंधी गन्ध आती है । अगहन में कट जाता है । मध्यम वर्ग के लोग खाते हैं । आपके कष्ट के लिये अनुग्रह मानता हूँ । देखते-देखते जनपदीय शब्द ओझल होते जा रहे हैं । यदि अच्छे कोशों में सुरक्षित नहीं कर लिये गये तो पचास वर्ष पीछे सब अंधेरे में विलीन हो जाएँगे ।

आपका

वासुदेवशरण

[२१०]

काशी वि० वि०

२६–११–५४

प्रिय श्री गणेश जी,

इधर ऊपर-तले आपके तीन पत्र मिले । शालि से मेरे मानस को आपने सूचनाओं की वृष्टि से जैसे सींच दिया । मुझे स्वप्न में भी आशा न थी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि इतने नामों की पहचान मिल सकेगी। अब तो थोड़े ही रह गये हैं। संसार तिलक, खँडचिला आदि भी कहीं नाम होते होंगे। हर्ष की बात यह हुई कि इस दोहे का प्रूफ मेरे हाथ में है। सो ये संशोधन सब काम में आ जाएँगे। आपकी कृपा का अति अनुग्रह मानता हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२११]

काशी विश्वविद्यालय
१–१२–५४

प्रिय श्री गणेश जी,

आपके पहले पत्रों की पहुँच दे चुका हूँ। धानों की पहचान बहुत उपयोगी रही है। आज झिनवा की जानकारी मिली। इसे भी सम्मिलित कर दिया है। कल प्रूफ लौटा दूँगा। पर आपकी छानबीन जारी रहे। जो सामग्री हाथ लगेगी परिशिष्ट में दे दूँगा। आपने जब इतनी खोज की है तो धान और जड़हनों के सब नामों पर एक बड़ा लेख तैयार कर दें। मैं 'जनपद' में छापूँगा। वह खेती की पुस्तक मुझे सुलभ नहीं थी। उसकी भी सामग्री लेख में दे दें और भी जितना पूछताछ से जान सकें। यों कहीं पर एक अच्छी नामावली का संग्रह हो जायगा जो काम आएगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२१२]

काशी वि० वि०
६–११–५५

प्रिय गणेश जी,

पत्र मिला। मैं १२ दिन से बाहर था। विक्रमी गाथा की प्राप्ति का समाचार जानकर प्रसन्नता हुई। आप उसे लिपिबद्ध कर लें। उसका कथानक अभी तक मेरे ध्यान में नहीं आया। पर जान पड़ता है कि कथा लोकव्यापी थी। कथा के ऐतिहासिक महत्व की बात उसके प्रकाशित होने पर ही समझी जा सकेगी, जैसे राजा रसालू की कथा का हुआ था। चित्रसेन-पद्मावती कथा भी लिख भेजिए। आपके पधारने से मुझे हार्दिक आनन्द हुआ था।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
के पत्र
डा० कृष्णाप्रसाद 'सुमन' के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२१३]

काशी विश्वविद्यालय
२२-३-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

होली के पर्व पर तुम्हारी मंगल कामना करता हूँ। श्रद्धा की रोली से महार्घ विद्या के क्षेत्र में अन्य कुछ नहीं। इसी उर्वर साधन से महान् फल की उत्पत्ति होती है। भगवान करें आपका विद्या-व्यासंग चिरजीवी हो। नामपट्ट मिला उसके लिए धन्यवाद। मौलिक सूझ पर बधाई! बहुत सुन्दर बना है। शब्द-संग्रह देखकर लौटाऊँगा।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२१४]

काशी वि० वि०
२५-४-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

२१-४-५४ के पत्र से 'नैनुआँ' शब्द का परिचय पाकर प्रसन्नता हुई। जनपदीय साहित्य के महान् भंडार में इसी प्रकार पूर्व से पश्चिम तक शब्द भरे हुए मिलेंगे।

मैंने श्री डा० माताप्रसाद गुप्त द्वारा सम्पादित 'पदमावत' का संशोधित संस्करण देखा है। यह पाठों की दृष्टि से बहुत उत्कृष्ट है। हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद से १२) में मिलेगा। अवश्य मँगालें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२१५]

काशी वि० वि०
१०-५-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

'अभिधान-चिन्तामणि' अप्राप्य है। किसी पुस्तकालय से लेकर एक वार देख जाँय। अवश्य जनपदीय शब्दों की पहचान उसकी शब्दावली में मिलेगी। 'मातृभूमि', 'उरु ज्योति' में दूसरे प्रकार के निवन्ध हैं (वैदिक और राष्ट्रीय)। 'पद्मावत भाष्य' में मूल और टीका दोनों रहेंगी। ग्रीष्मावकाश में मई में तो यहीं रहने का विचार है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२१६]

अग्रवाल कं०, शिवाजी मार्ग
लखनऊ
२६-६-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

६ जून से मैं यहीं हूँ। पिताजी को अस्वस्थ दशा में मेडिकल कालिज में भरती कराना पड़ा और मैं उन्हीं की परिचर्या में हूँ। अभी जुलाई के अन्त तक यहीं रहना होगा। आपका एक लेखांश मिला था। उसे देख रहा था सो चलते समय वहीं रह गया। शेष भी वहाँ आया रक्खा होगा। भृगु को लिख रहा हूँ कि प्राप्त अंशों को यहाँ मेरे पास भेज दे। मेरा आवास अस्पताल में ही रहता है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२१७]

लखनऊ
५-७-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

१-७-५४ का पत्र मिला। आपकी शुभ कामनाओं के लिए अनुगृहीत हूँ। अभी मुझे १ मास और लगेगा। पिताजी के स्वास्थ्य की स्थिति ठीक चल रही है।

आपके निबन्ध की प्रगति जानकर सन्तोष हुआ। अगली सामग्री काशी ही यथासमय भेजना ठीक होगा।

'वल्ली हिरण्यम्' उदाहरण ६-२-४३ सूत्र पर 'काशिका' में है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२१८]

काशी वि० वि०
४-१०-५४

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

१८-९ और २८।९ के पत्र मिले। आगे के पृष्ठ भी। गाँवों के नाम अर्थों के दिखाने के लिए ही लिखने चाहिए, जिससे गाँवों के जीवन के इस पक्ष पर प्रकाश पड़े।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२—जेठ असाढ़ी अवधी का चालू शब्द है। अर्थ के लिए हीरक जयन्ती अङ्क में मेरा लेख देखिये।

३—'दसतपा' के लिए देखिये, जायसी (४२८।५, ३४३।७)।

४—'बगोला' मेरठ के गाँवों में प्रचलित है। वायु का जो गोला बन जाता है वही 'बगोला' कहलाता है (वातगोल)।

५—भुइयाँ लोट चलै पुरवाई। तब जानो बरखा रितु पाई॥ यह अवधी के गाँवों में कहा जाता है। इस पुरवाई को प्रति वर्ष चलते देखा जा सकता है। मैंने स्वयं इसे देखकर इस उक्ति का आनन्द उठाया है।

६—'जिह्वारिका' गन्धारिका प्लाट्स के मनगढ़न्त शब्द जान पड़ते हैं। साहित्य में उनका अस्तित्व नहीं है। इस दृष्टि से केवल मानिअर विलियम्स प्रामाणिक है।

७—'गुम्हौड़ा' सं० गोमुण्ड से सम्भव है।

८—जाड़े, गर्मी, वर्षा सम्बन्धी अन्य कहावतों को भी पाँचवें प्रकरण के अन्तिम भाग में सम्मिलित कर दें।

९—आ हाँ तिक् तिक् का अन्तर गौरूपी शतवार करने में बताया है।

१०—प्रकरण ८, ९, १०, ११ को भी मेरे निर्देशों के अनुसार शोध कर भेजते तो मुझे प्रसन्नता होती, क्योंकि मेरा समय और शक्ति अत्यन्त परिमित है।

११—रजिस्ट्री पैकेट में पत्र रखकर न भेजना चाहिए। ऐसा पोस्ट का नियम है, शायद आपको पता न हो।

शुभेच्छु

वासुदेवशरण

[२१९]

काशी वि० वि०

९–१–५५

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

अबुलफजल ने घोड़ों की गर्दन में पहनाए जाने वाले एक आभूषण का नाम 'टैया' लिखा है। जायसी ने भी उसका उल्लेख किया है (टैआ चँवर बनाए.............. ५१२।८=४२।२४।८)। वहाँ इस नाम का पता लगाना चाहिए।

भेजे हुए पृष्ठ मिल गए हैं।

शुभेच्छु

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२२०]

काशी वि० वि०
२७-४-५५

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

पत्र मिले। निबन्ध टंकित कराने का प्रवन्ध सुविधानुसार अलीगढ़ या काशी कहीं भी करा सकते हैं। मई के मध्य में एक बार सब सामग्री दिखलाकर फिर टंकित करा सकते हैं। चित्रों के विषय में अच्छा होगा कि लगभग ८ पृष्ठ का एक नमूना तैयार करके भेजें कि किस रूप में रखना चाहते हैं। देखकर सुझाव दे सकूँगा।

आपके अनुमान से जनपदीय शब्दों की क्या संख्या है, जिनके अर्थों का व्याकरण निबन्ध में किया गया है।

अखारा— जायसी ५२७।१, ५५७।४
रामायण लंकाकांड १३।४।

(अ) 'कुंडली' के सम्बन्ध में सूर का पद शब्द सागर पृ० १४७ पर उद्धृत है।

घमोई—(पद्मावत २६८।२)।

हीरा, फीरोजा, पन्ना और लाल आदि नगों के विषय में क्या अलीगढ़ जनपद में कोई शब्दावली है? यदि हो तो 'बेगड़ी' (सं० बैकठिक = b = ।A। १) प्रकरण बनाकर उसके अन्तर्गत दीजिए। क्या वहाँ कोई 'हक्काक' (= हकीक तराशने वाला) है? क्या हक्काक टोला कोई मुहल्ला है?

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२२१]

काशी विश्वविद्यालय
१३-७-५५

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

आपकी भेजी हुई सामग्री मिली। भगवान् करे आपका श्रद्धा का ब्राह्मसर अमर रहे। आपसे मुझे साहित्यिक क्षेत्र में बहुत आशा है।

आपके निबन्ध का अंश कल टंकक के पास भिजवा दूँगा।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२२२]

काशी वि० वि०

११-६-५५

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

६-६-५५ का पत्र मिला। यह संभावना मान्य है कि वैदिक युग में भी भाषा (बोलचाल में प्रयुक्त भाषा) के कई रूप रहे हों। एक प्रतिमानित रूप साहित्यिक भाषा के नाते वैदिक मंत्रों में सुरक्षित रह गया है। लोक-प्रयुक्त अन्य रूपों का केवल क्वचित् सम्पर्क रह गया है। साहित्य-प्रयुक्त भाषा रूपों के अतिरिक्त लोक प्रयुक्त रूप ही आपेक्षिक दृष्टि से प्राकृत रूप कहे जाते हैं। सब कालों में इस स्वाभाविक स्थिति की विद्यमानता मानी जा सकती है। पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि, कालिदास, आदि के युग में भाषा की यह दोहरी स्थिति थी। उससे पहले भी रही होगी। मध्यकाल में थी; आज भी है। मूल 'दुर्लभ' से ही 'दूलभ' ज्ञात होता है, क्योंकि 'दुर्' उपसर्ग और भी शब्दों में है।

शुभेच्छु

वासुदेवशरण

[२२३]

काशी वि० वि०

१४-१-५६

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

धुनिया तांत को जिस लकड़ी की मुठिया से दबाकर रुई धुनता है, उसे 'दस्ता' कहते हैं। बिहार पेजेंट लाइफ में यही शब्द दिया है। यह फारसी का शब्द किसी प्राचीन शब्द को हटाकर बैठा है। आप०के यहाँ शायद है वह शब्द मिले। जायसी में उसके लिये 'चान' शब्द आया है (५८३।६) मैं जानना चाहता हूँ कि वह कहीं जीवित बचा है या नहीं। 'शब्द सागर' में उसका यह अर्थ दिया है अतएव कहीं अवश्य बचा होगा।

शुभेच्छु

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२२४]

काशी वि० वि०
३-५-५६

प्रिय श्री 'सुमन' जी

१-५-५६ का पत्र मिला। दिल्ली छलावा है। वहाँ साहित्यिकों की समाधि है। उसकी कल्पना सच्चे विद्यानुरागी को मन में न लानी चाहिए। कभी किसी विश्वविद्यालय में स्थान हो तो आप अवश्य प्रयत्न करें। मुझे दिल्ली के १६००) से यहाँ सरस्वती के मन्दिर के ८००) श्रेयस्कर जान पड़े। व्यक्ति के स्वबिन्दु को—मानव की व्यक्तिगरिमा को—दिल्ली खा लेती है। वह भयावह स्थान है। आप जहाँ हैं वह क्षेमयुक्त शीतल स्थान है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२२५]

काशी वि० वि०
१६-३-५७

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

होली श्रद्धा पत्र पाकर चित्त प्रसन्न हुआ। भगवान आपका मंगल करें। आपके द्वारा नए सारस्वत सत्रों का वितान हो। भारतीय संस्कृति के लिये अभी बहुत कार्य करना है। उसी का एक दीक्षित सेनानी मैं आपको देखना चाहता हूँ। आपकी कार्य-शक्ति से मुझे बहुत आशाएँ हैं।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२२६]

काशी वि० वि०
११-११-५७

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

८-११-५७ का पत्र मिला। आपकी नियुक्ति की नई प्रगति जानकर प्रसन्नता हुई। विश्वविद्यालय की शीतल छाया में आपको स्थिर रूप से काम करने का अवसर मिलेगा।

मुझे आशा है कि आपका निवन्ध भी शीघ्र कहीं से प्रकाशित होगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सभा से ली हुई क्रुक की पुस्तक का काम नियमित चल सके तो उसे अवधि के भीतर सभा को लौटा सकेंगे।

आपका

वासुदेवशरण

[२२७]

काशी विश्वविद्यालय

५-३-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

पत्र मिला। धीर व्यक्ति परिस्थितियों का स्वामी होता है। तुम्हें बहुत कार्य करना है। अपने समय और मन-प्राण-शरीर की शक्तियों को हिन्दी-साहित्य की थाती जानकर कार्य में संलग्न होना है। दाहिने बाँए देखकर विचलित नहीं होना है। केन्द्र का आश्रय लो, जो सदा अपने भीतर है। आज फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा से ही साहित्य-सेवा का अखण्ड व्रत ग्रहण करो। काम की तह लगाकर रक्खो। एक के बाद एक निपटाते चलो। बिना कार्य रहने से मन कुण्ठी हो जाता है। गतिशील मन ही सच्चा सखा है। विभाग में जो कार्य करने को मिला हो, उसे निष्ठा से करके शेष सब समय काम में लगेगा तो आनन्द, शान्ति, आशा और अर्थ सब की साथ प्राप्ति होगी। मई में एक मास यहाँ आकर रहो। अनेक नई बातें बतानी हैं।

[वृक्ष इवस्तब्धो दिवि तिष्ठत्यग्रे=सामने जैसा यह ठाढा वृक्ष है, वैसा ही अप्रधृष्य विश्व और जीवन का विधान है।]

भवदीय

वासुदेवशरण

[२२८]

काशी विश्वविद्यालय

१३-४-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

कहीं-कहीं कच्ची कुइयाँ खोदकर उसमें पकाई मिट्टी की गोल चकरियाँ एक के ऊपर एक बैठा देते हैं, इसे ग्रियर्सन ने Bihar Peasant Life में 'गँडुआ' लिखा है (पृ० २०५)। यह संस्कृत गंड' से बना है। 'हर्षचरित' एक सांस्कृतिक अध्ययन (पृ० १८४) में 'गंड कुसूल' की व्याख्या में 'गड' शब्द का यह अर्थ दिया गया है। 'गंड' को ही बंगाल में माँडल कहा जाता है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पछाँह में भी क्या इनमें से कोई शब्द चलता है ? आपने निबन्ध में पृ० ७७५ पर कुएँ के इस प्रकार का उल्लेख नहीं किया।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२२९]

काशी वि० वि०
३-५-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

१-५-५८ का पत्र मिला। आपको यहाँ बुलाने का हेतु 'हिन्दी-व्युत्पत्ति कोश' का कार्य है। मैंने १५ वर्षों से जो कार्य किया है उसे प्रकाशन योग्य रूप में ढाल देना है। आप एक मास के लिए आ सकें तो काम भी होगा, सीखेंगे भी। वहाँ कोई आवश्यक कार्य हो तो उसमें अन्तराय करके न आवें। मैं १० को अपर इण्डिया गाड़ी से चलकर ११ को दिल्ली पहुँचूँगा। १५ के लगभग काशी लौट आऊँगा। आपको Banglore के Linguistic School में दो मास के लिए भेजने की बात कोचड़ जी कह रहे थे। क्या वह कार्य-क्रम नहीं बना ?

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२३०]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
२७-१०-५९

प्रिय श्री सुमन जी,

२५-१०-५९ का पत्र मिला। निमन्त्रण के लिए धन्यवाद ! पर मैं अभी स्वास्थ्य की मर्यादा के बाहर यात्रा नहीं कर पा रहा हूँ। क्षमा करेंगे।

आपकी भूमिका कल रजिस्ट्री से भेज दी।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२३१]

काशी वि० वि०
२८-११-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

१२-११ का पत्र मिला। मैं आजकल अस्वस्थ हूँ। विशेष ग्रन्थालोड़न नहीं कर पा रहा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'व्रज' शब्द के बारे में भागवत, हरिवंश और महाभारत एवं ब्रह्मवैवर्त में जितने उल्लेख मिलें सब पर एक तुलनात्मक टिप्पणी तैयार करके चाहें मुझे दिखा लें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२३२]

काशी वि० वि०
३०-११-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

मेरे मन में कई दिन से यह विचार आ रहा है कि आप सूरसागर की एक संजीवनी टीका जैसी टीका तैयार कीजिए। उसके अनेक शब्दों की छानबीन की आवश्यकता है। व्युत्पत्ति की दृष्टि से भी शब्दों को टटोलना होगा। व्रजक्षेत्र में उन-उन शब्दों के अर्थों की पहचान भी निकालनी होगी। सूर की व्रजभाषा और भावों की पूरी छटा का रूप उस टीका में आना चाहिए। साहित्य शास्त्र के अभिप्रायों की दृष्टि से भी अनेक पदों का मर्म पकड़ना होगा। पदों के शीर्षक भी रखने होंगे। रागों नामों पर भी टिप्पणी दी जा सके तो उत्तम होगा। 'गालमसूरी मिठाई क्या? 'झोरी' क्या? 'सिरी', 'बीरे' क्या? लावनि लाड्डू क्या? आदि आदि। प्रत्येक पद में पंक्ति संख्या-सूचक अङ्क भी लगा देना चाहिए। दहि रौरी रतिनगरी,दुरहुरी;वरिल,

आपका
वासुदेवशरण

[२३३]

काशी विश्वविद्यालय
८-१२-५८

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

४-१२-५८ का पत्र मिला। 'कृषक-शब्दावली' का मुद्रणारम्भ शुभ समाचार है। अलीगढ़-बुलन्दशहर जिलों की बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन विषय उपयुक्त विषय है। सूरदास का कार्य शोध-निबन्ध के लिए नहीं, अवकाश के समय के सदुपयोग के लिए है।

व्युत्पत्ति-सम्बन्धी कार्य परीक्षा के हेतु नहीं, शनैः शनैः साहित्यिक उद्देश्य के लिये होना चाहिए।

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२३४]

काशी विश्वविद्यालय
१४–३–६०

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद जी,

पत्र मिला। होली के स्मरण से प्रसन्नता हुई। भगवान आपका कल्याण करें। क्रुक, कारनेगी का कार्य वहीं तक रहा। आप इसे अवकाश के समय पूरा करना चाहें तो कृपया सूचित करें।

क्या संस्कृत 'कथा-सरित्सागर' के हिन्दी अनुवाद कार्य में आपको रुचि होगी?

भवदीय
वासुदेवशरण

[२३५]

काशी वि० वि०
६–४–६१

प्रिय श्री अम्बाप्रसाद,

४-४-६१ का पत्र मिला। मैं २॥ मास से चिकित्सा के लिए बाहर गया था। अब स्वास्थ्य सुधर रहा है। पुरस्कार मिलने की सूचना से प्रसन्नता हुई। जब दोनों भाग छप जाँय तो कुछ प्रतियाँ बाहर के विद्वानों को भेज सकते हैं, जैसे—Dr. R. L. Turner, Prof. Alchin (School of Oriental and African Studies, London), Prof. Bender Pensylbania University, U. S. A. आदि।

Review के लिए भी भेजें—Journal of the American Oriental Society, Journal of the Royal Asiatic Society, Bulletin of the School of Oriental and African Studies, London. Journal Asiatique, Paris, आदि।

मैं आजकल विशेष पत्र-व्यवहार नहीं कर पाता, इसलिये पत्र न लिखने के लिए क्षमा करें।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
के पत्र
अन्य साहित्यिक बन्धुओं के नाम

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२३६]

काशी वि० वि०
४-५-५३

प्रिय श्री हरगोविन्द जी.

पत्र मिला। कहानियाँ देखीं। मुझे तो बुन्देलखण्डी कहानियों में रुचि है, खड़ी बोली की कहानियाँ तो ढेरों हैं। जनपदीय कहानी जब दूसरी भाषा में आती है तो उसका प्राण पीछे छूट जाता है ठठरी मात्र सामने आती है। इतने से ही मन के भाव गुन लीजिए।

भवदीय
वासुदेवशरण

कहानियाँ अलग रजिस्ट्री से लौटा रहा हूँ। बुन्देलखण्डी में ही जब कहानी संग्रह करें तो मुझे अवश्य भेजिएगा।

जनपद के लिए ही उन्हें भेजिए, अथवा कोई और वस्तु भी।

[२३७]

काशी वि० वि०
४-७-५३

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

२८-६-५३ का पत्र मिला। चौपड़ का लेख ठीक समय से आया। मैंने पहले जायसी के दोहा सं० ३१२-३१३ के लिये इस खेल को गुप्त जी से परसों रात में समझ लिया और तब कल आपका लेख पढ़ा तो मैं लेख को ठीक तरह समझ भी सका और उसके बारे में कुछ सुझाव भी दे सकूँगा। पृष्ठ १ पर 'चौसर की बाजी हारने पर······ न जाने कब से आज भी अपनी जगह—जहाँ का तहाँ प्रतिष्ठित है', इतना अंश निकाल दें। पृष्ठ ३ के 'चौसर ४ भिन्न रंगों की ······ से लेकर पृष्ठ ४ के धरती पर फटकते जाँय' अंश तक का भाग पृष्ठ १ पर आना चाहिए। पृष्ठ के नीचे की पाँच पंक्तियों से पहला पृष्ठ और पंक्ति ३० 'एक प्रतिबन्ध इसमें······ बाहर करना पड़ता है' इतना अंश कम स्पष्ट है इसे और स्पष्टता से बताना चाहिए कि ठीक-ठीक मतलब क्या है। पृष्ठ ३ पर 'ठीक तो है दो घोड़े की सवारी ······' इत्यादि हाथ का लिखा अंश व्यर्थ है, काट दीजिए। पृष्ठ ४ पर तीन बार लाइन शब्द आया है, क्या चिरगाँव के चौपड़ खेलने वाले उसे लाइन ही कहते हैं या पुराना शब्द खो गया है। उसके लिए चौपड़ का पारिभाषिक शब्द हो तो बढ़िया रहेगा।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्यथा हिन्दी का पंक्ति शब्द तो है ही। पृष्ठ ५ पर पंक्ति ६ से 'सिर, आँख, हृदय और अर्श रोग पीड़ित' अंश निकाल कर 'कार्य व्यस्त होने पर भी' लिखें। पंक्ति ८ में 'भी खिलाते हैं और चाय भी पिलाते हैं' इसे काट कर 'खेलते रहते हैं' लिखें और एक यह वाक्य बढ़ा दें 'अपने अस्वास्थ्य की दशा में मानों वे चौपड़ से स्वास्थ्य चूसते हैं या कविता के लिए आकाश में विचर कर धरती पर आने के लिए चौपड़ में मन लगाते हैं। इस पृष्ठ पर जितना हाथ से बढ़ाया है वह काट दें। कहावतों में यह बढ़ा दें 'दो जुग बाँधें होय बिनाश' जुग फूटे तो काज सरै।

पृष्ठ ६ पर देवीसिंह की कविता बिलकुल निकाल दें। दद्दा के चित्र के साथ लेख साप्ताहिक हिन्दुस्तान को भेजें। मेरा उल्लेख कर दें छाप देंगे और पैसा भी देंगे। यदि द्विवेदी जी ने स्वीकार कर लिया तो इस लेख को जनपद में भी छाप देंगे। पृष्ठ २ पर अस्पष्ट अंश का स्पष्टीकरण लिखकर मुझे भेजें!

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

२३८]

काशी वि० वि०
२०-८-५३

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

१५-८-५३ का पत्र मिला। श्री सियाराम जी को वाक् सिद्धि है, वे चाहे जो बना डालें, पर मुझे तो अभी तक जीवन में गुरु ही मिले हैं, शिष्य कोई मिला ही नहीं। मुझे अपनी जन्म कुण्डली का विश्वास है कि भविष्य में भी कोई मिलने वाला नहीं है। हाँ, आप साहित्य सेवा करना चाहें तो आपका सदा स्वागत है। क्या बुन्देलखण्डी भाषा के शब्दों का संग्रह करने का व्रत ले सकेंगे? क्या गुप्त जी की अगली जन्म-तिथि सावन तीज सं० २०११ पर आप उन्हें ६८०० बुन्देलखण्डी भाषा के शब्दों का संग्रह भेंट कर उनकी जन्म-तिथि पर हम सबको प्रसन्न करेंगे? लीजिए मैंने आपको कसना शुरू किया।

चौपड़ वाला लेख हिन्दुस्तान में छपा देखकर आनन्द हुआ। और लेख भी उन्हें भेजते रहिए। सावन तीज पर 'प्रताप' वाला लेख भी पढ़ा। अच्छा बना है। सांवन तीज गुप्त जी की जन्म-तिथि है इसका स्मरण दिलाकर आपने उपकार किया। खड़पुरी, लाखें, चकरी, भौंरा, चपेटा का क्या अर्थ है?

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२३९]

काशी वि० वि०
१९-१२-५३

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

१५-१२-५३ का पत्र मिला। आपने बुन्देलखण्डी लोक साहित्य में से २५० चालू दोहों का संग्रह किया है, यह जानकर प्रसन्नता हुई। प्रकाशित करने के लिए दोहों को विषय वार ही रखना चाहिए। सब दोहों की हिन्दी टीका देने की आवश्यकता नहीं। जिनका अर्थ स्पष्ट न हो और जो शब्द कठिन हों उनके ऊपर टिप्पणी या व्याख्या लिख देना काफी होगा। आप लोक साहित्य पर लिख रहे हैं इससे मैं प्रसन्न हूँ। जनपद के लिए भी बुन्देलखण्ड की कुछ अच्छी कहानियाँ भेजें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

चित्र में मुझे कोई रुचि नहीं।

[२४०]

काशी वि० वि०
७-५-५४

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

पत्र मिला। 'टोंटक-टाख' लेख भेजने से रह गया था। आज भेज दिया गया है। उसे किसी अन्य पत्रिका में छपवा सकते हैं।

'स्वामी जू की कहानियां' जनपद में छपेगा।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४१]

काशी वि० वि०
१०-८-५४

प्रिय श्री हरगोविन्द,

उस लेख को 'हिन्दुस्तान' में भेजने की बात मैंने समझ ली थी। वहाँ से कुछ पुरस्कार मिल जायगा। मेरी इसके साथ सहानुभूति है। 'जनपद' के लिए भी भेज दीजिए।

वेतवा सचमुच सुन्दर नदी है। विदिशा में उसके पुल पर खड़े होकर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उछलती हुई शफरियों को देखकर मैं मुग्ध हो गया था। आप उसका एक जीवन चरित लिखिए।

'जनपद' का कौन सा अङ्क आपके पास है?

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४२]

काशी वि० वि०
१४-९-५४

प्रिय श्री हरगोविन्द,

पाडुलिपि देखकर भेज रहा हूँ। ठीक चल रहे हो। छपे फर्मे भेजना। भूमिका लिख दूँगा। भगवान तुम्हारी इच्छा पूरी करे।

नाम ऐसा अच्छा लगता है—

गाँवों का मेरुदण्ड—किसान!

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

आगे का भाग वहीं बापू को दिखाकर छपवा लो। मुझे भेजने की आवश्यकता नहीं।

[२४३]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
१३-१०-५४

प्रिय श्री हरगोविन्द,

पत्र मिला। मैंने जो भूमिका भेजी थी फिर दो वार पढ़ लिया है। वही आपकी पुस्तक के लिए अक्षरशः उपयुक्त हैं। कृपया उसे ही छाप दें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४४]

काशी वि० वि०
१३-११-५४

प्रिय श्री हरगोविन्द,

पुस्तक को मनचीते रूप में प्रकाशित देखकर प्रसन्न हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४५]

काशी विश्वविद्यालय
२३-७-५५

प्रिय भाई हरगोविन्द जी,

'उजयारी' जनपदी प्रतिभा की अमर कहानी है। उसे पद्यात्मक रूप देकर आपने यश का काम किया। जब मेरा ही मन उसे पढ़ने में इतना रम गया तो मेरे घर में तो कोई उसे पढ़े बिना बचेगा नहीं।

जनपदीय बोली को खड़ी बोली के साथ ढालकर ग्राम साहित्य के लिए भाषा का एक नया प्रयोग मुझे 'उजयारी' में दिखाई पड़ा है जो भावी साहित्य के लिये गहरी सम्भावनाओं से भरा हुआ है। यह नया सिक्का चालू और टकसाली होकर रहेगा। इतने से ही बस नहीं इसी शैली में और लिखिए।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४६]

काशी वि० वि०
६-६-५५

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

आपका विचार अच्छा है। बुन्देली कहावतों का अच्छे से अच्छा जो संग्रह बन सके उसी पर अधिक ध्यान देना चाहिए। अन्य बोलियों की कहावतों के साथ तुलनात्मक अध्ययन भूमिका में कर सकते हैं।

बुन्देली कहावतों की अधिकतम संख्या हो तो प्रसन्नता होगी। यह ठीक है कि धातुओं की तरह कहावतें भी दो भागों में बँट जाती हैं, सार्वत्रिक और स्थानीया। इसी रूप में उन्हें पहिचानना चाहिए। पंजाबी, काश्मीरी, गढ़वाली आदि कहावतों के बारे में वैरियर आलविन का एक लेख लोकवार्ता में निकला था, उसे देख लें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२४७]

काशी वि० वि०
३-३-५६

प्रिय श्री हरगोविन्द जी

बेतवा की कहानी पर आप लिख रहे हैं, यह जानकर प्रसन्नता हुई। 'कलौ वेत्रवती गङ्गा' स्थानीय महात्म्य का अङ्ग हो सकता है। किसी पुराण में है यह मुझे विदित नहीं। आपके प्रयत्न की सफलता चाहता हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४८]

काशी वि० वि०
१५-१-५७

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

नदी सूक्त ऋग्वेद के दसवें मण्डल का ७५वाँ सूक्त है। उसका ५वाँ मन्त्र है—

इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रिस्तोमं सचतापरुष्णया।
असिक्नया मरुद्वधे वितस्तयार्जिकीये शृणुह्या सुषोमया॥

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२४९]

काशी वि० वि०
१९-१-६०

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

पत्र मिला। भेलसा के पास की बेस नदी ही प्राचीन विदिशा नदी है। बेस-बेतवा संगम से ही बड़ी यक्ष-मूर्ति निकली थी।

बेत्रवती कथा की आपकी रूपरेखा ठीक है। ग्रन्थ पूरा कीजिए।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२५०]

काशी वि० वि०
१६-११-६१

प्रिय श्री हरगोविन्द जी,

आपका पत्र मिला। कृषि कूप की सफलता चाहता हूँ—

उत्सो देव हिरण्यय:।

हे भगवान आप ऐसे कूप हैं जिसमें सुनहला जल भरा है।

आपका
वासुदेवशरण

श्री रामनारायण उपाध्याय को लिखे गये पत्र

[२५१]

काशी विश्वविद्यालय
३०-११-५२

प्रिय श्री रामनारायण जी,

निमाड़ी लोक साहित्य पर आपका लेख पढ़कर बहुत ही प्रसन्नता हुई। निमाड़ी गनगौर का गीत "शुक्र को तारो रे ईश्वर उगी रह्यो" अकेला लाख गीतों के बराबर है। उसकी विराट कल्पना देखकर मैं स्तब्ध रह गया। आकाश, सूर्य, चन्द्र ध्रुव शुक्र, मेघ, विद्युत, भारतीय आकाश के इन चिरन्तन उपकरणों से लोकगीत की भावात्मा का शृङ्गार हुआ है, जो साहित्य में भी कहीं-कहीं देखने में आया है। सचमुच ही यह निमाड़ी गीत, गीतों का राजा है। कृपया इसके पूरे बोल लिखकर भेजिये। 'जनपद' पत्र में प्रकाशित करूँगा।

आपके कार्य की श्री वृद्धि चाहता हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२५२]

काशी वि० वि०
बसन्त पंचमी
२०-१-५३

प्रिय श्री रामनारायण जी,

आपका ६-१२-५२ का पत्र मेरे सामने है। "निमाड़ी लोकगीत" पुस्तक बहुत रुचि से पढ़ गया। उनके कुछ गीत जैसे—"स्वप्न" भारतीय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संस्कृति के उज्ज्वल हीरे हैं। मैं उन गीतों के भावों से वहुत प्रभावित हुआ। पुस्तक की आलोचना परसों मैंने लिखवा दी है। वह "जनपद' में प्रकाशित होगी। आशा है आपका लोक साहित्य का संग्रह वर्धनशील है। क्या निमाड़ी लोकोक्तियों और धातु पाठ का भी संग्रह किया है ?

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२५३]

काशी वि० वि०
२६-६-५३

प्रिय श्री रामनारायण जी,

"अनजाने जाने पहिचाने" लेख संग्रह मिला। साहित्य के क्षेत्र में आपकी क्रमिक प्रगति देखकर सन्तोष हुआ। भूमि, कामदुधा धेनु है, उससे जीवन के लिए अमृत साहित्य, पय का जितना दोहन आप कर सकेंगे उतना ही कल्याण होगा।

"डेंडु" को संस्कृत में "दुंडुमक" कहते हैं। निमाड़ी में इसका चलन जानकर प्रसन्नता हुई।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२५४]

काशी वि० वि०
११-६-५५

प्रिय श्री रामनारायण जी,

१६-२-५४ का पत्र मिला। "निमाड़ लोक साहित्य परिषद्" की स्थापना से आनन्द हुआ। उसकी सदस्यता की स्वीकृति भेजता हूँ। उसकी प्रगति का विवरण, स्थापना, उद्देश्य, नियम आदि 'जनपद' में प्रकाशन के लिए भेजिए।

निमाड़ी लोक कहावतों पर लेख मिला। पर्याप्त नहीं है। कम से कम सौ कहावतों का संग्रह तो साथ छपना चाहिए। अतएव ठेठ निमाड़ी कहावतों की बड़ी सूची भेजिए। लेखों की सूची में लेखकों का पता भी दे दिया जाया करेगा। 'जनपद' के प्रचारार्थ आपके द्वारा उद्योग होने के लिए अनुगृहीत हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२५५]

काशी विश्वविद्यालय
१०-७-५४

प्रिय श्री रामनारायण जी,

७-७-५४ का पत्र मिला। आपकी भेजी दोनों कहानियाँ पढ़ी। अच्छी लगीं। "वीरपस" शब्द का ठीक अर्थ क्या है? इसमें पहिला "वीर" शब्द तो "भाई" का पर्याय है "पस" का अर्थ अभी मेरी समझ में नहीं आया है।

'हलछठ' की कथा में दो बात महत्त्वपूर्ण हैं। एक तो छटी देवी का उल्लेख, जो मध्यकालीन साहित्य और लेखों में बराबर मिलती है। दूसरे बच्चे के जन्म से विवाह तक माँ द्वारा बच्चे की मृत्यु का क्षण टालने की युक्ति। इसी से मिलता-जुलता अभिप्राय शुनःशेप आख्यान में हरिश्चन्द्र ने अपने पुत्र रोहित के सम्बन्ध में अपनाया था। 'जनपद' का पाँचवाँ-छठा अङ्क साथ ही सितम्बर तक प्रकाशित होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२५६]

काशी वि० वि०
३०-६-५८

प्रिय श्री रामनारायण जी,

'जब निमाड़ गाता है' पुस्तक की सुन्दर प्रति अभी मिली। देखकर प्रसन्नता हुई। ईश्वर करे आपका यह अनुराग बढ़ता रहे।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२५७]

काशी वि० वि०
२७-६-६१

प्रिय श्री रामनारायण जी,

२४-६-६१ का पत्र मिला। धन्यवाद। मेरा स्वास्थ्य पहले से अब सुधार पर है, यद्यपि अशक्ति बनी है। आशा है इस जाड़े में ठीक हो जाऊँगा।

हिन्दी पत्रों ने कई बार सूचना निकाली थी। मुझे उनसे कोई शिकायत नहीं है उससे तो और मेरा काम बढ़ जाता है।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२५८]

काशी वि० वि०
२-९-६३

प्रिय श्री रामनारायण जी,

२८-८-६३ का पत्र मिला। "भारत सावित्री" का दूसरा खण्ड यहीं काशी में छप रहा है। आशा है दशहरे तक पूर्ण हो जावेगा।

इधर मेरी "कीर्तिलता" पर संजीवनी टीका साहित्य सदन चिरगाँव से प्रकाशित हुई है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२५९]

काशी वि० वि०
३०-४-६४

प्रिय श्री रामनारायण जी,

पत्र मिला। आपकी पुस्तक "निमाड़ी और उसका लोक साहित्य" देखकर प्रसन्नता हुई। आपने उसमें बहुत सी उपादेय सामग्री का संकलन किया है जिसके आधार पर निमाड़ी लोक साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकेगा। मुझे आपका कार्य देखकर सदा प्रसन्नता होती है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२६०]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
८-७-६५

प्रिय श्री रामनारायण जी,

आपका पत्र मिला। आपकी पुस्तक "संत सिंगाजी एक अध्ययन" मिली। देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। आपने उनके चरित्र एवं रचनाओं को प्रकाश में लाकर उत्तम कार्य किया हैं।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गौरीशङ्कर जी द्विवेदी को लिखे गये पत्र

[२६१]

बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी
१७-११-५१

प्रिय श्री गौरीशङ्कर जी,

अक्टूबर १९५१ के 'जीवन-साहित्य' में ग्राम कहानियों और कहावतों पर आपका लेख पढ़ा। 'सारङ्गा सदावृक्ष' की कहानी पर क्या आप एक लेख लिखने की कृपा करेंगे? इसका बुन्देलखंडी रूप क्या है?

यह कहानी जैन साहित्य में अत्यन्त प्रसिद्ध है, और वहाँ इसका नाम है (सदयवत्स हसदयवच्छ) सावलिंगा।

जायसी ने पद्मावत में इसका उल्लेख किया है और अब्दुल रहमान कवि ने अपभ्रंश के संदेश रासक में भी इसका नामोल्लेख किया है। श्रीअगर-चन्द जी नाहटा ने (नाहटों की गुवाड़, बीकानेर) इस पर एक लेख मेरी प्रार्थना पर लिखा था। उसमें इसके जैन रूपों का वर्णन किया गया था। उसका आफप्रिंट उनसे मँगवा सकते हैं।

बुन्देलखण्ड के जनपदीय अध्ययन के विषय में आपने जो कार्य किया है उसे देखकर प्रसन्नता होती है। मैं अब विश्वविद्यालय में आगया हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२६२]

बनारस हिन्दू यूनि०
२२-१२-५१

प्रिय श्री गौरीशङ्कर जी,

आपका अगहन शुक्ल ११ का पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। सारङ्गा सदावृक्ष की कहानी सम्बन्धी लेख के लिए कृपया नाहटा जी को इस पते पर लिखें, मेरा हवाला दे दें--

श्री अगरचंद जी नाहटा, नाहटों की गुवाड़
बीकानेर।

आशा है आप इस कहानी का बुन्देलखण्डी रूप लिपिबद्ध करके छपवाएँगे।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६३]

काशी विश्वविद्यालय
१८-१०-५३

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

आपका आश्विन शुक्ल ६ का पत्र पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई।

साहित्य का यह अविश्रान्त मौन धर्म ही आपको अमरता प्रदान करने वाला है। अन्यथा सरकारी वेतन भोगी तो मैं भी रहा हूँ और न जाने कितने अज्ञात रहते हैं। जो समय, शक्ति और उत्साह आप इस ओर लगाते हैं वह पर्याप्त है। ईश्वर करे उसकी अनुकूलता में उत्तरोत्तर वृद्धि हो।

आल्हाखंड के उद्धार की वात आपके मन के कोने में छिपी है, मेरे लिए यही पर्याप्त सन्तोष है। जनपदीय साहित्य कुवेर का कोश है। उसकी नव निधियों में से जितना हम प्राप्त कर सके वही साहित्यिक-कल्याण और नव मंगल के लिये होगा।

कृपया आल्हाखंड के ऊपर अपने अब तक के अनुभव विचार सामग्री के आधार पर एक नया लेख 'जनपद' के लिये भेजें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२६४]

काशी वि० वि०
२५-६-५५

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

अभी पिछले दिनों आजमगढ़ के कुछ अल्हैतों से मैंने अपने स्थान पर रात को आल्हा सुना था। पं० हजारीप्रसाद जी और अन्य मित्र भी आए। वह आल्हा का भोजपुरी रूप था। तभी यह मन में आया कि मूल आल्हा बुन्देलखण्डी रूप में विन्ध्य प्रदेश में सुरक्षित होगा और वहाँ इस लोक काव्य का संग्रह होना चाहिए।

कृपया लिखिए कि आपके यहाँ आल्हाखंड का कोई संग्रह हुआ है क्या? वहाँ आल्हाखंड का कितना विस्तार है और वह किस दशा में उपलब्ध है?

इस विषय पर विन्ध्याचल पत्र में भी प्रकाश डालने की कृपा करें।

आपका
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६५]

काशी विश्वविद्यालय
६-१०-५८

प्रिय श्री गौरीशङ्कर जी,

आपका ३-१०-५८ का संवेदना पत्र पाकर धैर्य और बल मिला। अनुगृहीत हुआ।

वासुदेवशरण

[२६६]

काशी वि० वि०
१५-८-५९

प्रिय श्री गौरीशङ्कर जी,

आपके १२-८-५९ के शुभाशंसी पत्र के लिए आभारी हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

श्री अयोध्यासिंह को लिखे गये पत्र

[२६७]

काशी वि० वि०
२६-१-५५

श्रीमन्,

२६-१-५५ का पत्र मिला। पुरातत्त्वशास्त्र में आपकी रुचि जानकर प्रसन्नता हुई। निस्सन्देह अभी हिन्दी भाषा में इस विषय की पुस्तकों का अभाव है। समय से यह कमी पूरी होगी। अपनी जानकारी बढ़ाने के लिये आप श्री विजयकान्त मिश्र, जायसवाल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पटना से मिलें। आशा है वे आपका पथ प्रदर्शन करेंगे।

मेरे ग्रंथों के लिये आप राजकमल प्रकाशन, फैज बाजार, दिल्ली को लिख सकते हैं। उनके नाम ये हैं—भारत की मौलिक एकता, हर्ष चरित एक सांस्कृतिक अध्ययन, मेघदूत, कला और संस्कृति, India as Known to Panini, पृथ्वीपुत्र, कल्पवृक्ष. माता भूमि, उरज्योति।

आप जब काशी आवें मिल सकते हैं।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२६८]

काशी वि० वि०
२८-१-६०

प्रिय श्री अयोध्यासिंह जी,

२६-१-६० का पत्र मिला। श्री हेमचन्द्र जी के लेखों से मुझे कुछ खेद नहीं हुआ। उसके जितने अंश में विद्या सम्बन्धी चर्चा थी उसका समुचित शिष्ट उत्तर मैंने दे दिया था। बात समाप्त हो गई।

वाण की जन्म भूमि के विषय में लेख मेरे देखने में नहीं आया। आए हों तो दूसरे विषय में लग जाने से अब उनका स्मरण नहीं है। यदि उनकी कोई कतरन या प्रतिलिपि भेजना संभव हो तो कृपा कीजिए। कष्ट के लिए आभार मानूँगा।

आपका
वासुदेवशरण

[२६९]

काशी वि० वि०
१४-२-६०

प्रियवर,

११-२-६० का पत्र और दोनों कतरनें मिली। आपने इन्हें प्राप्त कराने के लिये जो बहुत कष्ट उठाया उसके लिये आभारी हूँ। आपकी साहित्य-श्रद्धा श्लाघनीय है।

मैंने दोनों लेख पढ़ लिए हैं। प्रीतिकूट (पेऊर) और मल्लकूट (मलऊर) वाली बात और चम्मन बाबा (च्यवन ऋषि) के स्थान की बात कुछ जँचती है। बिहार के विद्वानों को इस प्रश्न पर और अधिक छानबीन करनी चाहिए। इन स्थानों की आपेक्षिक स्थिति का निदर्शक मानचित्र भी बनाना चाहिए।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्यो० श्री राधेश्याम जी द्विवेदी को लिखे गये पत्र

[२७०]

अजायबघर, मथुरा
२६-५-३३

प्रिय श्री राधेश्याम जी,

जोशी बाबा की नश्वर देह हमारे बीच नहीं है। भौतिक शरीरों की यह अनास्था संसार का सुन्दर नियम है। अतति, सतत् गच्छति अर्थात् सदा गमनशील रहने वाली ही आत्मा है। उसकी एक स्मृति मात्र अब हमारे हृदयों में रह जाती है। शिवप्रकाश जी के सम्बन्ध में यह स्मृति अत्यन्त मधुर है, स्वादु रस विशिष्ट है। इसलिये ही उनकी याद फिर-फिर कर हृदय में आकर रस का संचार करती है। सबको विस्मृति क्रोड में लीन कर देने वाले काल को जोशी बाबा की स्मृति मेटने के लिये सम्भवतः बहुत ही प्रयत्न करना होगा। तब कहीं जाकर उसे सफलता भले ही मिले। उनकी स्मृति के साथ मिला हुआ यह माधुर्य ही उनकी सात्विकता को बतलाता है।

आज से लगभग डेढ़ वर्ष पूर्व आपके अनुग्रह से जिस दिन प्रथम बार शिव आश्रम की पुण्य भूमि में उनका साक्षात्कार हुआ मन ने उनको आत्मीय रूप में पहचाना और एकान्त प्रदेश में रहकर ज्ञान-विज्ञान चिन्तन में अनुरक्त निःस्पृह त्यागी ब्राह्मण के दर्शन से हृदय में आर्ष भावों का संचार हुआ। उनसे मैं चिरपरिचित के समान मिला नवागन्तुक की तरह नहीं। उनके मुख की अमिट मुस्कान में आतिथ्य का विराट द्वार सदा खुला मिलता। अनन्त देश में फैले हुए ब्रह्माण्ड विस्तार का पृथ्वी पर साक्षात्कार करने के लिये उन्होंने अपनी प्रतिभा से जो लाक्षणिक यन्त्र बनाये थे उनका परिचय उन्होंने स्वय ही बड़े प्रेम से कराया। चित्त में एक अपूर्व आह्लाद हुआ, जान पड़ता था किसी आर्य भट्ट या वाराहमिहिर के आश्रम के अतिथि हों। फिर तो जब कभी सुयोग मिला या विशिष्ट मित्र आये तभी उनको लेकर उस वेधशाला और उसके निर्माता का अधिकाधिक परिचय प्राप्त करता रहा।

परन्तु व्यक्ति की महिमा का माधुर्य भूमि की महिमा से है। जोशी बाबा में आत्म चैतन्य की ज्योति थी। उनमें प्रकृतिस्थ के बहुत से लक्षण विद्यमान थे। विद्या के साथ सौजन्य और सुहृदयता का बहुत ही सुन्दर मेल हुआ था। वे देवयान के पथिक थे। उन्हें हम अहोरात्रविद् महात्माओं की श्रेणी में स्थान

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे सकते हैं। आज वे शिव के प्रकाश में तल्लीन हो चुके हैं। हमारी प्रार्थना है कि उनका स्मरण और उनके समस्त भौतिक अवशेष शिवात्मक होवें।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२७१]

मथुरा
१४–११–३८

प्रिय श्री राधेश्याम जी,

औदीच्य ब्राह्मणों का इतिहास लिखने में आपने ऐतिहासिक प्रणाली से अच्छा परिश्रम किया है। औदीच्य ब्राह्मण वर्ग ने राष्ट्रीय निर्माण के कार्य में जो महत्त्वपूर्ण भाग लिया है उसका विवेचन सबके काम की वस्तु हो सकती है। जाति के बिखरे हुए अंगों को एक सूत्र में बाँधने का प्रयास भी स्तुत्य है। आशा है अर्वाचीन समाजशास्त्री इस बात को शीघ्र समझेंगे कि औदीच्य ब्राह्मण मात्र में विवाह और भोजन सम्बन्ध की पुनः स्थापना कितनी आवश्यक है। आपका प्रयत्न कुछ-कुछ उसी ओर है और मैं उसकी सफलता चाहता हूँ। इस विषय में समाज के दृढ़ नवयुवकों को अपना मन्तव्य स्पष्ट प्रकट कर देना चाहिये। आशा है गौत्र प्रवर वाला अध्याय भी तैयार हो गया होगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२७२]

मथुरा
२७–१२–५६

प्रिय श्री राधेश्याम जी,

कल आपके सात्त्विक दान की घोषणा से मैं बहुत प्रभावित हुआ। आपके पूर्व पूर्वज ज्यो० अमरलाल जी ने स्व० दयानन्द जी का जो प्रतिपालन किया था उसी की एक रश्मि आपके हृदय में स्फुरित होती हुई मुझे दिखाई पड़ी। भगवान आपको इस पुण्य का कल्याण भाजन बनायें।

यजुर्वेद की यह पुस्तक अभी अपने संग्रह में ही रक्खें, जैसे ही भवन की व्यवस्था हो जाय समस्त प्रतिश्रुत ग्रन्थ राशि अनुसंधान कुटीर को प्रदान कर दें और व्यवस्था के साथ रखवा दें। ग्रन्थों की पूरी सूची बनाकर एक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रति मेरे पास भिजवा दें मैं उसकी प्रति, प्रतिनिधि सभा को भेज दूँगा और आवश्यक व्यवस्था कर दूँगा। आपको पुनः धन्यवाद।

सस्नेह
वासुदेवशरण

[२७३]

काशी विश्वविद्यालय
२१-४-६०

प्रिय श्री राधेश्याम जी,

१८-५-६० का पत्र मिला। जितने ग्रंथ अवशिष्ट इस समय आपने लिखे हैं वे ही ठीक हैं। यह आपका सात्त्विक दान है। कृपया उन ग्रन्थों की सूची बनाकर भेज दें जिससे आगे की कार्यवाही की जा सके। आशा है अब आपका स्वास्थ्य ठीक होगा।

सस्नेह
वासुदेवशरण

डा० रामस्वरूप आर्य को लिखे गये पत्र

[२७४]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
२२-८-६२

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

६-८-६२ का पत्र मिला। मैं समझता हूँ कि आपने मेरे जायसी संस्करण की भूमिका पढ़ ली है। उसके पढ़ने के बाद भी आपको यह सन्देह कैसे रह गया कि जायसी के भाषा वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कौनसा मूल पाठ लेना चाहिए। नागरी प्रचारिणी सभा के संस्करण में यह नहीं बताया कि वह किन प्रतियों के आधार पर तैयार किया गया। जायसी की आज एक से एक अच्छी कई प्रतियाँ उपलब्ध हैं अतएव मनमाने ढंग से उसका पाठ नहीं चलाया जा सकता। गुप्त जी के सस्करण का पाठ भाषा विज्ञान की दृष्टि से कहीं अधिक उत्कृष्ट और प्रामाणिक है। मैंने वही पाठ बहुत सोच-विचार कर स्वीकार किया था और उसके बाद भी जो कई बढ़िया प्रतियाँ मुझे मिलीं उनका उपयोग पाठ निर्धारण में किया है। उसके बाद भी दो अन्य प्रतियाँ मेरे देखने में आई हैं। एक रामपुर राजकीय पुस्तकालय में और दूसरी भारत-कला भवन, काशी में। इन दोनों के महत्त्वपूर्ण पाठभेद मैंने अपनी संजीवनी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

टीका के दूसरे संस्करण में परिशिष्ट रूप में दे दिए हैं। यह नया संस्करण साहित्य सदन चिरगाँव, झाँसी से पिछले महीने ही निकला है। एक बात स्मरण रखनी चाहिए—जायसी के सौ वर्ष बाद ही उनके अर्थ दुरूह हो गए थे। तब से पाठ बदलने शुरू हुए। आगे चलकर यह नियम हो गया कि जितने कठिन स्थल थे सबके पाठ बदल दिये गए। यही बदले हुए पाठों वाला संस्करण सभा का संस्करण है जो मूल पाठ से दूर जा पड़ा है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२७५]

काशी वि० वि०
१०-११-६३

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

३०-१० का पत्र मिला। जायसी की अवधी भाषा पर आपके शोध कार्य की बात जानकर हर्ष हुआ। आपका पूछा हुआ पता यह है—

श्री श्रीराम शर्मा
घासी बाजार
हैदराबाद (दक्खिन)

कीर्तिलता की संजीवनी व्याख्या साहित्य-सदन, चिरगांव से प्रकाशित हुई है।

अमरेश द्वारा सम्पादित मसलानामा छप गया है। मेरी दृष्टि में वह प्रामाणिक ही है।

चित्रावत, चित्ररेखा में नाममात्र का अन्तर है। अतएव मैंने दोनों के एक होने का अनुमान किया है। होलीनामा कोई अलग पुस्तक ही हो तो भी यह बहुत सम्भव है कि जायसी ने स्वयं अपनी ही कृति को पदमावत में भी स्थान दे दिया हो। यह एक सम्भाव्य अनुमान है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२७६]

काशी हि० वि० वि०
७-५-५४ (६४)

प्रिय श्री रामस्वरूप जी,

आपका १२-११-६३ का स्नेहपूर्ण पत्र मिला। आपकी हार्दिक प्रीति जानकर प्रसन्नता हुई। मातृभाषा हिन्दी की जो कुछ भी स्वल्प सेवा मुझसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई है; उसके लिए हिन्दी जगत् निरन्तर मेरा अभिनन्दन कर रहा है। इसका अनुभव मुझे उन पत्रों के रूप में प्राप्त होता है, जो प्रेमी पाठक मुझे लिखते रहते हैं। इसके अतिरिक्त मुझे और किसी औपचारिक अभिनन्दन की आकांक्षा नहीं है और न कभी जीवन में मैं अपने को उसके लिए तैयार कर सकूँगा। हिन्दी से जो मैंने पाया है वह कुबेर का भण्डार है और मैं उससे आत्मतृप्त हूँ। श्री आनन्दकुमार स्वामी के समान मेरी अभिलाषा उस अकिंचनत्व स्थिति में जाने की है, जहाँ सब इच्छाएँ पूर्ण हो जाती हैं। मेरे लिए साहित्य सेवा अध्यात्म का द्वार उन्मुक्त करती है। अथर्ववेद के शब्दों में यह मेरा आदर्श है—अकामो धीरो अमृतः स्वयम्भू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

श्री हरिमोहनलाल श्रीवास्तव के नाम

[२७७]

काशी वि० वि०
२१-३-५२

प्रिय श्री हरिमोहनलाल जी,

३-३-५२ का पत्र मिला। 'दतिया की यात्रा' शीर्षक लेख कल्पना हैदरावाद और नागरी प्रचारिणी सभा की पत्रिका में भी छपा है। कृपया वहाँ से उद्धृत कर सकते हैं। मेरे पास अलग आर्फप्रिंट नहीं है। अन्यथा भेज कर प्रसन्नता होती। आपके चारों ओर जो अद्भुत सामग्री दतिया में बिखरी पड़ी है उसकी ओर जनता का ध्यान आकर्षित करें। आप अच्छा कार्य कर रहे हैं।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२७८]

काशी वि० वि०
१०-२-५३

प्रिय श्री हरिमोहनलाल जी,

श्री गाँधी पुस्तकालय पत्रिका का अंक मिला। उसके कई लेखों में इतिहास और संस्कृति की अच्छी सामग्री देखकर चित्त प्रसन्न हुआ। स्थानीय

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सामग्री का अधिकाधिक अध्ययन और प्रकाशन करने के लिये इस प्रकार के पत्रों की बड़ी आवश्यकता है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२७९ [

काशी वि० वि०
३–१–५६

प्रियवर,

मैं अपने स्वास्थ्य की मर्यादा से इस समय कुछ नया लिखकर न भेज पाऊँगा। पुराने लेख के जो अंश समयोपयोगी जँचें उन्हें पुनः प्रकाशित करने में आप स्वतन्त्र हैं। मैं कला परिषद् के लिये भी न पहुँच सकूँगा। क्षमा चाहता हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८०]

काशी वि० वि०
१७–२–५६

प्रिय श्री हरिमोहनलाल जी,

'दतिया दर्शन' पुस्तक पाकर चित्त अति प्रसन्न हुआ। आपने मधुकरी वृत्ति से बहुत ही उपयोगी संग्रह तैयार किया और दतिया के सम्बन्ध में पर्याप्त सामग्री एकत्र कर दी। बधाई।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८१]

काशी वि० वि०
१–७–६०

प्रिय श्री हरिमोहन जी,

'अमर आलोक' के अंक मिले। इस रूप में साहित्य और संस्कृति की सेवा करने के आपके प्रयत्न का स्वागत करता हूँ।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गौरीशंकर गुप्त के नाम

[२८२]

काशी वि० वि०
१३–१०–५८

प्रिय श्री गौरीशंकर जी,

'पत्रकार वृहत्त्रयी' के लिये धन्यवाद। इसके द्वारा हिन्दी पत्रकार जगत् के पितामह त्रयी का संक्षिप्त किन्तु प्रामाणिक परिचय पाकर प्रसन्नता हुई। हमारी गद्यशैली के विकास में उनका महत्त्वपूर्ण योग है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

आचार्य पं० गणेशदत्त जी पाण्डेय के नाम

[२८३]

अजायबघर, लखनऊ
२६–२–४०

पूज्य पंडित जी,

प्रणाम। मैं जनवरी के महीने से लखनऊ के अजायब घर में आ गया हूँ। यहाँ की पाठशाला के बारे में आपसे एक बार वार्तालाप हुआ था। मैं १ ता० को सबेरे मथुरा पहुँचूँगा और ५ तक रहूँगा। यदि आप अगले इतवार को या उसके आस-पास कुछ समय के लिये आकर मुझसे मथुरा में मिलने की कृपा करें तो बड़ा उत्तम हो। आपसे उसी सम्बन्ध में आवश्यक बातचीत करनी है। आशा है आप अवश्य पधारेंगें।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८४]

लखनऊ
१५–४–४०

पूज्य पंडित जी,

प्रणाम। कृपापत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ। मेरी सम्मति में सब बच्चों को काशी पहुँचा कर यहाँ आने में सुभीता रहेगा। सामग्री सामान भी साथ ही ले जाना उचित होगा। यहाँ जुलाई से पाठशाला पुनः खुलेगी। इस

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समय परीक्षा के बाद छात्र चले गये हैं। आपकी नियुक्ति ३०) मासिक पर हुई है। मई में लखनऊ में आने के उपरान्त ही काशी में गोयनका जी से बातचीत करना ठीक होगा। शेष सब कुशल है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८५]

म्यूजियम, लखनऊ
७–७–४०

श्री पंडित गणेशदत्त जी,

नमस्कार! आपको एक पत्र करीब १० दिन पहले भेजा था। उसमें यहाँ की सब व्यवस्था लिखी थी और यह भी सूचित किया था कि किस कारण से पत्र भेजने में देरी हुई। अब आप लिखिए कि कब तक यहाँ आने का विचार स्थिर हुआ है। आपके उत्तर की प्रतीक्षा है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८६]

लखनऊ
२१–७–४०

मान्य श्री पंडित जी,

आप अपने रिक्त स्थान के लिए किसी पंडित का नाम पाठशाला के अधिकारियों को देना चाहते थे। साथ में पंडित रामलषण शास्त्री का प्रार्थना पत्र भेज रहा हूँ। आप उचित समझें तो इस अर्जी को उचित स्थान पर भेज देने की कृपा करें। मैं समझता हूँ कि ये उस पाठशाला के काम को सफलता से कर लेंगे।

आपकी जैसी व्यवस्था हो सूचित करियेगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२८७]

लखनऊ
९–८–४०

श्री पंडित जी,

नमः। आपका कृपापत्र यथासमय मिल गया था। कृपा करके

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखियेगा कि काशी से क्या उत्तर आया और तत्सम्बन्ध में इस वर्ष क्या निश्चय रहा। कब तक आपके यहाँ पधारने की सम्भावना है ?

शेष कुशल ।

भवदीय
वासुदेवशरण

श्री कृष्णसहाय जी गर्ग के नाम

[२८८]

अग्रवाल कोठी, शिवाजी मार्ग
लखनऊ
१६-२-५६

प्रिय श्री गर्ग साहब,

सप्रेम नमस्कार !

हम सब लोग सकुशल आगए। बारात के सभी सज्जन आपके आतिथ्य सत्कार से गद्गद् होकर कितनी ही प्रकार से प्रशंसा करते रहे जिसे सुन-सुन कर हमें अति आनन्द हुआ। सत्यमेव आप जैसे समधी की उपलब्धि सौभाग्य से ही होती है। आपके असीम सौजन्य और हार्दिक प्रेम-भाव से मैं सपरिवार कृतार्थ हुआ हूँ और भगवान को धन्यवाद देता हूँ कि सौ० वीणा जैसी पुत्रवधू लक्ष्मी रूप में हमारे परिवार में आई है। यहाँ कुटुम्ब भर उसे देखकर प्रफुल्लित हो गया। ईश्वर करे यह जोड़ी चिरजीवी होकर गृहस्थ धर्म का पालन करती रहे। आपके दान-दहेज से हमारा घर भर गया है। मेरे पास शब्द नहीं जो आपके इस उमँगते हुए प्रेम का मूल्य आंक सकूँ। आपकी चिर संचित अभिलाषाएँ वीणा के लिए मूर्त रूप में प्रकट हो गईं और हम सब उनसे कृत-कृत्य हो गए। अपने पूर्वजों के पुण्य को इस मंगल के रूप में हम प्रत्यक्ष देखकर आज अति प्रसन्न हैं। ईश्वर से प्रार्थना है कि यह सम्बन्ध उभय परिवार के लिए सुख सौभाग्य की वृद्धि करने वाला हो।

उन सब सज्जनों को जिन्होंने कई रात जाग कर हमारे लिए कष्ट किया और प्रबन्ध को उत्तमोत्तम बनाया मेरी ओर से हार्दिक धन्यवाद दीजिएगा। आपके सहयोगी और छात्रों का भी मैं आभारी हूँ। श्री प्रिंसिपल गुप्त और कवि गोष्ठी में भाग लेने वाले कवियों का भी मुझे बार-बार स्मरण आ रहा है। उनके प्रति भी मेरा आभार प्रकट करने की कृपा कीजियेगा।

आपका स्नेहाधीन
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री उदयशङ्कर शास्त्री के नाम

[२८९]

काशी विश्वविद्यालय
१९–११–५८

प्रिय श्री शास्त्री जी,

नलदमन के २१ दोहे से १०० दोहों तक का प्रूफ भेजा था। देखकर और सुधार कर कल उसे सादा डाक से वापिस भेज दिया है। यह अच्छा ही हुआ जो आपने मुझे उसे दिखा लिया। भाषा के पर्याप्त संशोधन हो गए। अर्थों का अटकाव भी कई जगह हट गया। 'कतहुँ असवैया असवय डारी' (५०।७) पहले निरर्थक अपपाठ जान पड़ता था, अब वह श्रेष्ठ पाठवाला पाठ प्रमाणित हुआ। नलदमन की भाषा पर जायसी की छाया है। यह अवधी-काव्य स्वतन्त्र भी छपने योग्य है। इस प्रकार हो जाय तो उत्तम हो। २०—१०० दोहों को बीथिका में मुद्रित करके उसके पृष्ठांक बदल कर ५०० प्रतियाँ (तथा न्यूनतम ३०० प्रतियाँ) अलग मुद्रित करा ली जाँय। नया पृष्ठांक १३ से शुरू कीजिए तो ठीक हो जायगा। पहले २० दोहे १२ पृष्ठों में आजाँयगे जो पुनः मुद्रित करवा कर जोड़ दिये जाँयगे। शेष दोहों के लिए भी जुयाल को सहेज रहा हूँ।

यदि यह प्रस्ताव समीचीन जान पड़े तो मुझे प्रसन्नता होगी। हिन्दी जगत के लिये इस काव्य का पृथक् उद्धार भी योग्य जान पड़ता है।

मूल कापी मेरे पास ही है। पाठान्तरों में काट छाँट सम्भव नहीं है।

भवदीय
वासुदेवशरण

[२९०]

काशी वि० वि०
२८–२–५९

प्रिय श्री शास्त्री जी,

१९ जनवरी को आगरे गया था, पर आपसे भेंट नहीं हुई। नलदमन दो० २५१-३०० सत्येन्द्र जी को दे आया था। दो० ३०१-३५० आज प्रातः भेजे हैं।

निम्नलिखित सामग्री की इस समय आवश्यकता है, कृपया भेज दें—

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(१) मृगावती अस्करी प्रति के फोटो, (२) मैनासत के अस्करी प्रति के फोटो पृ० ३२१-३२, (३) मुद्रित बंगला लोर चन्द्राणी।

मोतीचन्द्र आए थे। कहते थे कि लोर चन्दा के फोटो दोबारा भिजवा दिए हैं। माताप्रसाद जी भी इन्हीं दिनों आए थे। उनसे ज्ञात हुआ कि वे फोटों उन्हें अभी नहीं मिले। श्री विश्वनाथ प्रसाद जी से कहकर उन्हें माताप्रसाद जी के पास भिजवा दीजिएगा जिससे लोर चन्दा का संस्करण निकल जाय।

भवदीय

वासुदेवशरण

श्री देवेन्द्र सत्यार्थी के नाम

[२६१]

लखनऊ

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी, २०००

२२-८-४३

प्रिय देवेन्द्र जी,

बहुत दिन बाद आपने कुशल-पत्र दिया और मन को कुछ काल के लिए आनन्द से भर दिया। मथुरा की पुरानी स्मृतियाँ हरी हो गयीं। आप जैसे मित्र की याद समय-समय पर करना मन का धर्म ही बन गया है। खुले आकाश और बहती हुई हवा की तरह आप देश के किसी भाग में होंगे, मुझे तो आपका ऐसा संस्कार अब बन गया है। आपके पृथिवी पुत्र रूप के यह अनुकूल है—एवं आपके और मेरे दोनों के लिए प्रिय और हितकर भी। इस विशाल देश में देखने और जानने की इतनी सामग्री है कि सौ-सौ वर्ष की कई आयु यदि ऋषि के 'भूयसीः शरदः शतात्' की ओट में हम प्राप्त कर लें तो भी सहृदय रसिक का मन कभी भर नहीं सकता। अनेक प्रकार के जन-समुदाय, नाना स्वरों की वाणियाँ, विचित्रता से भरी हुई प्रकृति की गोद में लालित-पालित उसके अनेक पुत्र जिन्हें हम तृणलता, वृक्ष-वनस्पति कहते हैं—इन सबके साथ सौहार्द का भाव लेकर विचरने वाले विश्वामित्ररूपी साहित्यिक को हर जगह आनन्द का सोता बहता हुआ मिलेगा। आप इसी प्रकार के एक विश्वामित्र हैं, जिनका हृदय सार्वजनीन सख्यभाव से उमँगता रहता है।

जनपदों के कार्य के प्रति हमारी स्वाभाविक भक्ति है। यह मेरे बालपन के संस्कारों का विकास है। प्राचीन साहित्य के साथ जो मेरी तन्मयता और

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिचय की काष्ठा बढ़ी, उसका पर्यवसान जनपद कल्याणीय साहित्यिक कार्य में ही मुझे दिखायी दिया। इस कार्य को सम्पन्न किये बिना हिन्दी के साहित्यिकों की झोली रीती रहेगी और पृथिवी में दूर तक तो उसकी जड़ें जा ही नहीं सकतीं। अपना 'पृथिवी-पुत्र' लेख भेजता हूँ। शायद 'जीवन-साहित्य' में आप इसे पढ़ भी चुके हों। इधर मैंने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ सोचा है। धीरे-धीरे उसे लेख रूप में उतार रहा हूँ।

सम्मेलन में पास हुए प्रस्ताव की पृष्ठ-भूमिका आपने खूब लिखी। शायद उसको प्रस्ताव तक सीमित रखने के लिए आज तक सम्मेलन से उस सम्बन्ध की कुछ भी सूचना मुझे नहीं मिली यद्यपि उपसमिति में मेरा नाम रखा गया जान पड़ता है। यदि निजी पत्रों में बनारसीदास जी उसकी विस्तृत चर्चा करके बात को आगे न बढ़ाते तो मुझे शायद उसका पता भी न चलता और बात वहीं समाप्त हो गयी होती। अस्तु, अब तो समानशील सदृश चिन्तन वाले मनुष्यों को मिलकर कुछ उद्योग करना ही चाहिए। आप भी हम लोगों के साथ इसी नाव पर हैं। साथ ही क्यों, नाव का गून अपनी कमर से बाँधकर उसको बहुत पहले ही खींचकर ले चलने वाले धीर नाविक का रूप आपका ही है। मैं लिख चुका हूँ कि आप जैसे सौ सत्यार्थी हों, तब कहीं जनपदों में व्याप्त सामग्री की शत-साहस्री संहिता को कुछ-कुछ एकत्र कर सकेंगे। मूसलाधार रूप में सामग्री बरस रही है, साहित्यिक रस, शब्द, भाषा, ध्वनि किसी का भी तो पारावार नहीं है। एक-एक जनपद कार्यकर्ताओं के लिए एक-एक प्रजातन्त्र का रूप रखता है, जिसका नागरिक बनकर हिन्दी का कर्मठ साहित्यिक अपने विशाल उद्योग से उस जनराज्य का सभापति बन सकता है। आज ही एक धान के खेत की सैर करके लौटा हूँ। जन्माष्टमी सफल समझी क्योंकि कितने ही धानों के और उनमें होने वाले 'लमेर' और 'झरंगा' दानों के नाम प्राप्त किये हैं। प्रत्येक धान का पौधा छोटे-छोटे रोओं की सुतिया-हँसुली पहने खेत में इतरा रहा है और चाहता है कि उसके उस आभूषण की प्रशंसा करने वाला कोई उसके पास पहुँचे। सारी अष्टाध्यायी पढ़ने पर भी पाणिनि के 'व्रीहिशाल्योर्ढक' सूत्र में 'व्रीहि' और 'शालि' का भेद आज से पहले कभी समझ में नहीं आया। धान और जड़हन का भेद 'व्रीहि' और 'शालि' का भेद है। कुँआरी और अगहनी दो फसलों का भेद 'व्रीहि' और 'शालि' का अन्तर है। इस प्रकार जितना अधिक जानने का प्रयत्न करता हूँ, मेरे अज्ञान की थाह उतनी ही बढ़ती जाती है। हम साहित्यिकों को अवश्य ही 'पृथिवी-पुत्र' बनने की एक नयी दीक्षा लेनी चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने विस्तार से अपने विचार लिखने का न्यौता दिया है। इसके लिए मैं अपने दो पत्रों की प्रतिलिपि आपको भेजता हूँ, जिससे आप जान सकें कि कार्य की दिशा और क्षेत्र क्या हो सकता है।

पहले पत्र में सम्मेलन के प्रस्तावानुसार निर्मित जनपदीय कार्य की पंचवार्षिकी योजना है। दूसरे में मैंने यह सोचने का प्रयत्न किया है कि जो साहित्यिक जनपदों की पगडंडियों में भटकना नहीं चाहते उनके लिए भी करने योग्य कार्य का स्वरूप कितना बवंडर है। यदि किसी साहित्यिक परिषद् में मेरे पास मनमाने कार्यकर्ता और अर्थ-सम्पत्ति हो तो मैं बता सकता हूँ कि खड़ीबोली के माध्यम से कितना साहित्यिक कार्य किया जा सकता है। संक्षेप में हमारे साहित्यिकों को अपनी ही छाया में भड़कना उचित नहीं। कार्य के क्षेत्रों का विभाजन करके पारस्परिक सहानुभूति और सद्भावना से 'ऋजु-चिंतन' करने की आवश्यकता है। 'ऋजुता' ही अमृत का पद है। हमारे जिन मित्रों को इस प्रकार कार्यक्षेत्र की परिधि के विस्तृत हो जाने से हिन्दी की मुख्य धारा के अनहित की आशंका है, उनको प्रेम और श्रद्धा के साथ समझाना हमारा कर्तव्य है। हिन्दी-हित के हम सभी हामी हैं। उसमें कहीं से भी कमी आयी तो हम सबकी हानि है। मुझे यह बात सूर्य-प्रकाश की तरह स्पष्ट जान पड़ती है कि बिना जनपदीय जीवन को साथ लिये, हमारा साहित्यिक जीवन प्राण-रस के लिए छटपटाने लगेगा।

आपने लिखा है कि 'विकेन्द्रीकरण' में आपको स्वयं सबकी सब भलाइयाँ साफ-साफ नजर नहीं आ रही हैं। मैं स्वयं भी इस नये शब्द का, जिसने हमारी भाषा में पहले-पहल राजनैतिक परिधान ओढ़कर प्रवेश किया, स्वागत करने में कुछ हिचकिचाता हूँ। मैंने चतुर्वेदी जी को यह बात लिखी थी। उसका उत्तर उन्होंने इस शब्द की महत्ता और पवित्रता समझाकर दिया है। शब्दों के विवाद में मेरा मन रमता नहीं। इसलिए इस क्षेत्र में अपने नाखूनी पंजों को आज़माना नहीं चाहता। हमें तो जनपद कल्याणीय कार्य चाहिए। यह शब्द ही क्या हमारे लिए पर्याप्त नहीं है? यह अवश्य मानना पड़ेगा कि जानपदी भाषाओं का पृथक्-पृथक् क्षेत्र अब भी अस्तित्व में है; वहाँ ही कार्य का क्षेत्र बनाने में सुविधा होगी। पर प्रयत्न सब कार्यकर्ताओं का यही रहेगा कि अपने देश में बसने वाले जन के समग्र अध्ययन से विशाल हिन्दी साहित्य की गोद कैसे भरी जा सकती है। सार तो कार्य में है। अनेक यूरोपीय विद्वान् दूर देशों में बैठकर हमारी बोलियों का प्रशंसनीय कार्य कर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे हैं। हमारे लिए उचित यह है कि यथाशक्ति मृदुता के साथ इस कार्य के आन्दोलन को बढ़ाते रहें और अपनी शक्ति को एक केन्द्र पर लगाकर योजना के अनुसार कुछ ठोस काम करके दिखावें। ग्रियर्सन की एक 'विहार पेजेन्ट लाइफ' कितने ही विवादों के मुँह में धूल डाल देती है। करनी और कथनी का भेद कौन नहीं जानता? अतएव मैं चतुर्वेदी जी से नम्रतापूर्वक अनुरोध करने जा रहा हूँ कि वे चाहे जिस शब्द को चुनें, पर विवाद को उत्पन्न न होने दें।

डेल कार्नेगी ने लिखा है कि 'मुझे जीवन में अभी ऐसे आदमी के दर्शन करने हैं, जिसे विवाद के द्वारा मत-परिवर्तन कराने में सफलता मिली हो।'

आपका सानुराग

वासुदेवशरण

डा० सिद्धेश्वर वर्मा के नाम

[२६२]

लखनऊ

२४-१०-४३

प्रिय पंडित जी,

आपके २२-९-४३ के आचार्य-सन्देश और आशीर्वचनरूपी पत्र को पाकर और पढ़कर मैं अत्यन्त प्रसन्न हुआ। एक महीने तक लगभग उससे रस ग्रहण करता रहा। ऊँचे धरातल से लिखे हुए भावों में ऐसी ही सात्त्विक पोषण-शक्ति होती है। आपका पत्र कार्यकर्ताओं के लिए रस का सोता है। उसमें बड़ा पवित्र सारस्वत जल भरा है। जो वहाँ तक पहुँच चुके हैं, वे ही उसकी मिठास से आनन्दित होंगे। मुझे यह सच जान पड़ता है कि साहित्य के क्षेत्र में समान चिन्तन करने वाले सखा एक-दूसरे के कार्य को सद्भावना के द्वारा बहुत बल दे सकते हैं। ऋग्वेद के इस वाक्य में कितनी सत्यता है—

'अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि।''

यों तो जीवन के हर क्षेत्र में समान गुण-शील वाले सखाओं को प्राप्त करने की आवश्यकता है, पर धर्म, संस्कृति, साहित्य के क्षेत्र में तो सखाओं की सहानुभूति एक सात्त्विक प्रेरणा बन जाती है। एक जैसे ध्यान के जो धनी हैं उनसे ही सरलता के साथ सूक्ष्म विचारों का ऐसा भावावेश मिल सकता है, जैसा आपने अपने पत्र में दिया है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने पन्द्रह वर्ष तक जानपदी भाषाओं का अध्ययन किया है। उनमें शब्दों की जो बहुरूपी प्रखर अर्थ-शक्ति है, उसकी ओर आपका ध्यान गया है। जिस मनचीते ढंग से जनपदीय शब्द मनोभावों को कह सकते हैं, वह बात संस्कृत की लठिया टेककर चलने वाली हमारी इस बोझिल पद्धति में कहाँ आ सकती है ? देहात की यात्रा भाषा-विद्वानों के लिए तीर्थ-यात्रा की तरह फलदायिनी होती है। नये-नये शब्दों की बालें मानवी कंठरूप धान-जड़हनों से बाहर निगर-निगरकर चारों ओर अपने झंपा-झूलन से मन बहलाती हुई दिखायी पड़ेंगी। कनक-जौंर की तरह के उन दानों में जिन्हें भाषा का दूध जमा हुआ दिखायी पड़े वे एक-एक शब्द को पाकर धन्य हो जाँयगे और बटोर कर थैली में भरने लगेंगे। कभी-कभी एक घंटे की जनपद-यात्रा या साहित्यिक तीर्थ-यात्रा से इतना फल मिला कि महीनों के लिए मन आनन्द से भर गया। वहाँ नये शब्दों की नयी शक्ति का परिचय मिलता है। एक बार सुना —

''भुइयाँ लोट चले पुरवाई। तब जानो बरखा ऋतु आई।''

जेठ के दूसरे पखवाड़े से जब पुरवइया भुइयाँ-लोट, धरती में लोटती हुई, धूल उड़ाती हुई, बिरवा-रूखों को झकझोरती हुई चलती है तब मानो बरसात के आने की सूचना मिलती है। इसमें भुइयाँ लोट शब्द की काव्यमय ध्वनि से मन विह्वल हो जाता है। जनपदीय पारिभाषिक शब्दों का उद्धार बहुत आवश्यक है। ठेठ शब्दों से सारगर्भित वाक्यों का संकलन साहित्य की चीज होगी। जैसे जब फागुन में फगुनहटा या हउका चलता है, तब जो नाज गलेथ रहा हो, उसमें हउका लगने से उसका दाना पिच्ची हो जाता है।' पौधे के गले में बाल आ जाने को नाज गलेथना कहते हैं। उसे ही अवधी के कुछ भागों में 'रेंडब' या 'गलिआउब' क्रिया से व्यक्त करते हैं।

'बिहार पेजेन्ट लाइफ' में ग्रियर्सन का काम बहुत अच्छा है, पर जो काम हुआ उससे सैकड़ों गुना वह कार्य है, जो अनहुआ पड़ा है। एक-एक बात के लिए बोलियों में कैसे-कैसे ढले हुए वाक्य और टकटक-टकटक करते हुए शब्द हमारे-आपके परिचय की बाट जोह रहे हैं। बहुत काल के बाद नगर के निवासी गाँवों में जाकर जैसे वहाँ के जानपद जन का कुशल-संवाद पूछ रहे हैं। उनके आपसी मिलन से जो अमृत-रस बरस रहा है, जीवन में एक नया माधुर्य आ गया है, ठीक वैसा ही कुछ दिव्य आनन्द गाँव के चोखे और नये प्रत्ययों के बहुरूपी वेष धरने वाले शब्दों का अपने साहित्य में स्वागत करने से हमें प्राप्त होगा। हिन्दी के कृदन्त और तद्धित प्रत्ययों का जो नाती-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परनातियों वाला बहुत भारी कुटुम्ब है, उसकी जन-संख्या के लिए हमें देहातों के ठेठ अभ्यन्तर में निस्संकोच पैठना होगा। जहाँ हमारी दृष्टि अब तक जाकर रुक जाती थी उससे बहुत दूर अपनी अपनी छोटी मड़ैयों में चैन की बंसी बजाते हुए प्रत्यय हमको मिलेंगे। काली-काली आँखो वाले, देखने में सुन्दर, काम में चोखे, स्वभाव में धीर किसानों के बैल जो उनके प्राणों के साथी और दुःख-सुख के सखा हैं, हमारा स्वागत उन मड़ैयों के पास पहुँचने पर जिस प्रकार करते हैं, उसी प्रकार जनपद की बोलियों के मैदानों में किलोल करने वाले शब्द और प्रत्यय रूपी कलोर बछड़े हमको अपनी ओर खींचते हुए मिलेंगे। उनके साथ नये परिचय से हमारे भाषा-ज्ञान को नया जीवन-रस मिलेगा। बउनी (खेत बोना), मड़नी (दाँय चलाना), पच्छिवा (पछवा वायु), गुठलिहा (गुठली के आकार का धान का मोटा दाना), हउहरा, फागुन का फगुनहटा, उतरिहा, दखिनहा, पुराही (पुर या मोठ की सिंचाई), चदरियान्हान (वह गंगा-स्नान, जिसमें एक चादर भर की हल्की सरदी हो)—शब्दों के जो नये कृदन्त और तद्धित प्रत्यय हैं, उनकी ठीक पूछताछ होनी चाहिए। सम्भव है पूरा काम इस एक ही विषय पर यदि कोई विद्यार्थी करे तो आप उसके परिश्रम को डी० लिट्० के योग्य मान लें। रिवेटिंग (रिविट ठोंकना) जैसी क्रिया के लिए देहात में अकस्मात् शब्द मिल गया 'ठरना' (पतरी को कुदारी पर रखकर कीलों से जड़कर ठहराना)। रसीद के काउन्टर-फायल के लिए शब्द मिला ठौंठिया (सं० स्थविष्ठक)। इसी तरह आपने जो शब्द पूछे हैं, उनके लिए भी भाषा में अलग-अलग नाम हैं। कान की लोय (कर्ण-पाशिका); कमर की पुट्ठी या कूल्हा (Lower portion of the back); दूध जमावनी (जिसमें रात को दही जमाने के लिए दूध रखते हैं); विलोवनी (मथानी) आदि कुछ ज्ञात हैं। बाकी ढूँढ़ने होंगे। श्री कत्रेजी डकेन कालेज रिसर्च इन्स्टीच्यूट की ओर से मराठी भाषा पर बहुत अच्छा इसी ढंग का कुछ कार्य करा रहे हैं। कार्ड इन्डेक्स के ढंग पर उनकी चिटें बन रही हैं। हमारे साहित्यिक जगत् में भी जानकार काम करने वाले चाहिए। उनके लिए काम करने की पद्धति क्या हो, इसे आप सदृश विचारशील और अभिज्ञ विद्वानों को लेख और पुस्तकों द्वारा बताना होगा। इसमें मेरा ज्ञान बहुत परिमित है। मुझ में एक उत्साह है, इस उत्साह के साथ सद्भावना है, इसकी आवश्यकता मुझे प्रत्यक्ष दीखती है। यदि हमने जनपदीय कार्य को न अपनाया तो हमारी प्रगति के हाथ-पैर मारे जाँयगे—ऐसा मुझे दीखता है। मेरी समझ में यह आने वाले महान् युग का धर्म है। इतिहास के प्रचण्ड विकास की रूप-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रेखा इस कार्य की ओर प्रेरित कर रही है। गुप्त-युग की अतिशय नागरिक संस्कृति के बाद जब साहित्य में गति अवरुद्ध हुई, तब नये उत्साह मे लोग गाँवों की ओर मुड़े और वहाँ से अपभ्रंश साहित्य और भाषा का नया स्रोत प्राप्त किया, जिससे हमारी हिन्दी-भाषा का भी जन्म हुआ है। कुछ वैसी ही बात इस समय है। हम लोग भूमि से इतने उखड़ गये कि साँस लेने के लिए छटपटाने लगे। प्रगति का द्वार अवरुद्ध होने से कल्पना की काया क्षीण होने लगी। भाषा की शैली में कविता में, निबन्ध में सर्वत्र दरिद्रता ने घर कर लिया। हमें अब सामूहिक चिन्ता है कि किस प्रकार हमारी साहित्यिक-श्री हमें फिर प्राप्त हो। इस प्रयोजन के लिए हमारे पास वहाँ से निमन्त्रण आया है, जहाँ भूमि का मीठा दूध प्रतिवर्ष सूर्य की किरणों से दही जमकर जौ-गेहूँ के अरबों दानों से हमारे कोठारों को लक्ष्मी से भर देता है। इसी क्षीर-सागर में हमारा साहित्यिक विष्णु सोया हुआ है। उसके पास हमारी साहित्य-श्री विराजमान है। वहाँ से उसका आवाहन करना हमारी साहित्यिक दीपावली का सन्देश है। जब हमारे कोष इन नये शब्दों से भरने लगेंगे, साहित्य के कोठारों में कैसा नवमंगल दिखायी पड़ेगा। वेदों में भूमि को 'मही माता' (The Great Mother) कहा गया है। वह सब भूतों की धात्री है, पशु-पक्षी, वृक्ष-वनस्पति सब उससे जन्म पाकर फूलते-फलते हैं। वही 'सर्वलोक-नमस्कृता' मातृभूमि साहित्य की भी जननी है। शीघ्र ही हमारे साहित्य को भूमि के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ना चाहिए। भूमि का कूड़ा-करकट भी खाद बनकर उसकी उपजाऊ शक्ति को बढ़ाता है। इसी तरह साहित्य में जो फूहड़ (Slang) कहकर त्यागा हुआ है, वह भी भाषा-विज्ञान को नयी योजना में साहित्य क्षेत्र की उर्वरा शक्ति पुष्ट करने वाला होगा।

आपने जो लिखा है कि अपनी कुटिया से बाहर निकलकर, जब हम शब्दों की खोज और संग्रह करेंगे, तब लाखों नये शब्द हमें मिलेंगे, यह बात बहुत आनन्द और बल देने वाली है। साहित्य का 'कुटी-प्रावेशिक' रूप हमने अब तक पाला-पोसा है; अब धूप और हवा में बाहर निकलकर उसके 'वातातपिक' रूप का भी परिचय पाना चाहिए। आपने जो इन शब्दों का पता पूछा है, इसके लिए कृपया देखिये, (चरक संहिता, चिकित्सा-स्थान, अध्याय १, श्लोक १६)। जान पड़ता है कि पृथिवी और आकाश के बीच में जो महान् अवकाश है वह इसी सामग्री से भरा हुआ है ऋग्वेद में कहा है—

ऋताय पृथिवी बहुले गभीरे। ऋताय धेनू परमे दुहाते ॥

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यिक ऋत के लिए मानो पृथिवी-आकाश अपना मुँह फैलाये खड़े हैं, साहित्यिक ऋत-दोहन के लिए ही हमारे ध्यान की परम धेनुएँ अपनी अमृत वर्षा कर रही हैं। साहित्यिक का जो व्यापक रूप है, वह ऋत पदार्थ से संयुक्त है। जो केन्द्र में घनीभूत हो गया, वह सत्य है। ऋत के साथ ही विस्तार का भाव है। ऋत सौम्य और सत्य आग्नेय है। नवीन स्फूर्ति और कल्पनाओं की जननी ऋत-भूमि है।

मैं इस बात से सहमत हूँ कि हिन्दी-भाषा को यदि सगोतियों के बीच अपनी प्रतिष्ठा प्राप्त करनी है तो पंजाबी, गुज़राती, बँगला आदि भाषाओं के साहित्य और शब्द-भण्डार का अध्ययन अवश्य करना होगा। हिन्दी राष्ट्र-भाषा के मंडप में आयी है। राष्ट्रीय-भाषा पद के लिए उसका स्वयंवर है। हिन्दी का साहित्य इस प्रकार के शब्दों में घोषणा करेगा—

अहमस्मि समानानाम् उद्यतामिव सूर्यः

'मैं बराबर वालों में ऐसे हूँ जैसे उगते हुओं में सूर्य।

आपका स्नेहपात्र
वासुदेवशरण

श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी के नाम

[२६३]

लखनऊ
२२–११–४३

प्रिय जगदीशप्रसाद,

आपका १२-११ का पत्र जो १६-११ को यहाँ पहुँचा, मुझे कल लौटने पर मिला। 'मधुकर' का 'जनपद-अंक' निकालने के विचार का हार्दिक अभिनन्दन! यह एकदम मौलिक और सामयिक सुझाव है। जनपद-कल्याण की भावना को साहित्य के क्षेत्र में आन्दोलन अर्थात् जन-प्रवृत्तियों के रूप में प्रचारित करने का श्रेय एकमात्र 'मधुकर' पत्र व उसके प्राण श्री बनारसीदास चतुर्वेदी को है। मेरा इस प्रकार का चिन्तन अधिकांश में उन्हीं के श्रद्धामय दोहन का परिणाम है। अनेक पहाड़ी रौ, झरनों, कूलों, गाड़ और गधेरों के प्रफुल्लित वरदान से महानदी प्रवृत्त होती है। यह दृश्य-सत्य मैं अभी हिमालय की यात्रा में देख आया हूँ। इसी प्रकार छोटे-बड़े अगणित विद्वानों के विचार-जल से पूरित, लेखों और भाषणों के तटों से मर्यादित, तपस्वी साधकों की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाशील साधना के तीर्थों से प्लावित, लोकमङ्गल की भावना से तरङ्गित, जनपद-कल्याण की महाधारा हमारे साहित्य के महाप्रदेशों में उमँड़कर बहेगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। सर्वलोकनमस्कृता भगवती गङ्गा के प्रवाह को भगीरथ जिस प्रकार भूतल पर ले आये थे, उसी प्रकार इस जनपद-कल्याणी गंगा को सर्व-सुलभ करने के लिए मनोयोगपूर्वक किये गये अनेक अनुष्ठानों की आवश्यकता होगी। 'जनपद' अङ्क उसी का सूत्रपात है। ईश्वर करे, इसके द्वारा निर्मित भवन चिरायु हो।

'जनपद-अङ्क' के लिए विषय-सामग्री का जो ठाठ आपने लिखा है, वह बहुत ही उपयुक्त है। खूब शान्त चित्त से, अविचल, धीर निष्ठा से, किसी भी साहित्यिक मित्र के प्रति अमर्ष के भाव से अखिन्न होकर लिखिये, अवश्य यह साधना सफल होगी।

जनपदीय आन्दोलन की रूपरेखा, उसका उद्देश्य बार-बार लिखने और समझाने से खूब प्रचारित होना चाहिए। जो जहाँ है वह किसी न किसी जनपद में ही बैठा होगा। अपने चारों ओर की भूमि की पहचान वह वहीं से प्रारम्भ कर सकता है। पृथिवी-पुत्र बनने के लिए हृदय के तार को भूमि से मिलाने की आवश्यकता है। दूध पीने लगना ही बच्चे का माता से पहला परिचय है। जब हम दूध पीकर पुष्ट होंगे तब माता के नाम-धाम की पहचान करने के योग्य होंगे। पहले दिन ही माता के व्यक्तित्व की टटोर का आग्रह बच्चे के लिए क्या हितकारी हो सकता है? जनपद-कल्याणीय शिशु को अभी मातृभूमि का स्तन्यपान चाहिए। सब कार्यकर्त्ता मिलकर उसे प्रस्तुत करें। जनपदों के नामों की छोटी-बड़ी अनेक सूचियाँ प्राचीन ग्रन्थों में है। उनकी संख्या से जनता में व्यामोह उत्पन्न हो सकता है। फिर यह संख्या भी कभी टिकाऊ नहीं रही, ऐतिहासिक कारणों से जनपद घटे और बढ़े हैं। कभी वे फैले, और कभी सिकुड़ गये, पर जनपद-जन एक ही रहा, सर्वथा अखण्ड। जनपदों के पीछे छिपा हुआ जो जनपदीय भाव है उसको क्या कोई टुकड़ों में बाँट सकता है? वायु के और जल के चाहे तलवार से टुकड़े हो सकें, पर अखण्ड जनपदीय भावना का बँटवारा नहीं हो सकता। आकाश को चाहे चमड़े के थान की तरह लपेटा जा सके, पर जानपद जन के मानस-पट को पृथक् थानों में लपेटकर नहीं रखा जा सकता।

आपका हितैषी

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री रमेशचन्द्र शर्मा के नाम

[२६४]

काशी विश्वविद्यालय
१६-१०-५७

प्रिय रमेशचन्द्र,

सूचना से हर्ष हुआ। भगवान् का धन्यवाद है।

मेरी तुमसे यह प्रबल इच्छा है कि भारतीय शिलालेखों की दिल्ली में रहते ५-७ जिल्दें तैयार करो। उसकी एक योजना बनाकर भेजना—यदि यह कार्य स्वीकार हो।

कार्यालय के नियमित काम में हर्ज न करके अवकाश का सदुपयोग इस कार्य में करना है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२६५]

काशी विश्वविद्यालय
६-६-५८

प्रिय रमेशचन्द्र,

पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। सब कार्य समय पर सम्पन्न होने से ही शोभा देते हैं—

कालोह्ययं संक्रमितुं द्वितीयं सर्वोपकारक्षममाश्रमंते। (कालिदास)

भगवान् तुम्हारा मंगल करें। गृहस्थाश्रम में अपने आदर्शों का स्मरण रखना। भारतीय संस्कृति या संस्कृत विद्या को अपने उदाहरण से तेजस्वी बनाना ही कर्तव्य है।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[२६६]

काशी विश्वविद्यालय
४-६-६०

प्रिय रमेशचन्द्र

२-६-६० का पत्र मिला। लखनऊ संग्रहालय में तुम सुख-शान्ति से लिख-पढ़ सको, यही चाहता हूँ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२९७]

काशी विश्वविद्यालय
२७–७–६०

प्रिय रमेशचन्द्र,

२५-७-६० का पत्र मिला। अपने शोध प्रबन्ध के विषय में मिलकर बात करना सुविधाजनक होगा। तुम्हारा उत्साह जानकर प्रसन्नता हुई।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

डा० बनारसीदास चतुर्वेदी के नाम

[२९८]

काशी विश्वविद्यालय
१०–१–१९५३

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

'सम्पादक की समाधि' लेख अभी पढ़ गया हूँ। ऐसी चुभती करुणा मुझे अपने नपे-तुले साहित्यिक अध्ययन में आज तक अन्यत्र नहीं मिली थी। इस लेख की टीस को मैं जीवन भर न भूल पाऊँगा। आप मेरे सामने होते तो चरण धूल मस्तक पर चढ़ाता। क्या हम सभी साहित्य के खब्ती इस बारे में सगोती नहीं हैं ? मैं भी तो अपने सूत्र भाष्यों के अम्बारों में दबा हुआ घर की पत्नी के ऋण से उऋण नहीं हो सका। उससे सदा पाया ही, उसे कभी स्वतन्त्र व्यक्तित्व का श्रेय नहीं दिया। न जाने कितने भारतीय पति इसी प्रकार की वंचना के शिकार होंगे। हम लोग अपने केन्द्र में विजड़ित होकर उस पोखर की तरह बन जाते हैं, जिसका पानी बहता नहीं। दूसरी ओर गृह-पत्नी है, जिसका समस्त जीवन परिवार के लिए अपना सब कुछ निछावर कर देने का महायज्ञ पूरा करता रहता है।

आपका
वासुदेवशरण

[२९९]

प्रिय श्री बनारसीदास जी,

'रेखाचित्र' पुस्तक आपकी तूलिका ने खूब लिखी। इसके चित्र हिन्दी जगत् की अजन्ता गुफा में मुझे कुछ देर के लिए खींच ले गये। जब-जब पढ़ूंगा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सिहाऊँगा । पण्डिताऊ पोथों के छकड़े तो चाहे मैं भी लाद दूँ, पर हिन्दी की ऐसी सरल जीवन्त शैली मेरे वश की बात नहीं, जाड़े की धूप में से भरे हुए आकाश में जैसे कोई गुरसल या पक्षी चहकती और फुदकती है, वैसी ही आपकी हल्की-फुल्की हिन्दी शैली सुख देती है । उसके पीछे अवश्य ही मानवी प्राण के अमिट अट्टहास का ऊँचा कैलाश पर्वत आपने छिपा रखा है ।

आपका
वासुदेवशरण

[३००]

काशी वि० वि०
१५-११-

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

एक वर्ष में घासलेटी घी का कोढ़ दूर किया जा सकता था, सो एक कल्प में भी वह इस सरकार के लिए नहीं हो सकेगा । मैं कभी-कभी निराश होकर सोचने लगता हूँ कि मेरे जैसे घी-दूध पर जीने वाले व्यक्ति किस आशा को लेकर भविष्य में जीने की इच्छा करें ? सरकार के कान वज्र बहरे बन गये हैं । विनोवा तो क्या गांधी जी को बात भी वहाँ से टकरा कर खो जाती । विनोबा जी धन्य हैं । उनके कण्ठ में जनता की वाणी के कुछ स्वर सुनने को मिल जाते हैं । नहीं तो और नेता लन्दन और वाशिंगटन की बोली में बोलते हैं, जो गरीब देश के लिए दुर्बोध है ।

शुभेच्छु
वासुदेवशरण

[३०१]

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
९-६-६६

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

एक ही डाक से आपके दो पत्र मिले । ३-६-६६ का फीरोजाबाद से, जिसमें आपने लिखा कि पृथिवी पुत्र की एक प्रति आपको प्रिंसिपल गर्ग से मिल गई । दूसरा है ७-६-६६ का नई दिल्ली से, जिसमें आपने लिखा है कि पृथिवी पुत्र की दो प्रतियाँ आपने मास्को भेजने के लिए नई दिल्ली की सोवियत एम्बेसी को दे दी हैं । इससे अनुमान होता है कि मेरे प्रकाशक राम प्रसाद एण्ड सन्स ने पुस्तक की पाँच प्रतियाँ आपके पास भिजवा दी हैं ।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरा जन्म १६०४ में मेरठ जिले के खेड़ा नामक गाँव में हुआ मेरे पितामह ठेठ गाँव के व्यक्ति थे। उनकी शिक्षा लगभग नहीं के बराबर थी। थोड़ी हिन्दी पढ़ लेते थे और अपना हिसाब-किताब मुड़िया में लिखा करते थे। पर वे अत्यन्त प्रखर बुद्धि के पुरुष थे। सत्य और न्याय में उनकी बड़ी निष्ठा थी। सन् ४० तक लगभग दो मास प्रतिवर्ष मैं उनके पास रहा करता था। वे शरीर से लम्बे-चौड़े हृष्ट पुष्ट थे। मुझे प्राचीन भारतीय आर्यजनों की हजारों पीढ़ियों के दर्शन उसके चलते-फिरते व्यक्तित्व में दिखाई पड़ते थे। वे आस पास के दस बीस गाँवों में बेताज के बादशाह थे। उनके चरित्र सम्बन्धी गुणों का मुझ पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। मैंने जीवन में उनसे बहुत कुछ सीखा। जब मैं ६ वर्ष का था, मेरी माता का देहान्त हो गया। मेरा लालन-पालन दादी ने किया। वे जनपदीय गुणों की मूर्त आत्मा थीं। कुटुम्ब की निस्स्वार्थ सेवा उनका जीवन व्रत था। वे न गिनती गिन सकती थीं और न रुपये पैसे रख सकती थीं। वैदिक पुरन्धि या पोथिन् शब्द उनमें सच्चे अर्थों में घटित होता था। गाँव का सारा मुहल्ला उन्हें अपनी पुरखिन मानता था। वे घर भर में मुझे सबसे अधिक स्नेह करती थीं मेरी सगी माँ वे ही थीं। भारतीय संस्कृति के अनेक छिपे हुए मातृ गुण मैंने लगभग ४० वर्षों तक उनमें देखे।

मेरी शिक्षा का आरम्भ देहाती मदर्से में हुआ। अपने पितामह की कुशाग्र बुद्धि और उत्तम स्मृति मुझे विरासत में मिली। मेरे पिताजी ५ भाई थे। घर भर में कुछ अंग्रेजी पढ़ने का संयोग उन्हें ही मिला। जब वे सन् १६१२ में लखनऊ में नौकरी और व्यापार के सिलसिले से गये तो मेरी शिक्षा का क्रम ठीक से चल निकला। हमारे देश में जितनी शिक्षा कोई पा सकता है वह सब पिताजी ने मेरे लिये सुलभ कर दी। हाईस्कूल, इण्टर, बी० ए०, एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्० तक की सीढ़ियाँ मैंने पार कर लीं।

मेरे पितामह गाँव के किसान थे, उन्होंने बहुत वर्षों तक किसानी की थी। उनके मुकाबिले में १०-५ गाँवों का कोई किसान ठहरता न था। आगे चलकर वे लेन-देन और जमींदारी का काम करने लगे। वे ठेठ पृथिवी पुत्र थे। जब हम उन्हें लखनऊ ले आते तो वे ५-७ दिन में ही उखड़े हुए जान पड़ते और अपने ग्राम जीवन के लिये भटक जाते थे। वे प्रातःकाल ४ बजे उठ जाते थे और अपनी जमीदारी में कई मील का चक्कर लगाते थे। मैं भी उनके साथ जाया करता था। तीसरे पहर वे अपनी दुकडिया में बैठकर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौधरी, पण्डित, मुकद्दम, नम्बरदार और अन्य गाँव के मित्रों को भागवत की कथा सुनाया करते थे। वे सच्चे सनातन धर्मी थे, जिस साँचे के लोग इस देश में कई सौ पीढ़ियों से होते आये हैं। वे दोपहर को स्नान के बाद विष्णु सहस्रनाम का पाठ करते, सायंकाल को गाँव से बाहर शिव मन्दिर में शिव के दर्शन करके और घृत दीप जलाकर तब भोजन करते थे। मैं भी उनके साथ जाया करता था। कुछ ही लोग गाँव में ऐसे पुरखे होते हैं जो पुरानी बातों को मानते हैं।

मुझे कई तरह के संस्कार अपने बाबा से और अपने प्रारम्भिक गाँव के जीवन से मिले। महाभारत, भागवत और रामायण अपने इन महान ग्रन्थों को तैयार करना और पढ़ना मैंने उन्हीं से सीखा। अभी तक मैंने महाभारत के २४००० श्लोकों पर एक सांस्कृतिक व्याख्या समाप्त की। उसका नाम 'भारत सावित्री' है और वह लगभग ८०० पृष्ठों के तीन खण्डों में समाप्त हुई है। १८ पुराणों की सांस्कृतिक और धार्मिक व्याख्या लिखने का मेरा सङ्कल्प है। उनमें से चार पुराणों पर अब तक लिख चुका हूँ। यदि रूसी जनता हमारे मस्तिष्क और हृदय को निकट से जानना चाहे तो उसे पुराणों के चार लाख श्लोकों का साहित्य देखना चाहिए।

सन् १९४० में मेरे मन में जनपदीय आन्दोलन का विस्फोट हुआ। उसकी कहानी 'मधुकर' और 'लोकवार्ता' से आपको ज्ञात है। अब यह आन्दोलन अपने देश की भाषाओं में ठहर गया है। सुनता हूँ कि जनपदीय रूस से जनपदीय सामग्री १६ लाख श्लोकों के बराबर है। अपने देश में भी इससे कम नहीं है। रूसी विद्वानों को न्योता है कि यहाँ आवें और काम करें। रूस और भारत के सम्पर्क का लोकवार्ता द्वारा एक नया मोर्चा खुल सकेगा। जनता को इसमें पहल करनी चाहिये। आप की यात्रा सकुशल हुई होगी, महाशय गोर्की के देश को मेरा नमस्कार कहिएगा।

भवदीय

वासुदेवशरण

[३०२]

काशी हि० वि० वि०

९-६-६६

प्रिय श्री चतुर्वेदी जी,

पहला पत्र अभी लिखकर इच्छा हुई कि दूसरे पत्र में भी अपनी जीवन कहानी कहता चाऊँ। ऐसा सुखकर न्यौता अभी तक किसी ने नहीं दिया था,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर मैं आपका यजमान हूँ, इसलिये पूरी मात्रा में ब्रह्मभोज कराने से ही आप छकेंगे।

अब अपने साहित्यिक शरीर का कुछ परिचय दे डालूँ। लगभग सन् १९१५ से मेरी रुचि संस्कृत विद्या की ओर हुई। मेरे पिताजी का परिचय पं० जगन्नाथ जी से हो गया। वे अवध में प्रतापगढ़ जिले के सात्त्विक ब्राह्मण हैं। मैं इधर हाईस्कूल भी न कर पाया था कि पिताजी ने मुझे पण्डित जी को सौंप दिया। यह पूर्व जन्म का संयोग था। पण्डित जी ने मुझे पुराने ढंग की संस्कृत विद्या में ढाल दिया। वे मेरे गुरु ८८ वर्ष के हैं। मेरे लिये ज्ञान का नया क्षेत्र खुल गया। संस्कृत पढ़ते हुए मैं बहुत दूर निकल गया। पण्डित जी की कृपा से मेरा परिचय पाणिनि के महान् ग्रन्थ 'अष्टाध्यायी' से हो गया। पाणिनि का ग्रन्थ अष्टाध्यायी भारतीय जनपदीय जीवन का दर्पण है। १९२९ में जब मैंने प्राचीन इतिहास में एम० ए० कर लिया तो मेरे गुरु डा० राधा कुमुद मुकर्जी ने आग्रह के साथ मुझे अष्टाध्यायी विषय पर हीं शोध कार्य करने को कहा, क्योंकि वे जानते थे कि मुझमें उसकी विशेष योग्यता थी। मैंने बारह वर्ष तक उस विषय पर कार्य किया। १९४१ में मेरा ग्रंथ 'इण्डिया एज नोन टू पाणिनि' समाप्त हो गया। और मुझे पी-एच० डी० उपाधि मिली। फिर १९४६ में उसी ग्रन्थ के परिवर्धित रूप पर मैं डी० लिट्० की उपाधि के योग्य समझा गया। ७ वर्ष बाद १९५३ में वह पहली बार छपा और तब सारे विश्व में जहाँ तक संस्कृत विद्या पढ़ी जाती है, मुझे बहुत यश प्राप्त हुआ। देश और विदेश में उस ग्रन्थ के कारण मेरा यश फैल गया। आज तक विद्वान् सम्मान के साथ उस ग्रन्थ को पढ़ते हैं। इसका हिन्दी अनुवाद भी मैंने स्वयं ही किया। पाणिनि व्याकरण के विद्वान् तो थे ही, किन्तु वे विलक्षण जनपदीय सहानुभूति के व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी भूमि को निकट से जाना और प्यार किया। घर के भीतर और बाहर के जीवन का सूक्ष्म वर्णन उनके ग्रन्थ में है। मेरा जन्म गाँव में हुआ था, इसलिये मैं उसकी सच्ची व्याख्या कर सका।

यहाँ पर मैं कह दूँ कि मेरा मन कुछ ऐसा है कि उसे बहुत से विषयों में रुचि होती गई। जैसे किसी घर में बहुत से द्वार और खिड़कियाँ हों, ऐसा ही कुछ मेरा मन है।

उसमें पचासों विषय भरे हुए हैं। यह मेरा अक्षय भंडार है। १९३१ में एम० ए० करने के दो वर्ष बाद ही मुझे मथुरा के पुरातत्त्व संग्रहालय का अध्यक्ष चुन लिया गया। वहाँ मैंने भारतीय कला और मूर्तिशास्त्र का अध्ययन किया। फिर १९४० में मैं लखनऊ संग्रहालय का अध्यक्ष हो गया। वहाँ से

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९४६ के आरम्भ में नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय का अध्यक्ष पद मुझे मिला। फिर वहाँ से १९५२ के अन्त में हिन्दू विश्वविद्यालय के कला विभाग का अध्यक्ष होकर यहाँ आ गया, और तब से आज तक यहीं हूँ। मैं स्थान बदलना नहीं चाहता। अपनी रुचि के अनुकूल कार्य चाहता हूँ। संस्कृत विद्या और भारतीय कला इन दो विषयों से जो मेरा परिचय हुआ वह दिन प्रतिदिन गाढ़ा होता गया। मैंने सोचा कि इन दो शास्त्रों को निकट लाना चाहिए। मैंने संस्कृत साहित्य की सहायता से कला और पुरातत्त्व सम्बन्धी सहस्त्रों शब्दों का उद्धार किया। यूनानी कला के लिए ही कुछ ऐसा काम हुआ था, यह हमारा कार्य उससे कुछ कम महत्त्व का नहीं है। उसका कुछ नमूना मेरी लिखी 'इण्डियन आर्ट' Vol. I में है जो अभी छपी है। यदि रूसी विद्वानों को इन्डियन आर्ट पढ़ना हो तो वे मेरी उस आँख से उसे पढ़ें। जैसा मेरा स्वभाव है मैंने भारतीय शब्दों में अपनी कला की कहानी कही है। यदि मैं जीवित रहा तो इस कथा को और आगे ले चलूँगा। अब मुझे भारतीय कला का अध्ययन करते हुए ३५ वर्ष हो गए हैं, और मुझे इसका विश्वास है जो दृष्टिकोण मेरी समझ में आया वही ठीक है। पश्चिम के सब विद्वानों को एक दिन उसी बिन्दु पर आना होगा। जनपदीय दृष्टिकोण, भारतीय कला, संस्कृत साहित्य — इन तीन विषयों के अतिरिक्त भारतीय संस्कृति के कितने ही विषय मेरे मन में भरते चले गये। उन्हीं में भारतीय भूगोल, पुराण साहित्य और वैदिक साहित्य की ओर मेरा मन सन् २० से ही खिंचता था, पर विशेष खिंचाव पिछले सात वर्षों में हुआ है। जब से मैंने दीर्घतमस ऋषि के अस्थवाभीय सूत्र की व्याख्या लिखी तब से मेरा विश्वास हो गया है कि वेद विद्या सृष्टि विद्या है और उसके सदृश ऊँची अन्य कोई विद्या नहीं है। प्राण विद्या या जीवनी शक्ति की विद्या ही वेद विद्या है। यही सनातनी योग विद्या या प्राण विद्या है, पर मेरी कही हुई बात को लोग अभी समझ नहीं पा रहे हैं। इस विषय पर मैंने लगभग ६ ग्रन्थ लिखे हैं। यदि मैं यूरोपीय विद्वानों के सामने अपनी बात रख सकता तो वे ये जान लेते कि मानव के नित्य जीवन के लिये जो तत्त्व वेदों में कहे गये हैं वे सबसे अधिक मूल्यवान हैं। मुझे इस बात का सन्तोष है कि मेरे जीवन का सायंकाल वेद विद्या के सम्पर्क से बीत रहा है। आप नाम से चतुर्वेदी हैं पर बेद के अक्षर से कभी भेंट नहीं की। अतः मेरी बात आपको शेखचिल्ली या ऊलजलूल कहने वाले सागर पण्डित जैसी जान पड़ेगी।

भवदीय

वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

के

पत्र-साहित्य पर

कुछ महत्वपूर्ण निबन्ध

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र

—श्रीरामशंकर द्विवेदी, एम० ए०

वियोगीजी ने अपने २१-३-६८ के पत्र में मुझे लिखा—'पत्र मिला। प्रसन्नता हुई। पत्रलेखन-कला के सम्बन्ध में बहुत लिखा जा सकता है। मैं सन् १९१८-१९ ई० से लिख रहा हूँ। कितने हजार पत्र आये, उनका संग्रह कैसे करता। मैंने कितने हजार पत्र लिखे, यह भी बताना असम्भव है। हाँ, इतना कह सकता हूँ कि पत्रों में अजेय शक्ति होती है. यदि हम अपना हृदय उनमें उड़ेल सकें। जितने भी भाई मुझे मिले, वे सभी पत्रों की देन हैं। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ के चरणों की धूलि भी पत्रों की ही बदौलत मिली। सही बात यह है कि हम हिन्दी वाले पत्रलेखन-कला का महत्त्व ही नहीं समझते। उत्तर देना क्या है, बला टालना है, किसी का पत्र आया न कि संकट आ गया। सिनेमा पर हम पैसे खर्च कर सकते हैं, जो एक जघन्य कर्म है. किन्तु डाक पर खर्च नहीं कर सकते, जिससे घर बैठे कोहनूर मिल जाय।'

यह सच है कि हिन्दी में पत्र-साहित्य को उतना महत्त्व नहीं दिया गया है. जितना अन्य भाषाओं में। हिन्दी में व्यवस्थित रूप से छपे पत्र-संग्रह इने-गिने हैं—कुल जमा पाँच या छः—हिन्दी-पत्रावली : बैजनाथसिंह 'विनोद'; द्विवेदीकालीन साहित्यकारों के पत्र : बैजनाथसिंह 'विनोद'; पद्मसिंह शर्मा के पत्र : सं० बनारसीदास चतुर्वेदी; फाइल प्रोफाइल : उग्र; प्रेमचन्द्र : चिट्ठी-पत्री, भाग २। इन पाँच संग्रहों के अतिरिक्त अभी तक पुस्तक-रूप में छठा पत्र-संग्रह देखने में नहीं आया। साहित्यकारों पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के जो विशेषांक निकलते हैं, उनमें अवश्य बहुत से पत्र बिखरे पड़े हैं। उनका संग्रह कौन करे?

बँगला में अकेले रवीन्द्रनाथ टैगोर के पत्रों का संग्रह ११ जिल्दों में निकला है। शरत्पत्रावली जिन्होंने पढ़ी है, उन्हें यह विश्वास हो गया होगा कि साहित्यकार के सच्चे व्यक्तित्व को समझने में जितनी सहायता उसके पत्रों से मिलती है, उतनी उसके भारी-भरकम ग्रंथों से नहीं। पत्रों के माध्यम किसी से भी सीधा सम्बन्ध जोड़ सकते हैं। इस प्रेस के युग में आज जितना प्रभाव हाथ से लिखी अपील का पड़ता है उतना छपे पर्चे का नहीं। उसमें औपचा-

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिकता रहती है और पत्र में हमारा हृदय धड़कता है। मानों पत्र के द्वारा हम अपने हृदय के स्पन्दन को दूसरे के हृदय तक पहुँचाना चाहते हैं। रवीन्द्र की 'छिन्न पत्रावली' में जैसा उनका हृदय धड़कता है, वैसा 'गोरा' में नहीं। रवीन्द्र के हृदय को सही-सही समझना हो, तो उनकी 'छिन्न पत्रावली' पढ़िए। श्री उमेशचन्द्र मिश्र ने अपने विख्यात ग्रन्थ 'विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर' में लिखा है—

"लेखों से भी अधिक महत्वपूर्ण कवि के वे पत्र हैं, जो उन्होंने अपनी जमींदारी के गाँव में रहते समय अपने परिचितों को लिखे थे। इनमें ग्राम्य जीवन का सत्य और कारुणिक चित्र विद्यमान है। कवि के हृदय में ग्राम-वासियों के प्रति अपार स्नेह और अखण्ड सहानुभूति की धारा बह रही है।"

रवि बाबू के इन पत्रों में उनके मनोभावों का बड़ा सुन्दर चित्रण मिलता है। उसका कुछ अंश इस प्रकार है—"किसी नदी के जल में या किसी गाँव की खुली जगह में जितना ही अकेले रहा जाय, उतना ही स्पष्ट मालूम पड़ता है कि अपने जीवन के प्रतिदिन के कार्यों को स्वाभाविक रीति से करते रहने से अधिक सुन्दर और श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है। मैदान के तृण से लेकर आकाश के तारे तक यही किया करते हैं।"

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल सच्चे पृथ्वीपुत्र थे। वे सारस्वत कोटि में आने वाले साहित्यकार थे। उनके साहित्य का अनुशीलन तपोवन में भ्रमण करने के समान है। ज्ञान की आराधना उनके जीवन का व्रत थी। उनके साहित्यिक कृतियों में संस्कृति अपने सम्पूर्ण जीवन-रस और रूप-गंध के साथ की व्यक्त हुई है। जेठ डबंगरा के पड़ते ही जैसे अग्निस्नात धरती से सोंधी सुगन्ध उठने लगती है, वैसे ही उनकी कृतियों में उनके व्यक्तित्व की प्राणवती धारा से सिक्त भारतीय संस्कृति, कला-सौन्दर्य की चारुता लेकर उनकी शैली से महकने लगती है। उनकी प्रबुद्ध मनीषा का परिचय हमें उनकी शोधपरक रचनाएँ देती हैं, लेकिन उनके लोकहृदय का परिचय उनके छोटे-छोटे पत्र देते हैं। अपने अन्तिम दिनों में उन्होंने ऐसे दो पत्र लिखे, जो ऐतिहासिक महत्व के हैं। इनमें उनकी साहित्य-साधना का विकास सुरक्षित है।

किसी साहित्यकार के छोटे-छोटे पत्रों का क्या महत्व है, इस पर उन्होंने स्वयं एक पत्र में लिखा है—'मुझे तो डाक का रोग है। पत्रों से रस चूसता हूँ। मेरी समझ में किसी व्यक्ति की भारी-भरकम साहित्यिक कृति आँधी के समान है, उसके साहित्यिक पत्र उन झोकों के समान हैं, जो धीरे से आते जाते

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहते हैं और वायु की थोड़ी मात्रा साथ लाने पर भी साँस बनकर जीवन देते हैं। अन्न की उत्पत्ति और मेघों की वृष्टि के लिए अन्धड़ भी चाहिए, पर मन्द वायु में जो फरहरी है, उसका भी कुछ अनूठा आनन्द है।"
('श्रावणी' सन् १९५९ ई० में पं० बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे एक पत्र से)

साहित्यकारों से पत्र लिखवाने और उन्हें सुरक्षित रखने में जो कार्य पं० बनारसीदास चतुर्वेदी ने किया है, वह प्राणवायु बनकर हिन्दी-साहित्य की इस विधा को सदा जीवन देता रहेगा। स्व० अग्रवाल जी के भी पत्र 'सम्मेलन-पत्रिका' भाग ५२, संख्या ३, ४ में इनके ही सौजन्य से प्रकाशित हुए हैं। इनकी प्रस्तावना में चतुर्वेदी जी लिखते हैं—

"इसमें कोई सन्देह नहीं कि स्वर्गीय वासुदेवशरण अग्रवाल पत्र-लेखकों में अग्रगण्य थे। जो विषय उनके सामने होता, उस पर वे पूर्ण तन्मयता से विचार करते और जो कुछ उनकी समझ में आता उसे वे पूर्ण ईमानदारी के साथ लिख देते थे। उनका प्रत्येक पत्र उस उच्च मानसिक धरातल से लिखा हुआ होता था, जहाँ किसी प्रकार की क्षुद्रता या मनोमालिन्य पहुँच ही नहीं सकता था।...... ....जिस दिन स्पष्ट अक्षरों में लिखा हुआ उनका विस्तृत पत्र आता था, उस दिन मानों सात्विक, मानसिक भोजन का भोज ही हो जाता था और मैं अपने साथियों के साथ सहर्ष उस पत्र का उपभोग करता था।"

'सम्मेलन-पत्रिका' में अग्रवाल जी के ३२ लम्बे पत्र ५० पृष्ठों में निकले हैं। ये पत्रलेखन-कला के उत्कृष्ट नमूने हैं। उनके अध्ययन की सुवास उनके तप का तेज, उनकी साधना की दीप्ति, उनके व्यक्तित्व की ऋजुता, सत्यप्रियता इन पत्रों में खूब झलक रही है। शैली, शब्द-शिल्प के तो ये साँचे में ही ढले हुए हैं। अमराई से आते शीतल मन्द समीर के समान ये हमारी मानसिक क्लान्ति को दूर करते हैं, हृदय को सुख पहुँचाते हैं और उनके कोमल मधुर व्यक्तित्व की दीप्ति से तेजस्वी होकर हमें साधना की ओर प्रेरित करते हैं। ऐसी आँख या हमारी आँखों में ऐसा अंजन लगा देते हैं, जिससे हम सच्चे पृथ्वीपुत्र के गर्व से भर जाते हैं और अपने आस-पास की भूमि, जन और विचार-सम्पदा की अधिष्ठात्री देवी महीमाता के चिन्मय रूप की ओर आकृष्ट हो जाते हैं और उसके चरणों में अपनी तपःपूत साहित्य-साधना का जल उड़ेलने लगते हैं। भगवान वेदव्यास ने लिखा है कि मैं यह रहस्य की बात बताता हूँ कि मनुष्य ही सबसे श्रेष्ठ है। इससे बढ़कर और कुछ नहीं है। रवि बाबू ने अपने साहित्य का विषय इसी सामान्य मनुष्य के सुख-दुःख, हास-अश्रु,

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरह-मिलन, सम्पद्-विपद् से बुने हुए जीवन-पट को बनाया था और यही लक्ष्य रखकर वासुदेवशरण अग्रवाल जी भी चले थे। उनका समस्त साहित्य मानव-केन्द्रिक है। इसलिए वे शब्दों के पीछे, अर्थ की परम्पराओं के पीछे, संस्कृति और साहित्य के पीछे लोक-जीवन को महत्व देते हैं। उनकी समस्त साहित्य-साधना इसी सामान्य जन को उसका प्रतिष्ठित पद दिलाने के लिए है। एक पत्र में वे लिखते हैं—

"मानव को अपने पूज्य आसन पर प्रतिष्ठित करने के लिए ही हमारे प्रयत्न हैं। मैं तो इस विषय में वेदव्यास के मानव केन्द्रिक दर्शन का अक्षरशः भक्त हूँ। व्यास ने लिखा है— गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि। नहि मानुषात् श्रेष्ठ-तरं हि किञ्चित्। (शान्तिपर्व १८०।१२)। व्यास का यह मानव केन्द्रिक मत हमारे अर्वाचीन ज्ञान-विज्ञान की खोज-पद्धति और सामाजिक अध्ययन में सर्वत्र फैलता जा रहा है। मनुष्य को ऊँचा उठाकर ही हमारी क्रियाएँ और साधनाएँ ऊँची उठेंगी। मनुष्य यदि हमसे आदर न पा सका, तो हमारे उस सम्मान-भाव का पात्र विश्व में और कौन निकलेगा ?" (पृ० ६१)

इधर कुछ ऐसी हवा चली है कि साहित्य का जीवन से सम्बन्ध टूटता-सा जा रहा है। साहित्य जीवन-रस से प्राण खींचकर ही लहलहाता है और साहित्य में जब जीवन की हरीतिमा बसी होती है, तभी जीवन उससे प्रेरणा ग्रहण कर अपना शृङ्गार करता है— उसे अपने मानस में स्थान देता है। जीवन से कटकर साहित्य लोकमानस से कितनी दूर जा पड़ता है, इसका प्रमाण आज का नवलेखन है। इस तरह का संक्रमण-काल हर भाषा के साहित्य में आता है। प्रबुद्ध मनीषी इस खतरे (केआस) का अन्दाज कर साहित्य-भागीरथी को अपने साधना-रथ के पीछे-पीछे लाकर उसे लोक-जीवन के खुले मैदान में छोड़ देता है, अज्ञेय के 'आँगन के पार द्वार' और 'कितनी नावों कितनी बार' में लोकभाषा के शब्दों का प्रयोग तथा नीरज का यह लिखना कि 'माँ मत हो नाराज न मैंने खुद ही मैली कीन्ह चदरिया' इस प्रयत्न की एक कड़ी है। स्व० अग्रवाल जी ने जीवन भर साहित्य की लोक-जीवनपरक व्याख्या की है, हमारी भाषा देवभाषा के शब्दों में लोकमानस का जो संस्कृति-जल तरंगित हो रहा है, उसे विभिन्न प्रणालियों से हिन्दी-भाषा में उतारने की महती साधना, उनके जीवन का निचोड़ है। अपने एक पत्र में वे लिखते हैं—

"गुप्तयुग की अतिशय नागरिक संस्कृति के बाद जब साहित्य में गति अवरुद्ध हुई, तब नये उत्साह से लोग गाँवों की ओर मुड़े और वहाँ से अपभ्रंश

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य और भाषा का नया स्रोत प्राप्त किया, जिससे हमारी हिन्दी-भाषा का जन्म हुआ है। कुछ वैसी ही बात इस समय है। हम लोग भूमि से इतने उखड़ गये हैं कि साँस लेने के लिए छटपटाने लगे हैं। प्रगति का द्वार अवरुद्ध होने से कल्पना की काया क्षीण होने लगी। भाषा की शैली में, कविता में, निबन्ध में सर्वत्र दरिद्रता ने घर कर लिया। हमें अब सामूहिक चिन्ता है कि किस प्रकार हमारी साहित्य-श्री हमें फिर प्राप्त हो। इस प्रयोजन के लिए हमारे पास वहाँ से निमन्त्रण आया है, जहाँ भूमि का मीठा दूध प्रतिवर्ष सूर्य की किरणों से दही जमकर जौ गेहूँ के अरबों दानों से हमारे कोठारों को लक्ष्मी से भर देता है। इसी क्षीरसागर में हमारा साहित्यिक विष्णु सोया हुआ है।"

इस पत्र में अग्रवाल जी की ललित शैली की छटा दर्शनीय है। साथ में लोकजीवन के प्रति उनका हृदय कैसे राग से लिपटा हुआ है। लोक-जीवन, लोकभाषा और लोक-संस्कृति के इसी अनुराग ने वासुदेवशरणजी से 'पृथ्वीपुत्र' और 'कल्पवृक्ष' पुस्तकें लिखवाई हैं। इसी अनुराग के कारण वे देवभाषा के बीच-बीच में लोकभाषा के शब्दों का प्रयोग कर ठेठ हिन्दी का ठाट बाँधते दिखाई देते हैं। कभी गँवई-गाँव के वृद्ध कथाकोविद से लोककथाओं कहावतों का मर्म पूछते हैं, कभी किसी उद्योग-धन्धे से सम्बद्ध लोकभाषा के पारिभाषिक शब्दों का संग्रह करते हैं और कभी बोलचाल के शब्दों की परम्परा का सीधा सन्धान वैदिक भाषा से करते दिखाई देते हैं। लोकभाषा के शब्दों का चयन और प्रयोग वे कैसे करते थे, इसे उनके ही शब्दों में देखिए—

"जिस मनचीते ढङ्ग से जनपदीय शब्द मनोभावों को कह सकते हैं, यह बात संस्कृत की लठिया टेककर चलने वाली हमारी इस बोझिल पद्धति में कहाँ आ सकती है? देहात की यात्रा भाषाविज्ञानी के लिए तीर्थयात्रा की तरह फलदायिनी होती है। नये-नये शब्दों की बालें मानवी कण्ठरूप धान—जड़हनों से निगर-निगरकर चारों ओर अपने झम्पा-झूलने से मन बहलाती हुई दिखाई पड़ेंगी। कनकजीर की तरह के उन दानों में जिन्हें भाषा का दूध जमा हुआ दिखाई पड़े, वे एक-एक शब्द को पाकर धन्य हो जाँयगे और बटोर कर थैली में भरने लगेंगे। कभी-कभी एक घण्टे की जनपद-यात्रा या साहित्यिक तीर्थयात्रा से इतना फल मिला कि महीनों के लिए मन आनन्द से भर गया, वहाँ नये शब्दों की नई शक्ति का परिचय मिलता है। एक बार सुना—

'भुइयां लोट चले पुरवाई। तब जानो बरखा ऋतु आई॥'

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जेठ के दूसरे पखवारे से जब पुरवइया भुइयाँ-लोट, धरती में लोटती हुई, धूल उड़ाती हुई, बिरवा-रूखों को झकझोरती हुई चलती है, तब मानों बरसात आने की सूचना मिलती है। इसमें भुइयां-लोट की काव्यमयी ध्वनि से मन विह्वल हो जाता है। एक-एक बात के लिए बोलियों में कैसे-कैसे ढले हुए वाक्य और टकटक-टकटक करते हुए शब्द हमारे-आपके परिचय की बाट जोह रहे हैं।" (पृ० ४६)

लोक-जीवच का प्रेम उनके प्राणों में बस चुका था। उनका श्वास-प्रश्वास अहर्निश ज्ञान की साधना में व्यतीत होता था। जो हृदय कादम्बरी के अलंकृत वर्णनों से कला और सौन्दर्य का चयन कर उल्लसित हो जाता था, वही हृदय आसपास की वन्य और ग्राम्य प्रकृति को फूला-फला देख खुशी से नाच उठता था। वसन्त में मानों महीमाता शृंगार करती है। उसके यौवन का लावण्य अपनी समस्त सुषमा से खिल उठता है। प्रकृति के ऐसे सौन्दर्य-दर्शन से रसमय होते ही अग्रवाल जी की लेखनी थिरक उठती थी। एक पत्र में वे चतुर्वेदी जी को लिखते हैं—

"यमुना की वेगवती धारा सामने बह रही है। उसकी कल-कल ध्वनि बरवस अपनी ओर ध्यान खींचती है। प्रकृति का कैसा सुन्दर क्रीड़ास्थल इस उपत्यका की गोद में है। अपने पितृगृह में यह यमुना कितनी छबिधारिणी है। गोलमटोल गंगलोढ़ों के साथ कल्लोल करती हुई, इसकी जलधारा कितनी निर्मल है। इसके उत्संग में भरी हुई धूप कितनी मनोरम है। इसके पेक्षागृह में मन को सुख देने वाला कितना सौन्दर्य है।"

उनका प्रकृति-प्रेम एक और पत्र में भी व्यक्त हुआ है—"इस समय प्रकृति की शोभा वर्णनातीत है। पट-मण्डपों से बना हुआ जो हमारा छोटा-सा आवास था, उसके चारों ओर मधुलक्ष्मी ने अपना सौन्दर्य बिखेर दिया था। आम्रमंजरी, वट-किसलय, सहँजन के सहस्रात्मक पुष्पगुच्छक, श्रीवृक्षों की फल-सम्पत्ति. शाल्मली के लाल-लाल फूलों के मधुकोष, कर्णिकार के पुष्पों की आभा, इन सबसे परिचय पाकर आत्मा गद्गद् हुई। मैंने भगवान् को धन्यवाद दिया कि हमारे वनों पर अभी तक वसन्त की अधिष्ठात्री देवी पद्मश्री का पहले जैसा वरद हस्त विद्यमान है। हम सो गये, पर वनश्री जागती रही।"

उनके पत्रों के ये उद्धरण उनके प्रकृति-प्रेम को तो स्पष्ट करते ही हैं, उनकी ललित शैली का भी परिचय देते हैं। लेकिन इन उद्धरणों का हेतु कोरा कल्पना-विलास ही नहीं है इनके पीछे निश्चित उद्देश्य है। सौन्दर्य अपनी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समस्त शक्ति के साथ हमारे अन्तःकरण को अपनी ओर खींचता है। सौन्दर्य की ज्योत्स्ना के स्पर्श मात्र से हमारा हृदय द्रवित होने लगता है और सौन्दर्य के पीछे निहित शाश्वत शिवं में ढलने लगता है। अग्रवाल जी ने प्रकृति के राशि-राशि सौन्दर्य का जो दर्शन किया, वह हमें कला और संस्कृति की उपासना के लिए प्रेरित करता है जिससे हमारे हृदय की सुन्दर आँख खुल जाती है और लोक-जीवन, लोकभाषा और आसपास की ग्राम्य-प्रकृति में बसे सौन्दर्य को हम देखने लगते हैं। प्रकृति का साहचर्य जीते-जागते आत्मचैतन्य का साक्षात्कार है। आजकल नागरिक जीवन के कृत्रिम आवरण हमारे अन्तः-करण को ऐसा ढकते जा रहे हैं कि खुली हवा के स्थान 'पंखे की हवा' और प्रभात की गोद से फूटती उषा के स्थान 'मरकरी बल्ब' की लाइट हमें अधिक भाने लगी है। शहरी जीवन की कृत्रिमता में ऊबकर प्रसिद्ध विचारक 'थोरो' ने तो वाल्डन सरोवर के किनारे प्रकृति की गोद में अपना आवास बनाया था। जन-सम्पर्क से दूर आत्मचिन्तन करते हुए उसके मन में विचारों की ऐसी लहरों ने जन्म लिया, जिससे उसके प्रसिद्ध ग्रन्थ वाल्डन सरोवर का शृङ्गार हुआ है। जीवन में आस्था जगाने के लिए यह ग्रन्थ गीता का काम करता है। अग्रवाल जी भी प्रकृति में जीवन की ओर लौटने का सन्देश पाते थे। उनकी इच्छा थी कि प्रत्येक साहित्यकार प्रकृति के इस सन्देश को सुने। वे एक स्थान पर लिखते हैं —

"वनलक्ष्मी की रमणीयता को जब हम पहचानने लग जाँयगे, तभी हमारे नेत्रों में लोक के निरीक्षण की पैनी दृष्टि फिर से उत्पन्न होगी। बासे के सुन्दर श्वेत पुष्प के पात्र में जो एक मधुबिन्दु संचित हैं, उसका सन्देश क्या मधुमक्षिका के अतिरिक्त मानव के लिए नहीं है? सेमल की ओर से रंग-विरंगे प्रसन्न पक्षियों को जो मधुपान का निमन्त्रण मिल रहा है, उसमें अपना भागधेय जिस दिन हम पहचानने लगेंगे, उसी दिन हम अपनी भूमि के प्रति नये संबंध से आकृष्ट होंगे। पलाश के लाल फूलों में, स्वर्णक्षीरी के पीताभ प्रसूनों में, गेहूँ के पौधों की घरिया में बैठने वाले मक्खन-फूलों में कितना काव्य है, इसकी पहचान करने के लिए हमें स्कूल और कालेजों को एक सप्ताह के लिए बन्द करके, दलबल समेत वन-प्रकृति का सान्निध्य प्राप्त करना चाहिए।"

उनके पत्रों के अनुशीलन से पता लगता है कि वे अहर्निश शब्द-चिन्तन में ही अपना जीवन व्यतीत करते थे। प्रकृति का दर्शन, खेतों की सैर उनके लिए जीवित साहित्य या सशरीर अष्टाध्यायी की सैर थी। उन्होंने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निरन्तर अध्ययन और चिन्तन से अपने मन को उस तार से जोड़ लिया था, जिसके झंकृत होते ही नवीन-नवीन विचारों की लहरियाँ स्पन्दित होने लगती हैं। उनके मन में कितने विषय भरे पड़े थे, इस सम्बन्ध में वे एक पत्र में लिखते हैं—

"यहाँ पर मैं कह दूँ कि मेरा मन कुछ ऐसा है कि उसे बहुत-से विषयों में रुचि होती गई। जैसे किसी घर में बहुत से द्वार खिड़कियाँ हों, ऐसा ही कुछ मेरा मन है। उसमें पचासों विषय भरे हुए हैं। वह मेरा अक्षय भण्डार है।" (९-६-६६ के पत्र से)

उनका साहित्यिक कार्य करने का उत्साह कभी क्षीण नहीं हुआ। आज के नये लेखकों की तरह वे कभी चुके नहीं। बात यह है कि साहित्य अमृत है, जो उसके अमृत-घट को प्राप्त कर सके। काव्यमोहिनी के हाथ में दोनों घट हैं, अमृत का भी और वारुणी का भी। जिसके जैसे संस्कार हों, रुचि हो, उसके हाथ में विधाता वहीं घट थमा देता है। अग्रवाल जी अमृतपुत्र थे। इसलिए, अमृत-साधना के कारण उनके मन का उत्साह, उनकी कर्म-प्रबलता सदा ताजी रही।

आज के नये लेखकों को विषय ही नहीं सूझते हैं। उन्हें ऐसा लगता है, जैसे सब साहित्यिक विषय चुक गये हों। ऐसे लेखकों को उत्साहित करते हुए अग्रवाल जी एक पत्र में लिखते हैं—

"मूसलाधार रूप में सामग्री बरस रही है, साहित्यिक रस, शब्द, भाषा, ध्वनि किसी का भी पारावार नहीं है। एक-एक जनपद कार्यकर्त्ताओं के लिए एक-एक प्रजातन्त्र का रूप रखता है, जिसका नागरिक बनकर हिन्दी का कर्मठ साहित्यिक अपने विशाल उद्योग से उस जनराज्य का सभापति बन सकता है।"

एक दूसरे पत्र में लिखते हैं—"जो जहाँ है, वह किसी न किसी जनपद में बैठा होगा। अपने चारों ओर की भूमि की पहचान वह वहीं से प्रारम्भ कर सकता है। पृथ्वीपुत्र बनने के लिए हृदय के तार को भूमि से मिलाने की आवश्यकता है। दूध पीने लगना ही बच्चे का माता से पहला परिचय है।"

लिखना इतना सरल तो नहीं है कि कलम पकड़ी और लिखने लगे। सच्चे लेखन के लिए अभ्यास, परिश्रम, चिन्तन और अनवरत अध्ययन की आवश्यकता होती है। इन्हीं की भित्ति पर लेखन का सौध निर्मित होता है। इसके अतिरिक्त अग्रवाल जी किसी श्रेष्ठ मस्तिष्क की टकराहट और आवश्यक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानते हैं। वे लिखते हैं—'हर एक लेखक को स्वय साधना करने की जरूरत है, चाहे वह गाँव में हो, चाहे शहर में। आप अपने प्रति सच्चे हैं, तो अपनी रुचि के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए कुछ परिश्रम कीजिए। श्रमशील लेखक ही कुछ प्राप्त कर सकता है। एक दिन में किसी को सिद्धि नहीं मिलती, अतएव निरन्तर माँजने से ही ज्ञान की मणि चमक सकती है।''

"जिस मानसिक स्थिति में गाँव का या शहर का भी, कोई लेखक हो, उसमें उन्नति करने के लिए किसी ऊँचे मस्तिष्क के साथ टक्कर की आवश्यकता है, मैं मानता हूँ। जब दो मस्तिष्क टकराते हैं, तब उनसे स्फूर्ति और चिनगारी पैदा होती है।'' इसीलिए मम्मट ने 'काव्यज्ञशिक्षयाभ्यास' और भामह ने 'कृत्वा तद्विदुपासनम्' लिखा है। जो सो रहा है, उसका भाग भी सोता रहता है, जो जग जाता है, उसके साथ उसका भाग भी जग पड़ता है और जो चल पड़ता है, उसका भाग भी सौभाग्य में बदल जाता है। इसलिए, उठकर, जाग्रत् होकर जिसने 'श्रेष्ठ' पुरुषों की संगति का लाभ नहीं उठाया, उसमें श्रेष्ठ विचार सम्पदा कैसे पनप सकती है।

मोटे रूप से उन्होंने निखिल वाङ्मय के तीन विभाग किये हैं। प्रत्येक लेखक इन्हें ध्यान में रखकर अपने लिए विषय और कार्य का निर्धारण कर सकता है—१. पृथिवी और उसका भौतिक रूप; २. पृथिवी पर बसने वाला जन-समुदाय और ३. उस जन का मानसिक चिन्तन अथवा ज्ञान-दृष्टि।

''साहित्य रूपी विष्णु के इन्हीं तीन चरणों में समस्त वाङ्मय का विस्तार समाया हुआ है। प्राचीन परिभाषा में कहें, तो पृथिवी के भौतिक रूप के अध्ययन को देवऋण; पृथिवी पर बसने वाले जन के अध्ययन को पितृऋण और जन की ज्ञान-साधना के अध्ययन को ऋषि-ऋण कह सकते हैं। इन तीन ऋणों का उद्धार ही साहित्यिक का उद्देश्य होना चाहिए।''

हिन्दी-पत्रकारिता स्वतन्त्रता-आन्दोलन की गोद में पली है लेकिन इसके विकास के लिए जैसी भूमि, जैसा जल और प्रकाश मिलना चाहिए था, वैसा बहुत कम मात्रा में उपलब्ध हुआ है। पत्रकारिता भी साहित्य का ही अङ्ग है। साहित्य की अन्य रचनात्मक विधाओं की अपेक्षा यह लोक-जीवन और लोक-संग्रह के अधिक निकट है। साहित्य-साधना एकान्त में भी बैठकर हो सकती है, लेकिन पत्रकार को जन-मानस की धड़कनों को सदा पढ़ना पड़ता है। वासुदेवशरण जी इसी लोक हृदय के पत्रकार थे। पत्रकारिता के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आदर्श को उन्होंने व्यवसायी पत्रकारों से भी अच्छी तरह स्वायत्त किया था। अपने एक पत्र में लिखते हैं —

"पत्रकार-कला—यह तो मेरा ही स्वप्न है। ईश्वर ने मुझे पत्रकार ही बनाकर भेजा था। द्विवेदी जी की 'सरस्वती' जब मैं देखता, तो कहता कि इस तरह की कितनी पत्रिकाएँ सम्पादित कर सकता हूँ। मेरा उत्साह किसी समय असीम था।"

'हिन्दी पत्रकार-कला तो भारत के भावी पत्रकारों की नींव या प्रतिष्ठा हो सकती है, अगर ढंग से इस कला का संचालन किया जाय। भारत-भूमि को देखने, जानने और समझने की जो शुद्ध भारतीय पद्धति है, इस समय उसकी आवश्यकता है। प्राचीन साहित्य में से कितना राष्ट्र के नवप्राण में पुनः ढाला जा सकता है, इसकी कुंजी हिन्दी-पत्रकार के हाथ में ही है। हिन्दू-संस्कृति से भारत के भावी निर्माण में कितनी अधिक सहायता मिल सकती है, इसको पहचानकर लेखनी उठाने वाले पत्रकार जिस उत्साह से कार्य करेंगे, वह बहुत ही श्लाघनीय होगा। तब वे अपने आसन से मिशनरी बनकर कार्य करने वाले होंगे।"

आगे पत्रकार का कर्तव्य-निर्धारण करते हुए वे लिखते हैं—"मनु का 'स्वं स्वं चरित्र शिक्षेरन्, पृथिव्यां सर्वमानवाः' वाक्य हिन्दी-पत्रकार के लिए अक्षरशः सत्य है, अर्थात् भारतीय भाषाओं के अन्य पत्रकार हिन्दी के अग्रजन्मा अग्रेतर सम्पादकों से अपने लिए शैली, आदर्श चरित्र (Code of conduct) की शिक्षा ग्रहण करें। इसके लिए संपादकों को साधना और तप की आवश्यकता है। राष्ट्र का जन्म तप से ही होता है।

"ऋषियों ने कल्याण की कामना के पहले तप और दीक्षा की उपासना की। तब राष्ट्र और बल का जन्म हुआ। तब देवों ने उस राष्ट्र को प्रणाम किया। यह तप किस प्रकार किया जा सकता है? यह तप ज्ञानमय होगा।

"ज्ञानमय तप ही हिन्दी-पत्रकार या सम्पादक के लिए है। अध्ययन, निरन्तर अध्ययन— अपनी बुद्धि के उत्कर्ष से प्राचीन संस्कृति का अनुशीलन और फिर अर्वाचीन जगत् के लिए उसका प्रकाशन और प्रकटीकरण यही ज्ञानमय तप हिन्दी पत्रकार के लिए है। राष्ट्र क्या है? धर्म क्या है? राष्ट्र और धर्म का सम्बन्ध क्या है? राष्ट्र में बसने वाले जन का स्वरूप क्या है? मातृभूमि का स्वरूप, उसके भूगोल का परिचय, उसके साथ जन की घनिष्ठ एकता 'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' का अर्थ—इस प्रकार के अनेक विषयों पर हिन्दी-पत्रकार का ज्ञान होना चाहिए।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पत्र में अग्रवाल जी ने पत्रकारों के लिए इतना विषय-निर्देश और सामग्री सुझा दी है कि उसके प्रकाश में पत्रकार-कला का खूब विकास किया जा सकता है। पत्रकार जनता के मुख हैं: वे लोक-हृदय की वाणी हैं। उनकी वाणी में तेज नहीं होगा, तो प्रखर सत्य को कौन प्रकट करेगा ?

अग्रवाल जी के इन पत्रों में उनकी विचारगर्भ सूक्तियाँ खूब मिलती हैं। वे मणि की तरह चमक रही हैं, जैसे विचार के शिखर से टकराकर अनुभूति की कणिकाएँ बिखर गई हैं। अग्रवाल जी विचारक तो थे ही। साहित्य और जीवन के प्रति उनकी अपनी एक दृष्टि थी। उसी से उन्होंने जीवन-जगत् को देखा है। इन सूक्तियों से उनके पत्रों में नई आभा आ गई है और वे स्थायी साहित्य की वस्तु बन गये हैं। कुछ उद्धरण मनन और संग्रह के लिए उपयुक्त हैं—

"बाहर से एक साथ यदि कुबेर का कोष आकर फट पड़े, तो अकिंचन क्या उस धक्के को सँभाल सकता है ? वह तो उसके भार से लड़खड़ा जायगा। अन्तःसार वाला व्यक्ति ही बाहर के सार को पचा सकता है।"

"हम बाहर से भोजन की सामग्री ला सकते है, पर, भूख हमारी होगी।"

"ब्रह्म या ज्ञान हमारे निजी व्यक्तित्त्व से कहीं अधिक महान् है। ज्ञान हमारा आचार्य है, हम सब शिष्य हैं। हम जियें, पर ज्ञान अमर हो। इसी में कल्याण है।"

"ऐक्य का भाव तो मातृभूमि के प्रेम में है। जो भूमि को माता कहें, वे सब उसके पुत्र हैं।"

"वस्तुतः तप और संयम भीतर से पनपने वाली वस्तुएँ हैं। वेदों में भूमि को 'महीमाता' कहा गया है। वह सब भूतों की धात्री है, पशु-पक्षी, वृक्ष-वनस्पति सब उससे जन्म पाकर फलते-फूलते हैं। वही 'सर्वलोकनमस्कृता' मातृभूमि साहित्य की जननी है।"

"बहुविध अभिराम पुष्पों की रमणीयता को पहचानने की आँख और उनके मधुमय अंश को संगृहीत करने की शक्ति, ये ही तो पत्रकार की सफलता की कुंजी हैं।"

गाँव के जीवन से, लोकभाषा के शब्दों से अग्रवाल जी का इतना प्रगाढ़ परिचय हो गया था कि सहज रूप में वे ग्राम्य जीवन का चित्र-सा खड़ा कर देते थे। सरल और छोटे-छोटे वाक्यों में लोकभाषा के शब्दों को वे ऐसे

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जड़ देते कि मोतियों की भाँति चमकने लगते। ऐसे हजारों शब्दों से वे अपने मस्तिष्क को भरते रहते थे। हर साहित्यकार को धूल में पड़े कंचन की तरह लोकभाषा के शब्दों को बटोरना चाहिए। एक पत्र में वे लिखते हैं—"काली-आँखों वाले, देखने में सुन्दर, काम में चोखे, स्वभाव में धीर किसानों के बैल जो उसके प्राणों के साथी और सुख-दुःख के सखा हैं, हमारा स्वागत मड़ैयों के पास पहुँचने पर जिस प्रकार करते हैं, उसी प्रकार जनपद की बोलियों के मैदानों में किलोल करने वाले शब्द और प्रत्यय-रूपी कलोर बछड़े हमको अपनी ओर खींचते हुए मिलेंगे।"

"साहित्यकार के पत्र उसके व्यक्तित्व के सच्चे दर्पण होते हैं। किसी के जीवनचरित्र के वे प्रामाणिक आधार होते हैं। अग्रवाल जी के भी पत्रों में उनकी जीवनी-विषयक तथ्य मिलते हैं। वे जीवन भर प्रसिद्धि और आत्म-विज्ञापन से दूर रहे, लेकिन अपनी मृत्यु के कुछ मास पूर्व उन्होंने पं० बनारसी-दास चतुर्वेदी को ऐसे दो पत्र लिखे, जिनमें उन्होंने दिल खोलकर अपने व्यक्ति-गत जीवन की चर्चा की है। उनका जन्म कहाँ हुआ, प्रारम्भिक परिस्थितियाँ कैसी थीं, स्वाध्याय और ज्ञान-साधना का संस्कार कैसे पड़ा और विभिन्न विषयों में रुचि कैसे होती गई। उन्हीं के पत्रों के कुछ अंशों के आधार पर उनके व्यक्तिगत जीवन का विकास इस प्रकार हुआ है—

"मेरा जन्म १९०४ में मेरठ जिले के खेड़ा नामक गाँव में हुआ। मेरे पितामह ठेठ गाँव के व्यक्ति थे। उनकी शिक्षा लगभग नहीं के बराबर थी। पर वे अत्यन्त प्रखर बुद्धि के पुरुष थे। सत्य और न्याय में उनकी बड़ी निष्ठा थी। मुझे प्राचीन भारतीय आर्यजनों की हजारों पीढ़ियों के दर्शन उनके चलते-फिरते व्यक्तित्व में दिखाई पड़ते थे। उनके चरित्र-सम्बन्धी गुणों का मुझ पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा।

"मेरी शिक्षा का आरम्भ देहाती मदरसे से हुआ। अपने पितामह की कुशाग्र बुद्धि और उत्तम स्मृति मुझे विरासत में मिली। हमारे देश में जितनी शिक्षा कोई पा सकता है, वह सब पिताजी ने मेरे लिए सुलभ कर दी। हाई स्कूल, इण्टर, बी० ए०, एम० ए०, पी-एच० डी०, डी० लिट्० तक की सीढ़ियाँ मैंने पार कर लीं।

"लगभग सन् १५ से मेरी रुचि संस्कृत-विद्या की ओर हुई। संस्कृत पढ़ते हुए मैं बहुत दूर निकल गया। मेरा परिचय पाणिनि के महान् ग्रन्थ अष्टाध्यायी से हो गया।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबको पता है कि अग्रवाल जी ने पाणिनि के चार हजार सूत्रों के आधार पर तत्कालीन जनपदीय जीवन का ऐसा सूक्ष्म और जीता-जागता वर्णन किया है कि हिन्दी में सांस्कृतिक अध्ययन की एक नई परिपाटी ही प्रारम्भ हो गई।

साहित्य का जीवन से सम्बन्ध जुड़ सके; संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश से रिसती हुई शब्दों की जो परम्परा 'बोलियों' में सुरक्षित है, उसकी खोज हो सके; जनपदों में कितनी साहित्यिक सामग्री बिखरी पड़ी है, उसे सँजोने की दृष्टि आज के साहित्यकार को मिल सके, इन दृष्टियों से स्वर्गीय अग्रवाल जी के पत्रों पर कुछ विचार मैंने किया है। इन पत्रों में अपूर्व प्रेरणा-शक्ति भरी हुई है। ये रसपूर्वक धीरे-धीरे चखने की चीज हैं। सच्ची साहित्य सेवा कैसे हो सकती है, हमारा पढ़ा हुआ तेजस्वी बनकर राष्ट्रजीवन को कैसे प्राण दे सकता है, इस सम्बन्ध में अग्रवाल जी का ही एक पत्र देकर मैं यह लेख समाप्त करता हूँ।

"अनेक पहाड़ी रौ, झरनों, कूलों, गाड़ और गधेरों के प्रफुल्लित वरदान से महानदी प्रवृत्त होती है। इसी प्रकार छोटे-बड़े अगणित विद्वानों के विचार-जल से पूरित लेखों और भाषणों के तटों से मर्यादित, तपस्वी साधकों की क्रियाशील साधना के तीर्थों से प्लावित, लोकमंगल की भावना से तरंगित, जनपद-कल्याण की महाधारा हमारे साहित्य के महाप्रदेशों में उमड़कर बहेगी, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है। सर्वलोकनमस्कृता भगवती गंगा के प्रवाह को भगीरथ जिस प्रकार भूतल पर ले आये थे, उसी प्रकार उस जनपद कल्याणी गंगा को सर्वसुलभ करने के लिए मनोयोगपूर्वक किये गये अनेक अनुष्ठानों की आवश्यकता होगी।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म-तिथि—श्रावण कृष्णा दशमी (१ अगस्त);
निर्वाण-तिथि– २७ जुलाई, जो अब साहित्यक शरीर से ही जीवित हैं

निबन्धकार
स्व० डा० वासुदेवशरण अग्रवाल
की भाषा-शैली

—डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' एम० ए०, डी० लिट्०

भाषा और शैली ही साहित्यकार का वास्तविक स्वरूप है। यही वह सारस्वत चित्र है जिसमें से सरस्वती के साधक की छवि अपने कृतित्व की झाँकी दिखाया करती है। विचार या भाव साहित्य-देवता की आत्मा है और भाषा-शैली उसका शरीर।

साहित्य रूपी कल्पवृक्ष की प्रमुख शाखाएँ वास्तव में तीन ही हैं—(१) कविता, (२) कहानी, (३) निवन्ध। निवन्ध जव विस्तार के पथ पर अग्रसर होता हुआ आवश्यकतानुसार रूप वदलता है, तब उसी में से आलोचना और प्रबन्ध के स्वरूप का आविर्भाव हो जाता है। शुद्ध निबन्ध में वैयक्तिकता अधिक रहती है। निवन्ध वस्तुतः गद्य साहित्य की विषयि-प्रधान रचना है, किन्तु प्रबन्ध विषय-प्रधान रचना है। अनुसन्धान एक प्रकार से प्रबन्ध ही है। अनुसन्धान को हम वैज्ञानिक प्रबन्ध कहें तो अधिक समीचीन होगा। किन्तु आलोचना वह निवन्ध है जिसकी सृष्टि भावुक एवं भावक साहित्यकार की लेखनी से होती है। कवि शुद्ध भावुक होता है। वह जगत् का दर्शन करके फिर भाव एवं कल्पना के बल पर उस दर्शन का कविता के माध्यम से प्रदर्शन करता है। आलोचक की भावुकता कवि के उस प्रदर्शन का अनुदर्शन करती है; तदुपरांत आलोचक की विवेकशीला भावकता कवि के दर्शन और प्रदर्शन के सम्बन्धात्मक औचित्य एवं अनौचित्य का मर्मोद्घाटन करती है।

आत्मपरक रूप में किसी कृति का विवेचन-विश्लेषण 'आलोचना' है; किन्तु वस्तुपरक रूप में सामग्री-संकलन, विवेचन-विश्लेषण तथा निष्कर्षात्मक उपलब्धि 'अनुसन्धान' है। आत्मपरकता और भावुकता आलोचक को कवि जैसा मूल स्रष्टा तो नहीं, हाँ अभिस्रष्टा अवश्य बना देती है। अतएव यह कहा जा सकता है कि एक आलोचक में तो कवि निवास करता है, किन्तु कवि में आलोचक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निवास नहीं करता। दूसरे शब्दों में हम यों भी कह सकते हैं कि निबन्धकार भावुक अवश्य होते हैं। हाँ, प्रबन्धकार अथवा अनुसंधाता केवल भावक होते हैं। इसीलिए डा० वासुदेवशरण अग्रवाल अपने शोध-ग्रन्थों में हमें केवल भावक और अपने निबन्धों में भावुक के साथ-साथ भावक भी दृष्टिगत होते हैं।

साहित्यकार की भाषा-शैली के निर्माण में उसकी जन्मभूमि, उसके जीवन-संस्कार और उसका अध्ययन बहुत कुछ योगदान करता है। अग्रवाल जी का जन्म तहसील गाजियाबाद के एक छोटे से गाँव में हुआ था। ग्रामीण जीवन के संस्कारों का प्रभाव साहित्यकार अग्रवाल के मन पर अवश्य पड़ना चाहिए था। किशोर अवस्था से ही उन्होंने संस्कृत, वैदिक साहित्य आदि पढ़ना प्रारम्भ कर दिया था। युवावस्था में इतिहास, कला, पुरातत्त्व और संस्कृति के अध्ययन की विशेष रुचि जाग्रत हो गयी थी। उपर्युक्त परिस्थितियाँ ही डा० अग्रवाल जी के ग्रंथों की भाषा-शैली की ओर मूल संकेत कर सकती हैं।

किसी साहित्यकार की भाषा-शैली को उसके निबन्ध-साहित्य में ही अच्छी तरह देखा जा सकता है। क्योंकि निबन्ध मन-मस्तिष्क का स्वच्छन्द भाव-विचार होता है और वह भाव या विचार व्यक्ति प्रधानत्व वाले दृष्टिकोण को लेकर ही आगे बढ़ता है। निबन्धकार डा० अग्रवाल जी के निबन्धों को हम तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—(१) विचारात्मक निबन्ध, (२) भावात्मक निबन्ध, (३) मिश्र निबन्ध जिनमें विचार और भाव—दोनों का सम्मिश्रण पाया जाता है।

उरुज्योति, कल्पवृक्ष, पृथ्वीपुत्र, कला और संस्कृति, माता भूमि आदि डा० वासुदेवशरण अग्रवाल की निबन्ध-पुस्तकें हैं, जिन्हें पढ़कर हम उनके निबन्धकार की आत्मा के प्रत्यक्ष दर्शन कर सकते हैं। राष्ट्र, संस्कृति, कला, इतिहास, पुरातत्त्व, लोक-जीवन तथा भाषा के स्वरूप-विश्लेषण में उनकी चिन्तनशीला बुद्धि कहीं एकाकी और कहीं हृदय को साथ लेकर चली है। निबन्ध-साहित्य के प्रशस्त पथ पर सुदृढ़ डगें भरने वाले डा० अग्रवाल जी के विचारों और भावों में भारत के अतीत गौरव के श्रद्धामय स्वर पाठकों को स्पष्ट सुनायी पड़ते हैं और वे स्वर भारत के अतीत के प्रति पाठकों को भी श्रद्धालु बना देते हैं, क्योंकि उन स्वरों का हार्दिक समर्थन भी उनकी अगाध अध्ययनमयी शोधात्मक मनीषा करती हुई दृष्टिगोचर होती है।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निबन्धकार डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के निबन्धों की भाषा विषयानुमोदिनी है। जब वे किसी स्थान, दृश्य या वस्तु का वर्णन करते हैं तब उनकी भाषा बहुत सरल होती है। उस समय वे बहुत व्यावहारिक तथा चलते शब्दों का प्रयोग करते हैं। डा० अग्रवाल जी ने अपनी दतिया यात्रा में दतिया-नरेश के शस्त्रागार में जो मध्यकालीन शस्त्रास्त्र देखे थे, उनका वर्णन सरल शब्दों में करते हुए उन्होंने एक स्थल पर लिखा है—

"एक गुप्तीदार फरसा था जिसके बेंट पर हाथी का मुँह बना था। 'मारू ढालदार' एक नया हथियार देखा जिसके बीच में ढाल लगी थी और दोनों ओर नोकदार दो छोटे भाले लगे थे। इसे बीच से पकड़कर लड़वैया बचाव और मार एक साथ कर सकता था।" —(मध्यकालीन शस्त्रास्त्र)

उच्च साहित्यिक एवं दार्शनिक विषय—शीर्षक पर लिखते समय डा० अग्रवाल जी की भाषा उसी उच्च स्तर पर पहुँच जाती है। वहाँ संस्कृत तत्सम शब्दों को लेकर चलने वाली परिष्कृत एवं प्रांजल शैली अपना मधुर पाण्डित्य प्रकट करती हुई दृष्टिगोचर होती है। 'वैदिक दर्शन' पर अपने विचार व्यक्त करते हुए डा० अग्रवाल जी ने एक स्थल पर लिखा था—

"वैदिक युग में विचारों के गरुड़ ज्ञान के आकाश में बहुत ऊँचे उड़े। वह ज्ञान का सद्यः प्रभात था, उसकी उषःकालीन रश्मियों से स्फूर्ति पाकर मन के वैनतेय ने प्रचण्ड शक्ति के साथ अपने पंख फड़फड़ाये।"

—(वैदिक दर्शन)

यदि हम अग्रवाल जी के निबन्धों में आये हुए तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी तथा देशज शब्दों के प्रयोग पर दृष्टि डालें तो विदित होगा कि डा० अग्रवाल यह मानते हैं कि कुछ विशिष्ट अर्थों को पूर्ण रूप से अभिव्यक्त करने के लिए लोक-शब्दों में ही सामर्थ्य है। इसीलिए वे संस्कृत की तत्सम शब्दावली की वाक्य-योजना के अन्तर्गत विचार के स्पष्टीकरण की दृष्टि से दो-एक लोक-शब्द भी सुन्दरता के साथ प्रयुक्त कर देते हैं। तत्सम शब्द-सुमनों की माला में लोक-शब्द का रंगीन पुष्प उस माला की सुषमा की श्रीवृद्धि ही करता है। निम्नाँकित वाक्यों में आये हुए ठाठ, झंझट, पड़ाव, टिक रहना और टोटा आदि शब्द ऐसे ही रंगीन पुष्प हैं—

"जितना भी जीवन का ठाठ है, उसकी सृष्टि मनुष्य के मन, प्राण और शरीर के दीर्घकालीन प्रयत्नों के फलस्वरूप हुई है।"

—(संस्कृति का स्वरूप)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यहां नानात्व अनिवार्य है, वह मानवीय जीवन का झंझट नहीं, उसकी सजावट है।" —(वही)

× × ×

"व्यक्ति हो या राष्ट्र, जो एक पड़ाव पर टिक रहता है, उसका जीवन ढलने लगता है।" —(वही)

× × ×

"जो मूढ़ हैं उनके पास घर की बुद्धि का टोटा होने के कारण वे दूसरों के भुलावे में आ जाते हैं।" —(वही)

संस्कृत और हिन्दी में 'अक्षर' शब्द दो अर्थों में प्रचलित है। अर्थ की स्पष्टता लेखन का गुण है। लोक-शब्द चाहे विदेशी ही हो, अर्थव्यंजकता के लिए डा० अग्रवाल उसका प्रयोग करने में हिन्दी का कल्याण समझते हैं। 'अक्षरों' (वर्णों) के स्थान पर 'हरूफों' लिखना वे अधिक समीचीन मानते हैं। उदाहरण—

'वेद व्यास ने धर्म शब्द की जो व्याख्या की है, वह सोने के हरूफों में लिखने योग्य है।" —(धर्म का वास्तविक अर्थ)

बुद्धि के क्षेत्र में विचरण करने वाला विचार उद्बुद्ध होकर जब भाषा के माध्यम से बाहर निकलना चाहता है तब निबन्धकार डा० अग्रवाल जी की लेखनी प्रायः लम्बे वाक्यों की रचना करती है और वे वाक्य प्रायः मिश्र या संयुक्त हुआ करते हैं। जैसे—

"जिस प्रकार अध्यात्म और दर्शन, धर्म और चरित्र की विशिष्ट उपासना के द्वारा अनन्त सर्वव्यापक रस तत्व तक पहुँचने की सतत चेष्टा भारतीय संस्कृति में पायी जाती है, उसी प्रकार सौन्दर्य की आराधना के द्वारा रस को आत्मसात् करने का प्रयत्न भारतीय जीवन-पद्धति की विशेषता रही है।" —(भारतीय कला का सिंहावलोकन)

हृदय-धरा पर प्रवाहित होने वाली भाव-धारा में उत्ताल तरंगें उठने पर निबन्ध लेखक डा० अग्रवाल जी रोचक एवं सरस शब्दावली के साथ छोटे-छोटे वाक्यों ही की सृष्टि करते हैं—

"रस का स्वाद लेना योग है। रस योगियों का भाग है। योगी अर्थ के साथ जूझते हैं, पण्डित शब्दार्थ के साथ।"

—(विचारों का मधुमय उत्स—शब्द और अर्थ)

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"गाँव-बस्तियाँ हमारी संस्कृति की धात्री हैं। गाँव सच्चे अर्थों में पृथिवी के पुत्र हैं। गाँव के जीवन की जड़ें धरती का आश्रय पाकर पनपती हैं।" —(जनपदीय अध्ययन की आँख)

सरस्वती से जिसकी साधना ने वाणी का वरदान प्राप्त कर लिया हो, उस कुबेर के शब्द-कोष में क्या कमी ? शब्द और उसके अर्थ का मर्म डा० अग्रवाल जी की लेखनी अच्छी तरह समझती है। इसीलिए उनके वाक्यों में शब्द की पुनरुक्ति नहीं पायी जाती। यदि प्रथम वाक्य में 'गरुड़' शब्द का प्रयोग हुआ है तो द्वितीय में 'वैनतेय' और तृतीय में 'सुपर्ण' लिखा गया है। देखिये—

"वैदिक युग में विचारों के गरुड़ ज्ञान के आकाश में बहुत ऊँचे उड़े। वह ज्ञान का सद्यः प्रभात था, उसकी उषःकालीन रश्मियों से स्फूर्ति पाकर मन के वैनतेय ने प्रचण्ड शक्ति के साथ अपने पंख फड़फड़ाये। पृथिवी और द्युलोक के अन्तराल में ज्ञान-सुपर्ण ने अपने लिए जितना प्रदेश नापा वही संस्कृति के विस्तार का भूगोल निश्चित हुआ।" —(वैदिक दर्शन)

एक बात को अनेक प्रतीकों तथा उपमानों के माध्यम से भाषा की समास-शैली में किस प्रभावशाली रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है, इसका रहस्य डा० अग्रवाल जी की रसमग्न लेखनी ही खोल सकती है। भावात्मक निबन्धों के उन वाक्यों का रस बहुज्ञ पाठक ही प्राप्त कर सकता है। वस्तुतः उन गद्यात्मक वाक्यों में कविता ही बोलती है। शब्द और अर्थ की व्याख्या करते हुए उन्होंने एक बार लिखा था—

"शब्द ईंधन की तरह भारी है। अर्थ अग्नि के समान, फूल की तरह हल्का। शब्द पृथ्वी की ओर गिरता है, अर्थ आकाश की ओर उठकर तैयार है। शब्द भूमि का सरीसृप है, अर्थ आकाश का व्योमचारी गरुड़ है।"

—(विचारों का मधुमय उत्स—शब्द और अर्थ)

वेद, पुराण, दर्शन, कला, इतिहास, भूगोल, पुरातत्त्व, भाषा-शास्त्र, लोक-जीवन आदि सभी विषयों के उपवनों में डा० अग्रवाल की मनीषा परिभ्रमण कर चुकी थी। निबन्ध-लेखन के समय विचार या भाव की अभिव्यक्ति के लिए वह बहुज्ञ निबन्धकार किस ज्ञान-क्षेत्र का बिम्ब उपस्थित कर रहा है, इसे साधारण पाठक नहीं समझ सकता। उच्च स्तरीय साहित्यिक निबन्धों को जन्म देने वाली उनकी लेखनी यह चाहती है कि उस सृष्टि की ओर केवल उच्च स्तरीय पाठक दृष्टि उठाये। शब्द के अर्थ का आनन्द किस तरह प्राप्त

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जा सकता है, उसे डा० अग्रवाल जी ने इन विज्ञानात्मक शब्दों में बताया था—

"बिजली की परम्परा चटचटाती हुई ऋण-धन जिह्वाओं की तरह शब्द को अर्थ की सन्निधि में लाकर स्फुरित करो। वहीं अमृतस्वाद रस और आनन्द है।"

—(विचारों का ……… शब्द और अर्थ)

उपर्युक्त अवतरण का मर्म वही समझ सकता है, जिसका भौतिक विज्ञान और हठयोग से परिचय है। ऋणात्मक विद्युत् और धनात्मक विद्युत की अर्थमयी प्रक्रिया को समझने वाला व्यक्ति जब यह भी जान चुका हो कि हठयोगियों की क्या मुद्राएँ होती हैं, तभी वह उक्त अवतरण का रस प्राप्त कर सकता है। उक्त उद्धरण से बहुज्ञ पाठक को यह जानकारी होनी चाहिए कि हठयोग के अनुसार चन्द्रमा मुख में तालु के नीचे है। हठयोगी अपनी जिह्वा को उलट कर तालु से लगाते हुए ब्रह्मरन्ध्र की ओर ले जाता है। तब तालु के नीचे स्थित चन्द्र से अमृत रस झरता है और योगी उसका पान करके आनन्द लेता है।

हिन्दी-साहित्य में डा० अग्रवाल जी अपनी लोकपरक दृष्टि के लिए आचार्य रूप में परम प्रसिद्ध रहेंगे। लोक-जीवन के मनोरम दृश्य और उससे सम्बद्ध वस्तुएँ उनके ज्ञान-नेत्रों के आगे सदैव उपस्थित रहती थीं। अर्थ को व्यापक एवं प्रभावशाली रूप में पाठक तक पहुँचाने के लिए यह परमावश्यक है कि जनजीवन में व्याप्त वस्तुओं को लेकर बिम्ब-विधान उपस्थित किया जाए। परिचित बिम्ब के निर्झर से ही अर्थरूपी रस की धारा बहा करती है। लोक-शब्द हमारे साहित्य के लिए परम उपादेय सिद्ध हो सकते हैं, इसे डा० अग्रवाल अच्छी तरह जानते थे। संस्कृति को जीवित रखकर उसे प्राणवंत बनाने के लिए प्रगतिशीलता का होना अनिवार्य है। भूतकाल से ही चिपके रहने पर संस्कृति निष्प्राण हो जाती है। भूतकाल संस्कृति के स्वरूप के लिए किस प्रकार और कितना घातक है, इसके अभिव्यक्तिकरण के लिए डा० अग्रवाल जी ने भूतकाल को 'खटखटा' बताया है। 'खटखटा' ग्रामीण पशुओं के गले में लटका दिया जाता है। जो गाय या भैंस बहुत चंचल, ईतरी और ऊधमी होती है, उसके गले में किसान प्रायः एक भारी काष्ठ-खण्ड (चारपाई का पाया आदि) लटका देते हैं। जब वह तेज दौड़ती है, तब वह काष्ठ-खण्ड उसकी टाँगों में लगकर चोट पहुँचाता है। उस काष्ठ-खण्ड को लोक-भाषा में

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'खटखटा' कहते हैं। अर्थ-व्यंजकता की सबलता के लिए ही डा० अग्रवाल जी ने प्रस्तुत विचार को इस प्रकार व्यक्त किया है—

"नये और पुराने के संघर्ष में इस प्रकार का सुलझा हुआ और साहस पूर्ण दृष्टिकोण रखना आवश्यक है। इससे प्रगति का मार्ग खुला रहता है। अन्यथा भूतकाल कंठ में पड़े खटखटे की तरह बार-बार टकराकर हमारी हड्डियों को तोड़ता रहता है।" —(संस्कृति का स्वरूप)

निम्नांकित उद्धरण में 'कड़खा' शब्द का प्रयोग भी ऐसा ही है जो लोक-जीवन से गृहीत है। इस लोक-शब्द का प्रयोग अर्थ की सबल व्यंजकता भी प्रकट कर रहा है—

"अपभ्रंश भाषा का कड़ख। कुछ समय तक तो अच्छा लगा, पर उसमें न तो पुराने साहित्य की धाराएँ उन्मुक्त रूप से आ पाईं और न रस की पूरी मात्रा ही उस साहित्य में आ सकी।" —(तुलसीदास)

'उपमान' परम्परागत रूप-गुण साम्य) अथवा 'प्रतीक' (नवीनतामय प्रभावसाम्य) साहित्यकार की अभिव्यक्ति को सुस्पष्ट, सबल और आकर्षक बनाया करते हैं। वेद, पुराण, कला और भूगर्भशास्त्र की सहायता लेकर ही प्रायः डा० अग्रवाल जी की कारयित्री प्रतिभा उपमानों तथा प्रतीकों की सृष्टि करती थी। वे वेद-मंत्रों के पारिभाषिक एवं प्रतीकात्मक शब्दों के माध्यम से भी निबन्धों में अपनी अभिव्यक्ति किया करते थे।

ऋग्वेद में एक शब्द 'ऋत' आता है। इस विस्तृत ब्रह्माण्ड को बाँध कर चलने वाले शाश्वत नियमों का नाम 'ऋत' है। जनपदीय शब्दों की महिमा एवं गरिमा बताते हुए डा० अग्रवाल जी ने 'पृथिवी पुत्र' में एक स्थान पर लिखा था—

"जान पड़ता है कि पृथिवी और आकाश के बीच जो महान् अवकाश है वह इसी सामग्री से भरा हुआ है। साहित्यिक ऋत-दोहन के लिए ही हमारे ध्यान की परम धेनुएँ अपनी अमृत वर्षा कर रही हैं। साहित्यिक का जो रूप व्यापक है, वह ऋत पदार्थ से संयुक्त है, जो केन्द्र में घनीभूत हो गया, वह सत्य है।" —(परिशिष्ट, पृथिवी पुत्र)

'माताभूमि' पुस्तक के 'तुलसीदास' शीर्षक निबन्ध में डा० अग्रवाल लिखते हैं—

"भारतीय साहित्य की उपमा यदि त्रिविक्रम विष्णु से दी जाय तो व्यास, कालिदास और तुलसीदास उसके तीन चरण कहे जा सकते हैं।" —(तुलसीदास)

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपर्युक्त उद्धरण में 'त्रिविक्रम विष्णु' नामक उपमान पुराण-साहित्य से गृहीत है। निम्नांकित उद्धरण में 'शब्द' को जड़ाऊ आभरण बताना यह सिद्ध करता है कि लेखक को आभूषण-निर्माण की कला का प्रत्यक्ष ज्ञान है। शब्द और अर्थ के सम्बन्ध में निम्नांकित उपमान दृष्टव्य हैं—

"शब्द जड़ाऊ आभरणों की भाँति हैं; अर्थ सहज लावण्य की तरह मोहक हैं।" —(शब्द और अर्थ)

लोकोक्ति साहित्य का महत्त्व बताते हुए 'पृथिवी पुत्र' नामक पुस्तक में जिन उपमानों तथा प्रतीकों को प्रस्तुत किया गया है, वे पुरातत्त्व तथा भूगर्भशास्त्र से सम्बद्ध हैं—

'लोकोक्तियाँ मानवी ज्ञान के चोखे और चुभते हुए सूत्र हैं। अनन्त काल तक धातुओं को तपाकर सूर्य-रश्मि नाना प्रकार के रत्न-उपरत्नों का निर्माण करती है, जिनका आलोक सदा छिटकता रहता है। उसी प्रकार लोकोक्तियाँ मानवी ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं, जिन्हें बुद्धि और अनुभव की किरणों से फूटने वाली ज्योति प्राप्त होती है।"

—(लोकोक्ति साहित्य का महत्त्व)

जनपदीय शब्दावली को डा० अग्रवाल जी ने हिन्दी-साहित्य की 'विभूति' और 'श्री' बताया है और विदेशी तथा देशी भाषाओं की शब्दावली को 'पद्मश्री-सौन्दर्य' कहा है। इसे मूर्त के लिए अमूर्त उपमानों का प्रस्तुतीकरण कहा जा सकता है। 'पृथिवी पुत्र' में डा० अग्रवाल जी ने लिखा है—

"अपने में जो 'विभूति' और 'श्री' का पक्ष है, उस पर दृष्टिपात करो और अन्यत्र जहाँ पद्मश्री के सौन्दर्य का निवास है, वहाँ से उसका आवाहन करके अपने निवास को अलंकृत करो।"

—(परिशिष्ट, पृथिवी-पुत्र)

डा० अग्रवाल जी के निबन्धों का अध्ययन करने के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि उन्हें 'मेघ' को प्रतीक रूप में प्रस्तुत करना अधिक प्रिय है। 'महापुरुष श्रीकृष्ण' और 'राष्ट्र का धर्म-शरीर' शीर्षक निबन्धों में उन्होंने इस प्रतीक को क्रमशः 'बाल लीला' और 'भाव' के लिए प्रयुक्त किया है—

"ये बाललीलाएँ आकाश में एकत्र होने वाली सुन्दर सुखद मेघ-मालाओं की भाँति नाना वर्ण और रूपों में संचित होती रहीं।"

—(महापुरुष श्रीकृष्ण)

× × ×

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"अपने आकाश में जलधर मेघों की तरह उठते हुए उन भावों को देखकर।" —(राष्ट्र का धर्मशरीर)

इस प्रकार हम डा० अग्रवाल जी के निबन्ध-साहित्य पर एक आलोचनात्मक दृष्टि डालने के पश्चात् यह कह सकते हैं कि डा० अग्रवाल जी हिन्दी के एक विख्यात एवं कुशल निबन्धकार थे। उन्होंने लोक-साहित्य को परिनिष्ठित साहित्य से ऐसा मिलाया था कि उससे भारतीय संस्कृति तथा हिन्दी-साहित्य की श्रीवृद्धि हुई और उसे अपूर्व बल भी प्राप्त हुआ। हिन्दी के उस स्व० महान् साहित्यकार एवं प्रकाण्ड पण्डित के प्रति हमारी श्रद्धांजलि सादर समर्पित है। अन्तरराष्ट्रीय ख्याति का वह मूर्द्धन्य भारतीय विद्वान् अपने यशः शरीर से सदैव अमर रहेगा। वह विद्वान् सच्चे अर्थों में शारदा-सुपुत्र था।

—८,७ हरिनगर, अलीगढ़।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे विनम्रता की मूर्ति थे

—वेदप्रकाश गर्ग, एम० ए०

भारत के दर्शन, संस्कृति, इतिहास, कला, पुरातत्त्व एवं साहित्य आदि के मनीषी विद्वान् डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल के देहावसान से भारतीय प्राचीन विद्या-विशारद का जो स्थान रिक्त हो गया है, उसकी पूर्ति सहज ही सम्भव नहीं है।

डा० अग्रवाल आरम्भ से ही बड़े अध्ययनशील थे। उन्होंने वेदों से लेकर पुराण तथा इतिहास तक का बड़ा गम्भीर अध्ययन किया था। भारतीय कला के वे विशिष्ट पारखी थे। सोचने-विचारने का उनका अपना एक विशेष दृष्टिकोण था और उस पर उनकी पूर्ण आस्था थी।

वे बहुमुखी प्रतिभा के महान् विद्वान् थे। अपने विश्व-प्रसिद्ध महान् ग्रन्थ 'पाणिनिकालीन भारतवर्ष' के द्वारा उन्होंने शास्त्रीय ग्रन्थों के सांस्कृतिक-अध्ययन की एक ऐसी परम्परा डाली, जो चिरकाल तक अनुसंधित्सुओं के लिए पथ-प्रदर्शक का कार्य करती रहेगी। स्वयं श्री अग्रवाल जी ने अन्य ग्रन्थों के भी सांस्कृतिक-अध्ययन प्रस्तुत कर इस मार्ग को और प्रशस्त किया। भारतीय पुरातन ग्रन्थों का सांस्कृतिक दृष्टिकोण से अध्ययन प्रस्तुत कर एक सर्वथा मौलिक शोध-दिशा उन्होंने सुझाई है। अध्ययन की यह नवीन पद्धति साहित्य, इतिहास और संस्कृति के अनुसंधानकर्त्ता विद्वानों तथा अध्येताओं के लिए समान रूप से उपयोगी और प्रेरणाप्रद है। इन अध्ययनों में डा० वासुदेवशरण जी ने आलोचनात्मक तथा तुलनात्मक दृष्टि सदैव सामने रखी है, तभी वे अनेक निगूढ़ रहस्यों के उद्घाटन में समर्थ हुए हैं। इस प्रकार के अध्ययन अंग्रेजी आदि विश्व-विख्यात भाषाओं में भी प्राप्त नहीं हैं, अन्य भारतीय भाषाओं का तो कहना ही क्या? इसमें सन्देह नहीं कि सांस्कृतिक अध्ययन और जनपदीय दृष्टिकोण, ये दो उनकी विशिष्ट देन हैं। डा० अग्रवाल से राष्ट्रभाषा हिन्दी का मस्तक ऊपर उठा है। हिन्दी-संसार उनका चिर-ऋणी रहेगा।

यद्यपि मुझे उनके प्रत्यक्ष दर्शन का कभी सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ, किन्तु परोक्ष रूप से उनसे बराबर सम्बन्ध बना रहा। मैंने जब कभी किसी जिज्ञासा को लेकर उन्हें पत्र लिखा तो तुरन्त उसका उपयुक्त समाधान प्राप्त हुआ। इस प्रकार सभी की सहायता के लिए वे सदा तत्पर रहते थे। अनेक शोधार्थी तथा विद्वान् उनके इस गुण से लाभान्वित हुए हैं। वे स्वयं कठोर श्रम करते थे और दूसरों से भी अपेक्षित कठिन परिश्रम की आशा रखते थे।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाण्डित्य-प्रदर्शन की भावना उनमें किंचित्-मात्र भी न थी। गर्व उनको छू तक न गया था। वे विनम्रता की साक्षात् मूर्ति थे। उनकी शालीनता स्पृहणीय थी। हठवादिता या दुराग्रह उनमें बिल्कुल न था। समझ जाने पर वे अपनी भूल स्वीकार करने में जरा भी लज्जा या संकोच का अनुभव नहीं करते थे। चाहे उनकी त्रुटि को इंगित करने वाला कितना ही छोटा व्यक्ति क्यों न हो। वे सच्चे हृदय से उसकी बात स्वीकार करते थे। उनकी यह सबसे बड़ी विशेषता थी। ऐसा गुण इने-गिने विद्वानों में ही हुआ करता है। स्वभाव के तो वे ऐसे सरल थे जैसा होना कठिन है।

डा० अग्रवाल के 'पाणिनिकालीन भारत' ग्रन्थ की श्री युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा लिखित समीक्षा को लेकर, वाराणसी से प्रकाशित होने वाले 'सिद्धान्त' नामक पत्र में एक शास्त्रार्थ चला था। उक्त शास्त्रार्थ में उनकी विनम्रता के दर्शन उनके शब्दों में ही होते हैं। अग्रवाल जी लिखते हैं—"मैंने श्री मीमांसक जी के कथन को ध्यान पूर्वक पढ़ा और उन्होंने जो कुछ मेरे विषय में श्लाघात्मक लिखा है, उसके लिए मैं उनका अनुगृहीत हूँ। मुझ में कोई पाण्डित्य का लेश भी है ऐसा मानने में मुझे अतिशय संकोच होता है। मेरे मन में उस आदर्श की कुछ झाँकी विद्यमान है, जिसे इस भारत देश में प्राचीन विद्वान् प्रतिष्ठापित कर चुके हैं। हम लोगों के लिए तो वे स्वप्न की बातें हो गयी हैं, अतएव पल्लवग्राही पाण्डित्य से किसी प्रकार काम चलाना पड़ता है। बस, एक अभिलाषा सदा रहती है कि अपने द्वारा जान-बूझकर सत्य का अपलाभ न हो जाय। यदि इस समय इसी मर्यादा की रक्षा सफलता से की जा सके तो लेखक के सन्तोष के लिए क्या कम है।" और भी अग्रवाल जी के शब्दों में ही—"जहाँ तक सत्य के अन्वेषण का प्रश्न है, वहाँ मेरा उनसे क्या, और किसी से भी मतभेद एवं विरोध होने की कल्पना ही नहीं।"

इसी प्रकार उनके समस्त साहित्य एवं व्यवहार में पग-पग पर विनम्रता के दर्शन होते हैं। इधर कुछ वर्षों से उनका वेद-विद्या की ओर विशेष झुकाव हो गया था और वे वेदों के मर्मोद्‌घाटन में तल्लीन थे।

वस्तुतः बहुभाषाविद् तथा अनेक शास्त्रों में निष्णात डा० अग्रवाल जी, भारतीय कला और संस्कृति का विवेचन करने वाले हिन्दी-विद्वानों में अग्रगण्य थे। ऐसे महान् विद्वान् की पुण्य स्मृति में मैं अपनी विनम्र हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। ●

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ऋषिकल्प डा० वासुदेवशरण अग्रवाल और उनके एक शिक्षक"

—डा० श्याम शर्मा, एम० ए०, पी-एच० डी०

स्व० डा० वासुदेवशरण जी जाति से भले ही (अग्रवाल) वैश्य रहे हों, किन्तु कर्म से एवं स्वभाव से वह ऋषिकल्प थे। उन्होंने मानव-जीवन, उसमें भी ज्ञानार्जन का महत्व भली प्रकार समझा था—अतएव उन्होंने विनम्रतापूर्वक अध्यवसाय एवं स्वाध्याय करते हुए, एक-एक क्षण का पूर्ण सदुपयोग किया। वह स्वतन्त्रचेता एवं ब्रह्मवेत्ता मनीषी थे। शायद वह मानते थे कि—"ब्रह्मण्यं बहुभिरवाप्यते तपोभिः,तल्लब्ध्वा न रतिपरेणं हेलितव्यम्।"

यही कारण था कि श्री वासुदेवशरण जी भौतिक सुख-सम्मान से दूर रहकर, ऋषितुल्य सात्विक एवं सरल जीवन व्यतीत करते हुए, जीवन के अन्तिम क्षणों तक अधिकाधिक उत्साह के साथ पुरातत्त्व, भारतीय संस्कृति, कला, जनपदीय साहित्य एवं प्राचीन भारतीय वाङ्मय का अनेकोन्मुखी व्याख्यान, उद्घाटन, उद्धार एवं संस्कार करते हुए बहुमूल्य अनुदान देते ही रहे। उनकी निरीक्षण-परीक्षण शक्ति अत्यन्त सूक्ष्म एवं चिन्तन-मनन गहन तथा अद्भुत था। ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में उनकी वदान्यता स्तुत्य थी, तो ज्ञान-संग्राहक के रूप में एक-एक क्षण का उपयोग करने में वह अत्यन्त जागरूक थे। इसी प्रकार वे प्रख्यात विद्वान् एवं उच्च पदासीन होने पर भी विनम्र एवं सौजन्य की प्रतिमूर्ति ही रहे। यही कारण है कि उन्हें दोनों हाथों से विद्या तथा ज्ञान-विज्ञान बटोरने में विशेष कठिनाई नहीं हुई।

यद्यपि स्व० वासुदेवशरण जी ने अपना संक्षिप्त जीवन-चरित एवं उपलब्धियों का विवरण पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी को लिखे कुछ पत्रों में लिपिबद्ध कर दिया है; उसके अतिरिक्त अन्यान्य ग्रन्थों में भी डा० वासुदेवशरण जी से सम्बन्धित सूचनायें उपलब्ध हैं—उनसे यह तो ज्ञात होता है कि डा० अग्रवाल जी ने गुरुवर पं० जगन्नाथप्रसाद जी के चरणों में बैठकर संस्कृत का अपार ज्ञान प्राप्त किया था, वही ज्ञान श्री अग्रवाल जी की ख्याति का प्रमुख कारण भी सिद्ध हुआ। डाक्टर साहब के शब्दों में ही—"पंडित जी ने मुझे पुराने ढंग की संस्कृत विद्या में ढाल दिया। वे मेरे गुरू अठासी वर्ष के

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। मेरे लिये ज्ञान का नया क्षेत्र खुल गया। संस्कृत पढ़ते हुए मैं बहुत दूर निकल गया। पंडित जी की कृपा से मेरा परिचय पाणिनि के महान् ग्रंथ अष्टाध्यायी से हो गया।............" किन्तु एक ऐसे अनुल्लिखित विद्वान् भी हैं, जिन्होंने श्री वासुदेवशरण जी अग्रवाल को महाभाष्य का अध्यापन किया तथा अष्टाध्यायी को हृदयङ्गम करने में अपूर्व सहयोग दिया। उनका नाम है : पं० गणेशदत्त जी पाण्डेय।

पं० गणेशदत्त जा पाण्डेय काशी-निवासी (किसी ग्राम के रहने वाले) हैं तथा जगद्गुरू श्री महेश्वरानन्द जी सरस्वती (पूर्व नाम पं० महादेव शास्त्री) के निकट सम्बन्धी हैं। अपने अध्ययन-काल में आप काशी में 'अभिनव पाणिनि' के नाम से विख्यात थे। पूज्य पंडित जी के चरणों में बैठकर मुझे भी अध्ययन का सौभाग्य मिला है। कुछ वर्ष पंडित जी से साहित्य चर्चा करते समय सहसा उनके मुख से डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के अध्ययन को बातें प्रकट हुई। उस समय तो मुझे केवल इतना ही ज्ञात हो सका कि जब १९३६-३७ में पण्डित जी श्री माथुर चतुर्वेद महाविद्यालय, मथुरा, में अध्यापक थे, उस समय डा० अग्रवाल जी मथुरा में क्यूरेटर थे। श्री वासुदेवशरण जी पाणिनि पर शोध कर रहे थे। तभी श्री वासुदेवशरण अग्रवाल ने पण्डित जी से भाष्य पढ़ने की इच्छा व्यक्त की। पण्डित जी की आर्थिक स्थिति अच्छी न थी। अतः पण्डित जी अपने अनन्य मित्र आचार्य श्री मुरलीधर जी के आग्रह पर उन्हें पढ़ाने को तैयार हो गये और लगभग दो वर्ष तक डा० अग्रवाल के डैम्पियर नगर स्थित मकान पर जाकर ही पढ़ाते रहे। श्री वासुदेवशरण जी भी इन्हें सन्तोषप्रद पुरस्कार (टयूशन) देते थे (पंडित जी ने मुझे उस समय रुपये बतलाये थे, पर अब स्मरण नहीं रहे)। इस बीच पंडित जी ने मुख्यतः भाष्य तथा कौमुदी का ही अध्यापन किया।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल पंडित जी की विद्वत्ता तथा अध्यापन शैली से बहुत अधिक प्रभावित थे। बाद में पंडित जी गोयनका संस्कृत विद्यालय, फीरोजाबाद चले गये, वहाँ से खुर्जा और खुर्जा से गोवर्धन (मथुरा) आये— जहाँ लगभग बीस वर्ष तक रहे।

जिस समय पंडित जी फीरोजाबाद थे, तब वह भयंकर अस्थिरता का सामना कर रहे थे। उधर श्री वासुदेवशरण जी १९४० ई० में लखनऊ म्यूजियम के अध्यक्ष होकर चले गये थे। किन्तु वे चाहते थे कि पंडित जी उनके पास ही रहें। अतः वे पण्डित जी को अपने निकट बुलाने का निरन्तर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रयत्न करते रहे। कुछ समय पूर्व ही मुझे पं० गणेशदत्त जी पाण्डेय के संग्रह से उस समय के कुछ पत्र प्राप्त हुए थे। उनमें तीन पत्र विशेष महत्व के हैं, जो कि इस प्रकार हैं—

[१]

अजायघर, लखनऊ
९-७-१९४०

पूज्य पंडित जी,

आपका कृपा पत्र ५-७-४० का कल मिला। समाचार मालूम हुआ। वृत्तान्त यह है—

आपका ८ ता० का पत्र मेरा भाई कहीं रखकर भूल गया और मुझे २५ ता० को दिया। मैंने उसी दिन आपको पत्र लिखा जो मार्फत ठाकुर साहब खरौझा भेजा गया था पर जान पड़ता है आपको अभी तक नहीं मिला। वापिस आने पर मुझे आपके आने का हाल तो दफ्तर से मालूम हो गया था, पर आपका पत्र या पता न होने से कुछ नहीं कर सका। मैं आश्चर्य कर रहा था कि आपने पत्र क्यों नहीं छोड़ा और पाठशाला में आकर पण्डित जी से या मेरे पिताजी से क्यों नहीं मिले। अस्तु आपने तो पत्र लिखा पर मेरे यहाँ की भूल से मुझे नहीं मिला।

मैंने २५ ता० के खत में भी आपको आने के लिये लिखा था। अब आप उस पाठशाला से नियमानुसार जितना शीघ्र आसकें यहाँ आने की कृपा करें। केवल मिलने के लिए आने की अब मैं आवश्यकता नहीं समझता। पण्डित जी की भी यही राय है। इसलिए गोयनका जी के यहाँ से जब आप आ सकें आ जावें। वैसे अष्टमी के दिन आप आना चाहें तो वापिसी टिकट में आ सकते हैं। अष्टमी-नवमी को शुक्र-शनि है शुक्र से वापिसी मिल सकेगी।

मेरे घर का पता यह है—

अग्रवाल कम्पनी, ह्वीवट रोड—लखनऊ।

घर के पास ही पाठशाला है। वहीं पं० जगन्नाथप्रसाद जी रहते हैं। जैसा समाचार हो पत्र दीजियेगा।

भवदीय
वासुदेवशरण

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

[२]

लखनऊ
१६-८-१९४०

पूज्य पंडित जी,

प्रणाम। कृपा पत्र मिला। समाचार ज्ञात हुआ। श्री गोयनका जी की बीमारी के कारण उस स्थान से पृथक् होने में आपको जो व्यावहारिक और सौजन्यकृत कठिनाई है उससे यहाँ के कार्यकर्ता विदित हुए। आपके गम्भीर शील और संकोच को जानते हुए हम सब की सम्मति इसी पक्ष में रही कि इस वर्ष इस विद्यालय की ओर से आपका अवकाश काल समझा जाय। अगले वर्ष जैसी व्यवस्था होगी तदनुसार कार्य किया जायगा। आप हम लोगों की ओर से पहले ही जैसा विचार बनाये रहें। ईश्वर ने चाहा तो आगे आपके-हमारे एकत्र समवस्थान का अवसर प्राप्त होगा। इस समय एक अस्थायी व्यवस्था कर दी गई है। विशेष कृपा बनी रहे। पंडित जी आपको प्रणाम लिखाते हैं। श्री गोयनका जी के यहाँ से यथासमय जैसी सूचना मिले उसकी विज्ञापना हम लोगों को भी देने की कृपा करें।

आपका
वासुदेवशरण

पुनश्च—

मैं काशी से ८ ता० को लौटा। डा० मंगलदेव जी से मिला था। शास्त्री आचार्य परीक्षाओं की अनुमति के लिए उन्होंने नया प्रार्थना-पत्र ले लिया था। आशा है स्वीकृति मिल जावेगी। पर अभी तक सूचना नहीं मिली है।

[३]

लखनऊ
१५-४-४१

पूज्य पंडित जी,

प्रणाम। आपके दोनों पत्र मुझे यथासमय मिले। मैं अभी तक किसी निश्चय पर नहीं पहुँच सका था इसीलिए उत्तर में विलम्ब हुआ। एक ओर तो मेरी यह उत्कट इच्छा थी कि जिस तरह भी हो आपको यहाँ बुला लूँ। दूसरी ओर सहायता जिसकी बहुत आशा थी न मिल पाने के कारण विद्यालय की कठिन आर्थिक स्थिति थी। मैं काशी जाकर इन्स्पैक्टर से मिला। बहुत बातचीत हुई। अब उन्होंने कहा था कि भरसक प्रयत्न अगले वर्ष सहायता देने का करेंगे। अतएव मैंने विचार के बाद यही अच्छा समझा है कि अभी

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आ से परिवर्तन की प्रार्थना न करूँ। आगे जो परिस्थिति अनुकूल होगी उससे सूचित करूँगा।

मैं सब प्रकार कुशल हूँ। इस समय पाणिनि विषयक अपना अंग्रेजी निबन्ध लिख रहा हूँ। इसके बाद हिन्दी में लिखूँगा।

भवदीय

वासुदेवशरण

ये सभी पत्र श्री गोयनका संस्कृत पाठशाला, फीरोजाबाद (उ० प्र०) के पते पर लिखे गये हैं। पत्रों से ज्ञात होता है कि श्री वासुदेवशरण अग्रवाल पं० गणेशदत्त जी का गुरुवत् ही आदर करते थे तथा उनको अपने पास रखने को बहुत उत्सुक थे। श्री अग्रवाल जी संस्कृत-शिक्षा के विकास में भी सहयोग देते रहते थे। पत्रों से प्रकट है कि पाण्डेय जी का पं० जगन्नाथप्रसाद जी से भी अच्छा परिचय था। डाक्टर अग्रवाल का पं० गणेशदत्त जी के साथ वर्षों तक सम्पर्क बना रहा। पूज्य पाण्डेय जी ने एक बार श्री वासुदेवशरण अग्रवाल की चर्चा के प्रसंग में उनकी शिष्टता, सज्जनता, कृतज्ञ-भावना एवं विद्या-व्यसन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। गद्गद् होते हुए उन्होंने बतलाया था कि जब भी मैं उनके यहाँ जाता था, तब वे अत्यधिक सम्मान भरा स्नेहपूर्ण स्वागत करते। उच्चपदासीन होते हुए भी उनमें अहंकार का लेष न था। मुझे पहले आसन देते तब स्वयं बैठते। रहन-सहन भी बड़ा सात्विक तथा सरल था। पंडित जी के शब्दों में श्री वासुदेवशरण जी अध्यवसायी विद्वान् थे। गुरुवर श्री पांडेय जी के मुख से श्री वासुदेवशरण जी अग्रवाल की इस प्रशंसा से उनकी गुरुता का एवं ज्ञानार्जन के प्रति अपार निष्ठा का सहज परिचय मिल जाता है।

पं० गणेशदत्त जी पांडेय प्राचीन परम्परा के वैयाकरण रहे हैं। श्री पांडेय जी वेशभूषा में एवं खान-पान में अत्यन्त सात्विक, घोर परिश्रमी आदर्श आचार्य थे। आप यावज्जीवन प्राचीन परम्परा के अनुसार अध्ययन-अध्यापन करते रहे। आपकी अध्यापन-शैली अत्यन्त विशिष्ट तथा अभूतपूर्व थी। आपके शताधिक छात्र यत्र तत्र सर्वत्र उच्चपदासीन हैं। इस समय वृद्धावस्था के कारण आप अध्यापन-कार्य से मुक्त होकर अपने पुत्र श्री कैलाशपति पांडेय (सी० १३।१४५, औरंगाबाद) के पास काशीवास कर रहे हैं। संभवतः डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल से सम्बन्धित बहुत सी महत्वपूर्ण बातें पूज्य पांडेय जी की स्मृति में सुरक्षित होंगी जोकि संग्राह्य हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल का एक विलक्षण पत्र

—डा० रामस्वरूप आर्य

अभिनन्दन के द्वारा हम किसी महान् विभूति के कृतित्व का मूल्यांकन करते हुए उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं इस प्रकार के अभिनन्दन अनेक दृष्टियों से उपयोगी एवं शुभ हैं। किन्तु आज के विज्ञापन के युग में यदि अनेक महान् विभूतियाँ अभिनन्दन के योग्य न समझी जाएँ अथवा अभिनन्दन से वंचित रह जाएँ तो यह अवश्य चिन्त्य है।

डा० वासुदेवशरण अग्रवाल इस युग के एक ऐसे ही मनीषी थे, जिनका सार्वजनिक अभिनन्दन सर्वथा योग्य एव वांछनीय था। वे इस युग के हिन्दी के दधीचि थे, जिन्होंने हिन्दी-भाषा और साहित्य की सेवा में अपनी अस्थियों तक को गला दिया। डा० अग्रवाल जैसे महान व्यक्तित्व को प्राप्त करके हिन्दी भाषा सचमुच धन्य हुई। वे साहित्य, इतिहास एवं पुरातत्त्व के महान पंडित थे। वैदिक एवं संस्कृत साहित्य में उनकी अप्रतिहत गति थी। प्राचीन भारतीय संस्कृति के वे विश्वकोष थे। उनके कृतित्व को विद्वानों ने 'पचास शोध-पंडितों के कार्य' के समकक्ष माना है। सहस्रों शोधार्थी उनसे निरन्तर प्रेरणा ग्रहण करते थे।

श्री कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के शब्दों में डा० वासुदेवशरण अग्रवाल 'ऋषिकल्प' थे। उन्हें किसी प्रकार के सम्मान की कामना न थी, तथापि लोक-व्यवहार की दृष्टि से उनका सार्वजनिक अभिनन्दन आवश्यक था। किन्तु आज का युग राजनीति प्रधान एवं गुटबन्दी का है अतः यदि डा० अग्रवाल के जीवन-काल में उनके सम्मान में अभिनन्दन-ग्रंथ आदि का आयोजन न हो सका, तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। वे 'आत्मतृप्त' थे। गुणग्राहक विद्वानों के प्रशंसापरक पत्र ही उनके आत्मसन्तोष के लिए पर्याप्त थे। वे अभिनन्दन की चर्चा मात्र से—जिनमें प्रदर्शन ही प्रधान हो गया है—दूर रहना चाहते थे। एक बार अभिनन्दन की चर्चा चलने पर उन्होंने मुझे एक पत्र लिखा था जिसमें उनकी निष्काम-भावना स्पष्ट झलकती है। उनका वह पत्र अविकल रूप में यहाँ प्रस्तुत है—

(यह पत्र-संख्या २७६, पृष्ठ २७०-७१ पर मुद्रित है अतः यहाँ नहीं छापा है)

ऐसे महान विद्वान की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिए अवश्य ही कुछ साहित्यिक-समायोजन होना चाहिए। यह सन्तोष का विषय है कि अखिल भारतीय ब्रज साहित्य मंडल के अध्यक्ष बाबू वृन्दावनदास इस दिशा में प्रयत्नशील हैं। वे बहुत शीघ्र उनके पत्रों का एक संग्रह प्रकाशित करा रहे हैं।

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनपदीय आन्दोलन के जनक डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

—वृन्दावनदास

डा० बनारसीदास चतुर्वेदी का मत है कि डा० वासुदेवशरण अग्रवाल जनपदीय संस्कृति के विवेचक ही नहीं अपितु उसके आन्दोलन के प्रवर्तक भी थे। यह उनकी उदारता थी कि वे अपने किये हुए काम का श्रेय भी दूसरों को दे देते थे। सहृदयता उनकी सी देखने में नहीं आती। जनपदीय आन्दोलन के वे कर्णधार थे। उनकी मजलिसों में इसकी चर्चा तो चलती ही रहती थी। शब्दों के तो वे शिल्पी और रसज्ञ थे। जब कोई शब्द लोकभाषा का उन्हें मालुम होता था तब उन्हें बड़ी खुशी होती थी। जितने इस आन्दोलन के कर्मठ कार्यकर्ता थे उनको प्रेरणा, मार्गदर्शन और सत्परामर्श डा० अग्रवाल से ही प्राप्त होता था।

डा० अग्रवाल के अनुसार लोकभाषाएँ हमारी अमर वाणियाँ हैं उनको काल-क्रम की परिधि में बाँधना ठीक नहीं है। वे साक्षात् कामधेनुएँ हैं जिनके दोहन से हमारा निरुक्तशास्त्र भरापूरा बनेगा। उन्होंने साहित्यिक जगत के आगे लोकभाषाओं के हजारों शब्द ऐसे रक्खे जिनके समावेश से हिन्दी की सामर्थ्य में अभिवृद्धि हुई। उन्होंने लोकभाषाओं के प्रति साहित्यिकों में जो हीनता की भावना थी उसे निकाल दिया। लोकभाषाओं के संरक्षण, संवर्द्धन और उन्नयन को उन्होंने हिन्दी के हित में बताया अहित में नहीं। लोक-भाषाओं के उपबृंहण तथा उनको प्रतिष्ठा और महिमा की स्थापना के लिये डा० अग्रवाल देवदूत की भाँति आये और अपना काम करके चले गये। उनके जीवन-काल में उनके समकालीन अनेक विद्वानों जैसे डा० बनारसीदास चतुर्वेदी, श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी, डा० सत्येन्द्र, श्री यशपाल जैन, बा० कृष्णानन्द गुप्त, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी आदि ने लोक साहित्य पर प्रचुर कार्य किया जिससे उन्हें परम प्रसन्नता प्राप्त हुई।

डा० अग्रवाल ने जनपदों में सुरक्षित लोक-साहित्य, लोकवार्ता एव भाषा सम्बन्धी अटूट सामग्री की ओर साहित्यिकों का ध्यान आकर्षित किया। वे इस असीम भण्डार से हिन्दी को समृद्ध करना चाहते थे। उन्होंने डाक्टर

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्बाप्रसाद 'सुमन' को कृषक जीवन सम्बन्धी शब्दावली पर शोध प्रबन्ध लिखने को प्रेरित किया था और डा० सुमन की कृति स्वयं डा० अग्रवाल की राय में डा० ग्रियर्सन की कृति से भी उच्च स्तर की सिद्ध हुई। डा० अग्रवाल का मत था कि देश के विभिन्न विश्वविद्यालय जहाँ हिन्दी का पठन-पाठन हो रहा है यदि इस प्रकार के सौ शोध प्रबन्ध तैयार करा लें तो यह बहुत बड़ा काम होगा। इस प्रकार बने हुए शोध प्रबन्धों की सहायता से हिन्दी का एक ऐसा महाकोष बन सकेगा जो विश्व साहित्य में अप्रतिम होगा।

श्री अम्बाप्रसाद 'सुमन' के शोध निबन्ध 'कृषक जीवन सम्बन्धी शब्दावली' की भूमिका में डाक्टर अग्रवाल ने लिखा है, "लगभग बीस वर्षों से जनपदों में सुरक्षित लोकसाहित्य, लोकवार्ता एवं भाषा सम्बन्धी सामग्री में मुझे रुचि रही है। सौराष्ट्र से हिमालय तक विस्तृत इस सामग्री से मेरा परिचय जितना बढ़ता गया उतनी ही यह दृढ़ प्रतीति मेरे मन में होती गई कि भारतीय संस्कृति की धार्मिक और भाषा सम्बन्धी परम्परा को समझने और हस्तगत करने के लिए यह मौलिक सामग्री अनमोल निधि है। इस निधान कलश में क्या-क्या भरा हुआ है इसके ज्ञान और उपलब्धियों के लिए देशव्यापी सुचिंतित योजना आवश्यक है। इसके लिए सुशिक्षित कार्यकर्ताओं के पद-यात्रि वर्ग तैयार करने होंगे और प्रत्येक राज्य या प्रदेश में अखिल भारतीय स्तर पर जन-साहित्य-संस्थानों के संचालन की आवश्यकता होगी। जब तक ऐसे सुयोग का उदय हो तब तक हिन्दी-क्षेत्र के विश्वविद्यालय सामग्री के संकलन की आंशिक पूर्ति उस ढंग से करा सकते हैं जैसा एक नमूना इस शोध-प्रबन्ध में है।"

हिन्दी-क्षेत्र की जनपदानुसारी बोलियों और उपबोलियों के अनेक भेद हैं, जैसे मुख्य बारह बोलियाँ - अवधी, भोजपुरी, मैथिली, मगही, छत्तीसगढ़ी, बघेली, बुन्देली, मालवी, कनौजी, ब्रजभाषा, बाँगरू, कौरवी या हिन्दुस्तानी हैं। हाल ही में एक लेखक ने राजस्थान के अन्तर्गत बोली जाने वाली प्रमुख सात बोलियों के आधार पर उनकी उनचास उपबोलियों की ओर ध्यान दिलाया है। ऐसे ही प्रत्येक प्रदेश में स्थानीय उपबोलियाँ अभी तक जीवित हैं और भाषाशास्त्रीय दृष्टि से समृद्धियुक्त भी हैं। उन्हें लक्ष्य में रखकर यदि सौ के लगभग इस प्रकार के शोध प्रबन्ध विश्वविद्यालयों के स्तर पर तैयार कराये जा सकें तो हिन्दी शब्दावली का बहुत बड़ा भाण्डार सामने आ जायगा। भविष्य में तैयार होने वाले हिन्दी भाषा के महाकोष के लिये तो ऐसा आयोजन मानों शब्दावली की मूसलाधार वृष्टि ही होगा।"

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दी-क्षेत्र में इस समय लगभग बीस विश्वविद्यालय इस काम को अपने हाथ में ले सकते हैं। हिन्दी-विभागों के अध्यक्ष यदि चाहें तो यह कार्य सुगमता से पूरा हो सकता है। डा० अग्रवाल तो इसे केवल आरम्भिक कार्य ही मानते हैं कारण जनपदों की शब्द-सामग्री तो पूरे सरोवर के समान हैं और डा० सुमन का जैसा प्रबन्ध तो उसमें से भरा हुआ एक मंगल कलश ही है। केन्द्रीय सरकार की अनेक योजनाएँ हिन्दी साहित्य में नव-निर्माण से सम्बन्धित हैं। प्रत्येक राज्य में ग्रंथ अकादमी स्थापित हो चुकी है जिसका कार्य मुख्यरूप से नवीन ग्रंथों का निर्माण तथा प्रकाशन है। हमारे मत से डा० सुमन के जैसे शोध प्रबन्धों के निर्माण तथा प्रकाशन को सर्वाधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिये। अनेक लोकभाषाओं के कोष विद्वान् साहित्यिकों के पास तैयार पड़े हैं और प्रकाशन की बाट जोह रहे थे। इन कोषों को अधिकारी विद्वानों द्वारा संशोधित एवं परिवर्द्धित कराकर उनका प्रकाशन न केवल डा० अग्रवाल के स्वप्न को साकार करेगा अपितु हिन्दी को सामर्थ्यवान् बनाने की दिशा में भी एक महत्त्वपूर्ण कदम होगा।

डा० अग्रवाल का मत है कि विभिन्न क्षेत्रों में बिखरी हुई सामग्री किसी मूल स्रोत की ओर संकेत कर रही है और मूल स्रोत तो वैदिक युग ही है जब भारतीय लोक-विधान और संस्कृति के बीजांकुर पहली बार प्रस्फुटित हुए थे। लोके वेदे च यह सूत्र स्मरणीय है जो लोक में है वही वेद में है।

डा० अग्रवाल की इच्छा थी कि हिन्दी के लेखक चरक और सुश्रुत के सच्चे उत्तराधिकारी बनें। पालकाप्य मुनि का हस्त्यायुर्वेद, शालिहोत्र का अश्वशास्त्र आज भी विद्यमान है परन्तु उसके ज्ञान से लाभ उठाने वाले आज नहीं हैं। मल्लिनाथ ने माघ की टीका में हयलीलावती नामक ग्रंथ के उद्धरण दिये हैं जिससे मालुम होता है कि घोड़ों की चाल आदि के विषय में यहाँ पूरी जानकारी थी और उसके भी यहाँ पारंगत ज्ञाता थे। पश्चिमी एशिया के अलअमर्ना गाँव में ईसा से १४०० वर्ष पूर्व की एक पुस्तक मिली है जिसमें अश्वविद्या का पूरा वर्णन है। उसमें घोड़ों की चाल के बारे में अनेक संस्कृत शब्द आये हैं जैसे एकवर्तन, द्व्यावर्तन, त्र्यावर्तन।

डा० अग्रवाल के अनुसार हिन्दी शब्द निरुक्ति को जनपदीय बोलियों के सहारे की आवश्यकता है। ये बोलियाँ कहावतों और मुहाविरों की खान हैं। उन्होंने एक पत्र में लिखा है, "हम चुस्त राष्ट्रभाषा बनाने के लिए तरस रहे हैं पर उनकी जो खानें हैं उनको खोजकर प्राप्त करने की ओर अभी तक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमने ध्यान नहीं दिया। हिन्दी भाषा की तीन हजार धातुओं को यदि ठीक तरह ढूँढा जाय तो उनकी सेवा से हमें भाषा के लिए क्या-क्या शब्द नहीं मिल सकते ? पर हमारा धातु-पाठ कहाँ है ? वह हिन्दी के पाणिनि की बाट देख रहा है।"

डा० अग्रवाल का ध्यान कथाओं की ओर भी गया। उन्होंने लिखा है, "मूल कथा एक और उसके रूप अनेक होते हैं। मूल कथा थोड़े परिवर्तन के साथ अनेक लोकभाषाओं में अथवा उनके जनपदों में प्रचलित पाई जाती है।" अपने इस कथन की पुष्टि में उन्होंने ब्रज की कहानी जैसी करनी वैसी भरनी, जैनकथा "भविसयत्त कहा" अथवा भविष्य दत्त कथा का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसको प्रकारान्तर से 'पंचमी कहा' भी कहा गया है। इसका लेखक दसवीं शताब्दी का अपभ्रंश लेखक धनपाल है। यह कथा नेकवद के नाम से भी प्रचलित है।

सन् १९४० से लेकर १९६० तक लोकसाहित्य, लोकवार्ता, लोकगीत, लोक कहानी लोकोक्ति, जनपदीय शब्दावली आदि के संग्रह, प्रकाशन और व्याख्या का कार्य दृढ़ता से आगे बढ़ा है। इसे प्रथम युग मानना चाहिये। यह इसका यौवनकाल है, आशा है आगे चलकर यह आन्दोलन व्यापक और समृद्ध बनेगा। हिन्दी के साथ ही अन्य भाषाओं के क्षेत्र में जनपदीय साहित्य के संकलन का कार्य सम्पन्न हो रहा है। गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा में कितने ही कार्यकर्ताओं का ध्यान इस ओर गया है परन्तु यह कार्य अनन्त है इसमें बहुत कुछ करना शेष है।

लोकोक्तियों का महत्व—

लोकोक्तियों से मनुष्य को अपने जीवन में व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है। डा० अग्रवाल अपने पत्रों में अक्सर लोकोक्तियों के महत्व की चर्चा किया करते थे। उन्होंने अपनी पुस्तक 'पृथिवी पुत्र' में अनेक लोकोक्तियों का उल्लेख किया है। लोकोक्तियों के अध्ययन और उनके उद्धार का कार्य भी डा० अग्रवाल ने अपने जनपदीय आन्दोलन में सम्मिलित किया। अपने अनेक पत्रों में डा० अग्रवाल ने अनेक लोकोक्तियों का पुनरुद्धार किया तथा उनके अध्ययन के प्रति विद्वानों में रुचि उत्पन्न की। वास्तव में लोकोक्ति मनुष्य की तर्कबुद्धि को उत्प्रेरित करती है, ग्रंथियों को सुलझाने में रामबाण सदृश कार्य करती है, मनुष्य को उसका कर्तव्य निश्चित करने में सहायक होती है। इस दृष्टि से लोकोक्तियों का महत्व अपरिमित है। लोकोक्ति साहित्य पर डा० अग्रवाल

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखते हैं, "लोकोक्ति साहित्य प्रकृति के ज्ञान की भाँति सार्वभौम हैं। न उसका कोई कर्ता है, न उसका देश-काल से उतना सम्बन्ध है जितना अन्य साधारण साहित्य का होता है। सदा बहने वाली वायु और सूर्य के प्रकाश के समान लोकोक्तियाँ मानव मात्र की सम्पत्ति हैं और उनके रस का स्रोत सबके लिए खुला रहता है। लोकोक्ति का रस-भण्डार अक्षय है। हजारों बार कही-सुनी जाने पर लोकोक्ति का जब अवसर पर व्यवहार किया जाता है तो उसमें से सदा एकसा साहित्यिक ओज और आनन्द उत्पन्न होता है।"

लोकोक्ति साहित्य बुद्धिमूलक और नीतिपरक है। भारत में नीतिमूलक साहित्य की परम्परा बहुत प्राचीन काल से पायी जाती है। डाक्टर अग्रवाल का मत है कि उपनिषद् युग के अन्त में बुद्धिपूर्वक सोचने की प्रवृत्ति का बहुत विकास हुआ और उसकी झलक बौद्ध साहित्य में भी विद्यमान है। डा० अग्रवाल ने लिखा है कि आचार्य चाणक्य बुद्धि के पुजारी थे। चाणक्य ने मुद्राराक्षस में बुद्धि की प्रशंसा करते हुए कहा है कि कार्य साधने के लिए अकेली बुद्धि सैकड़ों सेनाओं से बढ़कर है। उसी बुद्धि के बल से आचार्य चाणक्य नन्द सम्राट के वंश का उन्मूलन करने में सफल हुए थे। महाभारत के युद्ध के पहिले दुर्योधन ने सैन्यबल और अर्जुन ने केवल कृष्ण को ही श्री कृष्ण से माँगा था। अधिक सैन्यबल रखते हुए भी कौरवगण श्री कृष्ण के बुद्धि कौशल के कारण पाण्डवों से पराजित हुए।

कहावतों का जितना गहरा सम्बन्ध बोलियों से रहता है उतना साहित्य की भाषा से नहीं। डा० अग्रवाल ने अपने पत्रों में कहावतों को बोलियों की सच्ची पुत्रियाँ कह कर पुकारा है। यह तो निश्चित ही है कि कहावतों के सर्वाङ्गपूर्ण संग्रह के लिए घरों और गाँवों में फैली हुई अपनी बोलियों की छानबीन करनी होगी। लोकोक्तियों से भारतीय जीवन की आन्तरिक झाँकी उदित होती है। डा० अग्रवाल ने अपने एक पत्र में लिखा है, "लोकोक्तियों से अपने विशाल जीवन के कुछ अंतरंग पहलुओं को समझने में सहायता मिल सकती है। लोक जीवन का सर्वाङ्गपूर्ण अध्ययन ही अर्वाचीन वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत आता है। सब बोली और भाषाओं की कहावतों में स्थानीय और प्रादेशिक प्रभाव अवश्य पाये जाँयगे। उनके अस्तित्व से लोकोक्तियों के साथ भूमि का निकट सम्बन्ध सिद्ध होता है। जो भूमि सर्वभूतों की धात्री है, जहाँ भाषा के नाना रूप जन्म लेते और पनपते हैं वही भूमि युग-युगान्तरों में लोकोक्तियों को जन्म देकर उनका पालन और सम्वर्द्धन करती है। मनुष्य की

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्य सब वस्तुओं की भाँति लोकोक्तियाँ भी भूत और भविष्य के साथ अटूट सम्बन्ध रखती हैं और विकास के अविचाली नियमों के अनुसार लोक की मानसभूमि में जन्म, वृद्धि और ह्रास को प्राप्त होती रहती हैं। उनके विकास का अध्ययन बहुत ही रोचक और ज्ञानवर्द्धक हो सकता है।"

हिन्दी का बोलियों से सम्बन्ध—

हिन्दी और बोलियों के अटूट स्वाभाविक सम्बन्धों पर डा० अग्रवाल ने समय-समय पर बड़े मूल्यवान् विचार प्रकट किये हैं। डा० अग्रवाल बोलियों के कार्य को हिन्दी के कार्य से भिन्न नहीं मानते। उनका मत है कि हिन्दी के भव्य प्रासाद की स्थापना बोलियों की सुदृढ़ भित्तियों पर ही की जा सकती है। बोलियाँ वास्तव में हिन्दी की रीढ़ की हड्डियाँ हैं। वास्तव में हिन्दीकोष को समुन्नत और समृद्ध बनाने के लिए बोलियों के कोष बनाये जाने की नितान्त आवश्यकता है। इन कोषों के निर्माण से हिन्दी का शब्द भण्डार समृद्ध होगा और इस समृद्धि के परिणामस्वरूप हम किसी दिन हिन्दी का एक महाकोष बनाने में सक्षम होंगे।

डा० अग्रवाल ने जिस समय यह आन्दोलन छेड़ा था अनेक कार्यकर्ताओं को इसकी उपयोगिता में सन्देह-सा था। परन्तु डा० अग्रवाल इस मतभेद से तनिक भी विचलित न हुए। वह शाश्वत सत्य की भाँति जनपदीय साहित्य के अध्ययन की उपयोगिता को असंदिग्ध मानते थे। उन्होंने अपने एक पत्र में श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी को लिखा था, "ज्यों-ज्यों यह विषय स्पष्ट होगा कार्यकर्ता पारस्परिक अभिप्राय को समझ सकेंगे। यह असम्भव है कि गाँवों में एवं जनपदों में बिखरी हुई साहित्य-सामग्री और अक्षय शब्द-सम्पत्ति को एकत्र करके हिन्दी-कोष में भरने की बाबत किसी भी सहयोगी को मत-भेद हो।"

गहरी निष्ठा के साथ अर्जित अपने अनुभव के आधार पर डा० अग्रवाल की दृढ़ धारणा थी कि जनपदीय साहित्य की खोज से हिंदी का बड़ा हितसाधन हो सकता है। जनपदों में तथा उनमें प्रचलित जीवन में प्रत्येक वस्तु के लिए शब्द की विद्यमानता है अर्थात् वहाँ प्रत्येक वस्तु के लिए एक नाम है। श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी को दिनांक २२-११-४३ को लिखे पत्र में उन्होंने लिखा था, "जनपद साहित्य की खोज हिंदी के अहित के लिए नहीं है। यह तो मातृभाषा हिन्दी को चारों ओर से समृद्ध करने का एक प्रयत्न है।" उन्होंने दिनांक २३-१-४४ को पुनः चतुर्वेदी जी को लिखा, "हमें तो जनपदों में बसने

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाली जनता की भाषा और संस्कृति का अध्ययन करके हिन्दी भाषा के भंडार को भरना है और उस जनता को आत्म-स्मृति करानी है। अधिकांश जनता गांवों में बसती है, अतएव जनपदों का अध्ययन गाँवों का ही अध्ययन है।"

डा० अग्रवाल को उनके जनपदीय अभियान में अनेक साहित्यिक बन्धु सहायक सिद्ध हुए। डा० बनारसीदास चतुर्वेदी से तो इस विषय पर उनका निरन्तर पत्र व्यवहार चला। वास्तव में जनपदीय आन्दोलन पर डा० अग्रवाल के सर्वोत्कृष्ट पत्र डा० बनारसीदास चतुर्वेदी को लिखे हुए ही हैं। डा० बनारसीदास चतुर्वेदी ने स्वसम्पादित पत्र 'मधुकर' के माध्यम से इस आन्दोलन को खूब प्रसारित किया। उन्होंने इस सम्बन्ध में अगणित पत्र साहित्यिक बन्धुओं को भी लिखे। वस्तुतः चतुर्वेदी जी के प्रयासों से ही जनपदीय अध्ययन को एक आन्दोलन का रूप मिला। यह उन कृतज्ञतापूर्ण शब्दों से भी विदित है जो डा० अग्रवाल ने एक बार श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी को लिखे। वे शब्द इस प्रकार हैं, "जनपदीय कार्य की आवश्यकता, उसका महत्व, उसकी उच्चता, उसकी प्राणदायकता, उसकी हित साधकता के विषय में हम सब प्रायः एकमत हैं। मैं आपके अथक परिश्रम, घनीभूत उत्साह की कहाँ तक प्रशंसा करूँ? भवभूति के शब्दों में 'हृदयस्तेव जानामि' का यह विषय है। आपने इस कार्य को आन्दोलन का रूप दिया और आप ही के बल पर उसके प्रचार की रीढ़ सधी हुई है।"

उन्होंने ८-९-४३ के अपने पत्र में पुनः श्री चतुर्वेदी जी को लिखा, "जनपद सम्बन्धी कार्य के विषय में आपकी भक्ति देखकर मैं चकित रह गया हूँ। आपने अपने परिश्रम की हवि डालकर इस पुनीत कार्य को कई कदम आगे बढ़ा दिया है।"

डा० अग्रवाल का विश्वास था कि जनपदीय अध्ययन ग्रामों में पैदल यात्री होकर ही भले प्रकार से सम्भव है। उन्होंने स्वयं देहातों में परिभ्रमण किया था। अनेक शिविरों में, सभाओं में, गोष्ठियों में विद्यार्थियों और अध्यापकों को उनका यही संदेश था कि वे जनपदीय साहित्य के अध्ययन के लिए ग्रामीण अंचलों की यात्राएँ करें। श्री देवेन्द्र सत्यार्थी के सम्बन्ध में लिखे हुए उनके वाक्य कितने मार्मिक हैं, "सत्यार्थी जी जनपद-कार्यके आद्य-ऋषि हैं। उन्होंने जीवन की साधना के जल से इस कार्य की जड़ों को दूर तक सींचा है। मथुरा में एक मास तक उनके साथ रहकर उनकी साधना से मैं परिचित हो

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चुका हूँ। उनके पैरों का रथ सारी धरती पर फिर आया है। वे हमारे जनपद जगत के सच्चे चक्रवर्ती हैं।"

डा० अग्रवाल का विश्वास था कि हिन्दी बिना जनपदों की बोलियों को साथ लिए उन्नति कर ही नहीं सकती। भाषाशास्त्र की दृष्टि से जनपदों में, गाँवों में बेहिसाब मसाला भरा पड़ा है। डा० अग्रवाल का मत है कि जो काम ब्रज का है वही अवध का है। उनकी मान्यता है कि जनपदों की वृहत् सूची तो महाभारत में उपलब्ध है, ये जनपद वही हैं जो आज तक अपनी संस्कृति की विशेषता लिए चले आ रहे हैं और हमारी बोलियों के क्षेत्र बने हुए हैं। चतुर्वेदी जी को दिनांक ११-१-४१ के पत्र में डा० अग्रवाल ने लिखा था, "मेरा विश्वास है कि भारतीय संस्कृति की जो थाती अब तक बची है उसका निवास हमारे जनपदों में है। हमारे पुरातन आचार, धार्मिक विचार, संस्था, बहुमुखी जीवन का अटूट प्रवाह भारतीय ग्राम तथा उनके समुदाय जनपदों में अभी तक विद्यमान है। जब हमारी भाषा का सम्बन्ध जनपदों से जोड़ा जायगा तभी उसे नया प्राण और नयी शक्ति प्राप्त होगी। गाँवों की बोलियाँ हिन्दी भाषा का वह सुरक्षित कोष हैं जिसके धन से वह अपने समस्त अभाव और दलिद्दर को मिटा सकती है।

भूमि माता है और मैं उसका पुत्र हूँ (माता भूमिः पुत्रो अहम् पृथिव्याः) यही डा० अग्रवाल की राय में जनपदीय भावना का मूल सूत्र है। इस भूमि पर जो कुछ देखने और प्रशंसा करने योग्य है उसके प्रति मन में रुचि ही तो जनपदीय अध्ययन की विशेषता है।

—वृन्दावनदास

डॉ० राम स्वरूप आर्य, बिजनौर
की स्मृति में सादर भेंट—
हरप्यारी देवी, चन्द्रप्रकाश आर्य
संतोष कुमारी, रवि प्रकाश आर्य

Central Library
185583
Gurukula Kangri ... Haridwar

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

097
185583

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

31.8.68

डा॰ अग्रवाल ऋषिकल्प मनीषी साहित्यकार थे। वे जनपदीय आन्दोलन के अन्यतम सूत्रधार थे। जनपद दर्शन की उनसे अच्छी व्याख्या करने वाला दूसरा व्यक्ति नहीं हुआ। इन पत्रों में उनके चिन्तन की अच्छी झलक मिलती है। सौभाग्यवश इनमें दो पत्र ऐसे भी हैं जिनमें उनकी जीवनी के सूत्र मिलते हैं। आपने इन पत्रों को पुस्तकाकार प्रकाशित कर बड़ा महत्वपूर्ण कार्य किया है। निश्चय ही हिन्दी पत्र-साहित्य में इनका अद्वितीय स्थान होगा।

रामविलास शर्मा

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाबू वृन्दावनदास

बाबू वृन्दावनदास वस्तुरूप में ब्रजभूमि की विभूति, ब्रजसाहित्य के कर्णधार और हिन्दी राष्ट्रवाणी के गौरवस्तम्भ हैं। आप ब्रजसाहित्य मण्डल के कार्यकारी अध्यक्ष, उत्तर प्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष तथा त्रैमासिक शोधपत्रिका ब्रजभारती के यशस्वी संपादक हैं।

साहित्य वारिधि बाबू वृन्दावनदास अन्तर्जनपदीय भाषा-साहित्य आंदोलन के वर्तमान सूत्रधार तथा महामनस्वी साहित्य-सृष्टा हैं। आपने सैकड़ों ऐतिहासिक एवं साहित्यिक निबन्ध लिखे हैं। 'भारतीय संस्कृति के विविध परिदृश्य' तथा 'प्राचीन भारत में हिन्दूराज्य' नाम की पुस्तकें आपकी विद्वत्ता, मनस्विता, अध्ययन शीलता तथा शोध-प्रवृत्ति के परिचायक हैं। आपने डा० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के पत्रों को संग्रहीत, संपादित कर विगत वर्षों में जो पुस्तक प्रकाशित की है और पत्र-साहित्य के महत्व पर जो विद्वत्तापूर्ण भूमिका लिखी है वह हिन्दी पत्र-साहित्य की बहुमूल्य सम्पत्ति है। बाबू वृन्दावनदास जी की डा० वासुदेवशरण अग्रवाल के पत्र शीर्षक पुस्तक एक महत्वपूर्ण साहित्यिक धरोहर के रूप में हिन्दी-संसार को सुलभ हो रही है। हम बाबू वृन्दावनदास जी की इस दुर्लभ कृति का हार्दिक स्वागत करते हैं।

"उत्तर विहार" के १४ जनवरी
सन १९७४ के अंक से साभार।

—प्रकाशक

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri Collection, Haridwar